अनुवाद-निबन्ध

अंगुत्तर – निकाय

[तृतीय-भाग]

[छक्क-निपात, सत्तक-निपात तथा अट्ठक-निपात]

अनुवादक
भदन्त आनन्द कौसल्यायन

प्रकाशक
महाबोधि सभा, कलकत्ता

प्रकाशक :

देवप्रिय वलीसिंह

मंत्री,

महाबोधि सभा, कलकत्ता

*   *   *

मूल्य :

दस रुपए

*   *   *

मुद्रक :

मोहनलाल भट्ट

राष्ट्रभाषा प्रेस, **वर्धा**

*   *   *

विद्यालंकारपरिवेणाधिपति
किरिवत्तुडुवे पञ्ञासार नायकमहास्थविर पादयन्वहंसे
वेतटयि

प्रकाशकीय

पवित्र पालि-त्रिपिटकके सुत्त पिटकके पाँच निकायोंमें अंगुत्तर-निकायका विशिष्ट स्थान है। शेष चार निकायोंका अधिकांश भाग अनूदित हो चकने पर भी अंगुत्तर-निकाय अभी तक हिन्दीमें अनूदित नहीं ही हुआ था। हम भदन्त आनन्द कौसल्यायनके चिर-कृतज्ञ हैं कि उन्होंने 'जातक' जैसे महान अनुवाद-कार्यको समाप्त कर अब अंगुत्तर-निकायके अनुवाद-कार्यको हाथमें लिया और हमें यह सूचना देते हुए हर्ष होता है कि प्रथम-भाग और दूसरे-भागके अनन्तर उन्होंने तीसरा-भाग और चौथा-भाग भी समाप्त कर दिया है। पहले और दूसरे भागके अनन्तर यह तीसरा भाग पाठकोंके हाथमें है। चौथे और अंतिम भागकी भी वे शीघ्र ही प्रतीक्षा कर सकते हैं।

हम केन्द्रीय सरकारके भी कृतज्ञ हैं जिसकी कृपासे हमें शास्त्रीय ग्रन्थोंके मूल तथा अनुवाद छापनेके लिये चार हजार रुपये वार्षिकका अनुदान प्राप्त है।

यदि हमें यह सरकारी अनुदान प्राप्त न हो तो हमें इसमें बड़ा सन्देह है कि हम इस पवित्र कार्य को करनेमें समर्थ सिद्ध होंगे।

४ ए, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट,
कलकत्ता—१२

मंत्री
महाबोधि सभा

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धस्स

प्रस्तावना

अंगुत्तर-निकायके प्रथम-भागका अनुवाद १९५७ ई. में प्रकाशित हो गया था। द्वितीय-भागका अनुवाद पूरे छह वर्षके बाद १९६३ ई. में ही प्रकाशित हो सकता था। अब तीसरे-भागका अनुवाद १९६६ ई. में प्रकाशित हो रहा है। सापेक्ष दृष्टिसे इसे जल्दी ही मानना चाहिए।

सूत्र-पिटकमें जो पाँच निकाय हैं, यद्यपि अंगुत्तर-निकाय स्वयं उनमेंसे एक निकाय है, लेकिन कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि अन्य निकायोंमें जो देशना है उसीको अंकोत्तर-वृद्धि-क्रमसे व्यवस्थित कर उसे एक पृथक निकायका नाम दे दिया गया है।

ठीक-ठीक ऐसा भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि कालाम-सूत्र जैसे अनेक सूत्र ऐसे भी हैं, जो 'अंगुत्तर-निकाय' की अपनी निधि मालूम देते हैं।

अभी तो नागरी अक्षरोंमें मूल त्रिपिटकका अध्ययन-अध्यापन आरम्भ ही हुआ है। इस प्रकारकी विश्लेषणात्मक जिज्ञासाओंकी शान्तिके लिए हमें उस समयकी प्रतीक्षा करनी होगी, जब इस देशमें त्रिपिटकके भी विवेचनात्मक अध्ययनकी परम्परा दृढ़ होगी।

'तृतीय-भाग' का अनुवाद तो बहुत पहले हो चुका था। ठीक बात तो यह है कि 'चतुर्थ-भाग' का अनुवाद भी कबसे पूरा हो चुका है; लेकिन जब प्रेस वर्धामें हो, प्रकाशक कलकत्तामें हो और स्वयं अनुवादक सिंहल-द्वीपमें हो तो किसी भी ग्रन्थके मुद्रण-प्रकाशनमें अधिक समय लगना स्वाभाविक है।

'राष्ट्रभाषा-प्रेस' शेष दो भागोंकी तरह इसे भी अनेक आकस्मिक बाधाओंके बावजूद छाप सका, इसके लिए मैं प्रेसके मैनेजर श्री. देशपाण्डेय जी का कृतज्ञ हूँ।

सम्भवतः यह अभी भी प्रकाशित न हो पाता, यदि राष्ट्रभाषा प्रचार समितिके श्री राधेश्याम सिंह गौतम, एम. ए. ने इधर इसके प्रूफ देखनेकी जिम्मेदारी अपने सिर न ले ली होती। मैं तो उनका ऋणी हूँ ही, पाठकोंके भी वह धन्यवादके पात्र हैं।

मेरे प्रमादसे इस भागमें एक-एक निपातके सूत्रोंको उनके संख्या-क्रमसे पृथक-पृथक नहीं दिया जा सका। जब आरम्भमें एकाध फार्म छप गया, तब एक-रूपताके लिए सारी पुस्तकको उसी तरह छपवाना अनिवार्य हो गया।

'अनुक्रमणिका' की भी कमी एक बड़ी कमी है। वह और अधिक विलम्बका कारण हो सकती है। सम्भव हुआ तो अन्तिम चतुर्थ-भागके साथ शेष तीनों भागोंकी भी अनुक्रमणिका देनेका प्रयास किया जायगा।

महाबोधि सभाके मन्त्री, श्री. देवप्रिय वलीसिंहका मैं विशेष कृतज्ञ हूँ, क्योंकि सारे अंगुत्तर-निकायको हिन्दी-रूपमें प्रकाशित करानेका सारा श्रेय उन्हींको है।

विद्यालंकार विश्वविद्यालय
कैलानिय (श्री. लंका)
५-२-६६

आनन्द कौसल्यायन

अंगुत्तर निकाय

तीसरा भाग

पाँचवाँ निपात

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

प्रथम पण्णासक

१. आहुणेय्य–वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथ-पिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया--"भिक्षुओ।" उन भिक्षुओंने भगवान्को प्रत्युत्तर दिया--"भदन्त।" भगवान्ने यह कहा--"भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षु जब आँखसे किसी रूपको देखता है तो उसके मनमें न राग ही उत्पन्न होता है और न द्वेष ही उत्पन्न होता है, वह स्मृति-प्रज्ञा सहित उपेक्षावान् हो विहार करता है। जब कानसे किसी शब्दको सुनता है ..... नाकसे किसी गंधको सूँघता है.... जिह्वासे किसी रसको चखता है ..... शरीरसे किसीका स्पर्श करता है तथा मनसे किसी विषयको ग्रहण करता है तो उसके मनमें न राग ही उत्पन्न होता है और न द्वेष ही उत्पन्न होता है, वह स्मृति-प्रज्ञा सहित उपेक्षावान् हो विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।" भगवान्के ऐसा कहनेपर भिक्षुओंने उनके कथनका प्रसन्न चित्त हो अनुमोदन किया।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु नाना प्रकारकी ऋद्धियोंका स्वामी होता है——एकसे अनेक हो जाता है, अनेकसे फिर एक हो जाता है, प्रकट हो जाता है, छिप जाता है, दीवारके पार, प्राकारके पार, पर्वतके पार उन्हें छूता हुआ चला जाता है, जैसे आकाशमें, पृथ्वीपर भी तैरना-डूबना करता है जैसे पानीमें; पानीके भी ऊपर चलता है जैसे पृथ्वीपर, आकाशमें भी पालथी मारकर जाता है जैसे कोई पक्षी हो, इस प्रकारके ऋद्धिमान्, इस प्रकारके चन्द्र-सूर्यको भी हाथसे छूता है, ब्रह्म लोक तक भी सशरीर पहुँच जाता है।

वह दिव्य श्रोत-धातुसे, विशुद्ध श्रोत-धातुसे, अलौकिक श्रोत-धातुसे दिव्य तथा मानुष दोनों प्रकारके शब्दोंका श्रवण करता है, दूर तथा समीपके।

वह दूसरे प्राणियोंके, दूसरे व्यक्तियोंके चित्तको अपने चित्तसे जान लेता है, राग-युक्त चित्त होनेसे जान लेता है कि यह राग-युक्त चित्त है, राग-विमुक्त चित्त होनेसे जान लेता है कि यह राग-विमुक्त चित्त है, द्वेष-युक्त चित्त होनेसे ...... द्वेष-विमुक्त चित्त होनेसे, मोह-युक्त चित्त होनेसे .... मोह-विमुक्त चित्त होनेसे, एकाग्र-चित्त होनेसे ...... विक्षिप्त चित्त होनेसे, ... विशाल चित्त होनेसे ..... क्षुद्र चित्त होनेसे ...... श्रेष्ठतम चित्त न होनेसे ..... श्रेष्ठतम चित्त होनेसे ..... समाहित चित्त होनेसे ..... असमाहित (=अस्थिर) चित्त होनेसे ..... विमुक्त चित्त होनेसे..... अविमुक्त चित्त होनेसे जान लेता है कि यह अविमुक्त-चित्त है।

वह अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोंका अनुस्मरण करता है——जैसे एक जन्म भी, दो जन्म भी, तीन जन्म भी, चार जन्म भी, पाँच जन्म भी, दस जन्म भी, बीस जन्म भी, तीस जन्म भी, चालीस जन्म भी, पचास जन्म भी, सौ जन्म भी, हजार जन्म भी, लाख जन्म भी, अनेक संवर्त-कल्प, अनक विवर्त-कल्प, अनेक संवर्त-विवर्त-कल्प——मैं अमुक स्थानपर था, यह नाम था, यह गोत्र था, ऐसा वर्ण था, ऐसा खाना था, इस प्रकारका सुख-दुःख भोगा था, इतनी आयु तक जीता रहा, फिर वहाँसे च्युत होकर अमुक जगह उत्पन्न हुआ, वहाँ भी यह नाम था, यह गोत्र था, ऐसा वर्ण था, ऐसा आहार था, ऐसा सुख-दुःख भोगा, इतनी आयु-पर्यंत, फिर वहाँसे च्युत होकर यहाँ उत्पन्न हुआ। इस प्रकार वह आकार तथा उद्देश्य सहित अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोंका स्मरण करता है।

वह दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे च्युत होते तथा उत्त्पन्न होते प्राणियोंको देखता है। वह निकृष्ठ-श्रेष्ठ, सुवर्ण-दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त प्राणियोंको जानता है—ये प्राणी शारीरिक दुष्कर्मसे युक्त हैं, वाणीके दुष्कर्मसे युक्त हैं, मनके दुष्कर्मसे यक्त हैं, आर्यों (=श्रेष्ठजनों)के निन्दक हैं, मिथ्या-दृष्टि हैं तथा मिथ्या-कर्मी हैं। ये शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, नरक, दुर्गति, दोजख-जहन्नुममें उत्पन्न हुए हैं अथवा ये प्राणी शारीरिक शुभ-कर्मसे युक्त हैं, वाणीके शुभ-कर्मसे युक्त हैं, मनके शुभ-कर्मसे युक्त हैं, आर्यों (=श्रेष्ठजनों) के प्रशंसक हैं, सम्यक्-दृष्टि हैं तथा सम्यक्-कर्मी हैं। ये शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, सुगति, स्वर्ग लोकमें उत्पन्न हुए। इस प्रकार वह दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे च्युत होते तथा उत्पन्न होते प्राणियोंको देखता है। वह निकृष्ठ-श्रेष्ठ, सुवर्ण-दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त प्राणियोंको जानता है।

वह आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमोक्ष, प्रज्ञा-विमोक्षको, इसी जन्ममें, यहीं जानकर, यहीं साक्षात् कर विहार करता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें यह छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है, आतिथ्यके योग्य होता है, दक्षिणाके योग्य होता है, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य होता है तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें यह छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है......लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह? वह श्रद्धा-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह वीर्य-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह स्मृति-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह समाधि-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह प्रज्ञा-इन्द्रियसे युक्त होता है, वह आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्तकी विमुक्ति, प्रज्ञाकी विमुक्ति, इसी शरीरमें स्वयं साक्षात्कार, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें यह छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है.....लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है......लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह? वह श्रद्धा-बलसे युक्त होता है, वह वीर्य-बलसे युक्त होता है, वह स्मृति-बलसे युक्त होता है, वह समाधि-बलसे युक्त होता है, वह प्रज्ञा-बलसे युक्त होता है, वह आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्तकी विमुक्ति, प्रज्ञाकी विमुक्ति, इसी शरीरमें स्वयं साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें यह छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है......लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोड़ेमें ये छह बातें होती हैं,वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अंग ही गिना जाता है। कौनसी छह ? भिक्षुओ, राजाका श्रेष्ठ घोड़ा रूपोंको सहन करनेवाला होता है,शब्दोंको सहन करनेवाला होता है, गंधोंको सहन करनेवाला होता है, रसोंको सहन करनेवाला होता है, स्पर्शोंको सहन करने वाला होता है तथा रूप-सम्पन्न होता है। भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोड़ेमें यह छह बातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अंग ही गिना जाता है। उसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है ....लोगोंके लिए अनुपम पुण्य क्षेत्र होता है। कौनसी छह बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु रूपोंका सहन करने वाला होता है, शब्दोंका सहन करने वाला होता है, गन्धोंका सहन करने वाला होता है, रसोंका सहन करने वाला होता है, स्पर्शोंका सहन करने वाला होता है तथा धर्मों (= चिन्तन-विषयों) का सहन करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं वह सत्कारके योग्य होता है ....लोगोंके लिए अनुपम पुण्य क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोड़ेमें ये छह बातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजा का भोग्य होता है, वह राजाका एक अंग ही गिना जाता है। कौनसी छह ? भिक्षुओ, राजाका श्रेष्ठ घोड़ा रूपोंको सहन करने वाला होता है, शब्दोंको सहन करने वाला होता है, गन्धोंको सहन करने वाला होता है, स्पर्शोंको सहन करने वाला होता है तथा बल-सम्पन्न होता है। भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोड़ेमें ये छह बातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अंग ही गिना जाता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है.... लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसी छह बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु रूपोंका सहन करने वाला होता है, शब्दोंका सहन करने वाला होता है, गन्धोंका सहन करने वाला होता है, रसोंका सहन करने वाला होता है, स्पर्शोंका सहन करनेवाला होता है तथा धर्मों (= चिन्तन-विषयों) का सहन करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं वह सत्कारके योग्य होता है .... लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस क्षेष्ठ घोड़ेमें ये छह बातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अंग ही गिना जाता है। कौन-सी छह ? भिक्षुओ, राजाका श्रेष्ठ घोड़ा रूपोंको सहन करनेवाला होता है, शब्दोंको सहन करनेवाला होता है, गन्धोंको सहन करनेवाला होता है, रसोंको सहन करनेवाला होता है,

स्पर्शोंको सहन करनेवाला होता है तथा गति-सम्पन्न होता है। भिक्षुओ, जिस श्रेष्ठ घोड़ेमें ये छह बातें होती हैं, वह राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, वह राजाका एक अंग ही गिना जाता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है ...... लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षु रूपोंका सहन करनेवाला होता है, शब्दोंका सहन करनेवाला होता है, गन्धोंका सहन करनेवाला होता है, रसोंका सहन करनेवाला होता है, स्पर्शोंका सहन करनेवाला होता है तथा धर्मों (=चिन्तन-विषयों) का सहन करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह सत्कारके योग्य होता है ...... लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम (बातें) हैं। कौन-सी छह? श्रेष्ठतम दर्शन, श्रेष्ठतम श्रवण, श्रेष्ठतम लाभ, श्रेष्ठतम शिक्षा, श्रेष्ठतम परिचर्य्या तथा श्रेष्ठतम अनुस्मरण। भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम (बातें) हैं।

भिक्षुओ, ये छह अनुस्मृति-स्थान हैं। कौनसे छह? बुद्धानुस्मृति, धर्मानुस्मृति, संघानुस्मृति, शीलानुस्मृति, त्यागानुस्मृति तथा देवतानुस्मृति। भिक्षुओ, ये छह अनुस्मृति-स्थान हैं।

एक समय भगवान् शाक्य (जनपद) के कपिलवस्तु नगरके न्यग्रोधाराममें विहार कर रहे थे। तब महानाम शाक्य[१] जहाँ भगवान थे, वहाँ आया। पास आकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे महानाम शाक्यने भगवान्से यह निवेदन किया—"भन्ते! जिस आर्य-श्रावकने मार्ग-फल प्राप्त कर लिया है, जिसे शिक्षात्रय युक्त (बुद्ध-देशना) सुपरिचित है, वह बहुधा किस प्रकार विहार करता है, उसकी चर्या प्रायः क्या होती है?"

"महानाम! जिस आर्य-श्रावकने मार्ग-फल प्राप्त कर लिया है, जिसे शिक्षात्रय युक्त (बुद्ध-देशना) सुपरिचित है, वह बहुधा इस प्रकार विहार करता है, उसकी चर्या बहुधा इस प्रकार होती है। हे महानाम! वह आर्य-श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है कि वे भगवान् अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं, विद्या तथा आचरणसे युक्त हैं, सुगति-प्राप्त हैं, लोकोंके जानकार हैं, अनुपम हैं, (दुष्ट-) पुरुषोंका दमन करनेवाले सारथी हैं, देवताओं तथा मनुष्योंके शास्ता हैं, वे बुद्ध हैं, वे भगवान् हैं।

---

१. अट्ठकथाके अनुसार महानाम शाक्य भगवानके चचाका लड़का था और एक शाक्य राजा (=सामन्त) था।

महानाम! जिस समय आर्य-श्रावक तथागत का अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त रागमुक्त रहता है, द्वेष (= दोष) मुक्त रहता है, मोहमुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु ही रहता है। हे महानाम! तथागतका ध्यान कर जिस आर्य-श्रावकका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-प्रीति प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय (= चित्त) शान्त होता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम! उसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह बुद्धानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम! आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है कि यह धर्म भगवान् बुद्धके द्वारा सु-आख्यात है, सांदृष्टिक (= इसी लोकमें फल देनेवाला है), कालकी सीमासे परे है, इसके बारेमें यह कहा जा सकता है कि आओ और स्वयं परीक्षा कर लो, ऊपर उठानेवाला है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा स्वयं साक्षात् किया जा सकता है। महानाम! जिस समय आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-प्रीति प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त होता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह धर्मानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम! आर्य-श्रावक संघका अनुस्मरण करता है कि भगवान्का श्रावक-संघ सुप्रतिपन्न है, भगवान्का श्रावक-संघ ऋजु-प्रतिपन्न है, भगवानका श्रावक-संघ न्याय-प्रतिपन्न है, भगवान्का श्रावक संघ समीचीन मार्गपर प्रतिपन्न है, यह जो पुरुषोंके स्रोतापन्न मार्ग-फल-प्राप्त आदि चार जोड़े हैं, यह जो आठ प्रकारके लोग हैं, यही भगवान्का श्रावक संघ है, यह सत्कार करने योग्य है, यह आतिथ्य करने योग्य है, यह दक्षिणाके योग्य है, यह हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य है, यह लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है। महानाम! जिस समय आर्य-श्रावक संघका अनुस्मरण

करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष मुक्त रहता है, मोह मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-प्रीति प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त होता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम ! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह संघानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम ! आर्य-श्रावक अपने शीलका अनुस्मरण करता है, जो अखण्ड होता है, जो छिद्र रहित होता है, जो धब्बे रहित होता है, जो अकलुषित होता है, जो मुक्त होता है, जो विज्ञों द्वारा प्रशंसित होता है, जो निर्मल होता है, जो समाधि-मार्गी होता है। महानाम ! जिस समय आर्य-श्रावक अपने शीलका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त रागमुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त रहता है, शान्त होनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम ! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह शीलानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम ! आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, वह सोचता है यह मेरे बड़े लाभकी बात है, यह विशेष लाभकी बात है कि जो मैं लोभ-मात्सर्यसे युक्त प्रजाके बीच रहता हुआ लोभ-मात्सर्यसे रहित होकर गृहस्थ-जीवन व्यतीत कर रहा हूँ——मुक्तहस्त, खुले हाथ, त्यागी, (याचकों द्वारा) याचना किये जानेके योग्य, दान शील, योग्य-पदार्थोंको बाँटाकर भोगनेवाला। महानाम ! जिस समय आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, प्रमुदित होने-पर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त रहता है, शान्त रहनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुख की अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है।

महानाम ! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म-स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह त्यागानुस्मृतिकी भावना करता है।

फिर महानाम ! आर्य-श्रावक देवताओंका अनुस्मरण करता है। वह सोचता है---चातुर्महाराजिक देवता हैं, त्रयोत्रिंश देवता हैं, याम देवता हैं, तुषित देवता हैं, निर्माणरति देवता हैं, परनिर्मित वशवर्ती देवता हैं, ब्रह्मकायिक देवता हैं, और उनसे ऊपर के देवता हैं। जिस प्रकारकी श्रद्धासे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, हम में भी वैसी श्रद्धा है; जिस प्रकारके शीलसे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, हममें भी वैसा शील है; जिस प्रकारके श्रुत (=ज्ञान)से युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत हो कर वहाँ उत्पन्न हुए, हम में भी वैसा श्रुत (=ज्ञान) है, जिस प्रकारके त्यागसे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, हममें भी वैसा त्याग है; जिस प्रकारकी प्रज्ञासे युक्त होनेके कारण वे देवता यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए हममें भी उस प्रकारकी प्रज्ञा है। महानाम ! जिस समय आर्य-श्रावक अपनी और उन देवताओंकी श्रद्धा, शील, श्रुत (=ज्ञान), त्याग और प्रज्ञा की अपनी श्रद्धा, शील, श्रुत (=ज्ञान) त्याग और प्रज्ञासे तुलना करता है, उस समय उसका चित्त राग-मुक्त रहता है, द्वेष-मुक्त रहता है, मोह-मुक्त रहता है, उस समय उसका चित्त ऋजु रहता है, वह अर्थ-ज्ञान प्राप्त करता है, वह धर्म-ज्ञान प्राप्त करता है, प्रमुदित होनेपर वह प्रीति-युक्त होता है, प्रीति-युक्त होनेपर काय-चित्त शान्त रहता है, शान्त रहनेपर सुखकी अनुभूति होती है, सुखकी अनुभूति होनेपर चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम ! इसे ही कहते हैं कि वह आर्य-श्रावक विषम जीवन व्यतीत करनेवाली जनताके बीच रहता हुआ भी शान्त जीवन व्यतीत करता है, दुखित प्रजाके बीच रहता हुआ भी वह धर्म स्रोतमें आपन्न रहकर विचरता है। वह देवतानुस्मृतिकी भावना करता है। महानाम ! जिस आर्य-श्रावकने मार्ग-फल प्राप्त कर लिया है, जिसे शिक्षात्रय युक्त (–बुद्ध देशना) सुपरिचित है, वह बहुधा इसी प्रकार विहार करता है, उसकी चर्या बहुधा इसी प्रकार होती है।

(२) **साराणीय वर्ग**

भिक्षुओ, ये छह बातें स्मरणीय हैं। कौन-सी छह ? भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मैत्री-भाव युक्त शारीरिक व्यवहार

रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट अप्रकट रूपसे मैत्री-भाव युक्त वाणीका व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मैत्री-भाव युक्त मानसिक व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुअको जो कुछ भी धार्मिक विधिसे प्राप्त होता है, यहाँ तक कि भिक्षा-पात्रमें प्राप्त भिक्षा भी, वह उसे अपने सदाचारी साथियोंको बिना बाँटे अकेला ग्रहण नहीं करता, वह बाँट कर खानेवाला होता है, भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, भिक्षु अपने अखण्ड छिद्र-रहित धब्बे-रहित, अकलुषित, मुक्त, विज्ञों द्वारा प्रशंसित, निर्मल, समाधि-मार्गी शीलोंको ले अपने वैसे ही शीलवान् साथियोंके साथ अप्रकट और प्रकट रूपसे सदाचार पूर्ण व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षु, जो यह आर्य-दृष्टि है, जो तदनुसार आचरण करनेवालेका दुःख क्षय कर देनेवाली है,वैसी दृष्टि-युक्त हो अपने साथियोंके प्रति प्रकट तथा अप्रकट रूपसे व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय हैं। भिक्षुओ, ये छह बातें स्मरणीय हैं।

भिक्षुओ, ये छह बातें स्मरणीय हैं, प्रिय लगनेवाली हैं, गौरवार्ह हैं, संगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती हैं। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट अप्रकट रूपसे मैत्री-युक्त शारीरिक व्यवहोर रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, संगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मैत्री भाव युक्त वाणीका व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, संगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुका अपने साथी भिक्षुओंके प्रति प्रकट-अप्रकट रूपसे मत्री-भाव-युक्त मानसिक व्यवहार रहता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, संगठनके लिये, अविवादके लिये, ससमग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, एक भिक्षुको जो कुछ भी धार्मिक विधिसे प्राप्त होता है, यहाँ तक कि भिक्षा-पात्रमें प्राप्त भिक्षा भी, वह उसे अपने सदाचारी साथियोंको बिना बाँटे अकेला ग्रहण नहीं करता, वह बाँट कर खानेवाला होता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगने वाली है, गौरवार्ह है, संगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र भावके लिये तथा

एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ, भिक्षु अपने अखण्ड, छिद्र-रहित, धब्बे-रहित, अकलुषित, मुक्त, विज्ञों द्वारा प्रशंसित, निर्मल,समाधि-मार्गी शीलोंसे युक्त होकर अपने वैसे ही शीलवान् साथियोंके साथ प्रकट अप्रकट रूपसे सदाचार पूर्ण व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगने वाली है, गौरवार्ह है, संगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है। फिर भिक्षुओ एक भिक्षु, जो यह आर्य-दृष्टि है, जो तदनुसार आचरण करने वालेका, दुःख क्षय कर देनेवाली है, वैसी दृष्टिसे युक्त हो अपने साथियोंके प्रति प्रकट तथा अप्रकट रूपसे व्यवहार करता है। भिक्षुओ, यह बात भी स्मरणीय है, प्रिय लगनेवाली है, गौरवार्ह है, संगठनके लिये, अविवादके लिये, समग्र-भावके लिये तथा एकताके लिये होती है।

भिक्षुओ, ये छह मोक्ष-मार्गी धातुयें हैं। कौन-सी छह? भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने मैत्री चित्त-विमुक्तिका अभ्यास किया, बढ़ाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया तथा सम्यक् प्रकार से ग्रहण किया, तो भी क्रोध मेरे चित्तको व्याप्त किये रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नहीं है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्यान् ऐसा मत कहो, भगवानपर दोषारोपण मत करो, भगवान्पर दोषारोपण करना ठीक नहीं, भगवान ऐसा नहीं कहते। आयुष्यान्, इसकी कोई संभावना नहीं है, इसके लिये कहीं गुँजायश नहीं है कि कोई मैत्री चित्त-विमुक्ति का आभ्यास करे, बढ़ाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तको क्रोध व्याप्त किये रहे। आयुष्मान! मैत्री चित्त-विमुक्ति द्वेषकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने करुणा चित्त-विमुक्तिका अभ्यास किया, बढ़ाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया, तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया, तो भी खेद मेरे चित्तको व्याप्त किये रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नहीं है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्मान्, ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोषारोपण मत करो, भगवान्पर दोषारोपण करना ठीक नहीं। भगवान् ऐसा नहीं कहते। आयुष्मान्! इसकी कोई संभावना नहीं है, इसके लिये कहीं गुँजायश नहीं है कि कोई करुणा चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, बढ़ाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तको खेद व्याप्त किये रहे। करुणा चित्त-विमुक्ति खेदकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने मुदिता चित्त-विमुक्ति-का अभ्यास किया, बढ़ाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया तो भी अरुचि मेरे चित्तको व्याप्त किये रहती है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नहीं है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्मान् ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोषारोपण मत करो, भगवान्पर दोषारोपण करना ठीक नहीं, भगवान् ऐसा नहीं कहते। आयुष्मान्! इसकी कोई संभावना नहीं है, इसके लिये कोई गुँजायश नहीं है कि कोई मुदिता चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, बढ़ाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तमें अरुची बनी रहे। मुदिता चित्त-विमुक्ति अरुची की सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने उपेक्षा चित्त-विमुक्ति-का अभ्यास किया, बढ़ाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया, तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया तो भी राग मेरे चित्तको व्याप्त किये रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नहीं है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्मान् ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोषारोपण मत करो, भगवान्पर दोषारोपण करना ठीक नहीं। भगवान् ऐसा नहीं कहते। आयुष्मान्! इसकी कोई सम्भावना नहीं है, इसके लिये कोई गुँजायश नहीं है कि कोई उपेक्षा चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, बढ़ाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसके चित्तको राग ग्रसे रहे। उपेक्षा चित्त-विमुक्ति रागकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मैंने अनिमित्त (=ध्यानके विषय रहित) चित्त विमुक्तिका अभ्यास किया, बढ़ाया, अधिकाधिक किया, वस्तुगत किया, अनुष्ठान किया, परिचित किया, तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण किया तो भी मेरा विज्ञान (=चित्त) ध्यानके विषयका अनुसरण करता है। उसे कहना चाहिये कि यह ऐसा नहीं है। उसे कहना चाहिये कि आयुष्मान् ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोषारोपण मत करो, भगवान्पर दोषारोपण करना ठीक नहीं, भगवान् ऐसा नहीं कहते। आयुष्मान् इसकी कोई सम्भावना नहीं है, इसके लिये कोई गुँजायश नहीं है कि कोई अनिमित्त चित्त-विमुक्तिका अभ्यास करे, बढ़ाये, अधिकाधिक करे, वस्तुगत करे, अनुष्ठान करे, परिचित करे तथा सम्यक् प्रकारसे ग्रहण करे और तो भी उसका चित्त ध्यानके विषय (=निमित्त) का अनुसरण करनेवाला बना रहे। आयुष्मान्! अनिमित्त चित्त-विमुक्ति सभी निमित्तोंकी सम्पूर्ण दवा है।

भिक्षुओ, हो सकता है कि एक भिक्षु ऐसा कहे कि मेरा अहंकार जाता रहा, मुझे ऐसा नहीं दिखाई देता कि यह "मैं" हूँ, किन्तु तो भी विचिकित्सा, यह कैसे, यह कैसे रूपी शल्य, चित्तको बींधता रहता है। उसे कहना चाहिए कि यह ऐसा नहीं है। उसे कहना चाहिए कि आयुष्मान्! ऐसा मत कहो, भगवान्पर दोषारोपण मत करो, भगवान्पर दोषारोपण करना ठीक नहीं। भगवान् ऐसा नहीं कहते। आयुष्मान्! इसकी कोई सम्भावना नहीं है, इसके लिये कोई गुँजायश नहीं है कि कोई कहे कि मेरा अहंकार जाता रहा, मुझे ऐसा नहीं दिखाई देता कि यह मैं हूँ, किन्तु तो भी विचिकित्सा, यह कैसे, यह कैसे रूपी शल्य चित्तको बींधता रहे। आयुष्मान्! अहंकारका नाश विचिकित्साकी, यह कैसे, यह कैसे शल्यकी सम्पूर्ण दवा है। भिक्षुओ ये छह मोक्ष-मार्गी धातुयें हैं।

उस समय आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ।" उन भिक्षुओंने आयुष्मान सारिपुत्रको प्रतिवचन दिया—"हाँ, आयुष्मान्।" तब आयुष्मान् सारिपुत्रने यह कहा—"भिक्षुओ, एक भिक्षु उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे न उसकी मृत्यु ही भली प्रकार होती है और न उसकी परलोक-यात्रा ही भली प्रकार होती है।"

"आयुष्मान्! एक भिक्षु कैसे उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे न उसकी मृत्यु ही भली प्रकार होती है, न उसकी परलोक-यात्रा ही भली प्रकार होती है?"

"आयुष्मानो! एक भिक्षु कार्य-बहुल होता है, कार्योंमें ही रत, कार्योंमें ही आसक्त; वार्तालाप-बहुल होता है, वार्तालापमें ही रत, वार्तालापमें ही आसक्त; निद्रा-बहुल होता है, निद्रामें ही रत, निद्रामें ही आसक्त; मण्डली-बहुल होता है, मण्डलीमें ही रत, मण्डलीमें ही आसक्त; संसर्ग-बहुल होता है, संसर्गमें ही रत, संसर्गमें ही आसक्त; प्रपंच बहुल होता है, प्रपंचमें ही रत, प्रपंचमें ही आसक्त। इस प्रकार आयुष्मानो! एक भिक्षु ऐसा जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे न उसकी मृत्यु ही भली प्रकारकी होती है, न उसकी परलोक यात्रा ही भली प्रकार होती है। आयुष्मानो! इसे ही कहते हैं कि वह भिक्षु सत्काय-दृष्टिमें अनुरक्त है, उसने दुःखका सम्पूर्ण रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग नहीं किया।

"भिक्षुओ, एक भिक्षु उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी भली प्रकारसे होती है और उसकी परलोक-यात्रा भी भली प्रकार से होती है।"

"आयुष्मान् ! एक भिक्षु कैसे उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी भली प्रकार होती है और उसकी परलोक यात्रा भी भली प्राकार होती है ? "

"आयुष्मानो ! एक भिक्षु न कार्य-बहुल होता है, न कार्योंमें ही रत, न कार्योंमें ही आसक्त; न वार्तालाप-बहुल होता है, न वार्तालापमें ही रत, न वार्तालापमें ही आसक्त; न निद्रा-बहुल होता है, न निद्रामें ही रत, न निद्रामें ही आसक्त; न मण्डली-बहुल होता है, न मण्डलीमें ही रत, न मण्डलीमें ही आसक्त; न संसर्ग-बहुल होता है, न संसर्गमें ही रत, न संसर्गमें ही आसक्त; न प्रपंच बहुल होता है, न प्रपंचमें ही रत, न प्रपंचमें ही आसक्त। इस प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षु ऐसा जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी भली प्रकार होती है और उसकी परलोक-यात्रा भी भली प्रकार होती है। आयुष्मानो ! इसे ही कहते हैं कि वह भिक्षु निर्वाण-मार्गी है और उसने दुःखका सम्पूर्ण रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग कर दिया।

यो पपञ्चमनुयुत्तो पपञ्चाभिरतो मगो,
विराधयी सो निब्बाणं योगक्खेमं अनुत्तरं ॥
यो पपञ्चं हित्वान निप्पपञ्चपदे रतो,
आराधयी सो निब्बाणं योगक्खेमं अनुत्तरं ॥

[जो मृग सदृश मूर्ख आदमी प्रपञ्चमें ही उलझा रहता है, प्रपञ्चमें ही फंसा रहता है, वह अनुपम योगक्षेम निर्वाण-प्राप्तिके पथपर न चलनेवाला होता है। जो प्रपञ्च छोड़ निष्प्रपञ्च जीवन व्यतीत करता है, वह अनुपम योगक्षेम निर्वाण प्राप्तिके पथपर चलनेवाला स्होता है।]

उस समय आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओंको सम्बोन्धित किया—"भिक्षुओ, एक भिक्षु उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप पूर्ण होती है और उसकी परलोक यात्रा भी अनुतापपूर्ण होती है।"

"आयुष्मान ! एक भिक्षु कैसे उस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण होती है और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण होती है ? "

"आयुष्मानो ! एक भिक्षु कार्य-बहुल होता है, कार्योंमें ही रत, कार्योंमें ही आसक्त; वार्तालाप-बहुल होता है ...... निद्रा-बहुल होता है ......मण्डली-

बहुल होता है.......संसर्ग-बहुल होता है.......प्रपञ्च-बहुल होता है, प्रपञ्चमें ही रत, प्रपञ्चमें ही आसक्त। इस प्रकार आयुष्मानो! एक भिक्षु जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण होती है और उसकी पर लोक यात्रा भी अनुताप पूर्ण होती है। आयुष्मानो! इसे ही कहते हैं कि वह भिक्षु सत्काय-दृष्टिमें अनुरक्त है, उसने दुःखका सम्पूर्ण रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग नहीं किया।

"आयुष्मानो। एक भिक्षु इस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण नहीं होती, और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण नहीं होती।"

"आयुष्मान! एक भिक्षु कैसे इस प्रकारका जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे उसकी मृत्यु भी अनुताप-पूर्ण नहीं होती, और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण नहीं होती?"

"आयुष्मानो! एक भिक्षु न कार्य-बहुल होता है, न कार्योंमें ही रत रहता है, न कार्योंमें ही आसक्त रहता है, व वार्तालाप-बहुल होता है......न निद्रा-बहुल होता है........न मण्डली-बहुल होता है......न संसर्ग-बहुल होता है......न प्रपञ्च बहुल होता है, न प्रपञ्चमें ही रत, न प्रपञ्चमें ही आसक्त। इस प्रकार आयुष्मानो! एक भिक्षु जीवन व्यतीत करता है, जिस प्रकारका जीवन व्यतीत करनेसे,उसकी मृत्यु भी अनुताप पूर्ण नहीं होती, और उसकी परलोक-यात्रा भी अनुताप-पूर्ण नहीं होती। इसे ही कहते हैं कि वह भिक्षु निर्वाण-गामी है और उसने दुःखका सम्पूर्ण-रूपसे क्षय करनेके लिये सत्काय-दृष्टिका त्याग कर दिया है।

यो पपञ्चमनुयुत्तो पपच्चाभिरतो मगो,
विराधयी सो निब्बाणं योगक्खेमं अनुत्तरं॥
यो पपञ्चं हित्वान निप्पपञ्चपदे रतो,
आराधयी सो निब्बाणं योगक्खेमं अनुत्तरं॥

[जो मृग सदृश मूर्ख आदमी प्रपञ्चमें ही उलझा रहता है, प्रपञ्चमें ही फँसा रहता है, वह अनुपम योग-क्षेम निर्वाण-प्राप्तिके पथपर न चलने वाला होता है। जो प्रपञ्च छोड़कर निष्प्रपञ्च जीवन व्यतीत करता है, वह अनुपम योग-क्षेम निर्वाण-प्राप्तिके पथपर चलने वाला होता है।]

एक समय भगवान् भग्ग जनपदके, सुँसुमार गिरिके भेसकळा नामक वनमें मृगदावमें विहार कर रहे थे। उस समय नकुलपिता गृहपति अस्वस्थ था, दुखित था,

अत्यन्त रुग्ण था। तब नकुल माता गृहपत्निने नकुल पिता गृहपतिको ऐसा कहा—"हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग दुखद होता है। भगवान्ने भी चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग करनेकी निन्दा की है। हे गृहपति! हो सकता है कि आप यह सोचते हों कि मेरे मरनेके बाद नकुल माता गृहपत्नि बच्चोंका पालन-पोषण नहीं कर सकेगी, घरको नहीं सम्भाल सकेगी। हे गृहपति! ऐसा नहीं सोचना चाहिए। हे गृहपति! मैं कपास कातनेमें कुशल हूँ। भेड़के बालोंकी वेणियाँ बनानेमें कुशल हूँ। हे गृहपति! मैं तुम्हारे न रहनेपर बच्चोंका पालन पोषण कर सकूँगी, घरको सम्भाल सकूँगी। इसलिये हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करना दुखद होता है। भगवान्ने भी चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता हो कि आप यह सोचते हों कि मेरे मरनेके बाद नकुल माता गृहपत्नि दूसरा पति कर लेगी। हे गृहपति! ऐसा नहीं सोचना चाहिये। हे गृहपति! इस बातको या तो तुम ही जानते हो या मैं जानती हूँ कि मैंने सोलह वर्ष तक गृहस्थ-ब्रह्मचर्यका पालन किया है। इसलिए हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करना दुःखद होता है। भगवान्ने, भी चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हों कि मेरे न रहनेपर नकुल माता गृहपत्नि बुद्ध तथा संघका दर्शन करनेके लिये इतनी उत्सुक नहीं रहेगी। हे गृहपति! ऐसा नहीं सोचना चाहिए। हे गृहपति! तुम्हारे न रहनेपर मैं बुद्ध और भिक्षु संघका दर्शन करनेके लिये और भी अधिक उत्सुक हो जाऊँगी। इसलिए हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करना दुःखद होता है। भगवान्ने भी चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हों कि मेरे न रहनेपर नकुल माता गृहपत्नि शीलोंका पालन करनेके प्रति उदासीन हो जायेगी। हे गृहपति! ऐसा नहीं सोचना चाहिए। हे गृहपति! उन भगवान्की जितनी भी श्वेत वस्त्र धारिणी शीलवती उपासिकायें हैं, मैं उनमेंसे एक हूँ। जिस किसीको इस विषयमें शक हो, सन्देह हो, तो भग्ग जनपदके सुँसुमार गिरिके भेसकळा नामक मृगदावमें भगवान् सम्यक् सम्बुद्ध विहार करते हैं, उनके पास जाकर पूछ ले। इसलिये हे गृहपति! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करना दुःखद होता है। भगवान् ने भी चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हों कि नकुल माता गृहपत्निको चित्तकी शान्ति प्राप्त नहीं है। हे गृहपति ! ऐसा नहीं सोचना चाहिए। हे गृहपति ! उन भगवान्‌की जितनी भी श्वेत वस्त्र धारिणी शान्त चित्त उपासिकायें हैं, मैं उनमेंसे एक हूँ। जिस किसीको इस विषयमें शक हो, सन्देह हो, तो भग्ग जनपदके सुँसुमार गिरिके भेसकळा नामक मृगदावमें भगवान् सम्यक् सम्बुद्ध विहार करते हैं, उनके पास जाकर पूछ ले। इसलिये हे गृहपति ! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करना दुःखद होता है। भगवान्‌ने भी चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करनेकी निन्दा की है।

"हो सकता है कि आप यह सोचते हों कि नकुल माता गृहपत्निका इस धर्म-विनयमें प्रवेश नहीं है, वह इसमें प्रतिष्ठित नहीं है, उसका इसमें विश्वास नहीं है, वह इसमें सन्देह रहित नहीं है, उसके शक दूर नहीं हुए, हैं, वह इसमें विशारद नहीं है, वह अभी अन्य-विश्वासोंसे मुक्त नहीं हुई है। हे गृहपति ! इस प्रकार नहीं सोचना चाहिए। हे गृहपति ! उन भगवान्‌की जितनी भी श्वेत वस्त्र धारिणी ऐसी उपासिकायें हैं जिन्होंने इस धर्म-विनयमें प्रवेश पाया है, जो इसमें प्रतिष्ठित हैं, जिनका इसमें विश्वास है, जो इसमें सन्देह रहित हैं, जिनके शक दूर हो गये हैं, जो विशारद हैं, जो अन्य-विश्वासोंसे सर्वथा मुक्त हैं, मैं उनमेंसे एक हूँ। जिस किसीको इस विषयमें शक हो, सन्देह हो, तो भग्ग जनपदके सुँसुमार गिरिके भेसकळा नामक मृगदावमें भगवान् सम्यक् सम्बुद्ध विहार करते हैं, उनके पास जाकर पूछ ले। इसलिये हे गृहपति ! आप चिन्ता लिये प्राणोंका परित्याग न करें। चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करना दुःखद होता है। भगवान्‌ने भी चिन्ता लेकर प्राणोंका परित्याग करनेकी निन्दा की है।"

जिस समय नकुल माता गृहपत्नि नकुल पिता गृहपतिको इस प्रकार सान्त्वना दे रही थी, नकुलपिता गृहपतिका रोग सर्वथा शान्त हो गया। उस नकुलपिता गृहपतिकी उस व्याधीका ऐसा शमन हुआ कि वह रोग-शैय्यासे उठ खड़ा हुआ। तब रोग-शैय्या छोड़नेके थोड़े ही समय बाद नकुल पिता गृहपति लाठी टेकता हुआ, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्‌को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठ हुए उस नकुल पिता गृहपतिको भगवान्‌ने ऐसा कहा—हे गृहपति ! तुझे बड़ा लाभ है, तू बड़ा भाग्यवान् है जो नकुल माता जैसी गृहपत्नि है, जो तुझपर अनुकम्पा करने-वाली है, जो तेरी हितचिंतक है, जो तुझे सान्त्वना देनेवाली है तथा जो तुझे उपदेश देनेवाली है। हे गृहपति ! जितनी भी मेरी श्वेत वस्त्र धारिणी शीलवती उपासिकायें हैं, नकुल माता गृहपत्ति उनमेंसे एक है; जितनी भी मेरी श्वेत वस्त्र धारिणी शान्त

चिन्त उपासिकायें हैं नकुल माता गृहपत्नि उनमें से एक है,; जितनी भी मेरी श्वेत वस्त्र धारिणी ऐसी उपासिकायें हैं, जिन्होंने इस धर्म-विनयमें प्रवेश पाया है, जो इसमें प्रतिष्ठित हैं, जिनका इसमें विश्वास है, जो इसमें सन्देह-रहित हैं, जिनके शक दूर हो गये हैं, जो विशारद हैं, तथा जो अन्य विश्वासोंसे सर्वथा मुक्त हैं, नकुल माता गृहपत्नि उनमेंसे एक है। हे गृहपति! तुझे बड़ा लाभ है, तू बड़ा भाग्यवान् है, जो नकुल माता जैसी गृहपत्नि है, जो तुझपर अनुकम्पा करनेवाली है, जो तेरी हितचिंतक है, जो तुझे सान्त्वना देनेवाली है तथा जो तुझे उपदेश देनेवाली है।

एक बार भगवान् श्रावस्तीमें अनाथपिण्डकके जेतवनाराममें विहार कर रहे थे। शाम होनेपर, भगवान् ध्यानावस्थित रह चुकनेके अनन्तर, उपस्थान शालामें पहुँचे। वहाँ पहुँचनेपर बिछे आसनपर बैठे। आयुष्मान् सारिपुत्र भी शाम होनेपर, ध्यानावस्थित रह चुकनेके अनन्तर, जहाँ उपस्थान शाला थी, वहाँ पहुँचे। जाकर, भगवान्को अभिवादन कर, एक ओर बैठे। आयुष्मान् महामोग्गल्लान भी, आयुष्मान् महाकाश्यप भी, आयुष्मान् महाकात्यायन भी, आयुष्मान् महाकोट्ठित भी, आयुष्मान् महाचुन्द भी, आयुष्मान् महाकप्पिन भी, आयुष्मान् अनुरूद्ध भी, आयुष्मान् रेवत भी तथा आयुष्मान् आनन्द भी, शाम होनेपर, ध्यानावस्थित रह चुकनेके अनन्तर, जहाँ उपस्थान-शाला थी, वहाँ पहुँचे और वहाँ पहुँचकर भगवान्को अभिवादन कर एक और बैठ गये।

तब भगवान् रात्रिका अधिकांश समय बैठे ही बैठे बिताकर, आसनसे उठनेके अनन्तर विहारमें प्रविष्ट हुए। भगवानके चले जानेके थोड़ी देर बाद ही वे आयुष्मान् भी उठकर अपने अपने विहरमें चले गये। लेकिन वहाँ जो नये भिक्षु थे, जिन्हें प्रव्रजित हुए अभी थोड़ा ही समय हुआ था, जो अभी धर्म-विनयमें प्रविष्ट हुए ही थे, वे सूर्योदय होने तक कौओंकी-सी दान्त कटकटानेकी आवाज करते हुए पड़े सोते रहे। भगवान्ने अलौकिक, दिव्य, विशुद्ध चक्षुसे उन भिक्षुओंको सूर्योदय होने तक कौओंकी तरह दान्त कटकटानेकी आवाज करते हुए सोते देखा। देखकर जहाँ उपस्थान-शाला थी, वहाँ पहुँचे। जाकर बिछे आसनपर बैठे। बैठ कर भगवान्ने उन भिक्षुओंको बुलवाया—"भिक्षुओ, सारिपुत्र कहाँ है? मोग्गल्लान कहाँ है? महाकाश्यप कहाँ है? महाकात्यायन कहाँ है? महाकोठ्ठित कहाँ है? महाचुन्द कहाँ है? महाकप्पिन कहाँ है? अनुरुद्ध कहाँ है? रेवत कहाँ है? आनन्द कहाँ है? भिक्षुओ, वे सब स्थविर श्रावक कहाँ गये?"

"भन्ते ! आपके चले जानेके थोड़े ही समय बाद वे आयुष्मान् भी उठकर अपने विहारको चले गये। इसीलिये आप नये स्थविर भिक्षु सूर्योदय होने तक कौओंकी तरह दान्त कटकटाते हुए पड़े सोते रहे।"

"तो भिक्षुओ, तुम क्या मानते हो, क्या तुमने कहीं देखा है या सुना है कि मुकुट धारी क्षत्रिय राजा हुआ हो, जो मनचाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तंद्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्म भर राज्य करते रहने पर भी, जनपद के लोगों को प्रिय लगने वाला, अच्छा लगने वाला हुआ हो ?"

"भन्ते ! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है, न सुना है कि कोई मुकुट-धारी क्षत्रिय राजा हुआ हो, जो मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तन्द्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्म भर राज्य करते रहनेपर भी जनपदके लोगोंको प्रिय लगनेवाला, अच्छा लगनेवाला हुआ हो ?

"तो भिक्षुओ, तुम क्या मानते हो, क्या तुमने कहीं देखा है या सुना है कि कोई राष्ट्रिक हो, कोई बापदादाकी अर्जित कमाई खानेवाला हो, कोई सेनापति हो, कोई गाँवका मुखिया हो, कोई पूग (= गण)का मुखिया हो और वह मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तन्द्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्म भर पूगका मुखिया रहा हो, तो भी वह पूगके लोगोंको प्रिय लगने वाला, अच्छा लगनेवाला हुआ हो ?"

"भन्ते ! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है, न सुना है कि कोई पूगका मुखिया हो और वह मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख, तन्द्राका सुख लेता रहा हो और वह जन्मभर पूगका मुखिया रहा हो, तो भी वह पूगके लोगोंको प्रिय लगने वाला, अच्छा लगने वाला हुआ हो।

"तो भिक्षुओ, तुम क्या मानते हो, क्या तुमने कहीं देखा है या सुना है कि कोई श्रमण या ब्राह्मण हो और वह मन चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख तथा तन्द्रा-सुखका अनुभव करता हो, इन्द्रिय संयम रहित हो, भोजनकी उचित मात्रासे अनभिज्ञ हो, जाग्रत न रहता हो, कुशल (= शुभ) बातोंके पर्येषणमें न लगा रहता हो, हरसमय बोधि-पक्षीय धर्मोंकी भावना करनेमें न लगा रहता हो और वह इसी जन्ममें आस्रवोंका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको जानकर साक्षात् कर विचर रहा हो ?"

"भन्ते ! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है, न सुना है कि कोई श्रमण या ब्राम्हण हो और वह मन-चाही निद्राका सुख, स्पर्श-सुख तथा तन्द्रा-सुखका अनुभव करता हो, इन्द्रिय-संयम रहित हो, भोजनकी उचित मात्रासे अनमिज्ञ हो, जाग्रत न रहता हो, कुशल (=शुभ) बातोंके पर्येषणमें न लगा रहता हो, हर समय बोधि-पक्षीय धर्मोंकी भावना करनेमें न लगा रहता हो और वह इसी जन्ममें आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्तिको जानकर, साक्षात कर विचर रहा हो।

"इसलिए भिक्षुओ, यह सीखना चाहिए कि हम संयतेन्द्रिय होंगे, भोजनके विषय में मात्रज्ञ होंगे, जागरूक रहेंगे, कुशल (=शुभ) बातोंके पर्येषणमें लगे रहेंगे, हर समय बोधि-पक्षीय धर्मोंकी भावना करनेमें लगे रहेंगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिए।"

एक बार महान भिक्षु संघके साथ भगवान कोशल जनपदमें विचर रहे थे। रास्ते चलते भगवानने एक प्रदेश–विशेषमें एक मछुएको देखा, मछली पकड़नेवालेको देखा कि वह मछलियोंको मार मार कर बेच रहा है। भगवान एक वृक्षके नीचे बिछे आसन पर जा विराजमान हुए। बैठकर भगवानने भिक्षुओंको सम्बोधित किया––"भिक्षुओ, इस मछुवेको, मछली पकड़ने वालेको, मछलियाँ मार मार कर बेचने वाले को देखते हो?"

"भन्ते! हाँ।"

"तो भिक्षुओ, क्या मानते हो? क्या तुमने कहीं देखा या सुना है कि कोई मछुवा हो, मछली पकड़ने वाला हो, मछली मार मार कर बेचने वाला हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे हाथी पर चढ़नेवाला हो गया हो, घोड़ेपर चढ़नेवाला हो, रथपर चढ़नेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारी पर चढ़नेवाला हो, भोग्य-पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्य शाली हो गया हो?"

"भन्ते! नहीं।"

"भिक्षुओ! ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है और न सुना है कि कोई मछुवा हो, मछली पकड़नेवाला हो, मछली मार मारकर बेचनेवाला हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे, हाथीपर चढ़नेवाला हो गया हो, घोड़ेपर चढ़नेवाला हो गया हो, रथपर चढ़नेवाला हो गया हो (या किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला हो गया हो, भोग्य-पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्यशाली हो गया हो। इसका क्या कारण है? भिक्षुओ, वह मछुवा उन बध करनेके लिये लाई गई मछलियोंको पाप-पूर्ण दृष्टिसे देखता है। इसीसे वह न हाथीपर चढ़नेवाला होता है, न घोड़ेपर चढ़नेवाला होता है, न रथपर चढ़नेवाला होता, न (किसी दूसरी)

सवारीपर चढ़नेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य-शाली होता है।

"तो भिक्षुओ, क्या मानते हो? क्या तुमने कहीं देखा या सुना है कि कोई गौ-घातक हो और वह गौओंको काट काट कर बेचता हो, और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे हाथीपर चढ़नेवाला हो गया हो, घोड़ेपर चढ़नेवाला हो गया हो, रथपर चढ़नेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला हो गया हो, भोग्य-पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्य-शाली हो गया हो?"

"भन्ते! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है और न सुना है कि कोई गो-घातक हो और वह गौओंको काट काटकर बेचता हो, और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे हाथीपर चढ़नेवाला हो गया हो, घोड़ेपर चढ़नेवाला हो गया हो, रथपर चढ़नेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला हो गया हो, भोग्य-पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्य-शाली हो गया हो। इसका क्या कारण है? भिक्षुओ, वह गो-घातक उन काटनेके लिये लाई गई गौओंको पापपूर्ण दृष्टिसे देखता है। इसीसे वह न हाथीपर चढ़नेवाला होता है, न घोड़ेपर चढ़नेवाला होता है, न रथपर चढ़नेवाला होता है, न (किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य-शाली होता है।

"तो भिक्षुओ, क्या मानते हो। क्या तुमने कहीं देखा या सुना है कि कोई भेड़ मारने वाला हो..... कोई सूअर मारनेवाला हो... कोई चिड़ीमार हो.... कोई हिरन मारनेवाला हो और वह मृगोंको मार मारकर बेचता हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे, हाथीपर चढ़नेवाला हो गया हो, घोड़ेपर चढ़नेवाला हो गया हो, रथपर चढ़नेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला हो गया हो, भोग्य पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्यशाली हो गया हो?"

"भन्ते! नहीं।"

"भिक्षुओ, ठीक है। मैंने भी न कहीं देखा है और न सुना है कि कोई हिरन मारनेवाला हो और वह मृगोंको मार मारकर बेचता हो और वह उस कर्मसे, उस जीविकाके साधनसे, हाथीपर चढ़नेवाला हो गया हो, घोड़ेपर चढ़नेवाला हो गया हो, रथपर चढ़नेवाला हो गया हो, (या किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला हो गया हो, भोग्य पदार्थोंका स्वामी हो गया हो अथवा बहुत ऐश्वर्य-शाली हो गया हो। इसका क्या कारण है? भिक्षुओ, वह मृग मारनेवाला उन मारनेके लिए लाये गये मृगोंको

पापपूर्ण दृष्टिसे देखता है। इसीसे वह न हाथीपर चढ़नेवाला होता है,न घोड़ेपर चढ़ने वाला होता है, न रथपर चढ़नेवाला होता है, न (किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य-शाली होता है।

"भिक्षुओ, जब एक आदमी पशु-पक्षियोंको वध करनेके लिये ले जाता है और उन्हें पाप पूर्ण दृष्टिसे देखता है तो जब वह भी न हाथीपर चढ़नेवाला होता है, न रथपर चढ़नेवाला होता है, न घोड़ेपर चढ़नेवाला होता है, न रथपर चढ़नेवाला होता है, न (किसी दूसरी) सवारीपर चढ़नेवाला होता है, न भोग्य-पदार्थोंका स्वामी होता है और न बहुत ऐश्वर्य शाली होता है तो फिर उसका तो कहना ही क्या कि जो मनुष्यको मारनेके लिये ले जाता है और उसे पाप-पूर्ण दृष्टिसे देखता है। भिक्षुओ, यह उसके दीर्घ कालीन दुःख और अहितका कारण होता है। वह शरीर न रहनेपर, मरनेके अनन्तर अपाय, दुर्गतिको प्राप्त होता है और नरकमें जन्म ग्रहण करता है।"

एक समय भगवान् नादिका नामके गाँवमें गिंजका नामक निवासस्थानपर विराज रहे थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको आमन्त्रित किया--भिक्षुओ। उन भिक्षुओंने प्रतिवचन दिया--"भदन्त।" तब भगवान्ने यह कहा--"भिक्षुओ, मरणानुस्मृतिकी भावनासे, वृद्धि करनेसे महान् फलकी प्राप्ति होती है, महान शुभ परिणाम होता है अमृत (=निर्वाण) प्राप्त करा देनेवाली होती है। भिक्षुओ, तुम मरणानुस्मृतिकी भावना करो।" ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने भगवानसे यह निवेदन किया--"भन्ते! मैं मरणास्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं एक रात, एक दिन जीता रहूँ,भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा बड़ा उपकार हो। भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवानसे निवेदन किया--"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं एक दिन जीता रहूँ,भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा बड़ा उपकार हो। भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक तीसरे भिक्षुने भी भगवानसे निवेदन किया--"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें भिक्षा (=पिण्डपात) ग्रहण करता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करूं, इससे मेरा बड़ा उपकार हो। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक चौथे भिक्षुने भी भगवान्‌से निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें मैं चार पाँच कौर ग्रहण करता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करूं, इससे मेरा बड़ा उपकार हो। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक पाँचवें भिक्षुने भी भगवान्‌से निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें मैं एक कौर ग्रहण करता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करूं, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक छठे भिक्षुने भी भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें होता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें एक बार साँस लेता और साँस छोड़ता हूँ। उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करूं, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा। भन्ते! इस प्रकार मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

ऐसा कहनेपर भगवान्‌ने उन भिक्षुओंसे कहा—हे भिक्षुओ, जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं रात-दिन जीवित रहूँ; उतनी देर मैं भगवान्‌के अनुशासनका ध्यान करूं, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं एक दिन जीवित रहूँ; उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करूं, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित

रहूँ, जितनी देरमें भिक्षा ग्रहण करता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें चार पाँच कौर ग्रहण करता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करूं, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा—ये सब भिक्षु प्रमादी हैं, बड़े प्रमादके साथ दुःखके क्षयके लिए मरणानुस्मृतिकी भावना करते हैं।

"किन्तु भिक्षुओ, जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें मैं एक कौर ग्रहण करता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करुं, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा। और भिक्षुओ! जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी देर जीवित रहूँ, जितनी देरमें एक बार साँस लेता और साँस छोड़ता हूँ, उतनी देर मैं भगवानके अनुशासनका ध्यान करूँ, इससे मेरा बड़ा उपकार होगा—ये भिक्षु अप्रमादी हैं,ये आस्रवोंके क्षय करनेके लिये अप्रमाद पूर्वक मरणानुस्मृतिकी भावना करते हैं। इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम अप्रमादी होंगे और आस्रवोंका क्षय करनेके लिये,अप्रमाद-पूर्वक मरणानुस्मृतिकी भावना करेंगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिए।"

एक समय भगवान् नादिका ग्राममें गिंजका भवनमें निवास कर रहे थे। वहाँ भगवानने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ, मरणानुस्मृतिकी भावनासे, वृद्धि करनेसे महान् फलकी प्राप्ति होती है, महान् शुभ-परिणाम होता है, यह अमृत (=निर्वाण) प्राप्त करा देनेवाली होती है। भिक्षुओ, कैसे भावना करनेसे, कैसे वृद्धि करनेसे, मरणानुस्मृति माहन फलकी दाता होती है, महान् शुभ परिणामकी दाता होती है, अमृत (=निर्वाण) प्राप्त करा देनेवाली होती है? भिक्षुओ, भिक्षुको चाहिए कि वह दिनके अस्त हो जानेपर, रात्रिका आगमन हो जानेपर, इस प्रकार विचार करे कि मेरी मृत्युके बहुतसे कारण हो सकते हैं, मुझे साँप डस ले सकता है, मुझे बिच्छु डस ले सकता है, मुझे शतपदी डस ले सकती है, उससे मेरा मरना हो जा सकता है, और वह मेरे निर्वाण-पथका बाधक हो सकता है। इसी प्रकार मैं कहीं फिसल कर गिर सकता हूँ, खाया हुआ भोजन भी मेरा बिना पचे रह जाय, अथवा मेरा पित्त ही कुपित हो जाय, अथवा मेरा श्लेष्म ही कुपित हो जाय, अथवा मेरा शरीर-गत वायु कुपित हो जाय और उससे मेरा मरना हो जाय तो यह मेरे निर्वाण-पथका बाधक हो सकता है। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिए कि क्या मुझमें अभी कुछ ऐसे अकुशल-धर्म हैं, जिनका प्रहाण नहीं हुआ है और जो मेरे रातके समय

ही मर जानेपर मेरे निर्वाण-पथके बाधक हो सकते हैं? जब उस भिक्षुको यह पता लगे कि उसमें अभी ऐसे कुछ अकुशल-धर्म हैं, जिनका प्रहाण नहीं हुआ है और जो रातके समय ही उसकी मृत्यु हो जाने पर उसके निर्वाण-पथके बाधक हो सकते हैं। तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन्हीं अकुशल-धर्मोंका प्रहाण करनेके लिये, वह विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमंगसे काम ले, विशेष प्रयास करे, तथा स्मृति और संप्रजन्यसे युक्त हो। जैसे भिक्षुओ, किसीके कपड़ोंमें आग लगी हो, वा सिरमें आग लगी हो, वह कपड़ोंकी उसी आग वा सिरकी आगको बुझानेके लिये विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमंगसे काम ले, विशेष प्रयास करे तथा स्मृति और संप्रजन्यसे युक्त हो। इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन अकुशल-धर्मोंका प्रहाण करनेके लिये, वह विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमंगसे काम ले, विशेष प्रयास करे तथा स्मृति और संप्रजन्यसे युक्त हो। और भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर उस भिक्षुको ऐसा लगे कि मुझमें कोई ऐसे अकुशल-धर्म नहीं हैं, जिनका प्रहाण न हुआ हो, जो मेरे रातको ही मर जानेपर मेरे निर्वाण पथके बाधक बन सकें तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि वह उसी आनन्द और प्रीतिमें मस्त रहे और दिन रात कुशल-धर्मो (= शुभ कार्यों) में ही लगा रहे।

"भिक्षुओ, भिक्षुको चाहिए कि वह रातके बीत जानेपर, दिन उदय हो जानेपर, इस प्रकार विचार करे कि मेरी मृत्युके बहुतसे कारण हो सकते हैं, मुझे साँप डस ले सकता है, मुझे बिच्छु डस ले सकता है, मुझे शतपदी डस ले सकती है, इससे मेरा मरना हो जा सकता है और वह मेरे निर्वाण-पथका बाधक हो सकता है। इसी प्रकार मैं कहीं फिसल कर गिर सकता हूँ, खाया हुआ मेरा भोजन भी बिना पचे रह जा सकता है, मेरा पित्त ही कुपित हो जा सकता है, मेरा श्लेषम ही कुपित हो जा सकता है, मेरा शरीर-गत वायु ही कुपित हो जा सकता हैऔर उससे मेरा मरना हो जाय तो यह मेरे निर्वाण-पथका बाधक हो सकताहै। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिए कि क्या मुझमें अभी कुछ ऐसे अकुशल धर्म हैं जिनका प्रहाण नहीं हुआ है और जो मेरे दिनके समय ही मर जानेपर मेरे निर्वाण-पथके बाधक हो सकते हैं। जब उस भिक्षुको यह पता लगे कि उसमें अभी ऐसे कुछ अकुशल-धर्म हैं,जिनका प्रहाण नहीं हुआ है और जो दिनके समय ही उसकी मृत्यु हो जानेपर उसके निर्वाण-पथके बाधक हो सकते हैं। तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन्हीं अकुशल धर्मोंका प्रहाण करनेके लिये, वह विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह

दिखाये, विशेष उमंगसे काम ले, विशेष प्रयास करे तथा स्मृति और संप्रजन्यसे युक्त हो। जैसे भिक्षुओ किसीके कपड़ोंमें आग लगी हो वा सिरमें आग लगी हो, वह उसी कपड़ोंकी वा सिरकी आगको बुझानेके लिये विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमंग से काम ले, विशेष प्रयास करे तथा स्मृति और संप्रजन्यसे युक्त हो। इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि उन अकुशल-धर्मोंका प्रहाण करनेके लिये वह विशेष इच्छा करे, विशेष प्रयत्न करे, विशेष उत्साह दिखाये, विशेष उमंगसे काम ले, विशेष प्रयास करे तथा स्मृति और संप्रजन्यसे युक्त हो। और भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर उस भिक्षुको ऐसा लगे कि मुझमें कोई ऐसे अकुशल-धर्म नहीं हैं, जिनका प्रहाण न हुआ हो, जो मेरे दिनको ही मर जाने पर मेरे निर्वाण-पथके वाधक बन सकें तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिए कि वह उसी आनन्द और प्रीतिमें मस्त रहे और दिन-रात कुशल-धर्मों (= शुभ कार्यों) में ही लगा रहे।

(३) अनुत्तरिय वर्ग

एक समय भगवान् शाक्य जनपदके शामग्रामकी पुष्करिणीपर विहार करते थे। उस समय एक प्रकाशमान देवता प्रकाशमान रात्रिको सारी पुष्करिणीको आलोकित करता हुआ जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए देवताने भगवान्से यह निवेदन किया—भन्ते! तीन बातें भिक्षुकी अवनतिका कारण होती हैं। कौन-सी तीन बातें? कार्य-बहुलता, वचन-बहुलता तथा निद्रा-बहुलता। भन्ते! ये तीन बातें भिक्षुकी अवनतिका कारण होती हैं। उस देवताने यह कहा। भगवान उससे सहमत हुए। जब उस देवताने यह जाना कि भगवान् मुझसे सहमत हैं तो वह भगवान्को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्धान हो गया। तब भगवान्ने उस रात्रिके व्यतीत होनेपर भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ! आजकी प्रकाशपूर्ण रातमें एक प्रकाशमान् देवता समस्त पुष्करिणीको प्रकाश-युक्त करता हुआ जहाँ मैं था, वहाँ पहुँचा। पास जाकर मुझे प्रणाम कर एक ओर खड़ा हुआ। भिक्षुओ, एक ओर खड़े हुए, उस देवताने मुझे यह कहा—"भन्ते! तीन बातें भिक्षुकी अवनतिका कारण होती है। कौन-सी तीन बातें? कार्य-बहुलता, वचन-बहुलता तथा निद्रा-बहुलता। भन्ते! ये तीन बातें भिक्षुकी अवनतिका कारण होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने ऐसा कहा और इतना कहकर तथा मुझे अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्धान हो गया। भिक्षुओ, यह उन भिक्षुओंके लिये अच्छी बात नहीं है, यह उन भिक्षुओंका सौभाग्य नहीं है, जिनके बारेमें देवता भी जानते हैं कि उनकी कुशल-धर्मोंसे अवनति हो रही है।

"भिक्षुओ, मैं दुसरी भी ऐसी तीन बातोंका उपदेश करता हूँ जो अवनतिका कारण होती हैं, उन्हें सुनो और अपने मनमें स्थिर रूपसे धारण करो।"

उन भिक्षुओंने भगवानको प्रति-वचन दिया—"भन्ते ! बहुत अच्छा।"

तब भगवानने कहा—"भिक्षुओ ! वे दूसरी तीन बातें कौनसी हैं जो अवनतिका कारण होती हैं ? मण्डली-बाहुल्य, दुर्वचनीय होना, कुसंगति। भिक्षुओ, जितने भी लोग भूत कालमें कुशल धर्मोसे पतित हुए वे इन्हीं छः कारणोंसे पतित हुए, और भिक्षुओ, जो भविष्य में कुशल-धर्मोंसे पतित होंगे, वे भी इन्हीं छः कारणोंसे ही पतित होंगे, और भिक्षुओ, जो वर्तमानमें कुशल-धर्मोंसे पतित होंगे, वेभी इन छःकारणोंसे ही कुशल-धर्मोंसे पतित होंगे।

"भिक्षुओ, मैं छह बातोंका उपदेश देता हूँ जो उन्नतिका कारण होती हैं। उन्हें सुनो। अच्छी तरह मनमें जगह दो। कहता हूँ।"

उन भिक्षुओंने भगवान्‌को प्रतिवचन दिया—"भन्ते ! बहुत अच्छा।"

भगवानने कहा—"भिक्षुओ, वे कौनसी छः बातें हैं जो उन्नतिका कारण होती हैं ? कार्य-बहुल न होना, वार्ता-लाप-बहुल न होना, निंद्रा-बहुल न होना, मण्डली-बहुल न होना, सुवचनीय होना तथा सत्संगति। भिक्षुओ, ये छः बातें उन्नतिका कारण हैं। भिक्षुओ, भूतकालमें जिनका कुशल-धर्मोंसे पतन नहीं हुआ, वह इन्हीं छह बातोंके कारण नहीं हुआ, भविष्यमें भी जिनका भविष्यमें कुशल-धर्मोंसे पतन नहीं होगा. वह भी इन्हीं छह बातोंके कारण नहीं होगा, वर्तमानमें भी जिन का कुशल-धर्मोंसे पतन नहीं होगा वह भी इन्हीं छह बातोंके कारण नहीं होगा।

भिक्षुओ, 'भय' शब्द कामनाओंका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'दु:ख' शब्द कामनाओंका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'राग' शब्द कामनाओंका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'गण्ड' (फोड़ा) शब्द कामनाओंका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'शंका' शब्द कामनाओंका ही पर्याय है, भिक्षुओ, 'पंक' शब्द कामनाओंका ही पर्याय है। भिक्षुओ 'भय' शब्द कामनाओंका पर्याय क्यों है ? भिक्षुओ, जो काम-रागसे बंधे होते हैं, जो छन्द-रागसे बंधे होते हैं, वे इसी जन्ममें जो 'भय' होता है उससे भी मुक्त नहीं होते हैं और पारलौकिक भयसे भी मुक्त नहीं होते हैं। इस लिये भिक्षुओ, 'भय' शब्द कामनाओंका ही पर्याय है। भिक्षुओ, 'दु:ख' शब्द क्यों .... 'रोग' शब्द क्यों ... 'गण्ड' शब्द क्यों. ... 'शंका' (या संग) शब्द क्यों ....'पंक' शब्द क्यों कामनाओंका पर्याय है ? भिक्षुओ, जो काम-रागसे बंधे होते हैं, जो छन्द-रागसे बंधे होते हैं, वे इसी जन्ममें जो भय पैदा होता है, उससे भी मुक्त नहीं होते हैं। (और पारलौकिक भयसे भी मुक्त नहीं होते हैं) इसीलिये पंक शब्द कामनाओंका ही पर्याय है।

भयं दुक्खं च रोगो च गण्डो संगो पंको च उभयं,
एते कामा पवुच्चन्ति यत्थ सत्तो पुथुज्जनो ॥
उपादाने भयं दिस्वा जातिमरणसम्भवे
अनुपादा विमुच्चन्ति जातिमरण संखये ॥
ते खेमपत्ता सुखिनो दिट्ठधम्माभिनिब्बुता,
सब्बवेरभयातीता सब्बदुक्खं उपच्चगुं ॥

[भय, दुक्ख, रोग, गण्ड, संग तथा पंक ये सब कामनाओंके ही पर्याय हैं। पृथक जन इनमें आसक्त हो रहते हैं। पांच उपादान-स्कन्धोंके रहते जाति-मरण रूपी भय लगा ही रहता है। पांच उपादना-स्कन्धोंके न रहने पर जाति-मरणका भय नहीं रहता। जिनके उपादान-स्कन्ध नष्ट हो गये हैं, वे कल्याण-प्राप्त हैं, सुखी हैं, इसी जन्ममें शरीरके रहते ही निर्वाण-प्राप्त हैं,। वे सभी अवैर तथा भयसे परे पहुँच गये हैं और समस्त दुःखका अन्त कर चुके हैं।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं वह पर्वतराज हिमालयको भी विदीर्ण कर सकता है, इस निकम्मी अविद्याका तो कहना ही क्या? कौनसी छः बातें? भिक्षुओ, भिक्षु समाधि अवस्थाके प्राप्त करनेमें कुशल (=दक्ष) होता है, समाधि अवस्थामें स्थिर रहनेमें कुशल होता है, समाधि-अवस्था से उठनेमें कुशल होता है, समाधिको उपयुक्त बनानेमें समर्थ होता है, समाधि-अवस्थाकी प्राप्तिके अनुकूल प्रतिकूल चर्यामें कुशल होता है, उच्चतर समाधि-अवस्थाकी प्राप्तिके लिये प्रथम ध्यान, द्वितीय-ध्यान आदिसे आगे बढ़नेमें समर्थ होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं वह पर्वत-राज हिमायलको भी विदीर्ण कर सकता है, इस निकम्मी अविद्याका तो कहना ही क्या?

भिक्षुओ, ये छह अनुस्मरणके स्थान हैं। कौनसे छह? भिक्षुओ, एक आर्य श्रावक तथागतका अनुसस्मरण करता है, वे भगवान. . . देवताओं तथा मनुष्यों के शास्ता हैं, बुद्ध भगवान हैं। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है,और न मोहके आधीन होता है,उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मक्त हो गया रहता है, परिमुक्त हो गया रहता है, भिक्षुओ लोभ (=गेध) तो पांचों कामनाओंका पर्याय ही है। भिक्षुओ, बुद्धानस्मृति को भी चित्तका आलम्बन बनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धि को प्राप्त हो जाते हैं।

फिर भिक्षुओ, आर्य श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, भगवान द्वारा धर्म सु-आख्यात है।........प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात्कार किया जा सकता है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है, और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पांचों कामनाओंका पर्याय ही है। भिक्षुओ, धर्मानुस्मृतिको भी चित्तका आलम्बन बनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाते हैं।

फिर भिक्षुओ, आर्यश्रावक संघका अनुस्मरण करता है, कि भगवानका श्रावक-संघ सुप्रतिपन्न है. . . . . लोगोंका अनुपम पुण्य-क्षेत्र है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक संघका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ लोभ (गेध) तो पांचों कामनाओंका पर्याय ही है। भिक्षुओ, संघानुस्मृतिको भी चित्तका आलम्बन बना कर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाते हैं।

फिर भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अपने अखण्डित शीलोंका स्मरण करता है. . . . समाधिपरक। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक अपने शीलोंका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है। वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पांचों कामनाओंका पर्याय ही है। भिक्षुओ, अपने शीलकी अनुस्मृतिको भी चित्तका आलम्बन बनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाता है।

फिर भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है कि यह मेरे लिये बड़े लाभकी बात है यह मेरा बड़ा सौभाग्य है. . . . .याचना किये जानेके योग्य हूँ, बरावर बाँटकर खाने वाला हूँ। भिक्षुओ जिस समय आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पांचों कामनाओंका पर्याय ही है।

भिक्षुओ, अपने त्यागकी अनुस्मृतिको चित्तका आलम्बन बनाकर कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त हो जाते हैं।

फिर भिक्षुओ, आर्य श्रावक देवताओंका अनुस्मरण करता है कि चातुर्महाराजिक देवता हैं, त्रयोत्रिंश देवता हैं, याम देवता हैं, तुषित देवता हैं, निर्माण-रति देवता हैं, परनिर्मित वशवर्ती देवता हैं, ब्रह्मकायिक देवता हैं, और उनसे भी बढ़कर देवता हैं— और ये सब देवता-गण जैसी श्रद्धासे युक्त हैं, वैसी श्रद्धा मुझमें भी है, जैसे शील. . . . . . . जैसे श्रुत (=ज्ञान) से. . . . जैसे त्यागसे . . . .जैसी प्रज्ञासे युक्त होनेके कारण ये देवता-गण यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, मुझमें भी वैसी प्रज्ञा है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक अपनी और उन देवताओंकी श्रद्धाका,श्रुत=ज्ञानका, त्यागका और प्रज्ञाका स्मरण करता है उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है, और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभ से स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पांचों कामनाओंका पर्याय ही है। भिक्षुओ इस प्रकार देवताओंका स्मरण कर भी कोई कोई प्राणी शुद्धिको प्राप्त होते हैं। भिक्षुओ, ये छः अनुस्मृतियाँ हैं।"

उस समय आयुष्मान महाकात्यायनने भिक्षुओंको संबोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ!" उन भिक्षुओंने आयुष्मान् महाकात्यायन को प्रति-वचन दिया—"हाँ आयुष्मान।" आयुष्मान् महाकात्यायनने कहा—"आयुष्मानो! आश्चर्यकर है। आयुष्मानो! अद्भुत है। जो यह उन भगवान्, जानकार, द्रष्टा, अर्हत, सम्यक् सम्बुद्धका जो यह सुभाषित है, यह जो जंजालसे विमुक्ति है, यह जो ज्ञान है, यह जो प्राणियोंकी विशुद्धिके लिये, शोक तथा अनुतापका शमन करनेके लिये, दु:ख तथा दौर्मनस्यका अन्त करनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात् करनेके लिये यह जो छह अनुस्मृतियोंकी देशना है। कौन सी छह अनुस्मृतियाँ? भिक्षुओ, एक आर्य श्रावक तथागतका अनुश्रमण करता है, वे भगवान्. . .देवताओं तथा मनुष्योंके शास्ता हैं, बुद्ध भअगवान हैं। आयुष्मानो जिस समय आर्य-श्रावक तथागतका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्त की अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, परिमुक्त हो गया रहता है। भिक्षुओ, लोभ (=गेध) तो पांच कामगुणोंका पर्याय ही है। आयुष्मानो! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित

क्रोधरहित आकाश-सदृश चित्तसे युक्त होकर विचरता है तो आयष्मानो ! इस एक आलम्बण से भी कुछ प्राणी विशुद्धि को प्राप्त होते हैं।

फिर आयुष्मानो, आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है. . . .प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात् किया जा सकता है। आयुष्मानो ! जिस समय आर्य-श्रावक धर्मका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, पीरमुक्त हो गया रहता है। भिक्षुओ, लोभ (= गेध) तो पांचकामगुणोंका पर्याय ही है।आयुष्मानो ! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान् वैर-रहित क्रोध-रहित आकाश सदृश चित्तसे युक्त होकर विचरता है तो आयुष्मानो ! इस एक आलम्बनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धिको प्राप्त होते हैं।

फिर आयुष्मानो, आर्य-श्रावक संघका अनुस्मरण करता है, कि भगवान्का श्रावक-संघ सुप्रतिपन्न है. . . . . लोगोंका अनुपम पुण्यक्षेत्र है। आयुष्मानो ! जिस समय आर्य-श्रावक संघका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्रता हो गया रहता है। मुक्त हो गया रहता है, परिमुक्त हो गया रहता है। भिक्षुओ 'लोभ' (= गेध) तो पांच कामगुणोंका पर्याय ही है। आयुष्मानो ! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित, क्रोध-रहित आकाश-सदृश चित्तसे युक्त विचरता है तो आयुष्मानो ! इस एक आलम्बनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धि को प्राप्त होते हैं।

फिर आयुष्मानो ! आर्य-श्रावक अपने अखण्डित शीलोंका स्मरण करता है . . . . . . समाधि-परक। आयुष्मानो ! जिस समय आर्य-श्रावक अपने शीलोंका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न राग के आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ऋजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, पीरमुक्त हो गया रहता है। आयुष्मानो लोभ तो पांच कामनाओंका पर्याय हीहै। आयुष्मानो ! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैरहित, क्रोध-रहित आकाश सदृश चित्तसे युक्त हो विचरता है तो आयुष्मानो ! इस एक आलम्बनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धि को प्राप्त होते है।

फिर आयुष्मानो ! आर्य श्रावक अपने त्यागका अनस्मरण करता है कि यह मेरे लिये बड़े लाभकी बात है, यह मेरा बड़ा सौभाग्य है.....याचना किये जानेके योग्य हूँ, बराबर बांट कर खाने वाला हूँ। भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक अपने त्यागका अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, न द्वेषके आधीन होता है, और न मोहके आधीन होता है। उस समय उसके चित्तकी अवस्था ॠजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया रहता है, मुक्त हो गया रहता है, पीरमुक्त हो गया रहता है। आयुष्मानो ! लोभ तो पांच कामनाओंका पर्याय ही है। आयुष्मानो ! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित क्रोध-रहित आकाश सदृश चित्तसे युक्त हो विचरता है तो आयुष्मानो ! इस एक आलम्बन से भी कुछ प्राणी विशुद्धिको प्राप्त होते हैं।

फिर आयुष्मानो ! आर्य श्रावक देवताओंका अनुस्मरण करता है कि चातुर्महाराजिक देवता हैं, त्रयोत्रिंश देवता है, याम देवता हैं, तुषित देवता हैं, निर्माण-रति देवता हैं, पर-निर्मीत-वशवर्ती देवता हैं, ब्रह्मकायिक देवता हैं और उनसे भी बढ़कर देवता हैं– और ये सब देवता गण जैसी श्रद्धासे युक्त हैं, वैसी श्रद्धा मुझमें भी है, जैसे शीलसे. . . .जैसे श्रुत (=ज्ञान) से. . . .जैसे त्यागसे. . . .जैसी प्रज्ञा से युक्त होनेके कारण ये देवता गण यहाँसे च्युत होकर वहाँ उत्पन्न हुए, मझमें भी वैसी प्रज्ञा है। भिक्षुओ, जिस समय आर्य श्रावक अपनी और उन देवताओंकी श्रद्धा का, श्रुत्-ज्ञानका, त्यागका और प्रज्ञाका स्मरण करता है, उस समय उसका चित्त न रागके आधीन होता है, व न द्वेषके आधीन होता है और न मोहके आधीन होता है, उस समय उसके चित्तकी अवस्था ॠजु ही होती है, वह लोभसे स्वतन्त्र हो गया होता है, मुक्त हो गया होता है, परिमुक्त हो गया होता है। भिक्षुओ,लोभ (=गेध) तो पांच कामनाओंका पर्याय ही है। आयुष्मानो ! यदि वह आर्य-श्रावक सभी तरफ विपुल, महान्, वैर-रहित, क्रोध-रहित आकाश-सदृश चित्तसे युक्त हो विचरता है तो आयुष्मानो ! इस एक आलम्बनसे भी कुछ प्राणी विशुद्धिको प्राप्त होते हैं।

आयुष्मानो ! आश्चर्यकर है। आयुष्मानो ! अद्भुत है। जो यह उन भगवान्, जानकार, द्रष्टा, अर्हत्, सम्यक् सम्बुद्धका जो यह सुभाषित है, जो यह जंजालसेसे विमुक्ति है, जो यह ज्ञान है, जो यह प्राणियों की विशुद्धिके लिये, शोक तथा अनुतापका शमन करनेके लिये, दुःख तथा दौर्मनस्यका अन्त करनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात् करनेके लिये जो यह इन छह अनुस्मृतियोंकी देशना है।

तब एक भिक्षु जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने भगवानसे यह निवेदन किया—"भन्ते ! मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका कौन कौन सा समय (उपयुक्त) होता है ?"

भिक्षुओ ! मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेके ये छः उपयुक्त समय हैं। कौनसे छः? जिस समय भिक्षुके मनमें काम-राग-उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन काम-रागसे युक्त हो और जिस समय उसे कामरागके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान मेरे मनमें कामराग उत्पन्न हुआ है, मेरा मन काम-रागसे युक्त है, और मैं कामरागके उपशमनका यथार्थ उपाय नहीं जानता हूँ। आयुष्मान् बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे काम-रागका उपशमन हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे कामरागके उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह पहला उपयुक्त समय है, मनकी साधनाकरनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओं, जिस समय भिक्षुके मनमें क्रोध (= व्यापाद) उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन क्रोधसे युक्त हो और जिस समय उसे क्रोधके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान मेरे मनमें क्रोध उत्पन्न हुआ है, मेरा मन क्रोधसे युक्त है, और मैं क्रोधके उपशमनका यथार्थ उपाय नहीं जानता हूँ। आयुष्मान् बहुत अच्छा होगा कि यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे क्रोधका उपशमन हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे क्रोधके उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह दूसरा उपयुक्त समय है मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुके मनमें आलस्य (= थीनमिद्ध) उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उस का मन आलस्यसे युक्त हो और जिस समय उसे आलस्यके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान मेरे मनमें आलस्य उत्पन्न हुआ है, मेरा मन आलस्यसे युक्त है, और मैं आलस्यके उपशमनका यथार्थ उपाय नहीं जानता हूँ। आयुष्मान्, बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे आलस्यका उपशमन हो सके। मन की साधना करनेवाला भिक्षु उसे आलस्यके उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह तीसरा उपयुक्त समय है मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुके मनमें औद्धत्य-कौकृत्य उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन औद्धत्य-कौकृत्य से युक्त हो, और जिस समय उसे औद्धत्य-कौकृत्यके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान् मेरे मनमें औद्धत्य-कौकृत्य उत्पन्न हुआ है, मेरा मन औद्धत्य-कौकृत्यसे युक्त है, और मैं औद्धत्य--कौकृत्यके उपशमनका यथार्थ उपाय नहीं जानता हूँ। आयुष्मान्, बहुत अच्छा होगा कि यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे औद्धत्य-कौकृत्यका उपशमन हो सके। मनकी साधना करने वाला भिक्षु उसे औद्धत्य-कौकृत्यके उपशमन का उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह चौथा उपयुक्त समय है, मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुके मनमें विचिकित्सा उत्पन्न हुई हो, जिस समय उसका मन विचिकित्सासे युक्त हो और जिस समय उसे विचिकित्साके शमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान् ! मेरे मनमें विचिकित्सा उत्पन्न हुई है, मेरा मन विचिकित्सासे युक्त है, और मैं विचिकित्सा के उपशमनका यथार्थ उपाय नहीं जानता हूँ। आयुष्मान् ! बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे विचिकित्सा का उपशमन हो सके। मनकी साधना करने वाला भिक्षु उसे विचिकित्सा के उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह पाँचवा उपयुक्त समय है, मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका ।

फिर भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुको इस बातका ज्ञान न हो, वह देखता न हो कि किस निमित्त (= विषय) पर चित्त एकाग्र करनेसे, बिना किसी बाधाके उसके आश्रवों (= चित्त-मलों) का क्षय हो सकेगा, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान् ! मैं नहीं जानता, मैं नहीं देखता कि किस निमित्तकी भावना (= अभ्यास) करनेसे, बिना किसी बाधा के मेरे आस्रवोंका क्षय होगा ? आयुष्मान् ! बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें जिससे बिना किसी बाधाके मेरे आश्रवोंका क्षय हो सके। मनकी साधना करने वाला भिक्षु उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है जिससे बिना किसी बाधाके आश्रवोंका क्षय हो सके। भिक्षुओ, यह छठा उपयुक्त समय है, मन की साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

एक समय वहुतसे स्थविर भिक्षु वाराणसीमें विहार कर रहे थे--ऋषि पतन में मृगदायमें। तब जिस समय वे भिक्षाटनसे लौट आये थे, जिस समय वे भोजन-शाला में इकट्ठे बैठे थे, उनके बीचमें यह बातचीत चली कि आयुष्मानो ! मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जानेका उपयुक्त समय कौन सा है ? ऐसा प्रश्न उठने पर उनमेंसे एक भिक्षुने कहा--आयुष्मानो ! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह है, जब वह भिक्षाटनके बाद, भोजन कर चुकनेके अनन्तर पाँव धोकर, शरीरको सीधा कर, पालथी मारकर, स्मृति को सामने करके बैठा हो। उसके ऐसा कहने पर एक दूसरे भिक्षुने कहा--आयुष्मानो ! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नहीं है, जब वह भिक्षाटनके बाद, भोजन कर चुकनेके अनन्तर, पाँव धोकर, शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृति को सामने करके बैठा हो। आयुष्मानो ! जिस समय मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु, भिक्षाटन के बाद, भोजनकर चुकनेके अनन्तर, पाँव धोकर, शरीरको सीधा कर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, उस समय उसकी भिक्षाटनकी थकावट भी दूर हुई नहीं रहती, भोजनानन्तर होने वाली तन्द्रा भी दूर हुई नहीं रहती; इसलिये मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नहीं है, बल्कि आयुष्मानो ! मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु जब सन्ध्याके समय, ध्यान भावना कर चुकनेपर, विहारके पीछे छायामें शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, वह समय मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका है।

ऐसा कहनेपर एक और भिक्षुने उस भिक्षुको कहा--आयुष्मान् ! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नहीं है जिस समय आयष्मान् ! मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु सन्ध्याके समय, ध्यान भावनाकर चुकने पर, विहारके पीछे, छायामें शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, क्योंकि दिनमें उसने ध्यानके जिस निमित्त को मनमें जगह दी होती है, वही उस समय उसके मनमें व्याप्त रहता है, इसलिये मनकीसाधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका वह उपयुक्त समय नहीं है, बल्कि आयुष्मान ! जिस समय मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु रात्रिके ब्राह्ममुहूर्तमें उठकर, शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृतिको सामने करके बैठा होता है, वह समय मनकी साधना में लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका है।

ऐसा कहने पर एक और भिक्षुने उस भिक्षुको कहा--आयुष्मान ! मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका उपयुक्त समय वह नहीं है, जिस समय

आयुष्मान मनकी साधनामें लगा हुआ भिक्षु रात्रिके ब्राह्म-मुहूर्तमें उठकर शरीरको सीधाकर, पालथी मारकर, स्मृति को सामने करके बैठा होता है, क्योंकि उस समय उसका शरीर ओजपूर्ण होता है और वह समय बुद्धोंकी देशना (= शासन) पर विचार करनेके लिये योग्य होता है, इसलिये मनकी साधनामें लगे हुए भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका वह उपयुक्त समय नहीं है।

ऐसा कहनेपर आयुष्मान महाकात्यायनने स्थिवर भिक्षुओंको यह कहा—आयुष्मानो! मैंने स्वयं भगवानके मुखसे सुना है, भगवानके मुखसे ग्रहण किया है कि मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेके ये छह उपयुक्त समय हैं। कौनसे छह? जिस समय भिक्षुके मनमें काम-राग उत्पन्न हुआ हो, जिस समय उसका मन काम-रागसे युक्त हो और जिस समय उसे काम-रागके उपशमनका यथार्थ उपाय ज्ञात न हो, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान मेरे मनमें काम-राग उत्पन्न हुआ है, मेरा मन काम-रागसे युक्त है, और मैं काम-रागके उपशमनका यथार्थ उपाय नहीं जानता हूँ। आयुष्मान! बहुत अच्छा होगा यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें, जिससे काम-रागका उपशमन हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे कामरागके उपशमनका उपदेश करता है। भिक्षुओ, यह पहला उपयुक्त समय है मनकी साधना करनेवाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका।

फिर भिक्षु! जिस समय भिक्षुके मनमें क्रोध (= व्यापद) उत्पन्न हुआ हो..... आलस्य (= थीन मिद्ध) उत्पन्न हुआ हो.... औद्धत्य-कौकृत्य (= पश्चाताप) उत्पन्न हुआ हो.... विचिकित्सा उत्पन्न हुई हो.... जिस समय भिक्षुको इस बातका ज्ञान न हो, वह देखता न हो कि किस निमित्त पर चित्त एकाग्र करनेसे बिना किसी बाधाके उसके आस्रवों (= चित्तमलों) का क्षय हो सकेगा, उस समय उसे चाहिये कि वह मनकी साधना करने वाले भिक्षुके पास जाय और कहे कि आयुष्मान! मैं नहीं जानता, मैं नहीं देखता कि किस निमित्तकी भावना (= अभ्यास) करनेसे बिना किसी बाधाके मेरे आस्रवोंका क्षय होगा। आयुष्मान! बहुत अच्छा होगा, यदि आप मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें, जिससे बिना किसी बाधाके मेरे आस्रवोंका क्षय हो सके। मनकी साधना करनेवाला भिक्षु उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है जिससे बिना किसी बाधाके आस्रवोंका क्षय हो सके। भिक्षुओ, यह छठा समय है, मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जानेका। आयुष्मानो! मैंने स्वयं भगवानके मुखसे सुना है, भगवान के मुखसे ग्रहण किया है कि मनकी साधना करने वाले भिक्षुके दर्शनार्थ जाने के ये छह उपयुक्त समय हैं।

तब भगवान्ने आयुष्मान उदायीको सम्बोधित किया—उदायी ! अनुस्मृतियाँ कितनी हैं ? ऐसा कहनेपर आयुष्मान् उदायी चुप रहे। दूसरी बार भी भगवानने आयुष्मान् उदायीसे प्रश्न किया—उदायी ! अनुस्मृतियाँ कितनी हैं ? दूसरी बार भी आयुष्मान् उदायी चुप रहे। तीसरी बार भी भगवान्ने आयुष्मान् उदायीसे प्रश्न किया–उदायी ! अनुस्मृतियाँ कितनी हैं ? तीसरी बार भी आयुष्मान् उदायी चुप रहे।

तब आयुष्मान् आनन्दने आयुष्मान् उदायीसे कहा—"आयुष्मान् उदायी, शास्ता तुमसे प्रश्न पूछ रहे हैं।" "आयुष्मान् आनन्द ! मैं भगवान्का कथन सुन रहा हूँ।" (उसने भगवान्को उत्तर दिया—) 'भन्ते ! एक भिक्षु अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करता है।....जैसे....एक जन्मका भी, दो जन्मोंका भी—इस प्रकार आकार और उद्देश्य सहित बहुतसे जन्मोंका अनुस्मरण करता है—यह भन्ते ! अनुस्मृतियाँ हैं।"

तब भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दको सम्बोधित किया—"आयष्मान् आनन्द ! मैंने जान लिया है कि यह निकम्मा उदायी मनकी साधना करनेमें नहीं लगा है। आनन्द ! अनुस्मृतियाँ कितनी हैं ?' "भन्ते ! अनुस्मृतियाँ पाँच हैं। कौन-सी पाँच ? भन्ते ! एक भिक्षु काम-भोगोंसे दूर रह...तृतीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। भन्ते ! यह एक अनुस्मृति है, इसका अभ्यास करनेसे, इसे बढ़ानेसे इसी शरीरमें सुखगकी प्राप्ति होती है। फिर भन्ते ! भिक्षु आलोक-संज्ञापर चित्त एकाग्र करता है, दिवस-संज्ञापर चित्तको एकाग्र करता है, वह जैसा दिनको समझता है, रातको भी वैसा ही दिन समझता है; वह रातको भी वैसा ही दिन समझता है जैसा दिनको दिन समझता है; वह खुले चित्तसे, बाधा रहित चित्तसे, प्रभास्वर चित्तकी भावना करता है। भन्ते ! यह एक अनुस्मृति है। इस प्रकार इसका अभ्यास करनेसे, इस प्रकार इसमें वृद्धि करनेसे ज्ञान-दर्शनका लाभ होता है।

और फिर भन्ते ! भिक्षु पैरके तलवेसे ऊपर केश-मस्तकसे नीचे, त्वचासे घिरे हुए इस कायाको नाना प्रकारकी गन्दगीसे पूर्ण देखता है—इस कायामें है—केश, रोम, नख, दाँत, चमड़ी (=त्वक), माँस, स्नायु, हड्डी (के भीतर) की मज्जा, वृक्क, कलेजा, यकृत, क्लोमक, तिल्ली, फुप्फुस, आँत, पतली आँत (=अन्त-गुण), उदरस्थ (=वस्तुयें) पाखाना, पित्त, कफ, पीप, लोहु, पसीना, वर (='भेद) आँसु, चरबी (=वसा), लाट, नासा-मल, जोड़ोंमेंका तरल पदार्थ, और मूत्र। भन्ते ! यह भी एक अनुस्मृति है। भन्ते ! इसका अभ्यास करनेसे, इसकी वृद्धि करनेसे काम-रागका शमन होता है।

फिर भन्ते ! भिक्षु श्मशानमें फेंके हुए एक दिनके मरे, दो दिनके मरे, तीन दिनके मरे, फूले, नीले पड़ गये, पीब-भरे, (मृत-) शरीरको देखे (और
तीन दिनके मरे, फूले, नीले पड़ गये, पीब-भरे, (मृत-) शरीरको देखे (और
उससे), वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाववाली, ऐसे ही होनेवाली, इससे न बच सकनेवाली है। अथवा भन्ते ! भिक्षु श्मशानमें फेंके कौओं द्वारा खाये जाते, चीलों द्वारा खाये जाते, गीधों द्वारा खाये जाते, कुत्तों द्वारा खाये जाते, गीदड़ों द्वारा खाये जाते अथवा अन्य नाना प्रकारके प्राणियों द्वारा खाये जाते हुए (शरीरको) देखे (और उससे) वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाववाली, ऐसे ही होनेवाली, इसीसे न बच सकनेवाली है । अथवा भन्ते ! श्मशानमें फेंके हुए, हड्डियोंके ढांचे मात्र शरीरको देखे, जो माँस और रक्तसे युक्त हो तथा जो नसोंसे परस्पर जुड़ा हो; हड्डियोंके ढांचे मात्र शरीरको देखे, जो माँस और रक्तसे रहित हो किन्तु नसोंसे परस्पर जुड़ा हो, हड्डियोंके ढांचे मात्र शरीरको देखे, जो माँस और रक्तसे भी रहित हो और जो नसोंसे भी परस्पर जुड़ा न हो, सर्वथा असम्बद्ध इधर-उधर बिखरी हुई हड्डियोंको देखे, हाथकी हड्डी कहीं पड़ी हो, पाँवकी हड्डी कहीं पड़ी हो, जाँघकी हड्डी कहीं पड़ी हो, छातीकी हड्डी कहीं पड़ी हो चूतड़परकी हड्डी कहीं पड़ी हो, पीठकी हड्डी कहीं पड़ी हो, खोपड़ी कहीं पड़ी हो— (और उससे) वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाववाली, ऐसे ही होनेवाली, इसीसे न बच सकनेवाली है। अथवा वह श्मशानमें फेंके हुए शरीरको देखे, जिसकी हड्डियाँ शंखके समान श्वेत हों, जिनका ढेर लगा हो, जिन्हें वहाँ पड़े वर्षसे भी अधिक हो गया हो, जो सड़ गई हों, जो चूर्ण-विचूर्ण हो गई हों—(और उससे) वह अपनी इसी कायाका ख्याल करे—यह काया भी इसी स्वभाववाली, ऐसे ही होनेवाली, इसीसे न बच सकनेवाली है। भन्ते ! यह भी एक अनुस्मृति है। इसका अभ्यास, इसकी वृद्धि करनेसे अहंकार की भावनाका नाश होता है ।

फिर भन्ते ! भिक्षु सुखके प्रहाणसे ...... चतुर्थ-ध्यान को प्राप्त कर विहर करता है। भन्ते ! यह भी एक अनुस्मृति है। इसका अभ्यास करनेसे, इसकी वृद्धि करनेसे अनेक धातुओंका ज्ञान प्राप्त होगा। भन्ते ! ये पाँच अनुस्मृतियाँ हैं।"

"बहुत अच्छा ! बहुत अच्छा ! आनन्द ! तो आनन्द ! तू यह एक और छठी अनुस्मृति याद कर ले। आनन्द ! भिक्षु स्मृतिमान होकर ही आता है, स्मृतिमान होकर ही जाता है, स्मृतिमान होकर ही खड़ा होता है, स्मृतिमान होकर ही

बैठता है, स्मृतिमान होकर ही लेटता है, स्मृतिमान होकर सभी कर्म करता है। आनन्द! यह भी एक अनुस्मृति है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे स्मृति-संप्रजन्यकी प्राप्ति होती है।

भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम बातें हैं। कौन-सी छह? श्रेष्ठतम-दर्शन, श्रेष्ठतम-श्रवण, श्रेष्ठतम-लाभ, श्रेष्ठतम-शिक्षा, श्रेष्ठतम-परिचर्या (=सेवा), तथा श्रेष्ठतम-अनुस्मरण। भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-दर्शन कौन-सा है? भिक्षुओ, एक आदमी हाथी-रत्नको भी देखनेके लिये जाता है, अश्व-रत्नको भी देखनेके लिये जाता है, मणि-रत्नको भी देखनेके लिये जाता है, किसी छोटी-बड़ी चीजको देखने जाता है अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि, मिथ्याचारी श्रमण वा ब्राह्मणको देखने जाता है। भिक्षुओ, यह भी एक प्रकारका दर्शन ही है, नहीं है, ऐसा मैं नहीं कहता हूँ। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारके जो ये दर्शन हैं, ये हीन हैं, ग्राम्य हैं, पृथक जनोंके ही योग्य हैं, अनार्यजनोंके ही योग्य हैं—अनर्थ कर हैं, न निर्वेदके लिये हैं, न वैराग्यके लिये हैं, न निरोधके लिये हैं, न उपशमनके लिये हैं, न ज्ञानके लिये हैं, न सम्बोधिके लिये हैं और न निर्वाणके लिये ही होते हैं। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत वा तथागतके श्रावकके दर्शनार्थ जाना है, यही दर्शनोंमें श्रेष्ठतम दर्शन है, और यही प्राणियोंकी बिशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दुःख दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम-दर्शन कहलाता है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन।

श्रेष्ठतम-श्रवण किसे कहते हैं? भिक्षुओ, एक आदमी भेरी-शब्द सुननेके लिये भी जाता है, वीणा-शब्द सुननेके लिए भी जाता है, गीत-शब्द सुननेके लिये भी जाता है, कोई और ऊँची-नीची आवाज सुननेवके लिये जाता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि, मिथ्याचारी श्रमण वा ब्राह्मणका उपदेश सुननेके लिये जाता है। भिक्षुओ, यह भी श्रवण ही है, श्रवण नहीं है, ऐसा मैं नहीं कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारके जो ये श्रवण हैं, ये हीन हैं, ये ग्राम्य हैं, पृथक्जनोंके योग्य हैं, अनार्यजनोंके ही योग्य हैं, अनर्थकर हैं, न निर्वेदके लिये हैं, न वैराग्यके लिये हैं, न निरोधके लिये हैं, न उपशमनके लिये हैं, न ज्ञानके लिये हैं, न सम्बोधिके लिये हैं, और न निर्वाणके लिये ही होते हैं। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नतायुक्त चित्तसे तथागत वा तथागतके श्रावककी धर्म-देशना सुनना है, यही श्रवणोंमें श्रेष्ठतम-श्रवण है, और यही प्राणियोंकी विशुद्धिके लिये, शोक-परिताप के उपशमनके लिये, दुःख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात् करनेके लिये

होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम श्रवण कहलाता है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-लाभ कैसे होता है? भिक्षुओ, एक आदमीको पुत्रका लाभ होता है, स्त्रीका लाभ होता है, धन-लाभ भी होता है, किसीछोटी-बड़ी वस्तुका लाभ भी होता है,अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणके प्रति श्रद्धाका लाभ होता है। भिक्षुओ, ये भी लाभ ही हैं, लाभ नहीं हैं, ऐसा मैं नहीं कहता। किन्तु भिक्षओ, इस प्रकारके जो ये लाभ हैं, ये हीन हैं, ग्राम्य हैं, पृथकजनोंके योग्य हैं, अनार्य जनोंके ही योग्य हैं, अनर्थकर हैं, न निर्वेदके लिये हैं .... और न निर्वाणके लिये ही होते हैं। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्य-मनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत वा तथागतके श्रावकके प्रति श्रद्धाका लाभ है, यही लाभोंमें श्रेष्ठतम लाभ है, और यही प्राणियोंकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दुःख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये, तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम-लाभ कहा जाता है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण, यह हुआ श्रेष्ठतम-लाभ।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-शिक्षा कैसे होती है? भिक्षुओ, एक आदमी हाथियोंके विषयमें सीखता है, घोड़ोंके विषयमें सीखता है, रथ चलाना सीखता है, धनुष चलाना सीखता है, परुष (=कुल्हाड़ी) चलाना सीखता है, अन्य भी कोई छोटा-मोटा शस्त्र चलाना सीखता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणसे शिक्षा लाभ करता है। भिक्षुओ, ये भी शिक्षा ही हैं, शिक्षा नहीं हैं, ऐसा मैं नहीं कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारकी जो ये शिक्षायें हैं, ये हीन हैं, ग्राम्य हैं, पृथक जनोंके योग्य हैं, अनार्यजनोंके योग्य हैं, अनर्थकर हैं, न निर्वेदके लिये हैं, न वैराग्यके लिये हैं, न निरोधके लिये हैं, न उपशमनके लिये हैं, न अभिज्ञाके लिये हैं, न सम्बोधिके लिये हैं और न निर्वाणके लिये हैं। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनयके अनुसार शीलकी शिक्षा ग्रहण करना है, चित्त (=समाधि) की शिक्षा ग्रहण करना है, प्रज्ञाकी शिक्षा ग्रहण करना है, यही शिक्षाओंमें श्रेष्ठतम-शिक्षा है। यही प्राणियोंकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दुःख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होती है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम शिक्षा कही जाती है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण, यह हुआ श्रेष्ठतम-लाभ, यह हुई श्रेष्ठतम शिक्षा।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम-परिचर्या कैसे होती है ? भिक्षुओ, एक आदमी क्षत्रिय-सेवा करता है, ब्राह्मण-सेवा करता है, गृहपति (–वैश्य) सेवा करता है, अन्य किसी छोटे-बड़ेकी सेवा करता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणकी सेवा करता है। भिक्षुओ, ये भी सेवा ही हैं, सेवा नहीं हैं, ऐसा मैं नहीं कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारकी जो यह परिचर्या है, यह हीन है, यह ग्राम्य है, पृथक जनोंके योग्य है, अनार्य-जनोंके योग्य है, अनर्थकर है, न निर्वेदके लिये है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है,न अभिञ्ञाके लिये है,न सम्बोधिके लिये है, और न निर्वाणके लिये है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्यमनसे, प्रसन्नतायुक्त चित्तसे, तथागत वा तथागतके श्रावककी परिचर्या करना है, यही परिचर्याओंमें श्रेष्ठतम परिचर्या है। यही प्राणियोंकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दुःख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होती है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम परिचर्या, कहलाती है। यह हुआ श्रेष्ठतम-दर्शन, यह हुआ श्रेष्ठतम-श्रवण, यह हुआ श्रेष्ठतम लाभ, यह हुई श्रेष्ठतम-शिक्षा, यह हुई श्रेष्ठतम-परिचर्या।

भिक्षुओ, श्रेष्ठतम अनुस्मरण कैसे होता है ? भिक्षुओ, एक आदमी पुत्र-लाभका अनुस्मरण करता है, स्त्री-लाभका अनुस्मरण करता है, धन-लाभका अनुस्मरण करता है, किसी छोटे-बड़े लाभका अनुस्मरण करता है, अथवा किसी मिथ्या-दृष्टि मिथ्याचारी श्रमण-ब्राह्मणका अनुस्मरण करता है। भिक्षुओ, ये भी अनुस्सरण ही हैं, ये अनुस्मरण नहीं है, ऐसा मैं नहीं कहता। किन्तु भिक्षुओ, इस प्रकारका जो यह अनुस्मरण है, यह हीन है, यह ग्राम्य है, पृथकजनोंके योग्य है, अनार्य-जनोंके योग्य है, अनर्थ कर है, न निर्वेदके लिए है, न वैराग्यके लिये है, न निरोधके लिये है, न उपशमनके लिये है, न अभिञ्ञाके लिये है, न सम्बोधिके लिये है और न र्विाणके लिये है। भिक्षुओ, यह जो श्रद्धापूर्वक, प्रेमपूर्वक, अनन्य मनसे, प्रसन्नता युक्त चित्तसे तथागत वा तथा-गतके श्रावकका अनुस्मरण करना है, यही अनुस्मरणोंमें श्रेष्ठतम, अनुस्मरण है। यही प्राणियोंकी विशुद्धिके लिये, शोक-परितापके उपशमनके लिये, दुःख-दौर्मनस्यको अस्त कर देनेके लिये, ज्ञानकी प्राप्तिके लिये तथा निर्वाणको साक्षात करनेके लिये होता है। भिक्षुओ, यही श्रेष्ठतम-अनुस्मरण कहलाता है। भिक्षुओ, ये छह श्रेष्ठतम-बातें हैं।

यो दस्सन वरं लद्धा सवणञ्च अनुत्तरं,
लाभानुत्तरियं लद्धा सिक्खानुत्तरिये रता,
उपट्ठिता पारिचरिये भावयन्ति अनुस्सतिं,

विवेक पटिसञ्जुत्तं खेमं अमतगामिनिं
अप्पमादे पमुदितं निपका सील संवुता
ते वे कालेन पच्चन्ती यत्थ दुक्खं निरुज्झति ।।

[जो श्रेष्ठतम-दर्शन के लाभी होते हैं, जो श्रेष्ठतम-श्रवणके लाभी होते हैं, जो श्रेष्ठतम-लाभके लाभी होते हैं, जो श्रेष्ठतम-शिक्षाके लाभी होते हैं, जो श्रेष्ठतम-परिचर्यामें युक्त होते हैं तथा जो विवेक-संयुक्त, क्षेमकर, अमृत प्राप्त करा देनेवाले अनुस्मरणकी भावना करते हैं, वे अप्रमादी, प्रमुदित, प्रज्ञावान्, शीवलान् (जन) समय पाकर उस स्थलको प्राप्त होते हैं जहाँ दुःखका सर्वथा निरोध हो जाता है ।]

(४) **देवता वर्ग**

भिक्षुओ, ये छह बातें शैक्ष भिक्षुकी अवनतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह? कार्य-बहुलता, वचन-बहुलता, निद्रा-बहुलता, मण्डलीकी बहुलता, इन्द्रियोंका अरक्षित रहना तथा भोजनके विषयमें मात्रज्ञ होना। भिक्षुओ, ये छह बातें शैक्ष भिक्षुकी अवनति का कारण होती हैं।

भिक्षुओ, ये छह बातें शैक्ष भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह? कार्य-बहुलता न होना, वचन-बहुलता न होना, निद्रा-बहुल न होना, मण्डली-बहुलता न होना, इन्द्रियोंका रक्षित रहना तथा भोजनके विषयमें मात्रज्ञ होना। भिक्षुओ, ये छह बातें शैक्ष भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती है।

तब उस प्रकाशमान् रात्रिमें एक तेजपुंज देवता सारे जेतवनको प्रकाशित करता हुआ जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर, भगवान्को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हुआ। एक ओर खड़े हुए उस देवताने भगवान्से यह निवेदन किया—भन्ते, ये छह बातें ऐसी हैं जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह? शास्ताके प्रति गौरव, धर्मके प्रति गौरव, संघके प्रति गौरव, शिक्षाओंके प्रति गौरव, अप्रमादके प्रति गौरव, तथा मित्र-भावके प्रति गौरव। भन्ते! ये छह बातें ऐसी हैं जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। शास्तानें देवताके इस कथनका समर्थन किया। जब उस देवताने यह जाना कि शास्ताने मेरे कथनका समर्थन किया तो वह भगवान्को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर, वहीं अन्तर्धान हो गया।

तब भगवान्ने उस रात्रिके बीत जानेपर भिक्षुओंको निमन्त्रित किया—भिक्षुओ, आजकी इस प्रकाशमान रात्रिमें एक तेजपुंज देवता सारे जेतवनको प्रकाशित करता हुआ मेरे पास आया। पास आकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े हुए उस देवताने मुझे यह कहा—"भन्ते! ये छह बातें ऐसी हैं जो

भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह ? शास्ताके प्रति गौरव, धर्मके प्रति गौरव, संघके प्रति गौरव, शिक्षाओंके प्रति गौरव, अप्रमादके प्रति गौरव तथा मित्र-भावके प्रति गौरव। भन्ते ! ये छह बातें ऐसी हैं, जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने ऐसा कहा, इतना हककर, मुझे अभिवादन कर, वहीं अन्तर्धान हो गया।

सत्थुगरू धम्मगरू संघे च तिब्बगारवो,
अप्पमादगरू भिक्खु पटिसन्थारगारवो,
अभब्बो परिहानाय निब्बाणस्सेव सन्तिके ॥

[अर्थ—जिस भिक्षुके मनमें शास्ताके प्रति गौरवका भाव है, धर्मके प्रति गौरवका भाव है, संघके प्रति तीव्र गौरवका भाव है, अप्रमादके प्रति गौरवका भाव है, मैत्रीके प्रति गौरवका भाव है, उसकी अवनति नहीं हो सकती। उसे निर्वाणके समीप पहुँचा हुआ ही जानना चाहिए।]

भिक्षुओ, आजकी इस प्रकाशमान रात्रिमें एक तेजपुंज देवता सारे जेतवनको प्रकाशित करता हुआ मेरे पास आया। पास आकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े हुए उस देवताने मुझे यह कहा—"भन्ते ! ये छह बातें ऐसी होती हैं जो भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह ? शास्ताके प्रति गौरव,धर्मके प्रति गौरव,संघके प्रति गौरव,शिक्षाके प्रति गौरव, (पाप कर्म करनेमें) लज्जाके प्रति गौरव, (पाप कर्म करनेमें) भयके प्रति गौरव, भन्ते ! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने ऐसा कहा, इतना कहकर, मुझे अभिवादन कर, वहीं अन्तर्धान हो गया—

सत्थगरु धम्मगरू संघे च तिब्बगारवो,
हिरिओतप्पसम्पन्नो सप्पतिस्सो सगारवो,
अभब्बो परिहानाय निब्बाणस्सेव सन्तिके ॥

[अर्थ—जिस भिक्षुके मनमें शास्ताके प्रति गौरवका भाव है 'धर्मके प्रति गौरवका भाव है, संघके प्रति तीव्र गौरवका भाव है,लज्जा तथा भयसे युक्त है, बड़ोंके प्रति गौरवका भाव है—उसकी अवनति असम्भव है। उसे निर्वाणके समीप पहुँचा हुआ ही जानना चाहिए।]

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथ पिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। उस समय एकान्त-सेवी ध्यानारूढ़ महा मौद्गल्यायनके मनमें यह वितर्क पैदा हुआ ? किन किन देवताओंको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमार

पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ? उस समय तिस्स नामक एक भिक्षुका अचिर मरण हुआ था। वह ब्रह्मलोकमें उत्पन्न हुआ था। वहाँ ब्रह्मलोकमें भी उसकी इस प्रकारकी ख्याति थी कि तिस्स ब्रह्मा महाऋद्धिवान् है और महा प्रतापी है।

उस समय आयुष्मान् महा मौद्गल्यायन, जैसे कोई बलवान् पुरुष समेटी हुई बाँहको फैला ले, वा फैलाई हुई बाँहको समेट ले, उसी प्रकार जेतवनसे अन्तर्धान होकर उस ब्रह्म लोकमें उत्पन्न हुआ। तिस्स ब्रह्माने दूरसे ही देखा कि आयुष्मान् महा मौद्गल्यायन चले आ रहे हैं। उसने महा मौद्गल्यायन को चले आते देख कहा—मित्र मौद्गल्यायन पधारें। मित्र मौद्गल्यायन ! आपका स्वागत है। बहुत समयके बाद आपका यहाँ आना हुआ। मित्र मौद्गल्यायन ! यहाँ बैठें, यह आसन बिछा है। आयुष्मान् महामौद्गल्यायन बिछे आसनपर बैठे। तिस्स ब्रह्मा भी आयुष्मान् महामौद्गल्यायनको नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे तिस्स ब्रह्माको आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने यह कहा—हे तिस्स ! किन किन देवताओंको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि लाभ निश्चित है ?

"मित्र मौद्गल्यायन ! चातुर्महाराजिक देवताओंको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"तिस्स ! क्या सभी चातुर्महाराजिक देवताओंको ऐसा ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ?"

"मित्र मौद्गल्यायन ! सभी चातुर्महाराजिक देवताओंको ऐसा ज्ञान नहीं होता कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन ! जिन चातुर्महाराजिक देवताओंकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा नहीं होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा नहीं होती है, संघके प्रति अविचल श्रद्धा नहीं होती है, जो जेष्ठ आर्यशीलसे युक्त नहीं होते हैं, उन्हें यह ज्ञान नहीं होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधिलाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन ! जिन चातुर्महाराजिक देवताओंकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, संघके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, जो श्रेष्ठ आर्य शील से युक्त होते हैं, उन्हें यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"तिस्स ! क्या केवल चातुर्महाजिक देवताओंको ही यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ?

अथवा त्र्योत्रिंश देवताओंको भी ? याम देवताओंको भी ? तुषित देवताओंको भी ? निर्माण रति देवताओंको भी ? और क्या परनिर्मितवशवर्ती देवताओंको भी यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है ? "

"मित्र मौद्गल्यायन ! परनिर्मितवशवर्ती देवताओंको भी इस प्रकारका ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"तिस्स ! क्या सभी परनिर्मितवशवर्ती देवताओंको इस प्रकारका ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

"मित्र मौद्गल्यायन ! सभी परनिर्मितवशवर्ती देवताओंको इस प्रकारका ज्ञान नहीं होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन ! जिन परनिर्मितवशवर्ती देवताओंकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा नहीं होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा नहीं होती है, संघके प्रति अविचल श्रद्धा नहीं होती है, जो श्रेष्ठ आर्य-शीलसे युक्त नहीं होते हैं, उन्हें यह ज्ञान नहीं होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है। मित्र मौद्गल्यायन ! जिन परनिर्मितवशवर्ती देवताओंकी बुद्धके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, धर्मके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, संघके प्रति अविचल श्रद्धा होती है, जो श्रेष्ठ आर्य-शीलसे युक्त होते हैं, उन्हें यह ज्ञान होता है कि हम स्रोतापन्न हैं, हमारा पतन नहीं हो सकता, हमारा सम्बोधि-लाभ निश्चित है।"

तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने तिस्स ब्रह्माके भाषणका अभिनन्दन किया, अनुमोदन किया और जैसे कोई बलवान आदमी सिमटी हुई बाँहको पसारे अथवा पसारी हुई बाँहको समेटे उसी प्रकार वे ब्रह्मलोकसे अन्तर्धान हो कर जेतवनमें प्रकट हुए।

भिक्षुओ, ये छह बातें विद्यापक्षीय हैं। कौन-सी छह ? अनित्य-संज्ञा, अनित्यके प्रति दुःख-संज्ञा, दुःखके प्रति अनात्म-संज्ञा, प्रहाण-संज्ञा, वैराग्य-संज्ञा तथा निरोध-संज्ञा। भिक्षुओ, ये छह बातें विद्यापक्षीय हैं।

भिक्षुओ, ये छह बातें झगड़ेकी जड़ हैं। कौन-सी छह ? भिक्षुओ, एक भिक्षु क्रोधी-स्वभावका होता है, द्वेषी-स्वभावका होता है। भिक्षुओ, जो भिक्षु क्रोधी तथा द्वेषी होता है उसके मनमें न शास्ताके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न

धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है और न संघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है। वह शिक्षाओंका भी अच्छी तरह पालन नहीं करता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुके मनमें न शास्ताके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न संघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है तथा जो शिक्षाओंका भी अच्छी तरह पालन नहीं करता, वह संघ में ऐसा कलह उत्पन्न करता है, जो बहुत जनोंके अहित के लिये, बहुत जनोंके अकल्याणके लिये, बहुत जनोंके अनर्थके लिये तथा देवमनुष्योंके अकल्याण तथा अहितके लिये होता है।

भिक्षुओ, यदि तुम्हें अपनेमें या अपनेसे बाहर इस प्रकार झगड़ेकी जड़ दिखाई दे, तो भिक्षुओ, तुम्हें कोशिश करनी चाहिए कि तुम इस झगड़ेकी जड़रूपी बुराईको नष्ट कर डालो। यदि भिक्षुओ, तुम अपनेमें या अपने से बाहर इस प्रकार झगड़ेकी जड़रूपी बुराईको न देखो तो भिक्षुओ, तुम्हें ऐसी कोशिश करनी चाहिए कि यह झगड़ेकी जड़ रूपी बुराई भविष्यमें उत्पन्न न हो—इसी प्रकार भिक्षुओ, यह झगड़ेकी जड़ रूपी बुराई नष्ट होती है, इसी प्रकार भिक्षुओ, यह झगड़ेकी जड़-रूपी बुराई पुनः उत्पन्न नहीं होती है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु ढोंगी होता है .... निर्दयी होता है ..... ईर्ष्यालु होता है ..... कंजूस होता है .... शठ होता है ..... मायावी होता है ... पापेच्छ होता है ..... मिथ्या-दृष्टि होता है ...... दुनियादार होता है .... जिद्दी होता है तथा दुराग्रही होता है। भिक्षुओ, जो भिक्षु जिद्दी तथा दुराग्रही होता है उसके मनमें न शास्ता के प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्म के प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है और न संघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है। वह शिक्षाओंका भी अच्छी तरह पालन नहीं करता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुके मनमें न शास्ता के प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है और न संघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, वह शिक्षाओंका भी अच्छी तरह पालन नहीं करता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुके मनमें न शास्ताके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न धर्मके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है, न संघके प्रति आदर तथा गौरवका भाव रहता है तथा जो शिक्षाओंका भी अच्छी तरह पालन नहीं करता, वह संघमें ऐसा कलह उत्पन्न करता है, जो बहुत जनोंके अहितके लिये, बहुत जनोंके अकल्याणके लिये, बहुत जनोंके अनर्थके लिये तथा देव-मनुष्योंके अकल्याण तथा अहितके लिये होता है।

भिक्षुओ, यदि तुम्हें अपनेमें या अपनेसे बाहर इस प्रकार झगड़ेकी जड़ दिखाई दे, तो भिक्षुओ, तुम्हें कोशिश करनी चाहिए कि तुम इस झगड़ेकी जड़रूपी बुराईको नष्ट कर डालो। भिक्षुओ, यदि तुम अपनेमें या अपनेसे बाहर इस प्रकार झगड़ेकी जड़-रूपी बुराईको न देखो तो भिक्षुओ, तुम्हें ऐसी कोशिश करनी चाहिए कि यह झगड़ेकी जड़रूपी बुराई भविष्यमें उत्पन्न न हो—इसी प्रकार भिक्षुओ, यह झगड़ेकी जड़रूपी बुराई पुनः उत्पन्न नहीं होती है। भिक्षुओ, ये छह बातें झगड़ेकी जड़ हैं।

एक समय भगवान श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। उस समय वेळुकण्टकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-संघको षड्ङग-दक्षिणा देती थी। भगवान्ने दिव्य, विशुद्ध, अमानुषी चक्षुसे देखा कि वेळुकण्टकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-संघको षड़ंग-दक्षिणा देती है। यह देख उन्होंने भिक्षु-संघको आमन्त्रित किया—"भिक्षुओ, यह वेळुकण्टकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-संघको षड़गं-दक्षिणा देती है। भिक्षुओ, दक्षिणा किस प्रकार षड़ंग-दक्षिणा होती है? भिक्षुओ, तीन अंग तो दाताके होते हैं और तीन अंग प्रतिग्राहकके होते हैं। दाताके तीन अंग कौनसे होते हैं? भिक्षुओ, दाता दान देने से पूर्व प्रसन्न-चित्त रहता है, दान देते समय प्रसन्न चित्त रहता है, दान दे चुकनेपर प्रसन्न चित्त रहता है। ये दाताके तीन अंग होते हैं। प्रति ग्राहकोंके तीन अंग कौनसे होते हैं? भिक्षुओ, प्रति ग्राहक या तो वीतराग होते हैं, या रागके शमनमें लगे हुए; या तो वीत-द्वेष होते हैं, या द्वेषके शमनमें लगे हुए; या तो वीत-मोह होते हैं, या मोहके शमनमें लगे हुए। ये प्रति ग्राहकोंके तीन अंग हैं। इस प्रकार दाताके तीन अंग और प्रति ग्राहक के तीन अंग भिक्षुओ, इस तरह दक्षिणा छह अंगोंसे युक्त होती है। भिक्षुओ, इस प्रकारकी छह अंगोंवाली दक्षिणाके पुण्यका अन्दाजा लगाना आसान नहीं कि इतना पुण्य हुआ, इतना कुशल-कर्म हुआ, इतना सुख-साधन हुआ, इतना स्वर्गका सहारा हुआ, इतना सुख-परिणाम हुआ, इतना स्वर्ग-सोपान हुआ, यह इतनी मात्रामें इष्कटर होता है, सुन्दरतर होता है, अनुकूल होता है, हितके लिये होता है तथा कल्याणके लिये होता है। उसके बारेमें यही कहा जाता है कि यह गणनातीत है, सीमातीत है, महान पुण्य-राशि है। भिक्षुओ, जैसे महा समुद्रके पानीकी मात्राका अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता कि यह पानी इतने आळहक है, इतने सौ आळहक है, इतने हजार आळहक है, इतने लाख आळहक है। उसके बारेमें यही कहा जाता है कि यह गणनातीत है, यह सीमातीत है, यह महान् जल-राशि है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, छह अंगोंवाली दक्षिणाके पुण्यका अन्दाजा लगाना आसान नहीं कि इतना पुण्य हुआ, इतना कुशल-कर्म हुआ, इतना सुख-साधन हुआ, इतना स्वर्गका सहारा हुआ, इतना सुख-परिणाम हुआ, इतना स्वर्ग-सोपान हुआ, यह इतनी मात्रामें इष्टकर होता है, सुन्दरतर होता है, अनुकूल होता है, हितके लिये होता है तथा कल्याणके लिये होता है। इसके बारेमें यही कहा जा सकता है कि यह गणनातीत है सीमातीत है, महान् पुण्य राशि है।

पुब्बेव दाना सुमनो ददं चित्तं पसादये,
दत्वा अत्तमनो होति एसा यञ्ञस्स सम्पदा ॥
वीतरागा वीतदोसा वीतमोहा अनासवा,
खेत्तं यञ्ञस्स सम्पन्नं सञ्ञता ब्रह्मचारिनो ॥
सयं आचमयित्वान दत्वा सके हि पाणिहि,
अत्तनो परतो चेसो यञ्ञो होति महप्फलो ॥
एवं यजित्वा मेधावी सद्धो मुत्तेन चेतसा,
अब्यापज्झं सुखं लोकं पण्डितो उपपज्जति ॥

[जो दानदेनेसे पूर्व तथा दान देते समय प्रसन्नचित्त रहता है और दान दे चुकनेपर भी सन्तुष्ट रहता है—यही यज्ञकी सम्पदा है। दान रूपी यज्ञ करनेके लिये योग्य क्षेत्र हैं वीत-राग, वीतद्वेष, वीतमोह संयत ब्रह्म चारिगण, स्वयं आचमन करके, अपने ही हाथोंसे जो दान दिया जाता है वह अपने लिये तथा दूसरेके लिये महान् फलदायी होता है। जो मेधावी. जो श्रद्धावान् मुक्त चित्तसे इस प्रकार दान देता है वह पण्डित व्यापाद-रहित सुखद लोकमें उत्पन्न होता है।]

उस समय एक ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान्का कुशल-क्षेम पूछा। भगवान्का कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर वह जाकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मणने भगवान्से यह कहा—"हे गौतम ! मेरा यह मत है, मेरी यह दृष्टि है कि न कहीं कोई आत्म-कृत्य है और न पर-कृत्य है।"

"मैंने ऐसे मतवाला, ऐसी दृष्टि वाला न कोई ब्राह्मण देखा और न सुना। कोई भी स्वयं अभि-क्रमण तथा प्रतिक्रमण करनेवाला कैसे कह सकता है कि न कहीं कोई आत्म-कृत्य है और न परकृत्य है। हे ब्राह्मण ! तो तू क्या मानता है, क्या किसी भी कार्यका आरम्भ करना होता है ?"

"भो ! कार्योंका आरम्भ होना होनेसे ही उन कार्योंके आरम्भ करने-वाले प्राणी दिखाई देते हैं।"

"इस प्रकार हे ब्राह्मण ! यह जो कार्य्योंका आरम्भ होनेसे उन कार्य्योंके करनेवाले प्राणी दिखाई देते हैं, यही प्राणियोंका आत्मकृत्य है तथा यही प्राणियोंका पर-कृत्य है। तो हे ब्राह्मण क्या मानते हो निष्क्रमण (–धातु) होता है, पराक्रम (–धातु) होता है, धैर्य (–धातु) होता है, स्थिति (धातु) होता है, उपाक्रम (धातु) होता है ?"

"भो! होता है।"

"उपाक्रम (–धातु) के ही होनेसे उपाक्रम करनेवाले प्राणी दिखाई देते हैं। यही प्राणियोंका आत्म-कृत्य है और यही प्राणियोंका पर-कृत्य है। मैंने ऐसे मत वाला, ऐसी दृष्टि वाला न कोई ब्राह्मण देखा और न सुना। कोई भी स्वयं अभि-क्रमण तथा प्रति- क्रमण करनेवाला कैसे कह सकता है कि न कहीं कोई आत्म-कृत्य है और न पर-कृत्य है।"

"बहुत सुन्दर है हे गौतम ! आजसे प्राणान्त होने तक मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

भिक्षुओ, कर्मोंकी उत्पत्तिके तीन हेतु (= निदान) हैं। कौनसे तीन ? कर्मोंकी उत्पत्तिका एक हेतु है, लोभ, कर्मोंकी उत्पत्तिका दूसरा हेतु है द्वेष, कर्मोंकी उत्पत्तिका तीसरा हेतु है मोह। भिक्षुओ, लोभसे अलोभकी उत्पत्ति नहीं होती, भिक्षुओ लोभसे लोभकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, द्वेषसे अद्वेषकी उत्पत्ति नहीं होती, द्वेषसे द्वेषकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, मोहसे अमोहकी उत्पत्ति नहीं होती, मोहसे मोहकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, लोभ-जनित कर्मसे, द्वेष-जनित कर्मसे, मोह जनित कर्मसे न देव-योनिके दर्शन होते हैं, न मनुष्य-योनिके और न किसी अन्य ही सुगतिके। भिक्षुओ, लोभ-जनित कर्मसे, द्वेष-जनित कर्मसे (तथा मोहजनित कर्मसे) नरक-योनिके दर्शन होते हैं, प्रेत-योनिके दर्शन होते हैं अथवा अन्य किसी दुर्गतिके। भिक्षुओ, कर्मोंकी उत्पत्तिके ये तीन हेतु (= निदान) हैं।

भिक्षुओ, कर्मोंकी उत्पत्तिके ये तीन हेतु (= निदान) हैं। कौनसे तीन ? कर्मोंकी उत्पत्तिका एक हेतु है अलोभ, कर्मोंकी उत्पत्तिका दूसरा हेतु है अद्वेष, कर्मोंकी उत्पत्तिका तीसरा हेतु है अमोह। भिक्षुओ, अलोभसे लोभकी उत्पत्ति नहीं होती, भिक्षुओ, अलोभसे अलोभकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, अद्वेषसे द्वेषकी उत्पत्ति नहीं होती, अद्वेषसे अद्वेषकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, अमोहसे मोहकी उत्पत्ति नहीं होती, अमोहसे अमोहकी ही उत्पत्ति होती है। भिक्षुओ, अलोभ-जनित कर्मसे, अद्वेष-जनित कर्मसे, अमोह-जनित कर्मसे, न नरक-योनिके दर्शन होते हैं, न पशु-

योनिके दर्शन होते हैं, न प्रेत-योनिके दर्शन होते हैं और न अन्य किसी दुर्गतिके। भिक्षुओ, अलोभ-जनित कर्मसे, अद्वेष-जनित कर्मसे, अमोह-जनित कर्मसे देव-योनि के दर्शन होते हैं, मनुष्य-योनिके दर्शन होते हैं अथवा अन्य किसी सुगतिके। भिक्षुओ, कर्मोंकी उत्पत्तिके ये तीन हेतु हैं।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् किम्बिल (जनपद) के निवुल वनमें विहार करते थे। तब आयुष्मान् किम्बिल जहाँ भगवान् थे, वहाँ गये। जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् किम्बिलने भगवान्से यह कहा—"भगवान्, किस हेतुसे, किस कारणसे भगवान्का परिनिर्वाण हो चुकनेपर सद्धर्म चिर-स्थायी नहीं रहता?"

"किम्बिल! तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर (यदि) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक तथा उपसिकायें, शास्ताके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकरविचरने लगती हैं, धर्मके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरने लगती हैं, संघके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरने लगती हैं, शिक्षाओंके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरने लगती हैं तथा आगन्तुकोंका स्वागत करनेके प्रति-उपेक्षा-युक्त होकर विचरने लगती हैं, तो हे किम्बिल! यही हेतु है, यही कारण है जिससे तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर सद्धर्म चिरस्थायी नहीं रहता।"

"भन्ते! वह कौन-सा हेतु है, वह कौन-सा कारण है जिससे तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर भी सद्धर्म चिरस्थायी रहता है?"

"किम्बिल! तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर (यदि) भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक तथा उपासिकायें शास्ताके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती हैं, धर्मके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती हैं, संघके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती हैं, शिक्षाओंके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती हैं, अप्रमादके प्रति आदर-युक्त गौरव-युक्त होकर विचरती हैं तथा आगन्तुकोंका स्वागत करनेके प्रति उपेक्षावान् नहीं रहती हैं तो हे किम्बिल! यही हेतु है, यही कारण है जिससे तथागतका परिनिर्वाण हो जानेपर सद्धर्म चिर-स्थायी रहता है।"

ऐसा मैंने सुना। एक समय आयुष्मान सारिपुत्र राजगृहमें विहार करते थे, गृध्र कूट पर्वत पर। तब आयुष्मान सारिपुत्रने पूर्वान्ह समय पहनकर, पात्र चीवर ले, बहुतसे भिक्षुओंके साथ गृध्रकूट पर्वतसे उतरते समय एक जगह बहुत बड़ा लकड़ियोंका

ढेर देखा। उसे देख सारिपुत्रने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"आयुष्मानो! तुम सब इस लकड़ियोंके बड़े ढेरको देख रहे हो?"

"आयुष्मान्! हाँ।"

"भिक्षुओ, यदि कोई ऋद्धिप्राप्त चित्तवशी भिक्षु चाहे तो वह लकड़ियोंके इस बड़े ढेरको पृथ्वीधातुके ही रूपमें ग्रहण कर सकता है। ऐसा किस लिये? आयुष्मानो! उस लकड़ियोंके बड़े ढेरमें पृथ्वी-धातु (=ठोसपन) है जिससे यदि कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्तवशी भिक्षु चाहे तो वह लकड़ियोंके इस ढेरको पृथ्वी-धातुके ही रूपमें ग्रहण करा सकता है। भिक्षुओ, यदि कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्तवशी भिक्षु चाहे तो वह लकड़ियोंके इस बड़े ढेरको जल (=अप्) करके भी ग्रहण कर सकता है. . . .अग्नि (=तेज) करके भी ग्रहण कर सकता है. . . वायु करके भी ग्रहण कर सकता है, शुभ करके भी ग्रहण कर सकता है, अशुभ करके भी ग्रहण कर सकता है। ऐसा किस लिये? भिक्षुओ, इस लकड़ियोंके बड़े ढेरमें अशुभ भी है, जिससे यदि कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्त-वशी भिक्षु चाहे तो वह लकड़ियोंके इस ढेरको अशुभ करके भी ग्रहण कर सकता है।

(१२)

ऐसा मैंने सुना। एक समय महान् भिक्षु संघके साथ भगवान् कोशल जनपदमें चारिका करते हुए जहाँ कोशल (जनपद) का इच्छानंगल नामक ब्राह्मण-ग्राम था, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान् इच्छानंगलके वन-खण्ड में विहार करते थे। इच्छानंगलके ब्राह्मण-गृहपतियोंने सुना कि शाक्य-कुल प्रव्रजित शाक्य-पुत्र श्रमण गौतम इच्छानंगल पधारे हैं और इच्छानंगलके वन-खण्डमें विहार कर रहे हैं। उन भगवान् गौतमका इस प्रकार का यश, इस प्रकार की कीर्ति सुनाई देती है कि वे भगवान् अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं, विद्या तथा आचरणसे युक्त हैं, सुगति-प्राप्त हैं, लोकके ज्ञाता हैं, अनुपम पुरुष-दमन-सार्थी हैं, देव-मनुष्योंके शास्ता हैं, बुद्ध भगवान् हैं। वे इस देव-सहित मार-सहित लोकको...ऐसे अर्हतोंका दर्शन करना अच्छा होता है।

तब इच्छानंगलके ब्राह्मण-गृहपति उस रातके वीत जाने पर बहुत सी खाद्य-भोज्य सामग्री ले जहाँ इच्छानंगल वन-खण्ड था, वहाँ पहुँचे। जाकर वे हल्ला करते हुए, शोर मचाते हुए, दरवाजे वाले प्रकोष्ठके बाहर खड़े हुए। उस समय आयुष्मान् नागित भगवान्के उपस्थापक (सेवक) थे। तब भगवान् ने आयुष्मान् नागितको सम्बोधित किया—"नागित! ये कौन हैं जो इतना हल्ला मचा रहे हैं, इतना शोर मचा रहे हैं, मानो मछुवे मछलियोंके लिये ले-दे कर रहे हों?"

"भन्ते ! ये इच्छानंगलके ब्राह्मण-गृहपति हैं जो आपके तथा भिक्षु संघके लिये बहुत सी खाद्य-भोज्य सामग्री लेकर आये हैं और द्वारके बाहर खड़े हैं।"

"नागित ! मुझे ऐश्वर्य (यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रखो। नागित ! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मात्रामें प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, बहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवाञ्छित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशंसा रूपी सुखका स्वागत करे।"

"भगवान् ! इस समय इसे स्वीकार करें। सुगत ! इस समय इसे ग्रहण करें। भन्ते ! यह आपके इसे सहन करनेका समय है। भन्ते ! अब आप जिस जिस ओर भी पधारेंगे, उस उस ओरके ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकीओर झुक जायेंगे। जिस प्रकार मूसलाधार वर्षाके होनेपर, जिधर ढलवान होता है, पानी उधर ही बह जाता है, उसी प्रकार आप जिस जिस ओर भी पधारेंगे उस उस ओरके ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकी ओर झुक जायेंगे। ऐसा किसलिये ? भगवान् आपका शील तथा प्रज्ञा ऐसी ही है।"

"नागित ! मुझे ऐश्वर्य (यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रखो। नागित ! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मत्रामें प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, बहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवाञ्छित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशंसा रूपी सुखका स्वागत करे।

"नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ, जो ग्रामकी सीमापर एकाग्र चित्त बैठा होता है। तब मेरे मनमें होता है कि अब विहारमें रहने वाला भिक्षु या श्रमण बननेकी प्रतीक्षा करने वाला इस आयुष्मान्को चिढ़ायेगा और इसके चित्तकी एकाग्रताको नष्ट कर देगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे ग्रामकी सीमा पर के विहरणसे मैं प्रसन्न नहीं होता।

"नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ जो जंगलमें बैठा ऊंघ रहा है। उस समय नागित ! मेरे मनमें यह होता है--अब यह आयुष्मान् इस निद्रा-तन्द्राको जीतकर एकान्त आरण्य-वासका ही ध्यान करेगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मैं प्रसन्न होता हूँ।

"नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो जंगलमें अस्थिर चित्त बैठा है। उस समय नागित ! मेरे मनमें यह होता है--अब यह आयुष्मान् अस्थिर चित्तको स्थिर करेगा अथवा स्थिर चित्तको स्थिर बनाये रखेगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मैं प्रसन्न होता हूँ।

"नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो जंगलमें बैठा है। उस समय नागित ! मेरे मनमें यह होता है—अब यह आयुष्मान् अविमुक्त चित्तको विमुक्त करेगा अथवा विमुक्त चित्तको विमुक्त बनाये रखेगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मैं प्रसन्न होता हूँ।

"नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो गांवकी सीमा पर रहता है। उसे चीवर, पिण्डपात (भोजन) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य परिष्कार आदि की प्राप्ति होती है। वह उस लाभ-सत्कारकी कामनासे ध्यान-मार्गका त्याग करता है, आरण्य-वासके एकान्त जीवनका त्याग करता है, ग्राम-निगम–राजधानियोंमें आकर रहने लग जाता है। नागित ! मैं ऐसे भिक्षुके उस गाँवकी सीमा पर रहनेसे प्रसन्न नहीं होता।

"नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो गांवकी सीमा पर रहता है। उसे चीवर पिण्डपात (भोजन) शयनासन ग्लान-प्रत्यय भैषज्य-परिष्कार आदिकी प्राप्ति होती है। वह उस लाभ-सत्कारकी उपेक्षाकर ध्यान-मार्गका त्याग नहीं करता, आरण्य-वासके एकान्त जीवनका त्याग नहीं करता। नागित ! मैं उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे प्रसन्न होता हूँ।

"नागित ! जब मैं रास्ते चलता होता हूँ और मुझे आगे पीछे कोई नहीं दिखाई देता, तो मुझे अच्छा लगता है, यदि और किसी दृष्टिसे नहीं, तो कमसे कम मल-मूत्र त्यागनेकी सुविधा होनेकी दृष्टिसे ही।"

(५) धार्मिक वर्ग

एक समय भगवान श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिक के जेतवनाराममें विहार करते थे। तब भगवान् ने पूर्वान्हसमय पहनकर पात्र-चीवर ले, श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये प्रवेश किया। श्रावस्तीमें भिक्षाटन कर भोजन कर चुकनेके अनन्तर श्रावस्तीमें वापिस लौटने पर आयुष्मान् आनन्द को सम्बोधित किया–"आनन्द ! आ जहाँ मिगार-माताका पूर्वाराम है, दिनमें विहार करनेके लिये वहाँ चलें।" "भन्ते ! अच्छा" कह आयुष्मान् आनन्दने भगवानको प्रतिवचन दिया। तब भगवान् आयुष्मान आनन्दको साथ ले जहाँ मिगार-माताका पूर्वाराम प्रासाद था, वहाँ पहुँचे। तब भगवान् शाम होनेपर योगाभ्याससे उठे, और उन्होंने आनन्दकेको सम्बोधित किया–आनन्द ! आ जहाँ पूर्वकी ओरका कोठा है, वहाँ चलें, गात धोन को। 'भन्ते ! अच्छा' कह आयुष्मान् आनन्दने भगवानको प्रत्युत्तर दिया। तब भगवान आनन्दको साथ ले गात धोनेके लिये जहाँ पूर्वकी ओर का कोठा था, वहाँ गये। पूर्वकी

ओरके कोठेमें स्नानकर चुकनेके अनन्तर बाहर आ शरीर सुखाते हुए एक ही चीवर पहने खड़े रहे। उस समय कोशल नरेश प्रसेनजित्का सेत नामका महान् हाथी (नाग) बड़े गाजे-बाजेके साथ पूर्व-कोष्ठके पाससे गुजर रहा था। उसे देखकर जनता चिल्लाती थी—राजाका यह नाग सुन्दर है, राजाका हाथी दर्शनीय है, राजाका हाथी अच्छा लगता है, राजाका हाथी (बड़े) शरीरवाला है। ऐसा कहने पर आयुष्मान् उदायीने भगवानसे निवेदन किया "भन्ते! क्या बड़े शरीरवाले हाथीको ही देखकर लोग 'नाग', 'नाग' का शोर मचाते हैं। अथवा अन्य किसी बड़े शरीरवाले प्राणी को देखकर भी लोग 'नाग' 'नाग' का शोर मचाते हैं?"

"उदायी! हाथीको देखकर भी लोग 'नाग' 'नाग' का शोर मचाते हैं, उदायी! अश्वको देखकर भी. . . . उदायी! बैलको देखकर भी. . . . उदायी सांपको देखकर भी . . . उदायी! वृक्षको देखकर भी. . . उदायी! बड़े शरीर वाले मनुष्यको देखकर भी लोग 'नाग' 'नाग' का शोर माचाते हैं। किन्तु हे उदायी! मैं तो उसीको 'नाग' कहता हुँ कि जो इस देवसहित मार-सहित ब्रह्मसहित लोकमें श्रमण-ब्राह्मणोंसे युक्त, देव मनुष्योंसे युक्त जनतामें शरीर, वाणी तथा मन किसीसे भी पाप-कर्म (आगु) नहीं करता!"

"भन्ते! आश्चर्य है, भन्ते! अद्भुत् है! भन्ते! यह जो आपका सुभाषित है कि मैं तो उसीको 'नाग' कहता हूँ कि जो इस देव-सहित मार-सहित ब्रह्म-सहित लोकमें, श्रमण-ब्राह्मणोंसे युक्त, देव-मनुष्योंसे युक्त जनतामें शरीर वाणी तथा मन किसीसे भी पाप-कर्म (आगु) नहीं करता। भन्ते! मैं आपके इस सुभाषितका इन गाथाओं द्वारा, अनुमोदन करता हूँ।

मनुस्सभूतं सम्बुद्धं अत्तदन्तं समाहितं,
इरियमानं ब्रह्मपथे चित्तस्सुपसमे रतं॥
यं मनुस्सा नमस्सन्ति सब्ब धम्मान पारगुँ,
देवापि नं नमस्सन्ति इति मे अरहतो सुतं॥
सब्ब सञ्ञोजनातीतं वना निब्बनमागतं,
कामेहि नेक्खम्मरतं मुत्तं सेलाव कंचनं॥
सब्बे अच्चरुचि नागो हिमवा मञ्ञे सिलुच्चये,
सब्बेसं नागनामानं सच्चनामो अनुत्तरो॥
नागं वो कित्तयिस्सामि नहि आगुं करोति सो,
सोरच्चं अविहिंसा च पादा नागस्स ते दुवे॥

तपो च ब्रह्मचरियं चरणा नागस्स त्यापरे,
सद्धा हत्थो महानागो उपेक्खा सेत दन्तवा ॥
सती गीवा सिरो पञ्ञा वीमंसा धम्मचिन्तना
धम्मकुच्छि समाचायो विवेको तस्स वालधी ॥
सो झायी अस्सासरतो अज्झत्तं सुसमाहितो,
गच्छं समाहितो नागो ठितो नागो समाहितो ॥
सेय्यं समाहितो नागो निसिन्नोपि समाहितो,
सब्बत्थ संवुतो नागो एसा नागस्स सम्पदा ॥
भुंजति अनवज्जानि सावज्जानि न भुञ्जति"
घासं अच्छादनं लद्धा सन्निधिं परिवज्जये ॥
सञ्ञोजनं अणुं थूलं सब्बं छेत्वान बन्धनं,
येन येनेव गच्छति अनपेक्खोव गच्छति ॥
यथापि उदके जातं पुण्डरीकं पवडढति,
न वुपलिप्पति तोयेन सुचिगन्धं मनोरमं,
तथेव लोके सुजातो बुद्धो लोके विरज्जते,
न वुपलिम्पति लोकेन तोयेन पदुमं यथा।
महाग्गिनी पज्जलितो अनाहारूपसम्मति,
संखारेसु पसन्नेसु निब्बुतोति पवुच्चति ॥
अत्थस्सायं विञ्ञापनी उपमा विञ्ञुहि देसिता,
विञ्ञस्सन्ति महानागा नागं नागेन देसितं ॥
वीतरागो वीतदोसो वीतमोहो अनासवो,
सरीरं विजहं नागो परिनिविस्सति अनासवो ॥

[मैंने सुना है कि आप सम्बुद्ध मनुष्य हैं, संयत हैं, एकाग्रचित्त हैं, ब्रह्म-पथ (श्रेष्ठ मार्ग) में विहरण करते हैं, चित्तका शमन किये हैं; आपको सब मनुष्य नमस्कार करते हैं, आप सब धर्मोंके पारंगत हैं, आपको देवता भी नमस्कार करते हैं, आप अर्हत हैं, आप सब संयोजनोंसे मुक्त हैं, आप निर्वाण-प्राप्त हैं, आप काम-भोगोंके प्रति निष्क्रमाभिमुख हैं, आप निखरे हुए सोनेके समान हैं, आपकी रुचि अन्य सभीकी रुचियोंको अतिक्रान्त कर गई है, जैसे हिमालय पर्वत अन्य सभी पर्वतोंको। आपके सभी नामोंमें 'नाग' नाम यथार्थ है। मैं 'नाग' के यशका गान करता हूँ। क्योंकि वह आगु (पापकर्म) नहीं करता। शुचिता तथा अहिंसा—ये दो नागके पांव माने जायें। तप

और ब्रह्मचर्य—ये दो नागके अन्य दो पाव हैं। श्रद्धा नाग (हाथी) की सूण्ड है, उपेक्षा श्वेत दान्त हैं। स्मृति ग्रीवा है, प्रज्ञा सिर है, धर्म-चिन्तन सूण्डका आगेका सिरा है। और विवेक उसकी पूँछ है। वह ध्यान करने वाला है, आनापान स्मृतिमें रत है, वह आत्म-संयत है, वह चलता हुआ भी संयत रहता है, वह खड़ा रहता भी संयत रहता है, वह लेटा हुआ भी संयत रहता है, वह बैठा हुआ भी संयत रहता है—यही नागकी (शील) सम्पदा है। वह निर्दोष आहार ग्रहण करता है, सदोष आहार ग्रहण नहीं करता। भोजन-छाजन मिलने पर वह उसका संग्रह नहीं करता। वह सूक्ष्म तथा स्थूल सभी संयोजनों, सभी बंधनोंका छेदन कर जिस जिस जगह भी विचरता है, सर्वत्र निरपेक्ष होकर ही विचरता है। जैसे सुगन्धित सुन्दर कमल पानीमें पैदा होकर, पानीमें बढ़ता हुआ भी, पानीसे निर्दोष निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार बुद्ध भी लोकमें जन्मग्रहण करते हैं, लोकमें विचरते हैं तथापि लोकसे निर्लिप्त रहते हैं। जैसे प्रज्वलित महा अग्नि ईंधन न मिलनेसे शान्त हो जाती है, उसी प्रकार संस्कारोंका उपशमन हो जाने पर ही निवृत्त (=निर्वाण प्राप्त) हुआ कहा जाता है। यह अर्थ को प्रकट करने वाली उपमा नाग (=कालुदायी) द्वारा दी गई है। इस नाग द्वारा दी गई उपमा को महा नाग (बुद्ध) जानेंगे। राग-विहीन, द्वेष-विहीन, मोह-विहीन, आस्रव-विहीन नाग शरीरका त्याग करेंगे।]

तब आयुष्मान आनन्द पूर्वान्हि समय पहन कर पात्र-चीवर ले जहाँ मृगशाला उपासिकाका निवास-स्थान था, वहाँ पहुँचे। जाकर बिछे आसनपर बैठे। तब मृगशाला उपासिका जहाँ आयुष्मान आनन्द थे, वहाँ आई। पास आकर आयुष्मान् आनन्दको अभिवादन कर एक ओर बैठी। एक ओर बैठी हुई मृगशाला उपासिकाने आयुष्मान् आनन्दसे यह कहा—

"भन्ते आनन्द! भगवान द्वारा उपदिष्ट इस धर्म-देशना को कैसे समझा जाय जिसमें उन्होंने कहा है कि परलोकमें ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोंकी समान ही गति होती है? भन्ते! पुराण नामका मेरा पिता, ब्रह्मचारी था, मैथुन ग्राम्य-धर्मसे दूर रहने वाला, विरत रहने वाला। उसके मरने पर भगवान् ने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुषित लोकमें उत्पन्न हुआ है। भन्ते! मेरा जो इसिदत्त पितामह था, वह अब्रह्मचारी था अपनी भार्यासे संतुष्ट रहने वाला। उसके मरने पर भी भगवानने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुषित लोकमें उत्पन्न हुआ है। भन्ते आनन्द! भगवान् द्वारा उपदिष्ट इस धर्म-देशनाको कैसे समझा जाय जिसमें उन्होंने कहा कि परलोकमें ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोंकी समान ही गति होती है?"

"बहन, भगवानने इसी प्रकार उपदेश दिया है।"

तब आयुष्मान आनन्द मृगशाला उपासिकाके घरसे भिक्षा ग्रहण कर, आसनसे उठ चले आये। तब आयुष्मान् आनन्द भिक्षाटन से लौट चुकने पर जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्को यह कहा।

"भन्ते! मैं पूर्वान्ह समय पहन कर, पात्र चीवर लेकर जहाँ मृगशाला उपासिकाका निवासस्थान है, वहाँ पहुँचा। जकार बिछे आसनपर बैठा। तब भन्ते! मृगशाला उपासिका मेरे पास आई। पास आकर मुझे नमस्कार कर एक ओर बैठ गई। एक ओर बैठी हुई मृगशाला उपासिका ने भन्ते! मुझे यह कहा—भन्ते आनन्द! भगवान द्वारा उपदिष्ट इस धर्म-देशनाको कैसे समझा जाय जिसमें उन्होंने कहा है कि परलोकमें ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोंकी समान ही गति होती है? भन्ते! पुराण नामका मेरा पिता ब्रह्मचारी था, मैथुन ग्राम्य-धर्मसे दूर रहनेवाला, विरत रहने वाला। उसके मरने पर भगवानने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुषित लोकमें उत्पन्न हुआ है। भन्ते! मेरा जो इसिदत्त नामका पितामह था, वह अब्रह्मचारी था, अपनी भार्यासे संतुष्ट रहने वाला। उसके मरने पर भी भगवान् ने कहा कि वह सकृदागामि हो गया, वह तुषित लोकमें उत्पन्न हुआ है। भन्ते आनन्द भगवान् द्वारा उपदिष्ट इस धर्म-देशनाको कैसे समझा जाय जिसमें उन्होंने कहा है कि परलोकमें ब्रह्मचारी तथा अब्रह्मचारी दोनोंकी समान ही गति होती है?

"भन्ते! ऐसा कहनेपर मृगशाला उपासिकाको मैंने कहा—बहन! भगवानने इसी प्रकार उपदेश दिया है।"

"आनन्द! कहाँ तो वह मूर्खा, अपण्डिता, स्त्रिप्रज्ञा मृगशाला उपासिका और कहाँ आदमियोंकी इन्द्रियोंके बारेमें ज्ञान, कि कौन तीक्ष्ण-इन्द्रिय है, कौन मृदु-इन्द्रिय है? आनन्द! इस लोकमें छः प्रकार के लोग विद्यमान हैं। कौनसे छः प्रकारके?

"आनन्द! एक आदमी अच्छी तरह रहता है, सुखपूर्वक रहता है। उसके साथी उससे प्रसन्न रहते हैं। किन्तु उसे जो सुनना चाहिये, वह उसने सुना नहीं होता, बहुश्रुत होना चाहिये, वह नहीं होता; (सम्यक्) दृष्टिसे (अन्धकार) बिंधा होना चाहिये, वह नहीं होता; समयानुकूल (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त नहीं होती। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटने पर, मरने पर, हानिकी ओर ही अग्रसर होता है, विशेषताकी ओर नहीं। वह हानिको ही प्राप्त होता है, विशेषताको नहीं।

"आनन्द ! एक दूसरा आदमी अच्छी तरह रहता है, सुखपूर्वक रहता है। उसके साथी उससे प्रसन्न रहते हैं। उसे जो सुनना चाहिये, वह उसने सुना होता है बहुश्रुत होना चाहिये, वह होता है; सम्यक्-दृष्टिसे अन्धकार बिंधा होना चाहिये, वह होता है; समयानुकूल (धर्म श्रवण से प्राप्त होने वाली) प्रीति प्राप्त होती है। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटनेपर, मरने पर विशेषकी ओर अग्रसर होता है, हानिकी ओर नहीं। वह विशेषताको ही प्राप्त होता है, हानिको नहीं।

"हे आनन्द, उनकी तुलना करने वाले तुलना करते हैं और कहते हैं कि इसमें भी वे ही बातें थीं और दूसरेमें भी वे ही बातें थीं, इन दोनोंमें से कैसे एक श्रेष्ठ गतिको प्राप्त हुआ, दूसरा निकृष्ठ गतिको ? आनन्द ! उनका यह तुलना करना दीर्घकाल तक उनके अहित के लिये होता है, दुःखके लिये होता है।

"हे आनन्द ! जो यह एक आदमी अच्छी तरह रहता है, सुखपूर्वक रहता है, जिसके साथी उससे प्रसन्न रहते हैं, जिसने जो सुनना चाहिये वह सुना होता है; बहुश्रुत होना चाहिये, वह होता है, (सम्यक्) दृष्टिसे अन्धकार बिंधा होना चाहिये, वह होता है, समयानुकल (धर्म-श्रवणसे प्राप्त होने वाली) प्रीति प्राप्त होती है। हे आनन्द ! ऐसा आदमी उस पहले आदमीकी अपेक्षा बढ़िया है, श्रेष्ठतर है। ऐसा क्यों ? हे आनन्द ! इस आदमीको धर्म-स्रोत आगे बढ़ाये लिये जाता है। इस रहस्यको तथागतके अतिरिक्त दूसरा कौन जान सकता है। इसलिये आनन्द ! दूसरोंकी कीमत मत लगाओ, दूसरोंका मुल्यांकन न करो। आनन्द ! या तो मैं ही मनुष्योंका यथार्थ मुल्यांकन कर सकता हूँ, अथवा मेरे समान ही अन्य कोई।

"आनन्द ! एक आदमी क्रोध तथा मान (=अहंकार) के वशीभूत हुआ रहता है, समय समय पर उसके मनमें लोभ उत्पन्न होता है। उसे जो सुनना चाहिये, वह सुना नहीं होता; बहुश्रुत होना चाहिये, वह नहीं होता; (सम्यक्-) दृष्टिसे (अन्धकार) बिंधा होना चाहिये, वह नहीं होता; समयानुकल (धर्म श्रवण से, प्राप्त होने वाली) प्रीति प्राप्त नहीं होती। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटने पर, मरने पर, हानिकी ही ओर अग्रसर होता है, विशेषाताकी ओर नहीं, वह हानिको ही प्राप्त होता है, विशेषताको नहीं।

"आनन्द ! एक आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत होता हुआ रहता है, समय समयपर उसके मनमें लोभ उत्पन्न होता है। उसको जो सुनना चाहिये, वह सुना होता है..... हानिकी नहीं।

"हे आनन्द ! उनकी तुलना करनेवाले तुलना करते हैं.....अथवा मेरे समान ही अन्य कोई।

"आनन्द ! एक आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत हुआ रहता है, समय समयपर उसके मुँहसे वाणी फूटती है। उसे जो सुनना चाहिए, वह सुना नहीं होता........समयानुकूल (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त नहीं होती। वह शरीर छूटनेपर, मरनेपर हानिकी ही ओर अग्रसर होता है, विशेषताकी ओर नहीं, वह हानिको ही प्राप्त होता है, विशेषता को नहीं।

"आनन्द ! एक आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत हुआ रहता है, समय समयपर उसके मुँहसे वाणी फूटती है। उसे जो सुनना चाहिए,सुना होता है; बहुश्रुत, होना चाहिए, वह होता है, (सम्यक्) दृष्टिसे (अन्धकार) बिंधा होना चाहिए वह होता है; समयानुकूल (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त होती है। ऐसा व्यक्ति शरीर छूटनेपर, मरनेपर विशेषकी ओर अग्रसर होता है, हानिकी ओर नहीं। वह विशेषताको ही प्राप्त होता है, हानिको नहीं।

"हे आनन्द ! उनकी तुलना करनेवाले तुलना करते हैं और कहते हैं कि इसमें भी वे ही बातें थीं और दूसरेमें भी वे ही बातें थीं, इन दोनोंमेंसे कैसे एक श्रेष्ठ गतिको प्राप्त हुआ, दूसरा निकृष्ठ गतिको ? आनन्द ! उनका यह तुलना करना दीर्घकाल तक उनके अहितके लिये होता है, दुःखके लिये होता है।

"हे आनन्द ! जो यह दूसरा आदमी क्रोध तथा मानके वशीभूत हुआ रहता है, समय समयपर उसके मुँहसे वाणी फूटती है। उसे जो सुनना चाहिए, सुना होता है; बहुश्रुत होना चाहिए, वह होता है; (सम्यक् –) दृष्टिसे (अन्धकार) बिंधा होना चाहिए, वह होता है; समयानुसार (धर्म श्रवणसे प्राप्त होनेवाली) प्रीति प्राप्त होती है। हे आनन्द ! ऐसा आदमी उस पहले आदमीकी अपेक्षा बढ़िया है, श्रेष्ठतर है। ऐसा क्यों ? हे आनन्द ! इस आदमीको धर्म-स्रोत आगे बढ़ाये लिये जाता है। इस रहस्यको तथागतके अतिरिक्त दूसरा कौन जान सकता है ? इस लिये आनन्द ! दूसरोंकी कीमत मत लगाओ, दूसरोंका मूल्यांकन मत करो। आदमियोंका मूल्यांकन करनेवाला खेदको प्राप्त होता है। आनन्द ! या तो मैं ही मनुष्योंका यथार्थ मूल्यांकनकर सकता हूँ, अथवा मेरे समान ही अन्य कोई।

"आनन्द ! कहाँ तो वह मूर्ख, अपण्डिता, स्त्रि-प्रज्ञा मृगशाला उपासिका और कहाँ आदमियोंकी इन्द्रियोंके बारेमें ज्ञान कि कौन तीक्षण-इन्द्रिय है, कौन मृदु इन्द्रिय है ? आनन्द ! लोकमें ऐसे छः प्रकारके लोग विद्यमान हैं।

"आनन्द ! जिस प्रकारके शीलसे पुराण युक्त था, उसी प्रकारके शीलसे इसिदत्त युक्त हुआ। पुराणको इसिदत्तकी गतिकी जानकारी नहीं रही। आनन्द ! जिस प्रकारकी प्रज्ञासे इसिदत्त युक्त था, उसी प्रकारकी प्रज्ञासे पुराण युक्त हुआ। इसिदत्तको पुराणकी गति की भी जानकारी नहीं। आनन्द ! यह दोनों एक एक अंग से हीन हैं।

"भिक्षुओ ! काम भोगी गृहस्थोंके लिये दरिद्रता बड़ी दुखद होती है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति विहीन होता है, जो निर्धन होता है, उसे ऋण लेना पड़ता है। भिक्षुओ ! काम भोगी गृहस्थोंके लिये ऋण लेना भी दुःखद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता है, जो निर्धन होता है, वह ऋण लेकर सूद देनेके लिये वचन-बद्ध होता है। भिक्षुओ ! काम भोगी गृहस्थोंके लिए सूद देना भी दुःखद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता है, जो निर्धन होता है, वह सूद देना स्वीकार कर समयपर सूद नहीं दे पाता है। उसपर दोषारोपण होता है। भिक्षुओ ! काम-भोगी गृहस्थोंके लिये दोषारोपण भी दुःखद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता है, जो निर्धन होता है, जब वह माँगनेपर नहीं दे पाता, तो लोग उसका पीछा करते हैं। भिक्षुओ ! काम-भोगी गृहस्थोंके लिये पीछा किया जाना भी दुःखद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"भिक्षुओ ! जो दरिद्र होता है, जो सम्पत्ति-विहीन होता ै, जो निर्धन होता है, जब वह पीछा किये जानेपर भी नहीं देता है, तो लोग उसे बंधनमें बाँधते हैं। भिक्षुओ, काम-भोगी गृहस्थोंके लिये बन्धनमें बाँधा जाना भी दुःखद होता है।"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"इस प्रकार भिक्षुओ ! कामभोगी गृहस्थोंके लिये दुनियामें दरिद्रता भी दुःखद होती है, कामभोगी गृहस्थोंके लिये दुनियामें ऋण लेना भी दुःखद होता है कामभोगी गृहस्थोंके लिये दुनियाँमें सूद देना भी दुःखद होता है, काम भोगी गृहस्थोंके

लिये दुनियामें दोषारोपण सुनना भी दुःखद होता है, काम भोगी गृहस्थोंके लिये दुनियामें पीछा किया जाना भी दुःखद होता है, कामभोगी गृहस्थोंके लिये दुनियामें बन्धनमें बाँधा जाना भी दुःखद होता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिसके मनमें कुशल-धर्मों (=गुणों) के प्रति श्रद्धा नहीं, कुशल धर्मोंके प्रति लज्जा नहीं, कुशल धर्मोंके प्रति भय नहीं, कुशल-धर्मोंके प्रति वीर्य (=प्रयत्न) नहीं, कुशल-धर्मोंके प्रति प्रज्ञा नहीं है—भिक्षुओ, ऐसा आदमी आर्य-विनयमें दरिद्र, सम्पत्ति-विहीन तथा निर्धन कहलाता है।

"भिक्षुओ! वह जो दरिद्र होता है, धन-विहीन होता है, निर्धन होता है, कुशल-धर्मोंके प्रति श्रद्धा-विहीन होनेसे, कुशल-धर्मोंके प्रति लज्जा-विहीन होनेसे, कुशल-धर्मोंके प्रति भय-रहित होनेसे, कुशल धर्मोंके प्रति प्रयत्न-विहीन होनेसे, कुशल-धर्मोंके प्रति प्रज्ञा-रहित होनेसे शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। यह मैं उसका ऋण ग्रहण करना कहता हूँ।

"वह उस कायिक दुष्कर्मको ढका रखनेके लिये अनुचित इच्छाको मनमें जगह देता है। उसकी यही कामना होती है कि लोग मुझे नहीं जानें। उसके यही संकल्प-विकल्प होते हैं कि लोग मुझे नहीं जानें। उसका ऐसा ही कहना होता है कि लोग मुझे नहीं जानें। वह यही प्रयत्न करता है कि लोग मुझे नहीं जानें। वह उस वाणीके दुष्कर्मको ढका रखनेके लिये.......वह उस मनके दुष्ट कर्मको ढका रखनेके लिये ...... कि लोग मुझे न जानें, शरीरसे प्रयत्न करता है, यह मैं उसका सूद देना कहता हूँ।

"उसके सुशील साथी ऐसा कहते हैं कि 'इस आयुष्मानने ऐसा किया है, इसकी ऐसी करनी है।' यह उसपर लगा हुआ 'दोषारोपण' कहता हूँ।

"जब वह आरण्यमें जाता है, वृक्षकी छायाके नीचे बैठता है, शून्यागारमें जाता है, तो उसके मनमें पश्चात्ताप-युक्त बुरे बुरे अकुशल संकल्प-विकल्प पैदा होते हैं। उसे मैं उसका लोगों द्वारा पीछा किया जाना कहता हूँ।

"भिक्षुओ! वह दरिद्र, वह सम्पत्ति-विहीन, वह निर्धन शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्ट कर्म कर शरीर छूटनेपर, मरणानन्तर या तो नरकके बन्धनमें बँधता है या पशु योनिके बन्धनमें बँधता है। भिक्षुओ, मैं किसी दूसरे ऐसे एक बन्धनको नहीं देखता जो इतना कठोर हो, इतना चुभनेवाला हो, इतना बाधक हो अनुपम योग-क्षेमकी प्राप्तिकी दृष्टिसे जितना कि यह नरकका बन्धन है या पशु-योनिका बन्धन है।

दालिद्दियं दुक्खं लोके, इणादाने चवुच्चति,
दलिद्दो इणमादाय, भुञ्जमानो विहञ्ञति ।।
ततो अनुचरन्ति नं, बन्धनं पि निगच्छति,
एतं हि बंधनं दुक्खं, कामलाभाभिजप्पिनं ।।
तथेव अरिय विनये, सद्धा यस्स न विज्जति ।
अहिरीको अनोत्तप्पी, पापकम्म विनिब्बयो ।।
काय दुच्चरितं कत्वा, वची दुच्चरितानि च
मनो दुच्चरितं कत्वा, 'मा मं जञ्ञू' ति इच्छति ।।
सो संसप्पति कायेन, वाचाय उद चेतसा
पापकम्मं पवड्ढेन्तो, तत्थ तत्थ पुनप्पुनं ।।
सो पापकम्मो दुम्मेधो, जानं दुक्कटमत्तनो ।
दलिद्दो इणमादाय, भुञ्जमानो विहञ्ञति ।।
ततो अनुचरन्ति नं, सङ्कप्पा मानसा दुखा,
गामे वा यदि वारञ्ञे, यस्स विप्पटिसारजा ।
सो पापकम्मो दुम्मेधो, जानं दुक्कटमत्तनो,
योनिमञ्ञतरं गन्त्वा, निरये वापि बज्झति ।।
एतं हि बंधनं दुक्खं, यम्हा धीरो पमुच्चति,
धम्मलद्धेहि भोगेहि, ददं चित्तं पसादयं ।।
उभयत्थ कटग्गाहो, सद्धस्स घरमेसिनो,
दिट्ठधम्म हितत्थाय, सम्पराय सुखाय च,
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढति ।।
तथेव अरियविनये, सद्धा यस्स पतिट्ठिता ।
हिरीमनो च ओत्तप्पी, पञ्ञवा सीलसंवुता ।।
एसो खो अरियविनये, सुखजीवी ति वुच्चीति ।
निरामिसं सुखं लद्धा, उपेक्खं अधितिट्ठति ।।
पञ्च नीवरणे हित्वा, निच्चं आरद्धविरियो
झानानि उपसम्पज्ज, एकोदि निपको सतो ।
एवं ञत्वा यथाभूतं, सब्ब संयोजनक्खये ।
सब्बसो अनुपादाय, सम्मा चित्तं विमुच्चति ।
तस्स सम्माविमुत्तस्स, ञाणं चे होति तादिनो

अकुप्पा मे विमुत्तीति, भवसंयोजनक्खये।
एतं खो परमं ञाणं, एतं सुखमनुत्तरं।
असोकं विरजं खेमं, एतं आणण्यमुत्तमं।

[लोकमें दरिद्रता बड़ा दुःख है और ऋण लेना भी दुःख कहा जाता है। दरिद्र आदमीको ऋण लेकर खाना पड़ता है, जिससे वह दुःखको प्राप्त होता है। तब लोग उसका पीछा करते हैं। वह बन्धनमें भी बाँधा जाता है। कामभोगी गृहस्थोंके लिये बन्धनमें बाँधा जाना भी दुःख है। उसी प्रकार आर्य-विनय (=बुद्ध शासन) के अनुसार जिस आदमीमें श्रद्धा नहीं है, लज्जा नहीं है, भय नहीं है, पापाभिमुख है, वह शरीर, वाणी और मनसे दुष्ट कर्म करके चाहता है कि कोई उसे जाने नहीं। वह शरीर, वाणी और मनसे पाप-कर्मको बार-बार करता, पाप-कर्ममें वृद्धि करता है। वह मूर्ख पापी अपने दुष्कृतको जानता है। यही कहलाता है कि वह दरिद्र ऋण लेकर खाता हुआ कष्ट पाता है। तब वह गाँव या आरण्यमें जहाँ कहीं भी रहता है वहीं पश्चाताप रूपी दुखद संकल्प-विकल्प उसका पीछा करते हैं। वह मूर्ख पापी अपने दुष्कृत्यका जानकार होता है और किसी (पशु-) योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा नरकसे बँधता है। यही दुःखद बन्धन हैं, जिनसे धीरजन मोक्ष प्राप्त करते हैं। वे धर्मानुसार प्राप्त ऐश्वर्यमेंसे दान देते हुए प्रमुदित मन रहते हैं। जो गृहस्थ श्रद्धावान् होता है वह उभयत्र विजयी होता है—इस जन्ममें आनंदित रहता है तथा परलोकमें सुखी रहता है, इस प्रकार त्याग-शील होनेसे गृहस्थोंका पुन्य बढ़ता है। इसी प्रकार आर्य-विनय (=बुद्ध शासन) में जिसकी श्रद्धा स्थिर होती है, जो लज्जाशील होता है, जो पाप-भीरु होता है, जो प्रज्ञावान् होता है, जो शीलवान होता है—वही आर्य-विनयके अनुसार सुखी कहलाता है। वह निरामिष (=दिव्य) सुखको प्राप्तकर उपेक्षामें प्रतिष्ठित होता है। वह पाँच नीवरणोंका त्याग कर, नित्य प्रयत्नशील रहता है। वह ध्यानोंको प्राप्त कर चित्तकी एकाग्रता सम्पादित करता है। वह बुद्धिमान होता है। वह स्मृतिमान होता है। इस प्रकार यथार्थ ज्ञानको प्राप्त कर लेनेसे, सब संयोजनों (=बन्धनों) का मूलोच्छेद कर सकनेसे, सर्वत्र अनासक्त हो जानेसे, वह हर प्रकारसे विमुक्त चित्त हो जाता है। उस स्थिर चित्तको, उस सम्यक् प्रकारसे विमुक्त चित्तको यह अनुभूति होती है कि संसारके संयोजनोंका क्षय हो गया और उसे अचल विमुक्ति प्राप्त हो गई। यही ज्ञान है, यही अनुपम सुख है, यही शोक-रहित, रज-रहित कल्याण-पद है और यही श्रेष्ठ प्रकारका उऋण होना है।]

ऐसा मैंने सुना। एक समय आयुष्मान् महाचुन्द चेदी (जनपद) के सयंजाति स्थानपर विहार करते थे। वहाँ आयुष्मान् महाचुन्दने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ।" भिक्षुओंने आयष्मान् महाचुन्दको प्रतिवचन दिया—'आयुष्मान्।'

तब आयुष्मान् महाचुन्दने यह कहा—'आयुष्मानो! जो धर्म-कथिक भिक्षु होते हैं, वे ध्यानी भिक्षुओंका तिरस्कार करते हैं। वे कहते हैं कि ये अपने आपको ध्यान करनेवाला, ध्यान लगाने वाला, ध्यानमें बैठने वाला कहते हैं, यह क्या ध्यान लगाते हैं, किसका ध्यान लगाते हैं, कैसे ध्यान लगाते हैं? इससे न धर्म-कथिक भिक्षुओंको ही प्रसन्नता होती है, न ध्यानी भिक्षुओंको ही प्रसन्नता होती है। वे बहुतजनोंके हितमें रत नहीं होते हैं। वे बहुत जनोंके सुखमें नहीं लगे होते हैं! वे बहुत जनों तथा देव-मनुष्योंके कल्याण, हित और सुखमें नहीं लगे होते हैं।

"आयुष्मानो! जो ध्यानी भिक्षु होते हैं,वे धर्म-कथिक भिक्षुओंका तिरस्कार करते हैं—ये धर्म-कथिक, धर्म-कथिक कहते हैं, किन्तु ये उद्धत हैं, अशान्त हैं, चपल हैं, मुखर हैं, बकवादी हैं, मूढ़-स्मृति हैं, अजानकार हैं, असमाहित हैं, भ्रान्त चित्त हैं तथा असंयतेन्द्रिय हैं। ये क्या धर्म-कथिक हैं! ये कितने धर्म-कथिक हैं! ये कैसे धर्म-कथिक हैं! इससे न ध्यानी भिक्षुओंको ही प्रसन्नता होती है और न धर्म-कथिक भिक्षुओंको ही प्रसन्नता होती है। वे बहुत जनोंके हितमें रत नहीं होते हैं। वे बहुत जनोंके सुखमें नहीं लगे होते हैं। वे बहुतजनोंके तथा देव-मनुष्योंके कल्याण, हित और सुखमें नहीं लगे होते हैं।

"आयुष्मानो! धर्म-कथिक भिक्षु धर्म-कथिक भिक्षुओंका ही यश गाते हैं, वे ध्यानी भिक्षुओंके गुणोंकी चर्चा नहीं करते। इससे न धर्म-कथिक भिक्षुओंको प्रसन्नता होती है, न ध्यानी भिक्षुओंको प्रसन्नता होती है। वे बहुत जनोंके हितमें रत नहीं होते हैं। वे बहुत जनोंके सुखमें नहीं लगे होते हैं। वे बहुत जनोंके तथा देव-मनुष्योंके कल्याण, हित और सुखमें नहीं लगे होते हैं।

"आयुष्मानो! ध्यानी भिक्षु ध्यानी भिक्षुओंका ही यश गाते हैं, वे धर्म-कथिक भिक्षुओंके गणोंकी चर्चा नहीं करते। इससे न ध्यानी भिक्षुओंको प्रसन्नता होती है, न धर्म-कथिक भिक्षुओंको प्रसन्नता होती है। वे बहुत जनोंके हितमें रत नहीं होते हैं। वे बहुत जनोंके सुखमें नहीं लगे होते हैं। वे बहुत जनों तथा देव-मनुष्योंके कल्याण, हित और सुखमें नहीं लगे होते हैं।

"इसलिये आयुष्मानो ! यही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि हम स्वयं धर्म-कथिक होते हुए भी ध्यानी भिक्षुओंकी प्रशंसा करेंगे। आयुष्मानो ! ऐसी ही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। यह किसलिए ? आयुष्मानो ! अद्‌भुत हैं वे लोग, दुर्लभ हैं वे लोग जो काय (= मन) से अमृत-धातु (= निर्वाण) का स्पर्श करते हुए विचरते हैं।

"इसलिए आयुष्मानो ! यही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये कि हम स्वयं ध्यानी भिक्षु होते हुए भी धर्म-कथिक भिक्षुओंकी प्रशंसा करेंगे। आयुष्मानो ! ऐसे ही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। यह किसलिये ? आयुष्मानो ! अद्‌भुत हैं वे लोग, दुर्लभ हैं वे लोग जो गम्भीर विषयोंको प्रज्ञासे बींधकर स्पष्ट रूपसे देखते हैं।"

तब मोळियसीवक परिब्राजक जहाँ भगवान् थे वहाँ गया। जाकर भगवान्‌के साथ कुशल-क्षेमकी चर्चा की। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए मोळियसीवक परिब्राजकने भगवान्से यह कहा "भन्ते ! सान्दृ-ष्टिक-धर्म, सान्दृष्टिक धर्म कहा जाता है। भन्ते ! धर्म कैसे सन्दृष्टिक होता है, कालतिक्रान्त, 'आओ और स्वयं देख लो' विशेषणसे युक्त, (निर्वाणकी ओर) ले जाने वाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात् किये जानेवाला ?

"तो सीवक ! तुझ से ही प्रश्न करता हूँ, जैसे तुझे लगे वैसा उत्तर देना। सीवक ! तू क्या मानता है, जब तुझमें लोभ होता है तो क्या तू जानता है कि तुझमें लोभ है ? जब तुझमें लोभ नहीं होता क्या तू नहीं जानता कि तुझमें लोभ है ?"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"सीवक ! यह जो जब तुझमें लोभ होता है, तू जानता है कि तुझमें लोभ है और यह जो जब तुझमें लोभ नहीं होता तू जानता है कि तुझमें लोभ नहीं हैं, सीवक ! ऐसा होनेसे भी धर्म सान्दृष्टिक होता है........होता है।

"तो सीवक ! तू क्या मानता है जब तुझमें द्वेष होता है......जब तुझमें मोह होता है........जब तुझमें लोभ-धर्म (= लोभ) होता है.....जब तुझमें द्वेष-धर्म होता है.....जब तुझमें मोह-धर्म होता है, तो क्या तू जानता है कि तुझमें मोह-धर्म है ? जब तुझमें मोह-धर्म नहीं होता तो क्या तू नहीं जानता कि तुझमें मोह-धर्म नहीं है ?"

"भन्ते ! ऐसा ही है।"

"सीवक ! यह जो जब तुझमें मोह-धर्म होता है तू जानता है कि तुझमें मोह-धर्म है, और यह जो जब तुझमें मोह-धर्म नहीं होता तू जानता है कि तुझमें मोह-धर्म नहीं है, सीवक ! ऐसा होनेसे भी धर्म सान्दृष्टिक होता है, कालातिक्रान्त,

'आओ और स्वयं देख लो' विशेषणसे युक्त होता है, (निर्वाणकी ओर) ले जाने वाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात किये जानेवाला होता है।"

"बहुत सुन्दर भन्ते! बहुत सुन्दर भन्ते! ......आजसे जीवन पर्यन्त आप मुझे अपना शरणागत उपासक धारण करें।"

तब एक ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्से कुशल-क्षेम वार्ता की। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मणने भगवान्से यह कहा—"भन्ते! सान्दिृष्टिक धर्म, सान्दिृष्टिक धर्म कहा जाता है। भन्ते! धर्म कैसे सान्दिृष्टिक होता है, कालातिक्रान्त, 'आओ और स्वयं देख लो' विशेषणसे युक्त, (निर्वाणकी ओर) ले जाने वाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात् किये जानेवाला होता है।"

"तो ब्राह्मण! तुझसे ही प्रश्न करता हूँ। जैसा तुझे लगे वैसा उत्तर देना। ब्राह्मण! तू क्या मानता है, जब तुझमें राग होता है तो क्या तू जानता है कि तुझमें राग है? जब तुझमें राग नहीं होता तो क्या तू नहीं जानता कि तुझमें राग नहीं है?"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"ब्राह्मण! यह जो जब तुझमें राग उत्पन्न होता है, तू जानता है कि तुझमें राग है और यह जो जब तुझमें राग नहीं होता, तू जानता है कि तुझमें राग नहीं है, ब्राह्मण! ऐसा होनेसे भी धर्म सान्दृष्टिक होता है......ले जानेवाला।

"तो ब्राह्मण! तू क्या मानता है जब तुझमें द्वेष उत्पन्न होता है....जब तुझमें मोह......जब तुझमें शारीरिक दुष्ट-कर्म.....वाणीका दुष्टकर्म.....मानसिक दुष्टकर्म होता है तो क्या तू जानता है कि तुझमें मानसिक दुष्ट-कर्म है, जब तुझमें मानसिक दुष्टकर्म नहीं होता तो क्या तू नहीं जानता कि तुझमें मानसिक दुष्टकर्म नहीं है?"

"भन्ते! ऐसा ही है।"

"ब्राह्मण! यह जो जब तुझमें मानसिक दुष्टकर्म उत्पन्न होता है तू जानता है कि तुझमें मानसिक दुष्टकर्म है और यह जो जब तुझमें मानसिक दुष्टकर्म नहीं होता तू जानता है कि तुझमें मानसिक-दुष्टकर्म नहीं है, ब्राह्मण! ऐसा होनेपर भी धर्म सान्दिृष्टिक होता है, कालातिक्रान्त, 'आओ और स्वयं देख लो' विशेषणसे युक्त, (निर्वाणकी ओर) ले जानेवाला होता है, प्रत्येक विज्ञ आदमी द्वारा साक्षात् किये जानेवाला होता है।"

"बहुत सुन्दर है गौतम! बहुत सुन्दर हे गौतम! हे गौतम! आजसे आप जीवन पर्यन्त मुझे अपना शरणागत उपासक समझें।"

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् खेम तथा आयुष्मान सुमन श्रावस्तीमें अन्धवनमें विहार करते थे। तब आयुष्मान् खेम तथा आयुष्मान सुमन जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठ हुए आयुष्मान् खेमने भगवान्से यह कहा—

"भन्ते! जो भिक्षु अर्हत होता है, क्षीणास्रव होता है, आदर्श जीवन बिताने वाला होता है, कृतकृत्य होता है, भारविहीन होता है, सदर्थ (= उद्देश्य) सिद्ध होता है, संयोजन-विहीन होता है तथा जो प्रज्ञासे सम्यक प्रकार विमुक्त होता है, उस के मनमें ऐसा नहीं होता कि 'अमुक मुझसे बढ़कर है, अमुक मेरे समान है, अमुक मुझसे निकृष्ट है।' आयुष्मान् खेमने ऐसा कहा। शास्ता सन्तुष्ट हुए। तब आयुष्मान खेम 'शास्ता मुझसे सन्तुष्ट हैं' सोच आसनसे उठ, भगवान्को अभिवादन कर चले गये।

आयुष्मान् खेमके चले जानेके थोड़ी ही देर बाद आयुष्मान् सुमनने भगवान्से कहा—"भन्ते! जो भिक्षु अर्हत होता है, क्षीणास्रव होता है, आदर्श जीवन बिताने वाला होता है, कृतकृत्य होता है, भारविहीन होता है, सदर्थ (= उद्देश) सिद्ध होता है, संयोजन विहीन होता है तथा जो प्रज्ञासे सम्यक् प्रकार विमुक्त होता है, क्या उसके मनमें ऐसा नहीं होता कि अमुक मुझसे बढ़कर है, अमुक मेरे समान है, अमुक मुझसे निकृष्ट है?" आयुष्मान् सुमनने ऐसा कहा। शास्ता सन्तुष्ट हुए। तब आयुष्मान् 'शास्ता मुझसे सन्तुष्ट हैं' सोच, आसनसे उठ, भगवान्को अभिवादन कर चले गये।

आयुष्मान खेम और आयुष्मान सुमनके चले जानेके थोड़ी ही देर बाद भगवानने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ, जो कुलपुत्र होते हैं, इसी तरह अर्हत्वकी घोषणा करते हैं। बात भी कह दी गई, और अपने आपको भी बीचमें नहीं लाया गया। लेकिन कुछ मूर्ख अर्हत्वकी घोषणा ऐसे करते हैं, मानों यह हँसनेकी बात हो। वे बादमें दुःखको प्राप्त होते हैं।

न उस्सेसु न ओमेसु, समत्ते नोपनीयरे।
खीणा जाति वुसितं ब्रह्मचरियं, चरन्ति
संयोजन विप्पमुत्ता॥

[वे अपनेको न श्रेष्ठ, न हीन और न बराबर ही मानते हैं, जो क्षीण-जन्म हो जाते हैं, जिन्होंने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है तथा जो संयोजन-विहीन होते हैं।]

"भिक्षुओ ! इन्द्रिय संयमके न रहनेपर, इन्द्रिय-संयमकी हानि होनेपर शीलको आघात पहुँचता है; शीलके न रहनेपर, शीलकी हानि होनेपर सम्यक् समाधिको आघात पहुँचता है; सम्यक् समाधिके न रहनेपर, सम्यक् समाधिकी हानि होनेपर यथार्थ ज्ञान-दर्शनको आघात पहुँचता है, यथार्थ ज्ञान-दर्शनके न रहनेपर, यथार्थ ज्ञान-दर्शनकी हानि होनेपर निर्वेद-वैराग्यको आघात पहुँचता है; निर्वेद-वैराग्यके न रहनेपर, निर्वेद-वैराग्यकी हानि होनेपर, विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनको आघात पहुँचता है। भिक्षुओ, जिस प्रकार जिस वृक्षकी शाखायें और पत्ते नहीं होते, उसकी पपड़ी भी पूर्णताको प्राप्त नहीं होती, छाल भी पूर्णताको प्राप्त नहीं होती, फल भी पूर्णताको प्राप्त नहीं होता, सार भी पूर्णताको प्राप्त नहीं होता, इसी प्रकार भिक्षुओ, इन्द्रिय संयमके न रहनेपर, इन्द्रिय-संयमकी हानि होनेपर शीलको आघात पहुँचता है ..... विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनको आघात पहुँचता है।

"भिक्षुओ, इन्द्रिय-संयमके रहनेपर, इन्द्रिय संयमसे युक्त होनेपर, शीलकी सिद्धि होती है; शीलके रहनेपर, शीलसे युक्त होनेपर, सम्यक समाधिकी सिद्धि होती है; सम्यक् समाधिके रहनेपर, सम्यक् समाधिसे युक्त होनेपर, यथार्थ ज्ञान-दर्शनकी सिद्धि होती है; यथार्थ ज्ञान-दर्शनके रहनेपर, यथार्थज्ञान-दर्शनसे युक्त होनेपर, निर्वेद-वैराग्यकी सिद्धि होती है; निर्वेद वैराग्यके रहनेपर, निर्वेद वैराग्यसे युक्त होनेपर, विमुक्ति ज्ञान-दर्शनकी सिद्धि होती है। भिक्षुओ, जिस प्रकार, जिस वृक्षकी शाखायें और पत्ते होते हैं, उसकी पपड़ी भी पूर्णताको प्राप्त होती है, छाल भी पूर्णताको प्राप्त होती है, फल्गु भी पूर्णताको प्राप्त होता है, सार भी पूर्णताको प्राप्त होता है, इसी प्रकार भिक्षुओ, इन्द्रिय-संयमके रहनेपर, इन्द्रिय-संयमसे युक्त होनेपर शीलकी सिद्धि होती है ...... विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनकी सिद्धि होती है।

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ आयुष्मान सारिपुत्र थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर आयुष्मान् सारिपुत्रके साथ कुशल-क्षेमकी चर्चा की। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेपर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् आनन्दने आयुष्मान् सारिपुत्रसे यह कहा—

"आयुष्मान् सारिपुत्र ! कौन-सी बात होनेसे भिक्षु अश्रुत-धर्मको सुनता है, सुने हुए धर्मोंको भूलता नहीं है, जिन धर्मोंको उसने पहले अपने चित्तसे स्पर्श किया

है, वे स्पष्ट रूपसे प्रकट रहते हैं तथा जिन बातोंको वह पहले नहीं जानता उनकी जानकारी प्राप्त करता है ?"

"आयुष्मान आनन्द! आप बहुश्रुत हैं। आप हीं इस प्रश्न का समाधान करें।"

"तो आयुष्मान सारिपुत्र सुनें, अच्छी तरह मनमें धारण करें, कहता हूँ।"

"बहुत अच्छा" कह आयुष्मान सारिपुत्रने आयुष्मान आनन्दको प्रति-वचन दिया, तब आयुष्मान आनन्दने यह कहा—

"आयुष्मान सारिपुत्र! यहाँ एक भिक्षु धर्मको सीखता है—सूत्रको, गेय्यको, वेयाकरणको, गाथाको, उदानको, इतिवुत्तकको, जातकको, अद्भुतधर्मको, वेदल्लको। वह सुने अनुसार, सीखे अनुसार, दूसरोंको विस्तार पूर्वक धर्मका उपदेश करता है; सुने अनुसार, सीखे अनुसार दूसरोंसे धर्म दुहरवाता है, सुने अनुसार, सीखे अनुसार दूसरोंके साथ मिलकर धर्मका सज्झायन (=पाठ) करता है, सुने अनुसार, सीखे अनुसार धर्मपर विचार करता है, मनसे मनन करता है। जिस विहारमें बहुश्रुत, आगमके जानकार, धर्मधर, विनय-धर, मातृको (-धर) स्थविर भिक्षु रहते हैं, वह उसी विहारमें (वर्षा-) वास करता है। वह समय समयपर उनसे जाकर पूछता है, प्रश्न करता है—भन्ते! यह कैसे, इसका क्या अर्थ है? वे उस आयुष्मानको जो अप्रकट रहता है, उसे प्रकट कर देते हैं; जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते हैं, जो शंकाओंके नाना स्थल होते हैं, उन शंकाओंका निवारण कर देते हैं। आयुष्मान् सारिपुत्र! ये बातें होनेसे भिक्षु अश्रुत-धर्मको सुनता है, सुने हुए धर्मोंको भूलता नहीं है, जिन धर्मोंको उसने पहले अपने चित्तसे स्पर्श किया है, वे स्पष्टरूपसे प्रकट रहते हैं तथा जिन बातोंको वह पहले नहीं जानता उनकी जानकारी प्राप्त करता है।"

"आयुष्मान् आश्चर्यकर है, आयुष्मान अद्भुत है यह जो आयुष्मान आनन्दका सुभाषित है। हमारी मान्यता है कि आयुमान आनन्द इन छह धर्मोंसे युक्त हैं। आयुष्मान आनन्द धर्मको सीखते हैं—सूत्रको, गेय्यको, वेयाकरणको, गाथाको, उदानको, इतिवुत्तकको, जातकको, अद्भुत धर्मको, वेदल्लको। आयुष्मान आनन्द सुने अनुसार, सीखे अनुसार, दूसरोंको विस्तार पूर्वक धर्मको उपदेश करते हैं; आयुष्मान् आनन्द सुने अनुसार सीखे अनुसार दूसरोंसे धर्म दुहरवाते हैं, आयुष्मान् आनन्द सुने अनुसार,

---

१. सम्भवतः अभिधर्म पिटकका पूर्व-रूप।

सीखे अनुसार दुसरोंके साथ मिलकर धर्मका संज्झायन (= पाठ) करते हैं; आयुष्माने आनन्द सुने अनुसार, सीखे अनुसार, धर्मपर विचार करते हैं, मनसे मनन करते हैं। आयुष्मान् आनन्द जिस विहारमें बहु-श्रुत,आगमनके जानकार, धर्मधर, विनय-घर, मातृका-धर भिक्षु रहते हैं, उसी विहारमें (वर्षा–) वास करते हैं। वे समय समयपर उनसे जाकर पूछते हैं। प्रश्न करते हैं––भन्ते ! यह कैसे, इसका क्या अर्थ है ? वे आयुष्मान् आनन्द को जो अप्रकट रहता है उसे प्रकट कर देते हैं; जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते हैं, शंकाओंके जो नाना-स्थल होते हैं, उन शंकाओंका समाधान कर देने हैं।"

तब जाणुस्सोणि ब्राह्मण जहाँ भगवान् थे, वहाँ आया। आकर भगवान्का कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए जाणुस्सोणि ब्राह्मणने भगवान्से यह पूछा––

"हे गौतम ! क्षत्रिय जनोंके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है ? उनका प्रधान विचार क्या होता है ? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है ? उनकी नजर किस बातपर रहती है ? उनकी परं संतुष्टि किस बातसे होती है ?"

"हे ब्राह्मण ! क्षत्रियोंके जीवनका उद्देश्य भोग्य-पदार्थोंका संग्रह करना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान बनना होता है। उनकी प्रतिष्ठा बलवान् बननेसे होती है। उनकी नजर पृथ्वीका स्वामी बननेपर होती है। उनकी परं संतुष्टि राज्याभिषेक आदि ऐश्वर्यकी प्राप्तिसे होती है।"

"हे गौतम ! ब्राह्मणोंके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है ? उनका प्रधान विचार क्या होता है ? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है ? उनकी नजर किस बातपर रहती है ? उनकी परं संतुष्टि किस बातसे होती है ?"

"हे ब्राह्मण ! ब्राह्मणोंके जीवनका उद्देश्य भोग्य-पदार्थोंका संग्रह करना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान बनना होता है। उनकी प्रतिष्ठा (वेद–) मन्त्रोंके जानकार होनेसे होती है। उनकी नजर यज्ञोंपर लगी रहती है। उनकी परं संतुष्टि ब्रह्म-लोकगामी होनेसे होती है।"

"हे गौतम ! वैश्यों (= गृहपतियों) के जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है ? उनका प्रधान विचार क्या होता है ? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है ? उनकी नजर किस बातपर रहती है ? उनकी परं संतुष्टि किस बातसे होती है ?"

"हे ब्राह्मण वैश्यों (= गृहपतियों) के जीवनका उद्देश्य भोग्य पदार्थोंका संग्रह करना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान बननेका होता है। उनकी प्रतिष्ठा शिल्पका जानकार होनेसे होती है। उनकी नजर कर्मान्त (= गृहस्थीके कामों) पर रहती है। उनकी परं संतुष्टि गृहस्थीके कामोंके समाप्त होनेसे होती है।"

"हे गौतम! स्त्रियोंके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है? उनकी नजर किस बातपर रहती है? उनकी परं संतुष्टि किस बातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! स्त्रियोंका अभिप्राय (= उद्देश्य) पुरुषकी प्राप्ति होती है। उनका प्रधान विचार अलंकार-युक्त रहना होता है। उनकी प्रतिष्ठा पुत्र होनेसे होती है। उनकी नजर असपत्नीक बनी रहनेपर रहती है। उनकी परं-संतुष्टि ऐश्वर्य-प्राप्तिसे होती है।"

"हे गौतम! चोरोंके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है? उनकी नजर किस बातपर रहती है? उनकी परं संतुष्टि किस बातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! चोरोंके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) चोरी करना होता है। उनका प्रधान विचार छिपे रहनेका होता है। उनका बल शस्त्रधारी होनेसे बढ़ता है। उनकी नजर अन्धेरेपर लगी रहती है। उनकी परं संतुष्टि किसीके भी द्वारा न देखे जानेसे होती है।"

"हे गौतम! श्रमणोंके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्या होता है? उनका प्रधान विचार क्या होता है? उनकी प्रतिष्ठा किस बातसे होती है? उनकी नजर किस बातपर रहती है? उनकी परं सन्तुष्टि किस बातसे होती है?"

"हे ब्राह्मण! श्रमणोंके जीवनका अभिप्राय (= उद्देश्य) क्षमावान् तथा शीलवान् बनना होता है। उनका प्रधान विचार प्रज्ञावान् बननेका होता है। उनकी प्रतिष्ठा शीलवान् होनेसे होती है। उनकी नजर अकिञ्चन बने रहनेपर रहती है। उनकी परं सन्तुष्टि निर्वाण-प्राप्तिसे होती है।"

"हे गौतम! आश्चर्य है। हे गौतम! अद्भुत है। हे गौतम! आप क्षत्रियोंका भी अभिप्राय, विचार, बल, प्रधान-संकल्प तथा परमोद्देश्य जानते हैं। हे गौतम! आप ब्राह्मणोंका भी अभिप्राय, विचार, बल प्रधान-संकल्प तथा परमोद्देश्य जानते हैं। हे गौतम! आप गृहपतियोंका भी...... स्त्रियोंका भी.... चोरोंका

भी तथा श्रमणोंका भी अभिप्राय, विचार, बल, प्रधान-संकल्प तथा परमोद्देश्य जानते हैं। हे गौतम! यह बहुत सुन्दर है......हे गौतम! आजसे शरीरान्त होने तक आप मुझे अपना शरणागत उपासक जानें।"

तब एक ब्राह्मण जहाँ भगवान थे वहाँ आया। पास आकर भगवान्का कुशलक्षेम पूछा। कुशल-समाचार पूछ चुकनेके अनन्तर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उस ब्राह्मणने भगवान्से पूछा—

"हे गौतम! क्या कोई ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे, लौकिक तथा पारलौकिक दोनों उद्देश्योंकी सिद्धि होती है?"

"हे ब्राह्मण! ऐसा एक गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनों उद्देश्योंकी सिद्धि होती है।"

"हे गौतम! वह कौन-सा एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनों उद्देश्योंकी सिद्धि होती है?"

"हे ब्राह्मण! अप्रमाद एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनों उद्देश्योंकी सिद्धि होती है।"

"हे ब्राह्मण! जंगलमें जानवरोंके जितने भी पैर होते हैं वे छोटे बड़ेके हिसाबसे सभी हाथीके पाँवोंके अन्तर्गत आ जाते हैं। बड़े-पनकी दृष्टिसे हाथीका पाँव ही उन सबमें मुख्य है। इसी प्रकार हे ब्राह्मण! अप्रमाद एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनों उद्देश्योंकी सिद्धि होती है।

"हे ब्राह्मण! जैसे किसी शिखरवाले भवनकी सभी कड़ियाँ शिखरकी ही ओर मुड़ी रहती हैं, शिखरकी ही ओर मुँह किये रहती हैं, शिखरकी ही ओर झुकी रहती हैं; शिखर ही उनमें मुख्य कहलाता है। इसी प्रकार हे ब्राह्मण! अप्रमाद....

"हे ब्राह्मण! जैसे बब्भड़ घासके काटनेवाला, बब्भड़को काटकर, उसीके सिरेको पकड़कर कूटता है, पीटता है, छाँटता है, इसी प्रकार हे ब्राह्मण! अप्रमाद...

"हे ब्राह्मण! जैसे आमकी डंठलके टूटनेसे जितने भी आम उस डण्ठलमें लगे रहते हैं सभी गिर पड़ते हैं; इसी प्रकार हे ब्राह्मण! अप्रमाद.......

"हे ब्राह्मण! जैसे जितने भी छोटे-मोटे राजा होते हैं, वे सभी चक्रवर्ती नरेशका अनुगमन करते हैं, उनमें चक्रवर्ती राजा ही श्रेष्ठ कहलाता है, इसी प्रकार हे ब्राह्मण! अप्रमाद.....

"हे ब्राह्मण ! जैसे जितने भी तारागण हैं, उन सभीकी चमक चन्द्रमाकी चमकके सोलहवें हिस्सेके भी बराबर नहीं होती, चन्द्रप्रभा ही उन सबमें मुख्य मानी जाती है; इसी प्रकार हे ब्राह्मण ! अप्रमाद एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे, इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनों उद्देश्योंकी सिद्धि होती है।

"हे ब्राह्मण ! यह एक ऐसा गुण है, जिसका अभ्यास करनेसे, जिसे बढ़ानेसे इहलौकिक तथा पारलौकिक दोनों उद्देश्योंकी सिद्धि होती है।"

"हे गौतम ! बहुत सुन्दर है। हे गौतम ! बहुत सुन्दर है। आजसे शरीरान्त होने तक आप मुझे अपना शरणात उपासक जानें।"

एक समय भगवान राजगृहमें गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् धार्मिक अपनी जाति-भूमिके सात निवास-स्थानोंमें नैवासिक भिक्षु थे। उस समय किसी अतिथि भिक्षुके आने पर आयुष्मान् धार्मिक उसे बुरा-भला कहते, गाली देते, कष्ट देते, क्रोधित कर देते, वचनोंसे बींधते। आयुष्मान धार्मिक द्वारा बुरा-भला कहे जानेके कारण, गाली दिये जानेके कारण, कष्ट दिये जानेके कारण, क्रोधित किये जानेके कारण, वचनोंसे बींधे जानेके कारण, वे अतिथि-भिक्षु इस निवास-स्थानसे चले जाते, न ठहरते, उस निवास-स्थान को खाली कर देते।

तब जाति-भूमिके उपासकोंके मनमें यह हुआ—हमने भिक्षु-संघकी चीवर, भिक्षा, शयनासन, रोगीका पथ्य तथा दवाई आदिसे सेवा की है। लेकिन तब भी अतिथि-भिक्षु चले जाते हैं, ठहरते नहीं है, आवास खाली कर देते हैं। इसका क्या हेतु है, क्या कारण है जिससे अतिथि-भिक्षु चले जाते हैं, ठहरते नहीं हैं, निवास-स्थान खाली कर देते हैं ? तब जाति-भूमिके उपासकोंके मनमें यह हुआ——यह आयुष्मान् धार्मिक अतिथि-भिक्षुओंको बुरा भला कहते हैं, गाली देते हैं, कष्ट देते हैं, क्रोधित कर देते हैं तथा वचनोंसे बींधते हैं। आयुष्मान् धार्मिक द्वारा बुरा-भला कहे जानेके कारण, गाली दिये जानेके कारण, क्रोधित किये जानेके कारण तथा वचनोंसे बींधे जानेके कारण, वे अतिथि-भिक्षु इस निवास-स्थानसे चले जाते हैं, ठहरते नहीं हैं, उस निवास-स्थान को खाली कर देते हैं। हम आयुष्मान् धार्मिक को यहाँसे चलता करें।

तब जाति-भूमिके उपासक जहाँ आयुष्मान् धार्मिक था, वहाँ गये। जाकर आयुष्मान् धार्मिक से कहा——'आयुष्मान धार्मिक आप इस निवास-स्थानसे पधारें। आपको और यहाँ रहना नहीं है।' तब आयुष्मान् धार्मिक उस निवास-स्थानसे भी दूसरे निवास-स्थान चले गये। वहाँ भी आयुष्मान धार्मिक अतिथि-भिक्षुओंको बुरा-

भला कहते, गाली देते, कष्ट देते, क्रोधित कर देते तथा वचनोंसे बींधते। आयुष्मान् धार्मिक द्वारा बुरा-भला कहे जानेके कारण, गाली दिये जानेके कारण, क्रोधित किये जानेके कारण तथा वचनोंसे बींधे जानेके कारण, अतिथि-भिक्षु उस निवास-स्थानसे चले जाते, उसे छोड़ देते, उस निवास-स्थानको खाली कर देते।

तब जाति-भूमिके उपासकोंके मनमें यह हुआ—हमने भिक्षु-संघकी चीवर, भिक्षा, शयनासन, रोगीका पथ्य तथा दवाई आदिसे सेवा की है। लेकिन तब भी अतिथि-भिक्षु चले जाते हैं, ठहरते नहीं है, निवास-स्थान खाली कर देते हैं। इसका क्या हेतु है, क्या कारण है जिससे अतिथि-भिक्षु चले जाते हैं, ठहरते नहीं हैं, निवास-स्थान खाली कर देते हैं। तब जाति-भूमिके उपासकोंके मनमें यह हुआ —यह आयुष्मान् धार्मिक अतिथि-भिक्षुओंको. . . . हम आयुष्मान् धार्मिकको जाति-भूमिके सातों निवास-स्थानोंसे चलता करें। तब जाति-भूमिके उपासक जहाँ आयुष्मान् धार्मिक था, वहाँ गये। जाकर आयुष्मान् धार्मिकसे कहा–'आयुष्मान् धार्मिक ! आप जाति भूमिके सातों निवास-स्थानोंसे विदा हों।' तब आयुष्मान धार्मिक के मनमें हुआ —'मैं जाति-भूमिके सातों निवास-स्थानोंसे भगा दिया गया हूँ। अब मैं कहाँ जाऊँ ?' तब आयुष्मान् धार्मिकके मनमें यह हुआ–'मैं जहाँ भगवान् हैं, वहाँ उनके पास जाऊँ।'

तब आयुष्मान् धार्मिक पात्र चीवर ले, जहाँ राजगृह है वहाँ गया। क्रमशः जहाँ राजगृहका गृध्रकूट पर्वत था, जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् धार्मिकसे भगवान्ने पूछा—'अरे ! हे ब्राह्मण धार्मिक, तू कहाँसे आया है ?'

'भन्ते ! जाति-भूमिके उपासकोंने मुझे जाति-भूमिके सभी सातों निवास-स्थानोंसे भगा दिया है।"

"अरे ब्राह्मण धार्मिक ! अब बस कर। तुझे इससे क्या ? तुझे वे हर जगहसे भगा देते हैं और तू भगा दिये जाने पर मेरे ही पास आता है।

"ब्राह्मण धार्मिक ! पहले ऐसे सामुद्रिक व्यापारी हुए हैं। वे तट-दर्शी पक्षीको साथ लेकर नौकाको समुद्रमें छोड़ते थे। उन्हें जब नौका पर बैठे बैठे तट नहीं दिखाई देता था, तो वह तट-दर्शी पक्षीको छोड़ते थे। वह पूर्व दिशा को जाता था, पश्चिम दिशाको जाता था, उत्तर दिशाको जाता था, दक्षिण-दिशाको जाता था, ऊपर की ओर जाता था तथा अनु-दिशाओंकी ओर जाता था। यदि उसे चारों दिशाओंमें किसी एक दिशाकी ओर भी तट दिखाई दे जाता तो वह उसी ओर चला

जाता। यदि उसे किसी ओर तट न दिखाई देता, तो वह उसी नाव पर लौट आता। इसी प्रकार हे ब्राह्मण धार्मिक! वे तुझे जहाँ-जहाँ से भगाते हैं, तू हर जगहसे मेरे ही पास चला आता है।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! पूर्व कालमें कोरव्य राजाका सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) था, जिसकी पाँच शाखायें थीं, शीतल छाया थी और था बड़ा ही मनोरम। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) का बारह योजन-का फैलाव था और पाँच योजनकी जड़ें थीं। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) के इतने बड़े बड़े फल थे, मानों भात पकानेकी देगची हो। फल इतने स्वादिष्ट थे जैसे छोटी मधु-मक्खियोंका निर्दोष मधु हो। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) के एक तनेको रानियों सहित राजा अपने उपयोगमें लाता था, एक तना सेनाके उपयोगमें आता था, एक तना निगम तथा जन-पदके लोगोंके उपयोगमें आता था, एक तना श्रमण-ब्राह्मणोंके उपयोगमें आता था, तथा एक तना जानवरोंके उपयोगमें आता था। हे ब्राह्मण धार्मिक! उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) के फलोंको न कोई बचाकर रखता था और न कोई एक दूसरेके हिस्सेके फलोंको हानि पहुँचाता था।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! तब एक आदमी सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) के फलोंको यथेष्ट खाकर जाता हुआ उसकी शाखा तोड़ गया। हे ब्राह्मण तब धार्मिक सुप्रतिष्ठित-न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) पर रहनेवाली देवीके मनमें यह हुआ—अरे! यह कितने आश्चर्यकी बात है, यह कितनी अद्‌भुत बात है कि आदमी कितना पापी हो सकता है कि सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) के यथेष्ट फल खाकर जाता हुआ उस की शाखा भी तोड़ जा सकता है! अब सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध (राज)-वृक्षको भविष्यमें फल न लगें। हे ब्राह्मण धार्मिक! तबसे सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) को फल लगने बंद हो गये।

"हे ब्राह्मण धार्मिक! तब राजा कोरव्य देवेन्द्र शक्रके पास गया। पास जाकर देवेन्द्र शक्रसे कहा——मित्र! ज्ञात है कि सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) फल नहीं दे रहा है? हे ब्राह्मण धार्मिक! तब देवेन्द्र शक्रने ऐसे ऋद्धि-बलका उपयोग किया कि ऐसी हवा-वर्षा आई कि सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) जड़-मूलसे उखड़ गया। हे ब्राह्मण धार्मिक! तब उस सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (–वृक्ष) पर रहनेवाली देवी दुखी हो, चिन्तित हो, एक ओर हो आँसू बहाती हुई खड़ी रोने लगी।

'हे ब्राह्मण धार्मिक ! तब देवेन्द्र शक्र जहाँ सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (—वृक्ष) पर रहने वाली देवी थी, वहाँ पहुँचा। पास जाकर सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (—वृक्ष) पर रहने वाली देवीसे बोला—हे देवी ! तू क्यों दुखी हो, चिन्तित हो, एक ओर आँसू बहाती हुई खड़ी रो रही है ?

"मित्र ! तेज हवा-पानीने आकर मेरे भवनको जड़से उखाड़ दिया है।"

"हे देवी ! क्या तेरे वृक्ष-धर्मके पालन करते रहनेपर तेज हवा-पानीने आकर तेरे भवनको जड़-मूल से उखाड़ दिया ?"

"मित्र ! वृक्ष वृक्ष-धर्मका पालन कैसे करता है ?

"हे देवी ! जिन्हें वृक्षकी जड़की आवश्यकता होती है, वे जड़ ले जाते हैं ; जिन्हें छालकी जरूरत होती हैं, वे छाल ले जाते हैं ; जिन्हें पत्तोंकी जरूरत होती है, वे पत्ते ले जाते हैं ; जिन्हें फूलोंकी जरूरत होती है, वे फूल ले जाते हैं ; जिन्हें फल की जरूरत होती है, वे फल ले जाते हैं। हे देवी ! उससे असन्तुष्ट होना या अप्रसन्न होना नहीं चाहिये। हे देवी ! ऐसा होनेसे वृक्ष, वृक्ष-धर्म पर स्थिर होता है।"

"मित्र ! मेरे वृक्ष-धर्मपर स्थिर न रहनेसे ही जोरकी हवा-वर्षाने मेरे भवनको जड़से गिरा दिया।"

"हे देवी ! यदि तू भविष्यमें वृक्ष-धर्मपर स्थिर रहे तो तेरा भवन फिर पूर्ववत हो जा सकता है।" "मित्र ! मैं वृक्ष-धर्मपर स्थिर रहूँगी, मेरा भवन फिर पूर्ववत् हो जाय।"

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! तब देवेन्द्र शक्रने ऐसे ऋद्धि-बलका उपयोग किया कि जोरकी हवा-वर्षाने आकर पुनः सुप्रतिष्ठित न्यग्रोध-राज (—वृक्ष) को उठाया, जड़ें फिर पूर्ववत् स्थिर हो गईं। इसी प्रकार हे ब्राह्मण धार्मिक ! क्या तुझे श्रमण-धर्मका पालन करते रहने पर जाति-भूमिके उपासकोंने जाति-भूमिके सभी सातों निवास-स्थानोंसे भगाया है ?"

"भन्ते ! श्रमण, श्रमण-धर्ममें स्थित कैसे होता है ?"

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! श्रमण बुरा-भला कहने वालेको बुरा-भला नहीं कहता, क्रोधित होनेवाले पर क्रोधित नहीं होता, झगड़ा करने वालेसे झगड़ा नहीं करता।"

"भन्ते ! मैं श्रमण-धर्म पर स्थिर नहीं था, तभी मुझे जाति-भूमिके उपासकोंने जाति-भूमिके सभी सातों निवास-स्थानोंसे भगा दिया।"

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! पहले सुनेत्र नामका शास्ता हुआ है, एक सम्प्रदायका अग्रणी, कामभोगोंके प्रति आसक्ति-रहित। हे ब्राह्मण-धार्मिक ! सुनेत्र शास्ताके सैकड़ों शिष्य थे। सुनेत्र शास्ता शिष्योंको ब्रह्म-सायुज्य धर्मकी देशना करता था। हे ब्राह्मण धार्मिक ! जो लोग सुनेत्र शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्म उपदेश करते समय श्रद्धावान नहीं हुए, वे शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको नरक योनिको प्राप्त हुए। हे ब्राह्मण धार्मिक ! जो लोग सुनेत्र शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्म उपदेश करते समय श्रद्धावान हुए, वे शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको, स्वर्ग-लोकको प्राप्त हुए।

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! पहले मूगपक्ष नामका शास्ता था. . . . अरनेमि नामका शास्ता था. . .कुद्दालक नामका शास्ता था. . .हस्तिपाल नामका शास्ता था. . . जोतिपाल नामका शास्ता था, एक सम्प्रदायका अग्रणी, काम भोगोंके प्रति आसक्ति-रहित। हे ब्राह्मण-धार्मिक ! जोतिपाल शास्ताके सैकड़ों शिष्य थे। जोतिपाल शास्ता शिष्योंको ब्रह्म-सायुज्य धर्मकी देशना करता था। हे ब्राह्मण-धार्मिक ! जो लोग जोतिपाल शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्म उपदेश करते समय श्रद्धावान् नहीं हुए, वे शरीरके छूटनेपर मरनेके अनन्तर दुर्गतिको, नरक-योनिको प्राप्त हुए। हे ब्राह्मण धार्मिक ! जो लोग जोतिपाल-शास्ताके ब्रह्म-सायुज्य का उपदेश करते समय श्रद्धावान् हुए, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको स्वर्गलोकको प्राप्त हुए।

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! तो तुम क्या मानते हो कि जो इन छह शास्ताओंको —जो एक एक सम्प्रदायके अग्रणी हैं, जो काम-भोगोंके प्रति आसक्ति रहित हैं, जिनके सैकड़ों शिष्य हैं—द्वेष-युक्त चित्तसे बुरा-भला कहे, उपहास करे, तो क्या वह बहुत अपुण्यका भागी नहीं होगा ?"

"भन्ते ! होगा।"

"हे ब्राह्मण धार्मिक ! जो इन छह शास्ताओंको —जो एक सम्प्रदायके अग्रणी हैं, जो काम-भोगोंके प्रति आसक्ति-रहित हैं, जिनके सैकड़ों शिष्य हैं —द्वेष-युक्त चित्तसे बुरा-भला कहे, उपहास करे तो वह बहुत अपुण्यका भागी होता है। जो एक (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त आदमीको बुरा-भला कहता है, उपहास करता है, तो वह उससे भी अधिक अपुण्यका भागी होता है। हे ब्राह्मण धार्मिक ! जैसी क्षमा मेरे शिष्योंमें है वैसी क्षमा मैं अन्यत्र कहीं नहीं देखता। इसलिये हे ब्राह्मण धार्मिक ! ऐसा सीखना चाहिये कि हम अपने साथी शिष्योंके प्रति मनमें द्वेष नहीं रखेंगे। हे ब्राह्मण धार्मिक ! तुझे ऐसा ही सीखना चाहिये।

सुनेत्तो मूगपक्खो च, अरनेमि च ब्राह्मणो,
कुद्दालको अहु सत्था, हत्थिपालो च माणवो ॥
जोतिपालोच गोविन्दो, अहु सत्तपुरोहितो
अहिंसका अतीतंसे, छ सत्थारो यसस्सिनो ॥
निरामगन्धा करुणेधिमुत्ता, कामसंयोजनातिगा,
कामरागं विराजेत्वा, ब्रह्मलोकूपगा अहुं ॥
अहेसुं सावका तेसं, अनेकानि सतानि पि।
निरामगन्धा करुणेधियुत्ता, कामसंयोजनातिगा,
कामरागं विराजेत्वा, ब्रह्मलोकूपगा अहुं ॥
येते इसी बाहिरके, वीतरागे समाहिते।
पदुट्ठमनसंकप्पो, यो नरो परिभासति।
बहुंच सो पसवति, अपुञ्ञं तादिसो नरो ॥
यो चेकं दिट्ठिसम्पन्नं, भिक्खुं बुद्धस्स सावकं,
पदुट्ठमनसंकप्पो, यो नरो परिभासति।
अयं ततो बहुतरं, अपुञ्ञं पसवे नरो।
न साधुरूपं आसीदे, दिट्ठिट्ठानप्पहायिनं।
सत्तमो पुग्गलो एसो, अरियसंघस्स वुच्चति ॥
अवीतरागो कामेसु, यस्स पञ्चिन्द्रिया मुदू।
सद्धा सति च विरियं, समथो च विपस्सना ॥
तादिसं भिक्खुमासज्ज, पुब्बेव उपहञ्ञति।
अत्तानं उपहन्त्वान, पच्छा अञ्ञं विहिंसति ॥
यो च रक्खति अत्तानं, रक्खितो तस्स बाहिरो,
तस्मा रक्खेय्य अत्तानं, अक्खतो पण्डितो सदा ॥

[सुनेत्र, मूगपक्ष, अरनेभि ब्राह्मण तथा कुद्दालक शास्ता हुए और हस्ति पाल नामक (ब्राह्मण–) माणवक भी शास्ता हुआ। गोविन्द जोतिपाल सात राजाओंका पुरोहित (भी) था। भूत कालमें ये छह यशस्वी शास्ता हुए। वे आम-गन्ध ग्रहण नहीं करते थे,[1] वे करुणावान् थे तथा काम-संयोजनसे मुक्त थे। वे काम-रागको जीतपकर ब्रह्मलोकगामी हुए। उनके सैकड़ों शिष्य हुए। वे भी आम-

---

१. थे शाकाहारी वा क्रोधरहित रहित थे।

गन्ध ग्रहण नहीं करते थे। वे भी करुणावान् थे तथा काम संयोजनसे मुक्त थे। वे भी काम-रागको जीत कर ब्रह्मलोक गामी हुए। जो ये संयतेन्द्रिय, वीतराग बाहरी ऋषी थे, उन्हें भी द्वेषयुक्त चित्तसे जो आदमी भला-बुरा कहता है, वैसा मनुष्य बहुत अपुण्यका भागी होता है। लेकिन जो आदमी किसी (सम्यक्) दृष्टि-प्राप्त बुद्ध-श्रावकको भला बुरा कहता है, वह उसकी अपेक्षा भी बहुत अधिक अपुण्यका लाभ करता है। जो (=मिथ्या-) दृष्टिसे मुक्त है ऐसे साधुरूप नरको कष्ट न दे। ऐसा आदमी आर्य-संघमें सातवाँ (अर्हत्व-मार्ग-प्राप्त) व्यक्ति माना जाता है। जिसका काम-राग अभी नष्ट नहीं हुआ है जो अभी अनागामी नहीं हुआ है, परन्तु जिसकी श्रद्धा, स्मृति, वीर्य, शमथ तथा विपश्यना नामकी पाँचों इन्द्रियाँ सुकोमल अवस्थाको प्राप्त हैं, ऐसे भिक्षुको जो पहले ही आघात पहुँचाता है, वह दूसरेको आघात पहुँचानेसे पहले अपनेको ही आघात पहुँचाता है। जो अपने भीतरको सुरक्षित रखता है, वह बाहरसे सुरक्षित रहता है। इसलिये अक्षत पण्डितको चाहिये कि वह सदा अपने आपको सुरक्षित रखे।]

(६) महावर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् राजगृहमें गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् सोण राजगृहमें शीतवनमें विहार करते थे। जब आयुष्मान् सोण एकान्तमें विचार कर रहे थे, तो उनके मनमें ऐसा वितर्क पैदा हुआ—"भगवान्के जितने भी प्रयत्नशील शिष्य हैं, मैं उनमें से एक हूँ। लेकिन तब भी चित्त-मलों (=आस्रवों) से मेरा चित्त विमुक्त नहीं होता। मेरे परिवारमें भोग्य-पदार्थ हैं। मैं उन को भोगते हुए, पुण्य करता हुआ रह सकता हूँ। क्यों न मैं भिक्षु-भावको छोड़ हीन मार्गी बन भोग्य-पदार्थोंको भोगता हुआ, पुण्य करता हुआ रहूँ?"

तब भगवान्ने अपने चित्तसे आयष्मान् सोणके चित्तमें उठे वितर्कको जान लिया। जैसे कोई आदमी अपनी सिकुड़ी हुई बाँहको फैलाये, अथवा फैली हुई बाँहको सिकोड़े, उसी प्रकार भगवान् गृध्रकूट पर्वतसे अन्तर्धान होकर शीतवनमें आयुष्मान सोणके सम्मुख प्रकट हुए। भगवान् बिछे आसनपर बैठे। आयुष्मान सोण भी भगवान्को प्रणामकर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान सोणको भगवान्ने यह कहा—

'हे सोण! जब तू एकान्तमें विचार कर रहा था, तो क्या तेरे मनमें यह वितर्क पैदा नहीं हुआ कि भगवान्के जितने भी प्रयत्नशील शिष्य हैं, मैं उनमेंसे एक

हूँ। लेकिन तब भी चित्त-मलोंसे मेरा चित्त विमुक्त नहीं होता। मेरे परिवारमें भोग्य पदार्थ हैं। मैं उनको भोगते हुए पुण्य करता हुआ रह सकता हूँ। क्यों न मैं भिक्षु-भावको छोड़ हीन-मार्गी बन भोग्य-पदार्थोंको भोगता हुआ, पुण्य करता हुआ रहूँ।"

"भन्ते! हाँ।"

"हे सोण! तो तू क्या मानता है, गृहस्थमें रहते समय तू वीणावादनमें कुशल था, या नहीं?"

"भन्ते! हाँ।"

"हे सोण! तो तू क्या मानता है, क्या जिस समय वीणाके तार अत्यन्त खिंचे रहते थे, तो क्या उस समय वीणासे स्वर निकलता था और वह कमनीय रहती थी!"

"भन्ते! नहीं?"

"हे सोण! तो तू क्या मानता है, क्या जिस समय वीणाके तार अत्यन्त ढीले रहते थे, तो क्या उस समय वीणासे स्वर निकलता था और वह कमनीय रहती थी?"

"भन्ते! नहीं।"

"हे सोण! क्या जिस समय वीणाके तार न अत्यन्त खिंचे रहते थे, न अत्यन्त ढीले रहते थे, बल्कि सामान्य रूपसे तने रहते थे, तो क्या उस समय तेरी वीणसे स्वर निकलता था और वह कमनीय रहती थी?"

"भन्ते! हाँ।"

"इसी प्रकार हे सोण! अत्यन्त प्रयत्नशील होना उद्धतपनका कारण हो जाता है, अत्यन्त ढील छोड़ देना आलसीपनका कारण हो जाता है। इसलिए हे सोण! तू सम-प्रयत्नशील बने रहनेका निश्चयकर। श्रद्धा आदि इन्द्रियोंमें सम-भाव प्राप्तकर। ऐसा करते हुए ध्यानके विषय (=निमित्त) को ग्रहण कर।"

"भन्ते! अच्छा" कह आयुष्मान सोणने भगवान्‌को प्रति-वचन दिया। तब भगवान् आयुष्मान् सोणको यह उपदेश दे, जिस प्रकार कोई बलवान आदमी सिकुड़ी हुई बाँहको पसार ले, अथवा पसारी हुई बाँहको सिकोड़ ले, उसी प्रकार शीतवनसे अन्तर्धान होकर गृध्रकूट पर्वतपर प्रकट हुए।

तब आयुष्मान सोणने आगे चलकर सम-प्रयत्नशील बने रहनेका अभ्यास किया। ऐसा करते हुए ध्यानके विषय (=निमित्त) को ग्रहण किया। तब आयुष्मान्

सोण अकेले, एकान्तमें रहते हुए, अप्रमादी बने रहकर, प्रयत्नवान् हो, अचिरकालमें ही जिस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिये कुल-पुत्र घरसे बेघर हो जाते हैं, उस परं श्रेष्ठ-जीवनको इसी जीवनमें जानकर, साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करने लगा। उसको विश्वास हो गया——जन्म (–मरण) का क्षय हो गया; श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत करनेका उद्देश्य पूरा हो गया; जो करणीय था, वह कर लिया गया, अब इससे आगे और कुछ करणीय नहीं है। आयुष्मान् सोण भी एक अर्हत हो गये।

जब आयुष्मान् सोण अर्हत हो गये तो उनके मनमें यह हुआ——जहाँ भगवान् हैं, मैं वहाँ जाऊँ। जाकर भगवान्को अपने अर्हत होनेकी सूचना दूँ। तब आयुम्ष्मान् सोण जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सोणने भगवासे कहा——

"भन्ते! जो भिक्षु अर्हत्वको प्राप्त हो गया रहता है, जो क्षीणास्रव हो गया रहता है, जिसने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसका भार उतर गया रहता है, जिसने सदर्थ प्राप्त कर लिया होता है, जिसके भव-संयोजन क्षीण हो गये रहते हैं, जो सम्यक् प्रकार ज्ञान द्वारा विमुक्त हुआ रहता है, वह छह प्रकारसे विमुक्त होता है——वह निष्क्रमण-अधिमुक्त होता है, वह प्रविवेक अधिमुक्त होता है, वह अव्यापाद-विमुक्त होता है, वह तृष्णा-क्षय विमुक्त होता है, वह उपादान-क्षय-विमुक्त होता है तथा वह असम्मोह-विमुक्त होता है।

"भन्ते! हो सकता है कि किसी आयुष्मान्के मनमें (मेरे बारेमें) यह हो कि यह आयुष्मान् केवल श्रद्धावान् होनेसे 'निष्क्रमण-विमुक्त हूँ' ऐसा कहता है। भन्ते लेकिन, यह बात ऐसे नहीं समझी जानी चाहिए। भन्ते! जो भिक्षु क्षीणास्रव होता है, जिसने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसे अब और कुछ करणीय नहीं दिखाई देता, वा कृत की राशि, जो रागका क्षय होनेसे वीतराग हो गया है, वही निष्क्रमण-विमुक्त होता है, द्वेषका क्षय हो जानेसे वीतद्वेष ही निष्क्रमण-विमुक्त होता है, मोहका क्षय हो जानेसे वीतमोह ही निष्क्रमण-विमुक्त होता है।

भन्ते! हो सकता है कि किसी आयुष्मान्के मनमें (मेरे बारेमें) यह हो कि यह आयुष्मान् लाभ-सत्कार तथा यशकी कामनासे ही 'प्रविवेक-विमुक्त हूँ' ऐसा कहता है। भन्ते! लेकिन यह बात ऐसे नहीं समझी जानी चाहिए। भन्ते! जो भिक्षु क्षीणास्रव होता है, जिसने श्रेष्ठ जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसे अब और कुछ करणीय दिखाई नहीं देता या कृत की राशि,

जो रागका क्षय होनेसे वीतराग हो गया है, वही प्रविवेक विमुक्त होता है, द्वेषका क्षय हो जानेसे वीतद्वेष ही प्रविवेक-विमुक्त होता है, मोहका क्षय हो जानेसे वीतमोह ही प्रविवेक-विमुक्त होता है।

भन्ते! हो सकता है कि किसी आयुष्मान्के मनमें (मेरे बारेमें) यह हो कि यह आयुष्मान् शील-व्रत-परामाशको ही सारतः ग्रहण करनेके कारण 'अव्यापाद-विमुक्त हूँ' ऐसा कहता है। भन्ते! लेकिन यह बात ऐसे नहीं समझी जानी चाहिए। भन्ते! जो भिक्षु क्षीणास्रव होता है, जिसने श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत किया होता है, जो कृतकृत्य हो गया रहता है, जिसे अब कुछ और करणीय दिखाई नहीं देता, अथवा कृतकी राशि, जो रागका क्षय होनेसे वीतराग हो गया है, वही अव्यापाद-विमुक्त होता है, द्वेषका क्षय हो जानेसे बीत-द्वेष ही अव्यापाद-विमुक्त होता है, मोहका क्षय हो जानेसे वीत-मोह ही अव्यापाद-विमुक्त होता है।

रागका क्षय होनेसे जो वीगरात हो गया है, वही तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है, द्वेषका क्षय होनेसे बीतद्वेष ही तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है, मोहका क्षय होनेसे वीतमोह ही तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है।

रागका क्षय होनेसे जो वीतराग हो गया है, व्रही उपादान-क्षय-विमुक्त होता है, द्वेषका क्षय होनेसे वीत-द्वेष ही उपादान-क्षय-विमुक्त होता है, मोहका क्षय होनेसे वीत-मोह ही उपादान-क्षय-विमुक्त होता है।

रागका क्षय होनेसे जो वीतराग हो गया है, वह असम्मोह-विमुक्त होता है, द्वेषका क्षय होनेसे वीतद्वेष ही असम्मोह-विमुक्त होता है, मोहका क्षय होनेसे वीतमोह ही असम्मोह-विमुक्त होता है।

भन्ते! इस प्रकार जिस भिक्षुका चित्त सम्यक् रूपसे विमुक्त हो गया है, उसकी आँखके सामने चाहे जितने भी चक्षु-विज्ञान रूप आयें, वे उसके चित्तको भटका नहीं सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही बना रहता है, वह स्थिर ही रहता है, वह रूपके व्यय (=विनाश) को देखता है। उसकी श्रोत्र इन्द्रिय के सामने चाहे जितने भी श्रोत्र-विज्ञान शब्द आयें.......घ्राण-विज्ञान गन्ध आयें.....जिह्वा-विज्ञान रस आयें......काम-विज्ञान स्पर्श आयें.......मनो-विज्ञान धर्म (=मनके विषय) आयें, वे उसके चित्तको भटका नहीं सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही बना रहता है, वह स्थिर ही रहता है, वह धर्मके व्यय (=विनाश) को देखता है।

भन्ते ! जैसे कोई बिना छिद्रका, बिना सुराखका ठोस पर्वत हो। पूर्व दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये, उससे वह न चंचल होगा, न काँपेगा, न हिले-डुलेगा। पश्चिम दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये.....उत्तर दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये.....दक्षिण दिशासे भी, चाहे जितना हवा-पानी आये, उससे वह न चंचल होगा, न काँपेगा, न हिले-डुलेगा। भन्ते ! इसी प्रकार जिस भिक्षुका चित्त सम्यक् रूपसे विमुक्त हो गया है, उसकी आँखके सामने चाहे जितने भी चक्षु-विज्ञान रूप आयें, वे उसके चित्तको भटका नहीं सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही बना रहता है, वह स्थिर ही रहता है, वह रूपके व्यय (= विनाश) को देखता है। उसकी श्रोत्र-इन्द्रिय के सामने चाहे जितने भी श्रोत्र-विज्ञान शब्द आयें.......घ्राण-विज्ञान गन्ध आयें......जिह्वा-विज्ञान रस आयें....काम-विज्ञान स्पर्श आयें.....मनो-विज्ञान धर्म (= मनके विषय) आएँ, वे उसके चित्तको भटका नहीं सकते। उसका चित्त परिशुद्ध ही बना रहता है। वह स्थिर ही रहता है, वह धर्मके व्यय (= विनाश) को देखता है।

नेक्खम्मं अधिमुत्तस्स, पविवेकं च चेतसो।
अब्यापज्झाधिमुत्तस्स, उपादानक्खयस्स च॥
तण्हाक्खयाधिमुत्तस्स, असम्मोहं च चेतसो,
दिस्वा आयतनुप्पादं, सम्मा चित्तं विमुच्चति॥
तस्स सम्माविमुत्तस्स, सन्तचित्तस्स भिक्खुनो,
कतस्स पटिचयो नत्थि, करणीयं न विज्जति।
सेलो यथा एकग्घनो, वातेन न समीरति।
एवं रूपा रसा सद्दा, गन्धा फस्सा च केवला॥
इट्ठा धम्मा अनिट्ठा च, नप्पवेधेन्ति तादिनो।
ठितं चित्तं विप्पमुत्तं, वयं चस्सानुपस्सति॥

[जो निष्क्रमण-विमुक्त है, जो प्रविवेक-विमुक्त है, जो अव्यापाद-विमुक्त है, जो उपादानक्षय-विमुक्त है, जो तृष्णाक्षय-विमुक्त है, जो असम्मोह-विमुक्त है, वह तृष्णादिकी पुनरुत्पति न देखनेके कारण सम्यक रूपसे विमुक्त माना जाता है। उस सम्यक् प्रकारसे विमुक्त, शान्त चित्त भिक्षुके कृत-कर्मोंकी राशि नहीं रहती और उसे कुछ करणीय भी नहीं रहता। जिस प्रकारसे ठोस पर्वत हवासे कम्पित नहीं होता, उसी प्रकार जितने भी रूप, रस, गन्ध तथा स्पर्श हैं—जितने भी इष्ट तथा अनिष्ट धर्म हैं—वे उस स्थिर-चित्त भिक्षुको कम्पित नहीं करते। उसका स्थिर

चित्त विप्रमुक्त होता है, वह (रूप, शब्द, रस आदिके) व्यय (= विनाश) को देखता है।]

उस समय आयुष्मान फग्गुन रोगी थे, दुक्खित थे, अत्यन्त रोगी थे। तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवानसे यह कहा—"भन्ते! आयुष्मान फग्गुन रोगी हैं, दुखित हैं, अत्यन्त रोगी हैं। भन्ते! अच्छा होगा यदि आप वहाँ पधारें जहाँ आयुष्मान फग्गुन हैं।" भगवानने चुप रहकर स्वीकार कर लिया।

तब भगवान शामके समय एकान्त वास कर चुकनेपर आयुष्मान फग्गुनके पास गये। आयुष्मान फग्गुनने भगवानको दूरसे आते हुए देखा। देखकर वे चारपाईसे (उठनेके लिये) हिले। तब भगवानने आयुष्मान फग्गुनको यह कहा—'फग्गुन! बसकर। चारपाईसे मत हिलडोल। यह दूसरों द्वारा बिछाये आसन हैं। मैं इनपर बैठूंगा।" भगवान बिछे आसनपर बैठे। बैठकर भगवानने आयुष्मान फग्गुनको यह कहा—"फग्गुन! तू ठीक तो है? क्या दुःख-वेदना चली जाती है और लौटकर नहीं आती? चली जाकर समाप्त होती दिखाई देती है, लौटकर नहीं आती?"

"भन्ते! मैं ठीक नहीं हूँ। मेरे पास बड़ी तीव्र दुःख वेदना आती है, लौटकर नहीं जाती। चली जाकर समाप्त नहीं होती, लौटकर आती है।"

"भन्ते! जैसे कोई बलवान आदमी तेज शिखर (?) से सिरको मथता हो, इसी प्रकार भन्ते! जोरकी वायु सिरसे टकराती है। भन्ते! मैं ठीक नहीं हूँ। मेरे पास बड़ी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नहीं जाती। चली जाकर समाप्त नहीं होती, लौटकर आती है।

"भन्ते! जैसे कोई बलवान आदमी चमड़ेकी पट्टीसे सिरको कसकर उसे लपेटता चला जाय, इसी प्रकार भन्ते! मेरे सिरमें सिरका तीव्र दर्द है। भन्ते! मैं ठीक नहीं हूँ। मेरे पास बड़ी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नहीं जाती। चली जाकर समाप्त नहीं होती, लौटकर आती है।

"भन्ते! जैसे कोई दक्ष गो-घातक या गो-घातकका शागिर्द तेज कटारसे पेटको चीरे, इसी प्रकार भन्ते! मेरे पेटकी बलवती हवा पेटको काट रही है। भन्ते! मैं ठीक नहीं हूँ। मेरे पास बड़ी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नहीं जाती। चली जाकर समाप्त नहीं होती, लौटकर आती है।

" भन्ते ! जैसे दो बलवान आदमी किसी दुर्बल आदमीको सब ओरसे पकड़कर अंगारोंके गड्ढेमें डालकर जलायें, उलट पलट कर जलायें। भन्ते ! इसी प्रकारकी मेरे शरीरमें भयानक जलन हो रही है। भन्ते ! मैं ठीक नहीं हूँ। मेरे पास बड़ी तीव्र वेदना आती है, लौटकर नहीं जाती। चली जाकर समाप्त नहीं होती, लौटकर आती है।"

तब भगवान धार्मिक कथा द्वारा आयुष्मान फग्गुनको सान्त्वना दे, संतोष दे, बढ़ावा दे, प्रसन्न चित्तकर आसनसे उठकर चले गये।

भगवानके चले जानेके थोड़े ही समय बाद आयुष्मान फग्गुनका शरीरान्त हो गया। उसके मरनेके समय उसकी इन्द्रियाँ प्रसन्न (= कान्तिमय) हो गईं।

तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। भगवानके पास जाकर, अभिवादनकर, एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान आनन्दने भगवानसे कहा—" भन्ते ! भगवान्के चले जानेके थोड़ी ही देर बाद आयुष्मान फग्गुनका शरीरान्त हो गया। उसके मरनेके समय उसकी इन्द्रियाँ प्रसन्न (= कान्तिमय) हो गईं।"

" आनन्द ! भिक्षु फग्गुनकी इन्द्रियाँ क्यों प्रसन्न (= कान्तिमय) न होंगी ? आनन्द ! पहले भिक्षु फग्गुनका चित्त उन्नतिके बाधक संयोजनोंसे मुक्त नहीं था। मेरी धर्म-देशना सुनकर उसका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त हो गया।

" आनन्द ! समय समयपर धर्म-श्रवणके, समय-समयपर उनके अर्थोंपर विचार करनेके छह शुभ परिणाम होते हैं। कौनसे छह ? आनन्द ! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त नहीं होता है। उसे मरनेके समय तथागत-का दर्शन हो जाता है। तथागत उसे ऐसे धर्मका उपदेश देते हैं जो आदिमें कल्याण-कारक है, मध्यमें कल्याण-कारक है, अन्तमें कल्याण-कारक है, जो अर्थ-सहित होता है, जो व्यंजनासे युक्त होता है। तथागत केवल परिशुद्ध श्रेष्ठजीवनको ही प्रकाशित करते हैं। उस धर्म-देशनाको सुनकर चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त हो जाता है। हे आनन्द ! समय समयपर धर्म-श्रवणका यह पहला शुभ परिणाम है।

" आनन्द ! फिर एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त नहीं होता है। उसे मरनेके समय तथागतका दर्शन नहीं होता, किन्तु उसे तथागतके श्रावकका दर्शन हो जाता है। तथागतका श्रावक उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है, जो आदिमें कल्याणकारक है, मध्यमें कल्याणकारक है, अन्तमें कल्याणकारक है,

जो अर्थ-सहित होता है, जो व्यंजनोंसे युक्त होता है। तथागतका श्रावक केवल परिशुद्ध श्रेष्ठ जीवनको ही प्रकाशित करता है। उसकी वह धर्म-देशना सुनकर चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवणका यह दूसरा शुभ परिणाम है।

"आनन्द! फिर एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त नहीं होता। उसे मरनेके समय न तथागत का दर्शन होता है, न तथागतके श्रावकका दर्शन होता है, किन्तु उसने जो धर्म (पहले) श्रवण किया है, ग्रहण किया है, उसीपर विचार करता है, उसीका मनसे मनन करता है। उसने जो धर्म (पहले) श्रवण किया है, ग्रहण किया है, उसीपर विचार करनेसे, उसीका मनसे मनन करनेसे चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवण का यह तीसरा शुभ परिणाम है।

"आनन्द! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त होता है, किन्तु सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे मुक्त नहीं होता। उसे मरनेके समय तथागतका दर्शन हो जाता है। तथागत उसे ऐसे धर्मका उपदेश देते हैं, जो आरम्भमें कल्याणकारक, मध्यमें कल्याणकारक....श्रेष्ठ जीवनको ही प्रकाशित करते हैं। उस धर्म देशनाको सुनकर सर्वोच्च निर्वाण प्राप्तिकी दृष्टिसे चित्त विमुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म-श्रवणका यह चौथा शुभ-परिणाम है।

"आनन्द! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त होता है, किन्तु सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे मुक्त नहीं होता। उसे मरनेके समय तथागत का दर्शन नहीं होता। उसे तथागतके श्रावकका दर्शन हो जाता है। तथागतका श्रावक उसे ऐसे धर्मका उपदेश करता है, जो आरम्भमें कल्याणकारक है, ...परिशुद्ध श्रेष्ठ जीवनको प्रकाशित करता है। उस धर्म-देशनाको सुनकर सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे चित्त विमुक्त हो जाता है। हे आनन्द! समय समयपर धर्म श्रवणका यह पाँचवाँ शुभ परिणाम है।

"आनन्द! एक भिक्षुका चित्त उन्नतिके बाधक पाँचों संयोजनोंसे मुक्त होता है, किन्तु सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे मुक्त नहीं होता। उसे मरनेके समय न तथागतका दर्शन होता है, न तथागत के श्रावकका दर्शन होता है, किन्तु उसने जो धर्म (पहले) श्रवण किया है, ग्रहण किया है, उसीपर विचार करनेसे, उसीका मनसे मनन करनेसे सर्वोच्च निर्वाण-प्राप्तिकी दृष्टिसे चित्त विमुक्त हो जाता है।

हे आनन्द ! समय समयपर (धर्मके) अर्थोंपर विचार करनेका यह छठा शुभ परिणाम है । हे आनन्द ! समय समयपर धर्म-श्रवण करनेके, समय समयपर धर्मके अर्थोंपर विचार करनेके ये छह शुभ-परिणाम हैं ।"

एक समय भगवान राजगृहमें गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान आनन्दने भगवानसे यह कहा—"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने छह अभिजातियोंका प्रज्ञापन किया है—कृष्णा अभिजातिका प्रज्ञापन किया है, नीलाभिजातिका प्रज्ञापन किया है, लोहित (= रक्तवर्ण) अभिजातिका प्रज्ञापन किया है, हलदी (-वर्ण) अभिजातिका प्रज्ञापन किया है, शुक्ल अभिजातिका प्रज्ञापन किया है, परंशुक्ल अभिजातिका प्रज्ञापन किया है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने भेड़ मारनेवालोंको, सूअर मारनेवालोंको, मृगोंका शिकार करनेवालोंको, मछली मारनेवालोंको, चोरोंको, जल्लादोंको, जेलरोंको तथा अन्य जो भी क्रूर कर्म करनेवाले हैं, उन सबको कृष्णा अभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने कण्टक-वृत्ति भिक्षुओंको अथवा जो दूसरे भी कर्मवादी हों, क्रियावादी हों नीलाभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने एक लंगोटी पहननेवाले निर्ग्रन्थोंको लोहिताभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने श्वेत वस्त्र पहननेवाले अचेलक-श्रावक गृहस्थोंको हरिद्राभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने आजीवकों तथा आजीवकियोंको शुक्लाभिजाति कहा है।

"भन्ते ! पूर्ण काश्यपने वत्स (गोत्र) के नन्दको, सांकृत्य-गोत्रके कृशको तथा मक्खलि गोशालको परंशुक्लाभिजाति कहा है। भन्ते ! पूर्ण काश्यपने ये छह अभिजातियाँ कही हैं।"

"आनन्द ! क्या पूर्ण काश्यपको सारे विश्वका ज्ञान है जो उसने छह अभिजातियोंका विभाजन किया है ?"

"भन्ते ! नहीं ही।"

"आनन्द ! जैसे कोई दरिद्र, गरीब, निर्धन आदमी हो और उसे कोई जबर्दस्ती गोमांसका हिस्सा दे और कहे कि यह तुझे खाना पड़ेगा और इसका दाम

चुकाना पड़ेगा। आनन्द ! ठीक इसी प्रकार उस मूर्ख, अपण्डित, अक्षेत्रज्ञ, अकुशल पूर्ण काश्यपने बिना जाने बूझे छह अभिजातियोंका विभाजीकरण कर दिया है।

"आनन्द ! मैं छह अभिजातियोंकी प्रज्ञप्ति करता हूँ। इन्हें सुन, अच्छी तरह मनमें धारणकर, कहता हूँ।"

"भन्ते ! अच्छा" कह आयुष्मान आनन्दने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवानने यह कहा—आनन्द ! छह अभिजातियाँ कौन-सी हैं ? आनन्द ! एक कृष्णाभिजाति होकर कृष्ण (= अकुशल) कर्मको प्राप्त करता है। आनन्द ! एक कृष्णाभिजातहोकर शुक्ल (= कुशल) कर्मको प्राप्त करता है। आनन्द ! एक कृष्णाभिजात होकर अकृष्ण (= जो अकुशल नहीं) अ–शुक्ल (= जो कुशल नहीं) निर्वाणको प्राप्त करता है। आनन्द ! एक शुक्लाभिजात होकर कृष्ण (= अकुशल) कर्मको प्राप्त होता है। आनन्द ! एक शुक्लाभिजात होकर शुक्ल (= कुशल) कर्मको प्राप्त होता है। आनन्द ! एक शुक्लाभिजात होकर अकृष्ण (= जो अकुशल नहीं) अ–शुक्ल (= जो कुशल नहीं) निर्वाण को प्राप्त करता है।

"आनन्द ! एक कृष्णाभिजात होकर कृष्ण (= अकुशल) कर्मको कैसे प्राप्त होता है ? आनन्द ! एक आदमी नीच कुलमें पैदा होता है—चाण्डाल कुलमें, निषाद कुलमें, बँसफोड़ोंके कुलमें, रथकार कुल वा भंगी कुलमें, दरिद्र कुलमें, जहाँ खाना-पीना कठिनाईसे मिलता है; जहाँ भोजन-छाजनकी तंगी रहती है। वह दुर्वर्ण होता है, दुर्दर्शनीय होता है, ठिंगना होता है, अनेक रोगोंसे ग्रसित होता है, काना होता है, लूला होता है, लँगड़ा होता है, पक्षाघात हो गया होता है; उसे अन्न-दान, वस्त्र, माला-गन्ध विलेपन, शैय्या, निवास-स्थान तथा दिया बत्तीकी तंगी रहती है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, मरनेके अनन्तर नरक लोकमें जन्म ग्रहण करता है, दुर्गति को प्राप्त होता है। हे आनन्द ! इस प्रकार एक (आदमी) कृष्णाभिजात होकर कृष्ण (= अकुशल) कर्मको प्राप्त होता है।

"आनन्द ! एक कृष्णाभिजात होकर शुक्ल (= कुशल) कर्मको कैसे प्राप्त होता है ? आनन्द ! एक आदमी नीच कुलमें पैदा होता है—चाण्डाल कुलमें .... तंगी रहती है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ-कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ कर्म करके, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है ! स्वर्ग लोकमें जन्म ग्रहण करता है। हे आनन्द ! इस प्रकार एक आदमी कृष्णाभिजात होकर शुक्ल (= कुशल) कर्म करता है।

आनन्द ! एक कृष्णाभिजात होकर अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाण धर्मको कैसे प्राप्त होता है ? आनन्द ! एक आदमी नीच कुलमें पैदा होता है—चाण्डाल कुलमें या.....। वह दुर्वर्ण होता है, दुर्दर्शनीय होता है, ठिंगना होता है। वह केश-दाढ़ी मुंड़वा कर, काषाय वस्त्र पहनकर, घरसे बेघर हो जाता है। वह इस प्रकार प्रव्रजित होकर, चो चित्तके उपक्लेश हैं और जो प्रज्ञाको दुर्बल बनानेवाले हैं, ऐसे पाँच नीवरणों (=चित्तके बन्धनों) से मुक्त होकर, चार स्मृति उपस्थानोंमें प्रतिष्ठित होता है। वह सात बोधि-अंगोंका यथार्थ-रूपसे अभ्यास कर अकृष्ण अशुक्ल निर्वाणको प्राप्त होता है। आनन्द ! इस प्रकार एक कृष्णाभिजात होकर अकृष्ण अशुक्ल निर्वाण धर्मको प्राप्त होता है।

"आनन्द ! शुक्लाभिजात होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको कैसे प्राप्त होता है ? आनन्द ! एक आदमीने ऊँचे कुलमें जन्म ग्रहण किया होता है, क्षत्रिय महसारवान् कुलमें, ब्राह्मण महासारवान् कुलमें वा गृहपति महासारवान् कुलमें; ऐसे कुलमें जो सम्पत्तिशाली होता है, धनवान् होता है, भोग्य-सामग्रीसे सम्पन्न होता है, सोने-चाँदीकी कमी नहीं होती है, जगह-जमीनकी कमी नहीं होती और धन-धान्य की कमी नहीं होती। वह सुन्दर होता है, दर्शनीय होता है, प्रसन्न-वदन होता है, परं-श्रेष्ठ वर्ग-युक्त होता है। उसे अन्न-पान, वस्त्र, माला गन्ध-विलेपन, शय्या, निवास स्थान तथा दिया-बत्तीकी तंगी नहीं रहती है। वह शरीर वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, मरनेके अनन्तर नरक लोकमें जन्म ग्रहण करता है, दुर्गतिको प्राप्त होता है। आनन्द ! इस प्रकार शुक्लाभिजात होकर कृष्ण (=अकुशल) कर्मको प्राप्त होता है।

"आनन्द ! एक शुक्लाभिजात होकर शुक्ल कर्मको कैसे प्राप्त होता है ? आनन्द ! एक आदमीने ऊँचे कुलमें जन्म ग्रहण किया होता है क्षत्रिय महासारवान् कुलमें.....दिया बत्तीकी तंगी नहीं रहती है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे शुभ कर्म करके, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है, स्वर्ग लोकमें जन्म ग्रहण करता है। आनन्द ! इस प्रकार अभिजात होकर शुक्ल (=कुशल) कर्म को प्राप्त होता है।

"आनन्द ! एक शुक्लाभिजात होकर अकृष्ण, अशुक्ल निर्वाण धर्मको कैसे प्राप्त होता है ? आनन्द ! एक आदमीने ऊँचे कुलमें जन्म ग्रहण किया होता है, क्षत्रिय महासारवान् कुलमें, ब्राह्मण महासारवान कुलमें या गृहपति महासारवान् कुलमें; ऐसे कुलमें जो सम्पत्तिशाली होता है, धनवान् होता है, भोग्य-सामग्रीकी कमी

नहीं होती और धन-धान्यकी कमी नहीं होती। वह सुन्दर होता है, दर्शनीय होता है, प्रसन्न वदन होता है, परं श्रेष्ठ वर्ण-युक्त होता है। उसे अन्न-पान, वस्त्र, माला-गन्ध-बिलेपन, शैय्या, निवासस्थान तथा दिया-बत्तीकी तंगी नहीं रहती है। वह केश-दाढ़ी मुँड़वाकर, काषाय वस्त्र पहन कर, घरसे बे-घर हो जाता है। वह इस प्रकार प्रव्रजित होकर जो चित्तके उपक्लेश हैं, और जो प्रज्ञाको दुर्बल बनानेवाले हैं ऐसे पाँच नीवरणों (चित्तके बंधनों) से मुक्त होकर, चार स्मृति-उपस्थानोंमें प्रतिष्ठित होता है। वह सात बोधि-अंगोका यथार्थ-रूपसे अभ्यास कर अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाणको प्राप्त होता है। आनन्द! इस प्रकार एक शुक्लाभिजात होकर अकृष्ण-अशुक्ल निर्वाण धर्मको प्राप्त होता है। आनन्द! ये छह अभिजातियाँ हैं।

"भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, गौरव करने योग्य होता है, हाथ जोड़ने योग्य होता है तथा लोगोंके लिये सर्व श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षुके जो आस्रव संयमके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, वे संयमके द्वारा नष्ट किये रहते हैं; जो आस्रव वस्तुओंके उपयोगके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, वे वस्तुओंके उपयोगके द्वारा नष्ट किये रहते हैं; जो आस्रव सहन-शक्तिके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, वे सहन-शक्तिके द्वारा नष्ट किये रहते हैं, जो आस्रव दूर दूर रहनेसे नष्ट किये जा सकते हैं, वे दूर दूर रहनेसे नष्ट किये रहते हैं; जो आस्रव हटा देनेसे नष्ट किये जा सकते हैं वे वे हटा देनेसे नष्ट किये रहते हैं; जो आस्रव भावना (=चित्त-अभ्यास) द्वारा नष्ट किये जा सकते है, वे चित्त-अभ्यास द्वारा नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव संयमके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो संयमके द्वारा नष्ट किये रहते हैं? भिक्षुओ, एक भिक्षु ज्ञानपूर्वक अपनी चक्षु-इन्द्रियको संयत रखकर विहार करता है। भिक्षुओ, चक्षु-इन्द्रिय असंयत रखनेके कारण जो जलानेवाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, चक्षु इन्द्रिय संयत रखनेके कारण वे जलाने वाले आस्रव पैदा नहीं होते हैं। ज्ञान-पूर्वक अपनी श्रोत-इन्द्रिय को .....घ्राण-इन्द्रियको.....जिह्वा-इन्द्रियको......स्पर्श-इन्द्रियको....मन-इन्द्रियको संयत रखकर विहार करता है। भिक्षुओ, भिक्षुके मन-इन्द्रिय असंयत रखनेके कारण जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, मन-इन्द्रिय संयत रखनेके कारण, वे जलाने वाले आस्रव पैदा नहीं होते हैं। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो संयमके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो संयमके द्वारा नष्ट किये रहते हैं।

भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव वस्तुओंके उपयोग द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो वस्तुओंके उपयोग द्वारा नष्ट किये रहते हैं? भिक्षुओ, भिक्षु सोच विचार कर चीवरको उपयोगमें लाता है—ठण्डसे अपनी रक्षा करनेके लिये; ऊषणतासे अपनी रक्षा करनेके लिये ; डाँस, मच्छर, हवा, धूप, रेंगनेवाले जानवरोंसे रक्षा करनेके लिये, तथा अपनी लज्जा-शर्म ढकनेके लिये। वह सोच विचार कर पिण्डपात (= भिक्षा) को उपयोगमें लाता है—हँसी मजाकके लिये नहीं; मदके लिये नहीं; (शरीरकी) सजावटके लिये नहीं, उसे अलंकृत करनेके लिये नहीं; जब तक शरीरकी स्थिति है, तब तक इसे बनाये रखनेके लिये; विहिंसाके के नष्ट करनेके लिये, श्रेष्ठ जीवनपर अनुग्रह करनेके लिये; पुरानी (दुःख–) वेदनाको नष्ट कर देनेके लिये; नई (दुःख–) वेदनाको उत्पन्न न होने देनेके लिये, मेरी (जीवन–) यात्रा निर्दोष होगी और सुखद रहेगी। वह सोच विचार कर शयनासनको उपयोगमें लाता है— ठण्डसे अपनी रक्षा करने के लिये; ऊष्णता से अपनी रक्षा करनेके लिये; डाँस, मच्छर, हवा, धूप, रेंगने वाले जानवरोंसे रक्षा करनेके लिये, ऋतु-बाधाओंसे बचे रहनेके लिये तथा योगाभ्यासके लिये एकान्त-सेवनार्थ। वह सोच-विचार कर रोगीकी आवश्यकताओं भैषज्य आदिका सेवन करता है—रोगसे उत्पन्न वेदनाओंको दूर करनेके लिये, अदुःखकी प्राप्तिके लिये। भिक्षुओ ! इन वस्तुओंको इस प्रकार उपयोगमें न लानेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, इन वस्तुओंको इस प्रकार उपयोगमें लानेसे वे जलानेवाले आस्रव पैदा नहीं होते हैं। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो वस्तुओंके उपयोगमें लानेसे नष्ट किये जा सकते हैं, जो वस्तुओंके उपयोग में लानेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव सहन शक्तिके द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो सहन-शक्तिके द्वारा नष्ट किये रहते हैं? भिक्षुओ, भिक्षु विचार पूर्वक सर्दी, गरमी, भूख तथा प्यासका सहन करनेवाला होता है। वह डाँस, मच्छर, हवा, धूप, रेंगने वालाले जानवरोंके स्पर्शको सहन करनेवाला होता है और वह दुर्वचनोंको भी सहन करने वाला होता है। वह दुःखद शारीरिक वेदनाओंको, तीव्र, कठोर, कटु, प्रतिकूल, बुरी, प्राण हर लेनेवाली वेदनाओंको भी सहन करनेवाला होता है। भिक्षुओ, इनको सहन न करनेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, इनको सहन करनेसे वे जलाने वाले आस्रव पैदा नहीं होते हैं। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो सहन करनेसे नष्ट किये जा सकते हैं और जो सहन करनेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव दूर दूर रहनेसे नष्ट किये जा सकते हैं जो दूर दूर रहनेसे नष्ट किये रहते हैं? भिक्षुओ, भिक्षु सोच-विचार कर मरखने हाथीसे दूर दूर रहता है, मरखने घोड़ेसे दूर दूर रहता है, मरखने बैलसे दूर दूर रहता है, काट खानेवाले कुत्तेसे दूर दूर रहता है। वह साँपसे बचता है, कीले-खूँटेसे बचता है, गढ़ेसे बचता है, प्रपातसे बचता है, तालाबसे बचता है, जोहड़से बचता है। जैसी जगह पर उठने-बैठनेसे, जैसी जगह पर आने जानेसे, जैसी कुसंगतिमें रहनेसे विज्ञ साथी उसे बदनाम कर सकें, वह वैसी अयोग्य जगहको, वैसे प्रतिकूल स्थानको तथा वैसी कुसंगतिसे विचारपूर्वक दूर दूर रहता है। भिक्षुओ, इनसे दूर दूर न रहनेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, इनसे दूर दूर रहने से, वे जलाने वाले आस्रव पैदा नहीं होते। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो दूर दूर रहनेसे नष्ट किये जा सकते हैं, और जो दूर दूर रहनेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव हटा देनेसे नष्ट किये जा सकते हैं? जो हटा देनेसे नष्ट किये रहते हैं? भिक्षुओ, भिक्षु पैदा हुए काम-विर्तकको विचार-पूर्वक बना रहने नहीं देता है, त्याग देता है, हटा देता है, दूर कर देता है, नष्ट कर देता है; वह पैदा हुए द्वेष (=व्यापाद) वितर्क को. . . . पैदा हुए विहिंसा-वितर्कको तथा जो भी पापी अकुशल वितर्क पैदा होते हैं, उन्हें विचार पूर्वक बना रहने नहीं देता है, त्याग देता है, हटा देता है दूर कर देता है, नष्ट कर देता है। भिक्षुओ, इनके हटा न देनेसे जो जलानेवाले आस्रव पैदा हो सकते हैं, इनको हटा देनेसे वे जलानेवाले आस्रव पैदा नहीं होते। भिक्षुओ, ये हैं वे आस्रव जो हटा देनेसे नष्ट किये जा सकते हैं, और जो हटा देनेसे नष्ट किये रहते हैं।

भिक्षुओ, भिक्षुके कौनसे आस्रव चित्त-अभ्यास (=भावना) के द्वारा नष्ट किये जा सकते हैं, जो भावना द्वारा नष्ट किये रहते हैं? भिक्षुओ, भिक्षु विचारपूर्वक स्मृति-सम्बोधि अंगकी भावना करता है, जो एकान्त-आश्रित होता है, जो विराग-आश्रित होता है, जो निरोध-आश्रित होता है तथा जो परित्याग-परिणामी है; विचार-पूर्वक धर्म-विचय स्मृति-सम्बोधि अंगकी भावना करता है. . . . वीर्य सम्बोधि-अंगकी भावना करता है . . . प्रीति सम्बोधि-अंगकी भावना करता है. . . . प्रश्रब्धि सम्बोधि अंगकी भावना करता है. . . . समाधि सम्बोधि-अंगकी भावना करता है . . . . . . उपेक्षा सम्बोधि अंगकी भावना करता है, जो एकान्त-आश्रित होता है, जो विराग-आश्रित होता है, जो निरोध आश्रित होता है तथा जो परित्याग-परिणामी है। भिक्षुओ, इन बोधि-अंगोंका अभ्यास न करनेनेसे जो जलाने वाले आस्रव पैदा

हो सकते हैं, इनका अभ्यास करनेसे वे जलानेवाले आस्रव पैदा नहीं होते। भिक्षुओ, ये हैं वे आश्रव जो सम्बोधि-अंगोंका अभ्यास करनेसे नष्ट किये जा सकते हैं और जो अभ्यास करनेसे नष्ट किये रहते हैं।

"भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होतीं हैं, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, गौरव करने योग्य होता है, हाथ जोड़ने योग्य होता है तथा लोगोंके लिये सर्व-श्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।"

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान नातिकामें गिञ्जक नामक वासस्थान पर विहार करते थे। तब एक लकड़हारा गृहपति जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उस लकड़हारे गृहपतिको भगवान्ने यह कहा—हे गृहपति! क्या तेरे कुलमें दान दिया जाता है?"

"भन्ते! मेरे कुलमें दान दिया जाता है। भन्ते! जो भिक्षु आरण्यक होते हैं, जो भिक्षु पिण्डपातिक (=भिक्षाटनसे ही निर्वाह करने वाले) होते हैं, जो भिक्षु पंसुकूलिक (=चीथड़ोंका सिला चीवर पहनने वाले) होते हैं, जो अर्हत होते हैं वा अर्हत्वके मार्गपर आरूढ़ होते हैं, ऐसे ही भिक्षुओंको दान दिया जाता है।"

"हे गृहपति! तू काम भोगी है, तू गृहस्थ है, तू परिवारमें रहने वाला है, तू काशीके चन्दनका लेप करने वाला है, तू माला-गन्ध-विलेपन धारण करने वाला है, तू सोने-चाँदीका व्यवहार करने वाला है, ; तेरे लिये यह जानना आसान नहीं कि ये अर्हत् हैं वा अर्हत्वके मार्गपर आरूढ़ हैं।

"हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु आरण्यक ही हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो अहंकारी हो, चपल हो, मुखर हो, असंयत-वाणी हो, मूढ़ स्मृति वाला हो, अज्ञानी हो, एकाग्र चित्त न हो, भ्रमित-चित्त हो तथा असंयतेन्द्रिय हो, तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु आरण्यक न हो, लेकिन वह उद्धत न हो, अहंकारी न हो, चपल न हो, मुखर न हो, असंयत-वाणी न हो, मूढ़-स्मृति न हो, ज्ञानी हो, एकाग्र चित्त हो, भ्रमित–चित्त न हो तथा संयतेन्द्रिय हो, तो वह उतनी सीमा तक प्रशंसनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई गाँवमें विचरनेवाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो...तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु गाँवमें विचरनेवाला न हो, लेकिन यदि वह उद्धत न हो...तो वह उतनी ही सीमा तक प्रशंसनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षाटनसे ही जीवन यापन करने वाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो. . . . तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु भिक्षाटनसे ही जीवन यापन करने वाला न हो. . . . तो वह उतनी सीमा तक प्रशंसनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई निमंत्रण स्वीकार करने वाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो. . . .तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई निमंत्रण स्वीकार करने वाला न हो. . . . .तो वह उतनी सीमा तक प्रशंसनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई चीथड़ोंके सिले चीवर धारण करनेवाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो. . . .तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई चीथड़ोंके सिले चीवर धारण करनेवाला न हो, लेकिन यदि वह उद्धत न हो. . . तो वह उतनी सीमा तक प्रशंसनीय है।

"हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु गृहस्थोंके दिये हुए चीवर धारण करने वाला हो, लेकिन यदि वह उद्धत हो, अहंकारी हो, चपल हो, मुखर हो, असंयत-वाणी हो, मूढ़-स्मृति वाला हो, अज्ञानी हो, एकाग्र-चित्त न हो, भ्रमित-चित्त हो तथा असंयतेन्द्रिय हो तो वह उतनी सीमा तक निन्दनीय है। हे गृहपति! चाहे कोई भिक्षु गृहस्थोंके दिये हुए चीवर धारण करने वाला न हो, लेकिन यदि वह उद्धत न हो, अहंकारी न हो, चपल न हो, मुखर न हो, असंयत-वाणी न हो, मूढ़-स्मृति न हो, ज्ञानी हो, एकाग्रचित्त हो भ्रमित चित्त न हो तथा संयतेन्द्रिय हो, तो वह उतनी सीमा तक प्रशंसनीय है।

"हे गृहपति! तू संघको दान दे। संघको दान देनेसे तेरा चित्त प्रसन्न, होगा। प्रसन्न-चित्त होनेसे तू शरीरके न रहने पर, मरने पर, सुगति, स्वर्ग-लोकको प्राप्त होगा।"

"भन्ते! आजसे मैं संघको दान दूँगा।"

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वाराणसीके इसिपतन मृगदायमें विहार करते थे। उस समय पिण्डपातसे लौटे हुए बहुतसे स्थविर भिक्षु गोलाकार-भवनमें इकट्ठे बैठे हुए अभिधर्म सम्बन्धी बातचीत कर रहे थे। उस समय हत्थिसारि-पुत्र आयुष्मान् चित्त अभिधर्म सम्बन्धी बातचीत करने वाले स्थविर भिक्षुओंके बीच बीचमें बोल पड़ते थे। तब आयुष्मान् महाकोट्ठिकने हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्तको यह कहा "हत्थिसारपुत्र आयुष्मान् चित्त! अभिधर्म सम्बन्धी बातचीत करने वाले स्थविरों की बातचीतके बीचमें न बोलें। आयुष्मान् चित्त बातचीत की समाप्ति तक रुके रहें।"

ऐसा कहनेपर हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्तके मित्र भिक्षू आयुष्मान् महाकोट्ठिक को कहने लगे—"आयुष्मान् महाकोट्ठिक आप हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्तको अप्रसन्न न करें। हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्त पण्डित हैं। हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान् चित्त स्थविर भिक्षुओंके साथ अभिधर्म सम्बन्धी बातचीत करनेमें समर्थ हैं।"

"आयुष्मान्! जो दूसरोंके चित्तकी गति-विधिसे अपरिचित हो, उसके लिये यह जानना सहज नहीं। आयुष्मान्! कोई कोई व्यक्ति तभी तक विनीत, संयत तथा शान्त रहता है जब तक वह शास्ता अथवा अन्य किसी गौरवार्ह ज्येष्ठ सब्रह्मचारी के साथ रहता है। लेकिन ज्यों ही वह शास्ता अथवा अन्य गौरवार्ह सब्रह्मचारियोंसे दूर हट जाता है, तो वह भिक्षुओं, भिक्षुणियों, उपासकों, उपासिकाओं, राजाओं, राजाओंके महामात्यों, तैर्थिकों तथा तैर्थिकोंके श्रावकोंके साथ बहुत घुलमिलकर विचरता है। उसके बहुत घुलमिलकर रहनेसे, विश्वास पूर्वक रहनेसे, असंयत रहनेसे, बातूनी बने रहनेसे उसके मनमें राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त होनेके कारण शिक्षा (=नियमों) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो! जैसे कोई अनाज खाने वाला बैल हो, जो रस्सीसे बँधा हो, या 'ब्रज' में रुका हो, उसके बारेमें कोई यह कहे कि यह अनाज खानेवाला बैल अब कभी अनाज नहीं खायेगा, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा?"

"आयुष्मान्! नहीं।"

"आयुष्मानो! इसके लिये गुंजायश है कि वह अनाज खानेवाला बैल रस्सा तुड़ाकर, 'ब्रज' के बंधनसे युक्त हो फिर अनाज खाने लग जाय। इसी प्रकार आयुष्मानो! कोई कोई व्यक्ति तभी तक विनीत, संयत तथा शान्त रहता है, जब तक वह शास्ता अथवा अन्य किसी गौरवार्ह ज्येष्ठ सब्रह्मचारीके साथ रहता है। लेकिन ज्योंही वह शास्ता अथवा अन्य गौरवार्ह सब्रह्मचारियोंसे दूर हट जाता है, तो वह भिक्षुओं, भिक्षुणियों, उपासकों, उपासिकाओं, राजाओं, राजाओंके महामात्यों, तैर्थिकों तथा तैर्थिकोंके श्रावकों के साथ बहुत घुल मिल कर रहता है। उसके बहुत घुल मिलकर रहनेसे, विश्वासपूर्वक रहनेसे, असंयत रहनेसे, बातूनी बने रहनेसे उसके मनमें राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त होनेके कारण शिक्षा (=नियमों का त्याग कर हीन मार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो! एक व्यक्ति काम-भोगोंसे पृथक् हो. . . .प्रथम-ध्यान को प्राप्त कर विहार करता है। वह 'मैं' प्रथम ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओ, ... घुल-मिलकर रहता है। . . . . . .हीन-मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो!

जैसे चौरस्ते पर बड़ी बड़ी बूंदें बरसनेसे धूल शान्त हो जाय और वहाँ कीचड़ हो जाय। अब आयुष्मानो ! यदि कोई ऐसा कहे कि 'अब इस चौरस्ते पर कभी धूल नहीं उड़ेगी', तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?"

"आयुष्मान ! नहीं।"

"आयुष्मानो ! इसकी गुंजायश है कि उस चौरस्ते पर लोगोंका आना जाना हो, बैल-बकरीका आना जाना हो, अथवा हवा-धूप नमीको सुखा दे और फिर धूल उड़ने लग जाय। इसी प्रकार आयुष्मानो ! एक व्यक्ति काम भोगोंसे पृथक हो, . . . प्रथम ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। वह "मैं प्रथम-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ, भिक्षुओं, से. . . . .घुल मिल कर रह जाता है। . . .हीनमार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो ! एक आदमी वितर्क तथा विचारोंका उपशयन होनेके अनन्तर द्वितीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। वह "मैं द्वितीय-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे . . . . घुल मिलकर रहता है . . . . हीन-मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो ! जैसे गाँव या निगमके पास कोई बड़ा तालाब हो, उसमें खूब पानी बरसे, उससे उस तालाबके भीतरके सीपी-शंख अदृष्ट हो जायँ, कंकर-ठीकरे भी अदृष्ट हो जायँ। आयुष्मानो ! यदि कोई ऐसा कहे कि इस तालाबमें अब फिर कभी सीपी-शंख या कंकर-ठीकरे प्रकट न होंगे, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?

"आयुष्मान, नहीं।"

"आयुष्मानो ! इसकी गुंजायश है कि इस तालाबमें मनुष्य पानी पीयें, बैल-बकरी पानी पीयें, अथवा हवा-धूप नमीको सुखा दे और तब फिर दोबारा सीपी-शंख तथा कंकर-ठीकरे प्रकट हो जायँ। इसी प्रकार आयुष्मानो ! एक आदमी वितर्क तथा विचारोंका उपशमन होनेके अनन्तर द्वितीय-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं द्वितीय-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे . . .घुल मिलकर रहता है; हीन-मार्गी हो जाता है।

"आयुष्मानो ! एक आदमी प्रीतिसे भी विरक्त होकर. . . .तृतीय-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मै तृतीय-ध्यान लाभी हूँ।' सोचता हुआ भिक्षुओं से. . . . .घुल मिलकर रहता हूँ, हीन-मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो, जैसे कोई आदमी बढ़िया भोजन कर चुकनेके अनन्तर फिर घटिया भोजनकी इच्छा नहीं करता। आयुष्मानो ! यदि कोई ऐसा कहे कि यह आदमी अब फिर कभी भोजनकी इच्छा नहीं करेगा, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?"

"आयुष्मान् ! नहीं।"

"आयुष्मानो ! इसकी गुँजायश है कि जिस आदमीने बढ़िया भोजन खाया हो, जब तक उसके शरीरमें उसका 'ओज' रहे तब तक वह और भोजनकी इच्छा न करे, लेकिन जब उसका 'ओज' अन्तर्धान हो जायगा, तो वह फिर भोजन की इच्छा करेगा। इसी प्रकार आयुष्मानो ! एक आदमी प्रीतिसे भी विरक्त होकर ......तृतीय-ध्यानको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं तृतीय-ध्यान लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे......घुल मिलकर रहता है....हीनमार्गी हो जाता है।

आयुष्मानो ! एक आदमी दुक्ख (–वेदना) तथा सुख (–वेदना) के प्रहाण के अनन्तर ..... चतुर्थ-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है। वह 'मैं चतुर्थ-ध्यान-लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे.....घुलमिलकर रहता है;....हीन मार्गी हो जाता है। आयुष्मानो, जैसे किसी पर्वत-प्रदेशमें वात-रहित स्थानपर कोई तालाब हो, जिसमें लहरें न उठती हों। आयुष्मानो ! यदि कोई ऐसा कहे कि अब फिर कभी इस तालाबमें लहरें न उठेंगी, तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?

"आयुष्मान् !" नहीं।

"आयुष्मानो ! इसकी गुँजायश है कि पूर्व दिशासे जोरका हवा-पानी आये। उससे उस तालाबमें लहरें उठें। पश्चिम दिशासे जोरका हवा-पानी आये .....उत्तर दिशासे आये....दक्षिण दिशासे आये। उससे उस तालाबमें लहरें उठें। इसी प्रकार आयुष्मानो ! एक आदमी दुक्ख (–वेदना) तथा सुख (–वेदना) के प्रहाणके अनन्तर.....चतुर्थ-ध्यान प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं चतुर्थ-ध्यान-लाभी हूँ' सोचता हुआ भिक्षुओंसे......घुलमिल कर रहता है;.......हीन मार्गी हो जाता है।

आयुष्मानो ! एक आदमी सभी निमित्तों (=ध्यानके विषयों) से चित्त को हटा अनिमित्त चित्त समाधिको प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं अनिमित्त चित्त समाधिका लाभी हूँ' सोच भिक्षुओंसे....घुलमिलकर रहता है। उसके बहुत घुलमिलकर रहनेसे....राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त होनेके कारण हीन-मार्गी हो जाता है। जैसे, आयुष्मानो, राजा अथवा राजाका अमात्य अपनी चतुर्विध सेनाको लेकर मार्गारूढ़ हो और वह किसी एक वन-खण्डमें एक रात गुजारे। वहाँ हाथियोंकी आवाजके कारण, घोड़ोंकी आवाजके कारण, रथोंकी आवाजके कारण, पैदलोंकी आवाजके कारण, भेरी, ढोल-शंख-तिणव आदिकी आवाजके कारण झींगुर की आवाज लुप्त हो जाय। आयुष्मानो, यदि कोई ऐसा कहे कि 'अब फिर कभी

इस वन-खण्डमें झींगुरकी आवाज नहीं सुनाई देगी', तो क्या उसका ऐसा कहना ठीक होगा ?"

"आयुष्मान, नहीं।"

"आयुष्मानो! इसकी गुँजाइश है कि वह राजा अथवा उस राजाका अमात्य उस वन-खण्डसे चल दे और तब फिर झिंगुरकी आवाज सुनाई दे। इसी प्रकार आयुष्मानो! एक आदमी सभी निमित्तों (= ध्यानके विषयों) से चित्तको हटाकर अनिमित्त चित्त-समाधि प्राप्तकर विहार करता है। वह 'मैं अनिमित्त चित्त-समाधिका लाभी हूँ' सोच भिक्षुओंसे........घुला मिला रहता है। उसके वहुत घुल मिलकर रहनेसे.....राग घर कर लेता है। वह रागसे अनुरक्त हो जानेके कारण हीन-मार्गी हो जाता है।

तब आगे चलकर हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान चित्तने शिक्षा (= भिक्षु नियमों) का त्यागकर हीन-मार्गका गमन किया। तब हत्थिसारिपुत्र चित्तके भिक्षु-मित्र आयुष्मान् महाकोट्ठिकके पास गये। पास जाकर आयुष्मान महाकोट्ठिकको यह कहा—क्या आयुष्मान महाकोट्ठिकने हत्थिसारिपुत्र चित्तके चित्तको अपने चित्तसे जान लिया था कि हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (= चर्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिये वह शिक्षा (= भिक्षु नियमों) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जायगा; अथवा आपको देवताओंने यह सूचना दी थी कि 'भन्ते! हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (= चर्य्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिये वह शिक्षा (= भिक्षुनियमों) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जाएगा ?

"आयुष्मानो, मैंने अपने चित्तसे उसका चित्त पहचानकर भी यह जानकारी प्राप्त कर ली थी कि हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (= चर्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिए वह शिक्षा (= भिक्षु नियमों) का त्यागकर हीन-मार्गी हो जायगा; और मुझे देवताओंने भी यह सूचना दी थी कि 'भन्ते! हत्थिसारिपुत्र चित्तका विहरण (= चर्य्या) ऐसा है और ऐसा है तथा इसलिए वह शिक्षा (= भिक्षु नियमों) का त्यागकर हीन-मार्गी बन जायगा।'

तब हत्थिसारिपुत्र चित्तके भिक्षु-मित्र जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को अभिवादनकर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए उन भिक्षुओंने भगवान्को यह कहा, "भन्ते! हत्थिसारिपुत्र चित्त इन इन ध्यानों (= विहार-समापत्तियों) का लाभी था, लेकिन तब भी शिक्षा (= भिक्षु-नियमों) को छोड़ हीन-मार्गी हो गया।"

"भिक्षुओ, चित्त नैष्क्रमणसे अधिक काल तक दूर नहीं रहेगा।"

तब हत्थिसारिपुत्र चित्त शीघ्र ही बाल-दाढ़ी मुण्डवा, काषाय वस्त्र पहन, घरसे बे-घर हो प्रव्रजित हुआ। तब हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान चित्तने अकेले ही एकान्तवासी हो, अप्रमादी हो, प्रयत्नशील हो, साधना करते रहकर जिस अनुपम परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुलपुत्र घरसे बेघर हो जाते हैं, उस श्रेष्ठ जीवनको इसी शरीरमें जानकर, साक्षात्कर, प्राप्तकर रहने लगा। उसे मालूम हो गया कि जन्म (–मरण) का बन्धन क्षीण हो गया; श्रेष्ठ जीवन व्यतीत कर लिया गया। जो कर्तृत्व था, वह पूरा हो गया। अब ऐसा कुछ शेष नहीं रहा, जो पुनर्जन्मका कारण हो। हत्थिसारिपुत्र आयुष्मान चित्त भी एक अर्हत् हुए।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वाराणसीके ऋषिपतन मृगदायमें विहार करते थे। उस समय भिक्षाटनसे लौटे हुए, मण्डलमाला (–भवन) में बैठे हुए, इकट्ठे हुए, बहुतसे स्थविर भिक्षुओंमें यह बातचीत चली—

"आयुष्मानो, भगवानने पारायण मैत्री-प्रश्नमें यह कहा है—

'यो उभोन्ते विदित्वान, मज्झे मन्ता न लिप्पति।

तं ब्रूमि महापुरिसो ति, सोध सिब्बिनमच्चगाति" ॥

[जो दोनों अन्तों (=सिरेकी बातों) को जानता है, जो प्रज्ञावान् मध्यमें भी लिप्त नहीं होता है, उसे मैं 'महापुरुष' कहता हूँ। वही तृष्णा (सिब्बिनि) को लाँघ गया है।]

आयुष्मानो, एक अन्त (=सिरा) कौन-सा है? दूसरा अन्त कौन-सा है? मध्यमें क्या है? सिब्बिनि क्या है? ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंको इस प्रकार कहा—"आयुष्मानो, स्पर्श एक 'सिरा' है, स्पर्शका समुदय दूसरा 'सिरा' है, स्पर्श-निरोध मध्य है, तृष्णा ही सिब्बिनि है; क्योंकि तृष्णा ही उसके जिस तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी परिचय करने लायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे कहा—आयुष्मानो! अतीत एक अन्त है, अनागत (=भविष्यत्) दूसरा अन्त है, वर्तमान मध्यमें है; तृष्णा सिब्बिनि है, क्योंकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक बात भिक्षु जानता है,

इतनी परिचय करने लायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे कहा—आयुष्मानो! सुख-वेदना एक अन्त है, दुक्ख-वेदना दूसरा अन्त है, अदुक्खमसुखा वेदना मध्यमें है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योंकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक बात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करने लायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे कहा—आयुष्मानो, नाम एक अन्त है, रूप दूसरा अन्त है, विज्ञान बीचमें है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योंकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक बात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करने लायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे कहा—आयुष्मानो, छह भीतरी आयतन एक अन्त हैं, छह बाहरके आयतन दूसरा अन्त हैं, विज्ञान बीचमें है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योंकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक बात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करनेलायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे कहा—आयुष्मानो! सक्काय (=सत्काय) एक अन्त है, सक्काय-समुदय दूसरा अन्त है, सक्काय-निरोध बीचमें है। तृष्णा सिब्बिनि है, क्योंकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस-तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक बात भिक्षु जानता है, इतनी परिचय करने लायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा कहनेपर एक भिक्षुने स्थविर भिक्षुओंसे यह कहा—आयुष्मानो, हमने अपनी अपनी समझके अनुसार अपना मत व्यक्त कर दिया। आयुष्मानो! आओ, जहाँ भगवान् हैं, वहाँ चलें। जाकर भगवान्‌से ये सभी मत कहें। फिर जैसा भगवान् कहेंगे, उस मतको (ठीक) ग्रहण करेंगे। 'आयुष्मान ऐसा ही हो' कह उन स्थविर भिक्षुओंने उस भिक्षुको प्रतिवचन दिया।

तब स्थविर भिक्षु जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान्‌को प्रणामकर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए उन स्थविर भिक्षुओंने सभी भिक्षुओंसे जितनी बातचीत हुई थी, वह सभी भगवान्‌के सामने निवेदन की और पूछा—

"भन्ते! किसका कथन सुभाषित है?"

"भिक्षुओ, एक एक दृष्टिसे सभीका कहना ठीक है, लेकिन मेरे द्वारा पारायन मैत्री-प्रश्नमें जिस दृष्टिसे यह कहा गया--

"यो उमोन्ते विदित्वान, मज्झे मन्ता न लिप्पति।
तंब्रूमि महापुरिसोति, सोध सिब्बिनिमच्चगा।"

उसे सुनो, अच्छी तरहसे मनमें धारण करो; मैं कहूँगा।

"भन्ते! ऐसा ही होगा" कह उन भिक्षुओंने भगवान्‌को प्रतिवचन दिया। भगवान्‌ने ऐसा कहा--

"भिक्षुओ, स्पर्श एक अन्त है, स्पर्श-समुदय दूसरा अन्त है, स्पर्श-निरोध बीचमें है। तृष्णा सिब्बिनि है; क्योंकि तृष्णा ही उसके जिस-तिस जन्मका कारण होती है, उसे जिस तिस जन्मके साथ सी देती है। आयुष्मानो! इतनी जानने लायक बात भिक्षु जानता है, इतनी परिच करने लायक बातसे भिक्षु परिचय प्राप्त करता है; जानकारी प्राप्त करता हुआ, परिचय प्राप्त करता हुआ, इसी शरीरमें दुःखका अन्त करनेवाला होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय महान् भिक्षु संघ सहित भगवान् कोशल जनपदमें चारिका करते हुए जहाँ कोशल जनपदवासियोंका दण्डकप्पक नामका निगम था, वहाँ पहुँचे। तब भगवान् मार्गसे हटकर एक वृक्षके नीचे बिछे आसनपर बैठे। वे भिक्षु निवास-स्थानकी खोज करनेके लिये दण्डकप्पक निगमके भीतर गये।

तब बहुतसे भिक्षुओंके साथ आयुष्मान आनन्द शरीर-सींचने (= नहाने) के लिये अचिरवती नदी पर गये। अचिरवती नदीमें स्नान कर चुकनेके अनन्तर, बाहर निकल, शरीरको पूर्ववत् करनेके लिये, एक ही चीवर धारण किये हुए खड़े हुए।

तब एक भिक्षु जहाँ आयुष्मान् आनन्द थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर आयुष्मान् आनन्दसे यह कहा——आयुष्मान् आनन्द ! क्या भगवान्ने एक दम सोच विचारकर देवदत्तके बारेमें यह कहा है कि 'वह अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्प-भर वहीं रहनेवाला है, ला-इलाज है', अथवा किसी विशेष अर्थमें कहा है ?"

"आयुष्मान् ! भगवान्ने ऐसा (एकदम सोच विचारकर) ही कहा है।"

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको प्रणामकर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से कहा—— भन्ते ! बहुतसे भिक्षुओंके साथ मैं अचिरवती नदीमें स्नान करने गया। स्नान कर चुकनेके अनन्तर, बाहर निकल कर, शरीर सुखानेके लिये, एक चीवर पहने खड़ा था। भन्ते ! तब एक भिक्षु, जहाँ मैं था, वहाँ आया और पास आकर मुझसे बोला—— 'आयुष्मान् आनन्द ! क्या भगवान्ने एक दम सोच विचार कर देवदत्तके बारेमें यह कहा है कि 'वह अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्पभर वहीं रहनेवाला है, ला-इलाज है' अथवा किसी विशेष अर्थमें कहा है ?' ऐसा कहनेपर मैंने उसे कहा—— "हाँ आयुष्मान् ! भगवान्ने ऐसा ही कहा है।"

"आनन्द ! वह भिक्षु कोई थोड़े ही दिन पूर्व प्रव्रजित तथा भिक्षु होगा, अथवा कोई मूर्ख स्थविर भिक्षु। अन्यथा जो बात मैंने सम्पूर्ण रूपसे कही है, उसे वह आंशिक रूपसे कैसे ग्रहण कर सकता है ? आनन्द ! मैं किसी दूसरे ऐसे व्यक्तिको नहीं देखता, जिसके बारेमें मैंने इस प्रकार सोच विचार कर यह कहा हो जैसे देवदत्तके बारेमें। आनन्द ! जब तक मुझे देवदत्तमें बालका सिरा रखने लायक भी शुक्ल-धर्म (=शुभ कार्य) दिखाई दिया, तबतक मैंने कभी यह नहीं कहा कि देवदत्त अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्प भर वहीं रहनेवाला है, ला-इलाज है।' लेकिन आनन्द ! जब मुझे देवदत्तमें बालका सिरा रखने लायक भी शुक्ल-धर्म (=शुभ कर्म) नहीं दिखाई दिया, तभी मैंने यह कहा कि देवदत्त अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्प भर वहीं रहनेवाला है, ला-इलाज है।

"आनन्द ! जैसे कोई गुँहका कुआँ हो, पुरुसाभरसे अधिक गहरा हो और किनारे तक गुँहसे लबालब भरा हो। उसमें प्राणी सिर तक डूबा हो। वहाँ कोई आदमी आये जो उसका हित करना चाहता हो, जो उसकी भलाई चाहता हो, जो उसका कल्याण चाहता हो और जो उसे उस कुएँसे निकालना चाहता हो। वह उस कुएँके चारों ओर घूमकर इसकी परीक्षा करे, किन्तु उसे उस आदमीके शरीरका बालका सिरा रख सकने लायक भी कोई अंश ऐसा न दिखाई दे जो गुँहसे लिबड़ा न हो और जिसे

पकड़कर वह उसे उस गूँहके कुएँसे बाहर निकाल सके। इसी प्रकार आनन्द! क्योंकि मैंने देवदत्तमें बालका सिरा रखने लायक भी शुक्ल धर्म (=शुभ कर्म) नहीं देखा, इसीलिए मैंने कहा कि देवदत्त अपाय-गामी है, नरक-गामी है, कल्पभर वहीं रहने-वाला है, ला-इलाज है। यदि आनन्द! तुम्हें तथागतके पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान सुनने हों तो उन्हें स्पष्ट रूपसे विभक्त करके कहता हूँ।"

"भगवान्। इसीका (उचित) काल है, भगवान्! इसीका समय है कि भगवान अपने पुरुष-इन्द्रिय ज्ञानको प्रकट करें।"

"तो आनन्द, सुनो। अच्छी तरहसे मनमें धारण करो। कहता हूँ।"

"अच्छा भन्ते!" कह आनन्दने भगवान्को प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—

"आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल धर्म (=शुभ कर्म) तथा अकुशल धर्म (=अशुभ कर्म) दोनों विद्यमान हैं। उसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ—इस आदमीके कुशल-धर्म लुप्त हो गये, अकुशल-धर्म प्रकट हो गये। लेकिन इसका कुशल-मूल अभी नष्ट नहीं हुआ है। उस कुशल (=शुभ) से कुशल पैदा हो जायेगा। इस प्रकार भविष्यमें इस आदमीकी हानि नहीं होगी। आनन्द! जैसे बीज हों, जो अखण्डित हों, जो सड़े न हों, जो हवा-धूप न खाये हों, जो ताजे हों, अच्छी तरह जमाये गये हों, अच्छे खेतमें, अच्छी तरहकी जोती-कमाई भूमिमें डाले गये हों। आनन्द! क्या तुम जानते हो कि ये बीज वृद्धिको, विपुलताको प्राप्त होंगे?"

"हाँ, भन्ते।"

"इसी प्रकार हे आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि 'इस आदमीमें कुशल-धर्म (=शुभ कर्म) तथा अकुशल धर्म (=अशुभ कर्म) दोनों विद्यमान हैं। उसी आदमी को किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके कुशल-धर्म लुप्त हो गये, अकुशल-धर्म प्रकट हो गये। लेकिन उसका कुशल-मूल अभी नष्ट नहीं हुआ है। इस कुशल-मूलसे कुशल-धर्म पैदा हो जायेगा। इस प्रकार भविष्यमें इस आदमीकी हानि नहीं होगी। आनन्द। इस प्रकार भी तथागतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर आदमी विदित हुआ रहता है। आनन्द। इस प्रकार भी तथागतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान ज्ञात रहता है। इस प्रकार भी आनन्द तथागतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर भावी धर्म-समुत्पाद (=धर्मकी उत्पत्ति) विदित हुआ रहता है।

"आनन्द ! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म (=शुभ-कर्म) तथा अकुशल-धर्म (=अशुभ कर्म) दोनों विद्यमान हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके अकुशल-धर्म लुप्त हो गये, कुशल-धर्म प्रकट हो गये। लेकिन इसका अकुशल-मूल अभी नष्ट नहीं हुआ है। इस अकुशल-मूलसे अकुशल-धर्म पैदा हो जायगा। इस प्रकार भविष्यमें इस आदमीकी हानि होगी। आनन्द ! जैसे बीज हों, जो अखण्डित हों, जो सड़े न हों, जो हवा-धूप न खाये हों, जो ताजे हों, जो अच्छी तरह जमाये गये हों, किन्तु जो बड़े पत्थरपर बिखेर दिये गये हों। आनन्द ! तू जानता है न कि ये बीज, वृद्धिको, विपुलताको प्राप्त न होंगे ?"

"हाँ, भन्ते।"

"इसी प्रकार हे आनन्द ! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म (=शुभ-कर्म) तथा अकुशल धर्म (=अशुभ-कर्म) दोनों विद्यमान हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके अकुशल-धर्म लुप्त हो गये हैं, कुशल-धर्म प्रकट हुए हैं। लेकिन इसका अकुशल-मूल अभी नष्ट नहीं हुआ है। इस अकुशल-मूलसे अकुशल-धर्म पैदा हो जायगा। इस प्रकार भविष्यमें इस आदमीकी हानि होगी। आनन्द ! इस प्रकार भी तथागत द्वारा आदमी चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द ! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात रहता है। इस प्रकार भी आनन्द तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद (=धर्म की उत्पत्ति) चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।

"आनन्द ! मैं किसो किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल धर्म (=शुभ कर्म) तथा अकुशल-धर्म (=अशुभ-कर्म) हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीमें बालका सिरा छुआ सकने लायक भी शुक्ल-धर्म (=शुभ कर्म) नहीं है। यह आदमी पूर्ण रूपसे अशुल-धर्मोंसे ही युक्त है। यह आदमी शरीर छूटनेपर मरनेपर, अपाय-गामी होगा, दुर्गति को प्राप्त होगा, नरकमें उत्पन्न होगा। आनन्द ! जैसे बीज हों, जो खण्डित हों, सड़े हों, हवा धूप खाय हों, किन्तु अच्छी तरह जोती गई, बढ़िया जमीनमें बोये गये हों। आनन्द ! क्या तू जानता है कि ये बीज उगेंगे नहीं, विपुलताको प्राप्त होंगे नहीं ?"

"भन्ते ! हाँ।"

"इसी प्रकार हे आनन्द ! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीमें बालका सिरा छुआ सकने लायक भी कुशल-धर्म नहीं हैं। यह आदमी पूर्णरूपसे अकुशल-धर्मोंसे ही युक्त है। यह आदमी शरीर छूटनेपर, मरनेपर, अपाय-गामी होगा, दुर्गति-प्राप्त होगा, नरकमें उत्पन्न होगा। आनन्द ! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा आदमी चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द ! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात रहता है। इस प्रकार भी आनन्द ! तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।"

ऐसा कहनेपर आयुष्मान् आनन्दने भगवानको यह कहा—"भन्ते ! क्या इन तीन तरहके व्यक्तियोंके समान ही दूसरे भी तीन तरहके व्यक्तियोंका प्रज्ञापन किया जा सकता है ?"

भगवान्ने कहा—"हाँ आनन्द ! प्रज्ञापन किया जा सकता है। आनन्द ! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके कुशल-धर्म लुप्त हो गये, अकुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका कुशल-मूल अभी सम्पूर्णतः नष्ट नहीं हुआ है। किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार भविष्यमें इस आदमीकी हानि होगी। आनन्द ! जैसे अंगार जले हों, प्रज्वलित हों, उनमेंसे लाट निकल रही हो, किन्तु वे बड़ी शिलापर बिखेर दिये गये हों। आनन्द ! तू जानता है न कि ये अंगार वृद्धि-विपुलताको प्राप्त न होंगे।"

"भन्ते ! हाँ।"

"अथवा आनन्द ! शामके समय जब सूर्यास्त होने लगता है तब तू जानता है न कि प्रकाशका लोप हो जायेगा और अन्धेरा हो जायेगा ?"

"भन्ते ! हाँ।"

"अथवा आनन्द ! जैसे आधी रातके समय, जब सम्पत्तिशाली लोगोंके खाने पीनेका समय होता है, तब तू जानता है न कि प्रकाश नहीं रहता, अन्धकार हुआ रहता है ?"

"भन्ते ! हाँ।"

"इसी प्रकार हे आनन्द ! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके कुशल-धर्म लुप्त हो गये, अकुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका कुशल-मूल अभी सम्पूर्णत: नष्ट नहीं हुआ है। किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार भविष्यमें इस आदमीकी हानि होगी। आनन्द; इस प्रकार भी आदमी तथागतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द ! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात रहता है। इस प्रकार भी आनन्द ! तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।

"आनन्द ! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल धर्म तथा अकुशल-धर्म हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके अकुशल धर्म लुप्त हो गये, कुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका अकुशल-मूल सम्पूर्ण रूपसे नष्ट नहीं हुआ है, किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार इस आदमीकी भविष्यमें हानि नहीं होगी। आनन्द ! जैसे अंगार जले हों, प्रज्वलित हों, उनमेंसे लाट निकल रही हो और वे सूखे तिनकोंके ढेरमें वा घास की ढेरीपर डाल दिये जायें। आनन्द ! तू जानता है न कि ये अंगार वृद्धि, विपुलताको प्राप्त होंगे ?"

"भन्ते ! हाँ।"

"अथवा आनन्द ! जैसे रातके बीत जानेपर, जब सूर्योदय होता है, तो तू जानता है न कि अन्धेरा नहीं रहेगा और प्रकाश प्रकट होगा ?"

"भन्ते, हाँ।"

"अथवा आनन्द ! जैसे दिन का मध्याह्न, भोजनका समय होनेपर, क्या तू जानता है कि अन्धेरा नहीं रहेगा और प्रकाश प्रकट होगा ?"

"भन्ते ! हाँ।"

"इसी प्रकार आनन्द ! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीके अकुशल-धर्म लुप्त हो गये, कुशल-धर्म प्रकट हो गये। इसका अकुशल-मूल सम्पूर्ण रूपसे नष्ट नहीं हुआ है। किन्तु यह सम्पूर्ण रूपसे विघातको प्राप्त होगा। इस प्रकार इस आदमीकी भविष्यमें हानि नहीं होगी। आनन्द ! इस प्रकार भी आदमी तथा-

गतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।

"आनन्द! मैं किसी किसी आदमीको ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म हैं। इसी आदमीको किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीमें बालका सिरा घुसा सकने लायक भी अकुशल-धर्म नहीं हैं। यह आदमी सम्पूर्ण रूपसे निर्दोष शुक्ल-धर्मसे युक्त है। यह आदमी इसी प्रकार शरीरमें (राग-द्वेष-मोहके क्षय स्वरूप) निर्वाणको प्राप्त होगा। जैसे आनन्द! अंगार ठण्डे हो गये हों, बुझ गये हों और वह सूखे तिनकोंके ढेर या लकड़ीके ढेरपर डाले गये हों, तो आनन्द! तुम जानते हो न कि ये अंगार वृद्धि, विपुलताको प्राप्त न होंगे?"

"भन्ते! हाँ।"

"इसी प्रकार आनन्द! मैं किसी किसी आदमी को ऐसा अपने चित्तसे जानकर जानता हूँ कि इस आदमीमें कुशल-धर्म तथा अकुशल-धर्म हैं। इसी आदमी को किसी दूसरे समय अपने चित्तसे जानकर इस प्रकार जानता हूँ कि इस आदमीमें बालका सिरा घुसा सकने लायक भी अकुशल-धर्म नहीं हैं। यह आदमी सम्पूर्ण रूपसे निर्दोष शुक्ल-धर्मसे युक्त है। यह आदमी इसी शरीरमें (राग-द्वेष-मोहके क्षय-स्वरूप) निर्वाणको प्राप्त होगा। आनन्द! इस प्रकार भी आदमी तथागतके द्वारा चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है। आनन्द! इस प्रकार भी तथागतके द्वारा पुरुष-इन्द्रिय-ज्ञान चित्तसे जाना जाकर ज्ञात हुआ रहता है। इस प्रकार भी आनन्द! तथागतके द्वारा भावी धर्म-समुत्पाद चित्तसे जाना जाकर विदित हुआ रहता है।

"आनन्द! जिन तीन प्रकारके आदमियोंका पहले उल्लेख हुआ, उनमें एक वे हैं जिनकी हानि नहीं होती, एक वे हैं जिनकी हानि होती है तथा एक वे हैं जो नरक-यात्री होते हैं। इसी प्रकार जिन तीन प्रकारके आदमियोंका बादमें उल्लेख हुआ उनमें एक वे हैं जिनकी हानि होती है, एक वे हैं जिनकी हानि नहीं होती तथा एक वे हैं जो (राग-द्वेष मोह क्षय-स्वरूप) निर्वाणको प्राप्त होते हैं।

"भिक्षुओ, बींधने वाले धर्म-पर्य्यायका उपदेश करता हूँ। इसे सुनो। अच्छी तरहसे मनमें धारण करो। भाषण करता हूँ।"

"भन्ते ! बहुत अच्छा" कह भिक्षुओंने भगवानको प्रतिवचन दिया।

भगवान्ने यह कहा—भिक्षुओ, बींघनेवाला धर्म-पर्य्याय कौनसा है? भिक्षुओ, कामनाओंको जानना चाहिये, कामनाओंके निदान-कारणको जानना चाहिये, कामनाओंके नाना स्वरूपोंको जानना चाहिये, कामनाओंके विपाक को जानना चाहिये, कामनाओंके निरोधको जानना चाहिये, कामनाओंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, वेदनाको जानना चाहिये, वेदनाके निदान-कारणको जानना चाहिये, वेदनाके नाना स्वरूपोंको जानना चाहिये, वेदनाके विपाकको जानना चाहिये, वेदनाके निरोध को जानना चाहिये, वेदनाके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, संज्ञाको जानना चाहिये, संज्ञाके निदान-कारणको जानना चाहिये, संज्ञाके नाना स्वरूपोंको जानना चाहिये, संज्ञाके विपाकको जानना चाहिये, संज्ञाके निरोधको जानना चाहिये, संज्ञाके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, आस्रवोंको जानना चाहिये, आस्रवोंके निदान-कारणको जानना चाहिये, आस्रवोंके नाना स्वरूपोंको जानना चाहिये, आस्रवोंके विपाकको जानना चाहिये, आस्रवोंके निरोधको जानना चाहिये, आस्रवोंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, कर्मको जानना चाहिये, कर्मके निदान-कारणको जानना चाहिये, कर्मके नाना-स्वरूपोंको जानना चाहिये, कर्मके विपाकको जानना चाहिये, कर्मके निरोधको जानना चाहिये, कर्मके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, दुक्खको जानना चाहिये, दुक्खके निदान-कारणको जानना चाहिये, दुक्खके नाना स्वरूपोंको जानना चाहिये, दुक्खके विपाकको जानना चाहिये, दुक्खके निरोधको जानना चाहिये, दुक्खके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये।

"भिक्षुओ, कामनाओंको जानना चाहिये, कामनाओंके निदान-कारणको जानना चाहिये, कामनाओंके नाना-स्वरूपोंको जानना चाहिये, कामनाओंके विपाक को जानना चाहिये, कामनाओंके निरोधको जानना चाहिये, कामनाओंके निरोधकी ओर ले जाने वाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह

किस अर्थमें कहा गया ? भिक्षुओ, ये पाँच इन्द्रियोंके विषय (=कामगुण) हैं, चक्षुके विषय रूप, जो इष्ट होते हैं, जो सुन्दर होते हैं, जो अच्छे लगनेवाले होते हैं, जो प्रियकर होते हैं, जो काम्य होते हैं तथा जो रंजन करते हैं। श्रोतके विषय शब्द. . . . घ्राणके विषय गन्ध. . . जिव्हाके विषय रस. . . . . स्पर्शेन्द्रिय (=काय) के विषय स्पृष्टव्य, जो इष्ट होते हैं, जो सुन्दर होते हैं, जो अच्छे लगने वाले होते हैं, जो प्रियकर होते हैं, जो काम्य होते हैं तथा जो रंजन करते हैं। भिक्षुओ, ये कामनायें नहीं हैं, ये तो आर्य–विनय (=बुद्ध-देशना) के अनुसार काम-गुण (इन्द्रियोंके विषय) हैं —

संकप्परागो पुरिसस्स कामो,
नेते कामा यानि चित्रानि लोके
संकप्परागो पुरिसस्स कामो
तिट्ठन्ति चित्रानि तथेव लोके
अथेत्थ धीरा विनयन्ति छन्दं ॥

[पुरुषका सराग-संकल्प ही यथार्थ कामना है। दुनियाके चित्र-विचित्र पदार्थ कामनायें नहीं हैं। पुरुषका सराग-संकल्प ही यथार्थ कामना है। दुनियाके चित्र-विचित्र पदार्थ (=इन्द्रियोंके विषय) तो वैसे ही बने ही रहते हैं। धीर जन इन्हींके विषयमें अपनी कामनाको संयत रखते हैं।]

"भिक्षुओ, कामनाओंका निदान-कारण क्या है ? भिक्षुओ, कामनाओंका निदान-कारण है स्पर्श।

"भिक्षुओ, कामनाओंके नाना-स्वरूप कौनसे हैं ? भिक्षुओ, रूपोंकी कामना पृथक है, शब्दोंकी कामना पृथक है, सुगन्धियोंकी कामना पृथक है, रसोंकी कामना पृथक है, स्पृष्टव्योंकी सामना पृथक है। भिक्षुओ, ये कामनाओंके नाना स्वरूप कहलाते हैं।

"भिक्षुओ, कामनाओंका विपाक किसे कहते हैं ? भिक्षुओ, जिस जिस कामनाके फल स्वरूप जैसा जैसा जन्म ग्रहण करता है पुण्यसे मिलने वाला अथवा अपुण्यसे मिलने वाला। भिक्षुओ, उसे कामनाओंका विपाक कहते हैं।

"भिक्षुओ, कामनाओंका निरोध किसे कहते हैं ? भिक्षुओ स्पर्श-निरोध ही कामनाओंका निरोध है। यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही कामनाओंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) है, जैसे सम्यक्-दृष्टि, सम्यक्-संकल्प, सम्यक्-वाणी, सम्यक्-कर्मान्त, सम्यक्-आजीविका, सम्यक्-व्यायाम, सम्यक्-स्मृति, सम्यक्-समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक कामनाओंको पहचानता है, कामनाओंके निदान-कारणको पहचानता है, कामनाओंके नाना स्वरूपोंको पहचानता है, कामनाओं के विपाकको पहचानता है, कामनाओंके निरोधको पहचानता है, कामनाओंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को पहचानता है, वह इस बींधनेवाले कामनाओंके निरोध श्रेष्ठ जीवन (=ब्रह्मचर्य) को पहचानता है। "भिक्षुओ, कामनाओं को जानना चाहिये,. . . . . कामनाओंके निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, वेदनाको जानना चाहिये . . . . . वेदनाके निरोध-गामिनी प्रतिपदा (=मार्ग) को जानना चाहिये, "यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, ये तीन वेदनायें हैं—सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना।

"भिक्षुओ, वेदनाओंका निदान-कारण क्या है? भिक्षुओ, वेदनाओंका निदान-कारण स्पर्श है।

"भिक्षुओ, वेदनाके नाना स्वरूप कौनसे हैं? भिक्षुओ, सामिष (=भौतिक) सुखा वेदना होती है, निरामिष (=अभौतिक) सुखा वेदना होती है, सामिष दुक्खा वेदन ाहोती है, निरामिष दुक्खा वेदना होती है, सामिष अदुक्खमुसुखा वेदना होती है, निरामिष अदुक्खमुसुखा वेदना होती है। भिक्षुओ, ये वेदनाके नाना स्वरूप हैं।

"भिक्षुओ, वेदनाओंका विपाक किसे कहते हैं? वेदनाओंको भुगतनेवाला उस उस जन्मको ग्रहण करता है, पुण्यसे मिलनेवाले अथवा अपुण्यसे मिलनेवाले। भिक्षुओ, यह वेदनाओंका विपाक कहलाता है।

"भिक्षुओ, वेदनाओंका निरोध किसे कहते हैं? भिक्षुओ स्पर्श–निरोध ही वेदना-निरोध है। यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही वेदना-निरोध-गामिनी प्रतिपदा है, जैसे सम्यक् दृष्टि. . . . . सम्यक् समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक् इस प्रकार वेदनाको पहचानता है, वेदनाके निदान-कारणको पहचानता है, वेदना के नाना स्वरूपोंको पहचानता है, वेदनाके विपाकको पहचानता है, वेदनाके निरोधको पहचानता है, वेदना-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको पहचानता है; वह इस बींधने वाले वेदना-निरोध श्रेष्ठ-जीवन (=ब्रह्मचर्य) को पहचानता है। "भिक्षुओ, वेदनाको जानना चाहिये. . . . वेदना-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये," यह जो कहा गया, इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, संज्ञाको जानना चाहिये . . . संज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदा (मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया?

भिक्षुओ, ये छह संज्ञायें हैं—रूप संज्ञा, शब्द-संज्ञा, गन्ध-संज्ञा, रस-संज्ञा, स्पृष्टव्य-संज्ञा तथा धर्म (=मनके विषयों) की संज्ञा।

"भिक्षुओ, संज्ञाओंका निदान-कारण क्या है?

"भिक्षुओ, संज्ञाओंका निदान-कारण स्पर्श है।

"भिक्षुओ, संज्ञाओंके नाना स्वरूप कौनसे हैं?

"भिक्षुओ, रूपोंके प्रति जो संज्ञा है, वह अन्य है; शब्दोंके प्रति जो संज्ञा है, वह अन्य है; सुगन्धियोंके प्रति जो संज्ञा है, वह अन्य है; रसोंके प्रति जो संज्ञा है, वह अन्य है; स्पृष्टव्योंके प्रति जो संज्ञा है, वह अन्य है; धर्मों (=मनके विषयों) के प्रति जो संज्ञा है, वह अन्य है। भिक्षुओ, ये संज्ञाओंके नाना स्वरूप हैं।

"भिक्षुओ, संज्ञाओंका विपाक किसे कहते हैं? भिक्षुओ, व्यवहार ही संज्ञाओं का विपाक है। जैसे जैसे उसे जानता-पहचानता है वैसे वैसे व्यवहार करता है कि मैं इस संज्ञा वाला था। भिक्षुओ, यह संज्ञाओंका विपाक कहलाता है।

"भिक्षुओ, संज्ञाओंका निरोध किसे कहते हैं?

"भिक्षुओ, स्पर्शका निरोध संज्ञाओंका निरोध है। यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही संज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदा है, जैसे सम्यक्-दृष्टि . . . . सम्यक्-समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक इस प्रकार संज्ञाको पहचानता है, संज्ञाओंके निदान-कारणको पहचानता है, संज्ञाओंके नाना स्वरूपोंको पहचानता है, संज्ञाओंके विपाकको पहचानता है, संज्ञाओंके निरोध को पहचानता है तथा संज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको पहचानता है, वह इस बींधनेवाले संज्ञा-निरोध श्रेष्ठ जीवनको पहचानता है। भिक्षुओ, संज्ञाको जानना चाहिये. . . . संज्ञा-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये, यह जो कहा गया, इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओं, आस्रवोंको जानना चाहिये . . . . . आस्रव-निरोध-गामिनी प्रतिपदा (मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया?

"भिक्षुओ, आस्रव तीन हैं—कामास्रव, भवास्रव, तथा अविद्यास्रव।

"भिक्षुओ, आस्रवोंका निदान-कारण क्या है? भिक्षुओ, अविद्या आस्रवोंका निदान-कारण है।

"भिक्षुओ, आस्रवोंके नाना स्वरूप कौनसे हैं? भिक्षुओ, नरकमें ले जाने वाले आस्रव होते हैं, पशु-पक्षी योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले आस्रव होते हैं, प्रेत-योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले आस्रव होते हैं, मनुष्य-लोकमें जन्म ग्रहण कराने-

वाले आस्रव होते हैं तथा देवलोकमें जन्म ग्रहण कारनेवाले आस्रव होते हैं। भिक्षुओ, ये आस्रवोंके नाना स्वरूप हैं।

"भिक्षुओ, आस्रवोंका विपाक किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, जिस जिस आस्रवके फलस्वरूप जैसा जैसा जन्म ग्रहण किया रहता है, पुण्यसे मिलनेवाला अथवा अपुण्यसे मिलनेवाला। भिक्षुओ, इसे आस्रवोंका विपाक कहते हैं।

"भिक्षुओ, आस्रवोंका निरोध किसे कहते हैं ?

"भिक्षुओ, अविद्या निरोध ही आस्रवोंका निरोध है। यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही आस्रवोंके निरोध की ओर ले जानेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) है, जैसे सम्यक्-दृष्टि. . . . . सम्यक्-समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक इस प्रकार आस्रवोंको पहचानता है, आस्रवोंके निदान-कारणको पहचानता है, आस्रवोंके नाना स्वरूपोंको पहचानता है, आस्रवोंके विपाकको पहचानता है, आस्रवोंके निरोधको पहचानता है तथा आस्रव-निरोध-गामिनी प्रतिपदा को पहचानता है, वह इस बींधने वाले आश्रव-निरोध श्रेष्ठ जीवनको को पहचानता है। "भिक्षुओ, आस्रवोंको जानना चाहिये . . . .आश्रव-निरोध गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये," यह जो कहा गया, इसी अर्थमें कहा गया ?

"भिक्षुओ, कर्मको जानना चाहिये. . . . कर्म-निरोध-गामिनी प्रतिपदा (मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया यह किस अर्थमें कहा गया ?

"भिक्षुओ, मैं चेतना (= संकल्प)को ही कर्म कहता हूँ। (आदमी) संकल्प करके ही कर्म करता है।

"भिक्षुओ, कर्मोंका निदान-कारण क्या है ? भिक्षुओ, स्पर्श कर्मोंका निदान-कारण है।

"भिक्षुओ, कर्मोंके नाना स्वरूप कौनसे हैं ?

"भिक्षुओ, नरकमें ले जानेवाले कर्म होते हैं, पशु-पक्षी योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते हैं ?, प्रेत-योनिमें जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते हैं, मनुष्य-लोकमें जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते हैं तथा देव-लोकमें जन्म ग्रहण करानेवाले कर्म होते हैं। भिक्षुओ, ये कर्मोंके नाना स्वरूप हैं।

"भिक्षुओ, कर्मोंका विपाक (= फल) कैसे होता है ? भिक्षुओ, मैं तीन प्रकार से कर्मोंका विपाक (= फल) कहता हूँ —इसी जन्म में, अगले जन्ममें अथवा अन्य किसी जन्ममें।

"भिक्षुओ, यह कर्मोंका विपाक (= फल) कहलाता है।

"भिक्षुओ, कर्मका निरोध किसे कहते हैं? भिक्षुओ, स्पर्शका निरोध ही कर्मका निरोध है। यह आर्य अष्टांगिक-मार्ग ही कर्म-निरोध-गामिनी प्रतिपदा, जैसे सम्यक्-दृष्टि. . . . सम्यक्-समाधि।

"भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक इस प्रकार कर्मको पहचानता है, कर्मोंके निदान-कारणको पहचानता है, कर्मोंके नाना स्वरूपोंको पहचानता है, कर्मोंके विपाकको पहचानता है, कर्मोंके निरोधको पहचानता है तथा कर्म-निरोधगामिनी प्रतिपदाको पहचानता है; वह इस बींधने वाले कर्म-निरोध श्रेष्ठ-जीवनको पहचानता है।" "भिक्षुओ, कर्मको जानना चाहिये. . . . कर्म-निरोध-गामिनी प्रतिपदाको जानना चाहिये," यह जो कहा गया है, यह इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, दुक्खको जानना चाहिये, दुक्खके निदान-कारणको जानना चाहिये, दुक्खके नाना स्वरूपोंको जानना चाहिये, दुक्खके विपाक (= फल)को जानना चाहिये, दुक्खके निरोधको जानना चाहिये, दुक्ख निरोधकी ओर ले जानेवाली प्रति-पदा (= मार्ग)को जानना चाहिये, "यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? जन्म भी दुक्ख है, बुढ़ापा भी दुक्ख है, रोग भी दुक्ख है, मरण भी दुक्ख है, रोना-पीटना दुखी होना-पश्चाताप करना भी दुक्ख है, इच्छाकी पूर्ति न होना भी दुक्ख है, संक्षेपमें कहना हो तो पंचुपादान स्कन्ध ही दुक्ख हैं।

"भिक्षुओ, दुक्खका निदान-कारण क्या है?

"भिक्षुओ, तृष्णा दुक्खका निदान-कारण है।

"भिक्षुओ, दुक्खके नाना स्वरूप कौन से हैं?

"भिक्षुओ, अत्यन्त दुःख, सीमित दुक्ख, चिरकाल तक रहने वाला दुक्ख, तथा अल्प काल तक रहने वाला दुक्ख। भिक्षुओ, ये दुक्खके नाना स्वरूप हैं।

"भिक्षुओ, दुक्खका विपाक (फल) क्या होता है?

"भिक्षुओ, एक आदमी जब किसी दुक्खसे दुखित होता है, पीड़ित होता है तो वह चिन्ता करता है, कल्पता है, रोता-पीटता है, छाती पीटता है, बेहोश हो जाता है; अथवा उस दुक्खसे दुक्खी होनेके कारण इधर-उधर खोजता फिरता है कि कोई एक या दो पदका मन्त्र जानता हो, उस दुक्खको दूर करनेके लिये। भिक्षुओ, दुक्खका विपाक (= फल) या तो बेहोशी है या परियेषण है। भिक्षुओ, यह दुक्खका विपाक (= फल) कहलाता है।

"भिक्षुओ, दुक्खका निरोध किसे कहते हैं?

भिक्षुओ, तृष्णाका निरोध ही दुक्खका निरोध है। यह आर्य अष्टांगिक मार्ग ही दुक्ख-निरोध-गामिनी प्रतिपदा, जैसे सम्यक् दृष्टि. . .सम्यक् समाधि।

भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक इस प्रकार दुक्खको पहचानता है, दुक्खके निदान-कारणको पहचानता है, दुक्खके नाना स्वरूपोंको पहचानता है, दुक्खके विपाकको पहचानता है, दुक्खके निरोधको पहचानता है, दुक्ख निरोध-गामिनी प्रतिपदाको पहचानता है; वह इस बींधनेवाले दुक्ख-निरोध स्वरूप श्रेष्ठ जीवनको पहचानता है।" भिक्षुओ, दुक्खको जानना चाहिये, दुक्खके निदान-कारणको जानना चाहिये, दुक्खके नाना स्वरूपोंको जानना चाहिये, दुक्खके विपाक (= फल) को जानना चाहिये, दुक्खके निरोधको जानना चाहिये, दुक्खके निरोध की ओर ले जाननेवाली प्रतिपदा (= मार्ग) को जानना चाहिये," यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यही बींधनेवाला धर्म-पर्य्याय है।

भिक्षुओ, ये छह तथागतके तथागत-बल हैं, जिन बलोंसे युक्त होनेके कारण तथागत दृढ़ रहते हैं, परिषदोंमें सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्म-चक्रको प्रवर्तित करते हैं। कौनसे छह? भिक्षुओ, तथागत योग्य बात (= स्थान) को योग्य बातके रूपमें तथा अयोग्य-बातको अयोग्य-बातके रूपमें जानते हैं। भिक्षुओ, यह जो तथागत योग्य बातको योग्य बातके रूपमें तथा अयोग्य बातको अयोग्य बातके रूपमें जानते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ़ रहते हैं, परिषदोंमें सिंह-नाद करते हैं, तथा ब्रह्मचक्र प्रवर्तित करते हैं।

फिर भिक्षुओ, तथागत भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोंके विपाक (= फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ रूपसे जानते हैं। भिक्षुओ, यह जो तथागत भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोंके विपाक (= फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ रूपसे जानते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ़ रहते हैं, परिषदोंमें सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्मचक्र प्रवर्तित करते हैं।

फिर भिक्षुओ, तथागत ध्यान-विमोक्ष-समाधि-समापत्तियोंके ह्रास, विकास तथा उत्थानको यथार्थ रूपसे जानते हैं। भिक्षुओ, यह जो तथागत. . . जानते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ़ रहते हैं, परिषदोंमें सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्म-चक्र प्रवर्तित करते हैं।

फिर भिक्षुओ, तथागत अनेक प्रकारके पूर्वजन्मोंका अनुस्मरण करते हैं, जैसे एक जन्म, दो जन्म. . . . इस प्रकार आकार-सहित उद्देश्य-सहित नाना रूपसे पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करते हैं।

भिक्षुओ, यह जो तथागत अनेक प्रकारके पूर्वजन्मोंका अनुस्मरण करते हैं, जैसे एक जन्म . . . . दो जन्म . . . . इस प्रकार आकार-सहित उद्देश्य-सहित नाना रूपसे पूर्वजन्मोंका अनुस्मरण करते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ़ रहते हैं, परिषदोंमें सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्म-चक्र प्रवर्तित करते हैं।

फिर भिक्षुओ, दिव्य, विशुद्ध, मनुष्य-बलेतर चक्षुसे तथागत. . . .यथाकर्म उस उस योनिमें जन्म ग्रहण करनेवाले प्राणियोंको जानते हैं। भिक्षुओ, यह जो दिव्य, विशुद्ध, मनुष्य बलेत्तर चक्षुसे तथागत . . . . यथाकर्म उस उस योनिमें जन्म ग्रहण करनेवाले प्राणियोंको जानते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ़ रहते हैं, परिषदोंमें सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्म-चक्र प्रवर्तित करते हैं।

फिर भिक्षुओ, तथागत आस्रवोंका क्षयकर. . . . .साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करते हैं। भिक्षुओ, यह जो तथागत आस्रवोंका क्षयकर. . . .साक्षातकर, प्राप्तकर विहार करते हैं, यह भी तथागतका एक बल है, जिसके कारण तथागत दृढ़ रहते हैं, परिषदोंमें सिंह-नाद करते हैं तथा ब्रह्मचक्र प्रवर्तित करते हैं।

भिक्षुओ, दूसरे (मत) के लोग तथागतसे योग्य-बातके बारेमें योग्यता सम्बन्धी, अयोग्य बातके बारेमें अयोग्यता सम्बन्धी यथार्थ ज्ञानके अनुसार पास आकर प्रश्न पूछते हैं। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागतको योग्य -बात तथा अयोग्य-बातका यथार्थ-ज्ञान है, वैसे वैसे ही तथागत योग्य बातका योग्य-बातकी तरह अयोग्य-बात को अयोग्य-बातकी तरह यथार्थ ज्ञानके अनुसार, प्रश्न पूछने पर समाधान कर देते हैं।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोंके विपाक (=फल) के कारण तथा हेतुके सम्बन्धमें, यथार्थ ज्ञानको लेकर, पास आकर प्रश्न पूछते हैं। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागत भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोंके विपाक (=फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ—रूपसे जानते हैं, वैसे वैसे ही तथागत भूत-भविष्यत् वर्तमान कर्मोंके विपाक (=फल) के बारेमें यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछे जानेपर समाधान कर देते हैं।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे ध्यान-विमोक्ष-समाधि-समापत्तियोंके ह्रास, विकास तथा उत्थानके बारेमें यथार्थ ज्ञानको लेकर, पास जाकर प्रश्न पूछते

हैं। भिक्षुओ, जैसे-जैसे तथागत ध्यान-विमोक्ष-समाधि-समापत्तियोंके ह्रास, विकास तथा उत्थानके बारेमें यथार्थ रूपसे जानते हैं, वैसे-वैसे ही तथागत ध्यान-विमोक्ष समाधि-समापत्तियोंके ह्रास, विकास तथा उत्थान के बारेमें यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछने पर समाधान कर देते हैं।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे पूर्व जन्मोंके अनुस्मरणके बारेमें यथार्थ रूपसे पास आकर प्रश्न पूछते हैं,। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागत पूर्वजन्मोंके अनुस्मरणके बारेमें, यथार्थ रूपसे जानते हैं, वैसे वैसे ही तथागत पूर्व जन्मोंके बारेमें, यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछनेपर, समाधान कर देते हैं।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे मरने तथा जन्म ग्रहण करनेके बारेमें, यथार्थ रूपसे, पास आकर, प्रश्न पूछते हैं। भिक्षुओ, जैसे-जैसे तथागत मरने तथा जन्म ग्रहण करनेके बारेमें यथार्थ रूपसे जानते हैं, वैसे-वैसे ही तथागत मरने तथा जन्म ग्रहणके बारेमें, यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछनेपर समाधान कर देते हैं।

भिक्षुओ, दूसरे (मतके) लोग तथागतसे आस्रवोंके क्षय . . . . यथार्थ रूपसे, पास आकर, प्रश्न पूछते हैं। भिक्षुओ, जैसे जैसे तथागत आस्रवोंके क्षयके बारेमें . . . . यथार्थ रूपसे जानते हैं, वैसे वैसे ही तथागत आस्रवोंके क्षयके बारेमें, यथार्थ रूपसे, प्रश्न पूछनेपर समाधान कर देते हैं।

भिक्षुओ, यह जो योग्य बातको योग्य-बात के रूपमें तथा अयोग्य बातको अयोग्य बातके रूपमें जानना है, यह एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नहीं। यह जो भूत-भविष्यत्-वर्तमान कर्मोंके विपाक (= फल) को कारण तथा हेतुके साथ यथार्थ-रूपसे जानना है, यह एकाग्र-चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नहीं। यह जो ध्यान-विमोक्ष समाधि-समापत्तियोंके ह्रास, विकास तथा उत्थानके बारेमें यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना है, यह भी एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नहीं। यह जो पूर्व जन्मोंके अनुस्मरणके बारेमें यथार्थ ज्ञान है, यह भी एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर चित्तके लिये नहीं। यह जो मरने तथा जन्म ग्रहणके बारेमें यथार्थ ज्ञान है, यह भी एकाग्र-चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नहीं। यह जो आस्रवोंके क्षय . . . . यथार्थ ज्ञान है, यह भी एकाग्र चित्तके लिये ही सम्भव है, अस्थिर-चित्तके लिये नहीं।

भिक्षुओ, यह जो समाधि (= चित्तकी एकाग्रता) है, यही मार्ग है तथा यह जो असमाधि (= चित्तकी अस्थिरता) है, यही कुमार्ग है।

(७) देवता वर्ग

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े अनागामि फलकी प्राप्ति असम्भव है। कौन-सी छह बातें? अश्रद्धा, निर्लज्जता, पाप करनेमें भय न मानना, आलस्य, मूढ़-स्मृति तथा दुष्प्रज्ञ होना। इन छह बातोंको बिना छोड़े अनागामि फलकी प्राप्ति असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अनागामि फलकी प्राप्ति सम्भव है। कौन-सी छह बातें? अश्रद्धा, निर्लज्जता, पाप करनेमें भय न मानना, आलस्य, मूढ़-स्मृति तथा दुष्प्रज्ञ होना। इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अनागामि फलकी प्राप्ति सम्भव है।

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े अर्हत्वकी प्राप्ति असम्भव है। कौन-सी छह बातें? सुस्ती, आलस्य, उद्धतपन, कौकृत्य, अश्रद्धा तथा प्रमाद। इन छह बातोंको बिना छोड़े अर्हत्वकी प्राप्ति असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अर्हत्वकी प्राप्ति सम्भव है। कौन-सी छह बातें? सुस्ती, आलस्य, उद्धतपन, कौकृत्य, अश्रद्धा तथा प्रमाद। भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे अर्हत्वकी प्राप्ति सम्भव है

भिक्षुओ, जो भिक्षु बुरे लोगोंकी संगतिमें रहता है, बुरे लोगोंसे दोस्ती रखता है, बुरे लोगोंके आश्रयमें रहता है, कुसंगतिमें ही समय बिताता है और बुरे लोगोंका ही अनुकरण करता है, इसकी कोई सम्भावना नहीं कि वह शिष्टाचार (=आभिसमाचारिक शील) का पालन करेगा। जो शिष्टाचारका पालन नहीं करेगा, वह शैक्ष-धर्मका पालन करेगा—इसकी भी कोई गुंजाइश नहीं। जो शैक्ष-धर्मका पालन नहीं करेगा, वह शीलोंकी रक्षा करेगा—इसकी भी कोई गुंजाइश नहीं। जो शीलोंकी रक्षा नहीं करेगा, वह काम-राग, रूप-राग तथा अरूप-रागसे मुक्त हो सकेगा—इसकी भी कोई गुंजाइश नहीं।

भिक्षुओ, जो भिक्षु भले लोगोंकी संगतिमें रहता है, भले लोगोंसे दोस्ती रखता है, भले लोगोंके आश्रयमें रहता है, सत्संगतिमें ही समय बिताता है और भले लोगोंका ही अनुकरण करता है, इसकी सम्भावना है कि वह शिष्टाचार (=आभिसमाचारिक शील) का पालन करेगा। जो शिष्टाचारका पालन करेगा, वह शैक्ष-धर्मका पालन करेगा—इसकी गुंजाइश है। जो शैक्ष-धर्मका पालन करेगा, वह शीलोंकी रक्षा करेगा—इसकी भी गुंजाइश है। जो शीलोंकी रक्षा करेगा, वह काम-राग, रूप-राग तथा अरूप-रागसे मुक्त हो सकेगा—इसकी भी गुंजाइश है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु जमातमें रहनेवाला है, जमातमें रमण करनेवाला है, जमातमें वास करने वाला है; समूहमें रहनेवाला है, समूहमें रमण करनेवाला है, समूहमें वास करनेवाला है, वह एकान्तमें आनन्दसे रहेगा—इसकी गुंजाइश नहीं है। जो एकान्तमें आनन्दसे नहीं रहता, वह चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण करेगा—इसकी गुंजाइश नहीं है। जो चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण नहीं करता, वह सम्यक् दृष्टिको प्राप्त करेगा—इसकी गुंजाइश नहीं। जो सम्यक्-दृष्टिको प्राप्त नहीं होता, वह सम्यक् समाधिको प्राप्त होगा—इसकी गुंजाइश नहीं। जो सम्यक् समाधिको प्राप्त नहीं होता, वह (दस) संयोजनोंसे मुक्त होगा—इसकी गुंजाइश नहीं। जो संयोजनोंसे मुक्त नहीं होता, वह निर्वाण साक्षात करेगा—इसकी गुंजाइश नहीं।

भिक्षुओ, जो भिक्षु जमातमें रहनेवाला नहीं है, जमातमें रमण करनेवाला नहीं है, जमातमें वास करनेवाला नहीं है; समूहमें रहने वाला नहीं है, समूहमें रमण करनेवाला नहीं है, समूहमें वास करनेवाला नहीं है, वह एकान्तमें आनन्दसे रहेगा—इसकी गुंजाइश है। जो एकान्तमें आनन्दसे रहेगा, वह चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण करेगा—इसकी गुंजाइश है। जो चित्तकी एकाग्रताके केन्द्र (= निमित्त) को ग्रहण करता है, वह सम्यक्-दृष्टिको प्राप्त करेगा—इसकी गुंजाइश है। जो सम्यक्-दृष्टिको प्राप्त होता है, वह सम्यक् समाधिको प्राप्त होगा—इसकी गुंजाइश है। जो सम्यक् समाधिको प्राप्त होता है, वह (दस) संयोजनोंसे मुक्त होगा—इसकी गुंजाइश है। जो संयोजनोंसे मुक्त होता है, वह निर्वाण साक्षात् करेगा—इसकी गुंजाइश है।

उस समय एक देवता प्रकाशपूर्ण रात्रिमें, प्रकाशमान् वर्ण वाला, सारेके सारे जेतवनको प्रकाश-युक्त करते हुए, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्को नमस्कार कर एक ओर खड़ा हुआ। एक ओर खड़े हुए उस देवताने भगवान्से यह कहा—भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होतीं हैं। कौन-सी छह? शास्ताका गौरव करना, धर्मका गौरव करना, संघका गौरव करना, शिक्षाओंके प्रति गौरव-युक्त रहना, विनम्र (= सुवच) होना तथा सत्संगति। भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होतीं हैं। उस देवताने यह कहा। भगवान्ने समर्थन किया। तब यह जानकर कि भगवानने मेरा समर्थन किया है, वह देवता भगवान्को अभिवादनकर, भगवान्की प्रदक्षिणाकर, वहीं अन्तर्धान हो गया।

तब भगवान्ने उस रातके बीतनेपर भिक्षुओंको संबोधित किया--भिक्षुओ, आजकी रात, एक देवता, प्रकाशपूर्ण रात्रिमें, प्रकाश-युक्त वर्ण माला, सारेके सारे जेतवनको प्रकाश-युक्त करते हुए, जहाँ मैं था, वहाँ पहुँचा। पास आकर, मुझे प्रणाम कर एक ओर खड़ा हुआ। एक ओर खड़े हुए उस देवताने मुझसे यह कहा--भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी छह? शास्ताका गौरव करना, धर्मका गौरव करना, संघका गौरव करना, शिक्षाओंके प्रति गौरव-युक्त रहना, विनम्र (=सुवच) होना तथा सत्संगति। भन्ते! ये छह बातें भिक्षुकी उन्नतिका कारण होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने यह कहा। यह कहकर मुझे प्रणाम कर, प्रदक्षिणा कर, वहीं अन्तर्धान हो गया।

ऐसा कहनेपर, आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवान्को नमस्कार कर यह कहा--भन्ते! भगवान्ने जो यह संक्षेपमें कहा है, मैं उसे विस्तृत रूप से इस प्रकार समझता हूँ--भन्ते! भिक्षु स्वयं शास्ताका गौरव करनेवाला होता है, तथा शास्ताके गौरव करनेका गुणानुवाद करनेवाला होता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताका गौरव करनेवाले नहीं होते, उन्हें शास्ताका गौरव करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताका गौरव करनेवाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशंसा करता है। स्वयं धर्मका गौरव करनेवाला होता है...... संघका गौरव करनेवाला होता है.....शिक्षाओंके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है.....विनम्र होता है.....सत्संगतिमें रहनेवाला होता है और सत्संगतिमें रहनेका गुणानुवाद करनेवाला। जो दूसरे भिक्षु सत्संगतिमें रहनेवाले नहीं होते, उन्हें सत्संगतिमें रहनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु सत्संगतिमें रहनेवाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशंसा करता है। भन्ते! भगवान्ने जो कुछ संक्षिप्त रूपमें कहा, मैं उसका इस प्रकार विस्तार से अर्थ करता हूँ।

सारिपुत्र! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। सारिपुत्र! यह बहुत अच्छा है कि जो कुछ मैंने संक्षेपमें कहा है, तू उसका इस प्रकार विस्तारसे अर्थ जानता है। सारिपुत्र! भिक्षु स्वयं शास्ताका गौरव करनेवाला होता है तथा शास्ताके गौरव करनेका गुणानुवाद करनेवाला होता है। जो दूसरे भिक्षु, शास्ताका गौरव करनेवाले नहीं होते, उन्हें शास्ताका गौरव करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताका गौरव करनेवाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशंसा करता है। स्वयं धर्मका गौरव करने वाला होता है...... संघका गौरव करनेवाला होता है.... शिक्षाओंका गौरव करनेवाला होता है.....विनम्र (=सुवच) होता है......सत्संगतिमें

रहनेवाला होता है और सत्संगतिमें रहनेका गुणानुवाद करने वाला। जो दूसरे भिक्षु सत्संगतिमें रहनेवाले नहीं होते, उन्हें सत्संगतिमें रहनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु सत्संगतिमें रहनेवाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशंसा करता है। सारिपुत्र! मैंने जो कुछ संक्षेपमें कहा उसे इसी प्रकार विस्तृत रूपसे समझना चाहिए।

भिक्षुओ! अरे जो भिक्षु शान्त, प्रणीत, प्रशान्त, एकाग्रतायुक्त समाधिसे संयुक्त न होगा, वह अनेक प्रकारकी ऋद्धियोंको प्राप्त करेगा—एक होकर अनेक होगा, अनेक होकर एक होगा.......ब्रह्मलोक तक उसके शरीरकी पहुँच होगी; इसकी गुंजाइश नहीं। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्यकी शक्तिसे परेके श्रोत-धातुसे दिव्य तथा मानुषी, दूरके तथा समीपके शब्दोंको सुनेगा;—इसकी गुंजाइश नहीं। वह दूसरे प्राणियोंके, दूसरे व्यक्तियोंके चित्तको अपने चित्तसे जान सकेगा—सराग चित्तको सराग चित्त करके जान सकेगा......विमुक्त चित्तको विमुक्त चित्त करके जान सकेगा; इसकी गुंजाइश नहीं। वह अनेक प्रकारके पूर्वजन्मोंका अनुस्मरण करेगा, जैसे एक जन्म, दो जन्म.....आकार-सहित उद्देश्य-सहित नाना प्रकारके पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करेगा; इसकी गुंजायश नहीं। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्यकी शक्तिसे परेके चक्षुसे प्राणियोंको देखेगा.....उनकी कर्मानुसार गतिको जानेगा; इसकी गुंजाइश नहीं। वह आस्रवोंका क्षय होनेपर......साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करेगा; इसकी गुंजाइश नहीं।

भिक्षुओ, अरे जो भिक्षु शान्त, प्रणीत, प्रशान्त, एकाग्रतायुक्त समाधिसे संयुक्त होगा, वह अनेक प्रकारकी ऋद्धियोंको प्राप्त करेगा—एक होकर अनेक होगा, अनेक होकर एक होगा....ब्रह्मलोक तक उसके शरीरकी पहुँच होगी; इसकी सम्भावना है। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्य की शक्तिसे परेके श्रोत-धातुसे दिव्य तथा मानुषी, दूरके तथा समीपके शब्दोंको सुनेगा; इसकी सम्भावना है। वह दूसरे प्राणियोंके, दूसरे व्यक्तियोंके चित्तको अपने चित्तसे जान सकेगा—सराग चित्तको सराग चित्त करके जान सकेगा......विमुक्त चित्तको विमुक्त चित्त करके जान सकेगा; इसकी सम्भावना है। वह अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करेगा, जैसे एक जन्म, दो जन्म....आकार-सहित उद्देश्य-सहित नाना प्रकारके पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करेगा; इसकी सम्भावना है। वह दिव्य, विशुद्ध, मनुष्यकी शक्तिसे परेके चक्षुसे प्राणियोंको देखेगा....उनकी कर्मानुसार गतिको जानेगा; इसकी सम्भावना है। वह आस्रवोंका क्षय होनेपर......साक्षात्कर प्राप्तकर विहार करेगा; इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भावको प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु यथार्थ रूपसे यह नहीं जानता कि ये हानिकर बातें हैं, यथार्थरूपसे यह नहीं जानता कि ये स्थितिको यथावत् बनाये रखनेवाली बातें हैं, यथार्थरूपसे यह नहीं जानता कि ये विशेष-प्राप्ति करानेवाली बातें हैं, यथार्थ रूपसे यह नहीं जानते कि ये बींधनेवाली बातें हैं, उत्साही नहीं होता, अपने हितकी बात करनेवाला नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भाव को प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भावको प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु यथार्थरूपसे यह जानता है कि ये हानिकारक बातें हैं, यथार्थरूपसे यह जानता है कि ये स्थितिको यथावत् बनाये रखनेवाली बातें हैं, यथार्थ रूपसे यह जानता है कि ये विशेष-प्राप्ति करानेवाली बातें हैं, यथार्थ रूपसे यह जानता है कि ये बींधनेवाली बातें हैं, उत्साही होता है, हितकी बात करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह स्मृति-आयतनके रहनेपर साक्षी-भावको प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह समाधिके विषयमें सशक्त नहीं हो सकता। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु समाधिकी प्राप्तिमें कुशल नहीं होता, समाधि-अवस्थामें स्थित रहनेमें कुशल नहीं होता, समाधिसे उठनेमें कुशल नहीं होता, सावधानीसे करनेवाला नहीं होता, सतत करने वाला नहीं होता तथा अपने अनुकूल करने वाला नहीं होता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह समाधिके विषयमें सशक्त होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु समाधिकी प्राप्तिमें कुशल होता है, समाधि-अवस्थामें रहनेमें कुशल होता है, समाधिसे उठनेमें कुशल होता है, सावधानीसे करने वाला होता है, सतत करने वाला होता है तथा अपने अनुकूल करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह समाधिके विषयमें सशक्त होता है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको बिना छोड़े प्रथम-ध्यानको प्राप्त कर विचरना असम्भव है। कौन-सी छह बातें? कामच्छन्द (=कामना), व्यापाद (=द्वेष), आलस्य-तन्द्रा, उद्धतपन-कौकृत्य, विचिकित्सा (=शक्कीपन) तथा काम भोगोंके

दुष्परिणामोंके बारेमें यथार्थ जानकारीका न होना। भिक्षुओ, इन छह बातोंको बिना छोड़े प्रथम-ध्यानको प्राप्तकर विचरना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे प्रथम-ध्यानको प्राप्तकर विचरना सम्भव है। कौन-सी छह बातें ? कामच्छन्द (=कामना), व्यापाद (=द्वेष), आलस्य-तन्द्रा, उद्धतपन-कौकृत्य, विचिकित्सा (=शक्कीपन) तथा काम-भोगोंके दुष्परिणामोंके बारेमें यथार्थ जानकारी का होना। भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे प्रथम ध्यानको प्राप्तकर विचरना सम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको बिना छोड़े द्वितीय-ध्यानको प्राप्तकर विचरना असम्भव है। कौन-सी छह बातें ? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क, काम-संज्ञा, व्यापाद-संज्ञा तथा विहिंसा-संज्ञा। भिक्षुओ, इन छह बातोंको बिना छोड़े द्वितीय-ध्यानको प्राप्तकर विचरना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे द्वितीय-ध्यानको प्राप्त कर विचरना सम्भव है। कौन-सी छह बातें ? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क, काम-संज्ञा, व्यापाद-संज्ञा तथा विहिंसा-संज्ञा। भिक्षुओ, इन छह बातोंको छोड़ देनेसे द्वितीय ध्यानको प्राप्तकर विचरना सम्भव है।

(८) अर्हत वर्ग

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं वह इस लोकमें दुखी रहता है, कष्ट पाता है, अनुतप्त होता है, जलता रहता है और उसके बारेमें यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटने पर वह दुर्गतिको प्राप्त होगा। कौन-सी छह बातें ? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क, विहिंसा-वितर्क, काम-संज्ञा, व्यापाद-संज्ञा, विहिंसा-संज्ञा। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह इस लोकमें दुखी रहता है, कष्ट पाता है, अनुतप्त होता है, जलता रहता है और उसके बारेमें यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटने पर वह दुर्गतिको प्राप्त होगा।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह इस लोकमें सुखी रहता है कष्ट नहीं पाता है, अनुतप्त नहीं होता है, जलता नहीं रहता है और उसके बारेमें यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटनेपर वह सुगतिको प्राप्त होगा। कौनसी छह बातें ? निष्काम-वितर्क, अव्यापाद-वितर्क, अविहिंसा-वितर्क, निष्काम-संज्ञा, अव्यापाद संज्ञा, अविहिंसा-संज्ञा। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह इस लोकमें सुखी रहता है, कष्ट नहीं पाता है, अनुतप्त नहीं होता है, जलता नहीं रहता है और उसके बारेमें यही समझना चाहिये कि शरीरके छूटनेपर वह सुगतिकोप्राप्त होगा।

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े अर्हत्वका साक्षात करना असम्भव है। कौन-सी छह बातें ? मान, ओमान(=हीनमान), अतिमान, अधिमान, स्तब्धता तथा अतिनिपात (=अपने आपको अत्यन्त तुच्छ समझना)। भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े अर्हत्वका साक्षात् करना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंके छोड़ देने पर अर्हत्वका साक्षात करना सम्भव है। कौनसी छह बातें ; मान, ओमान, अतिमान, अधिमान, स्तब्धता तथा अतिनिपात। भिक्षुओ, इन छह बातोंके छोड़ देनेपर अर्हत्वका साक्षात करना सम्भव है।

भिक्षुओ, इसकी सम्भावना नहीं है कि बिना इन छह बातोंको छोड़े कोई विशेष आर्य ज्ञान-दर्शनको प्राप्त करनेमें समर्थ हो, मनुष्योत्तर-धर्मका साक्षात कर सके। कौन-सी छह बातें ? मूढ़-स्मृति, असावधानी, इन्द्रियोंका असंयम, भोजनकी मात्रा न जानना, ढोंग तथा जबानकी लप-लपी। भिक्षुओ, इसकी सम्भावना नहीं है कि बिना इन छह बातोंको छोड़े कोई विशेष आर्य-ज्ञान-दर्शनको प्राप्त करनेमें समर्थ हो, मनुष्योत्तर धर्मका साक्षात कर सके।

भिक्षुओ, इसकी सम्भावना है कि इन छह बातोंको छोड़कर कोई, विशेष आर्य-ज्ञान-दर्शनको प्राप्त करनेमें समर्थ हो, मनुष्योत्तर-धर्मका साक्षात कर सके। कौन-सी छह बातें ? मूढ़-स्मृति, असावधानी, इन्द्रियोंका असंयम, भोजनकी मात्रा न जानना, ढोंग तथा जबानकी लपालपी। भिक्षुओ, इस की सम्भावना है कि इन छह बातोंको छोड़ कर कोई, विशेष आर्य-ज्ञान-दर्शन प्राप्त करनेमें समर्थ हो, मनुष्योत्तर-धर्मका साक्षात् कर सके।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह इसी जन्ममें सुखी प्रमुदित रहता है, और उसकी आस्रवोंको क्षय करनेकी तैयारी रहती है। कौन-सी छह बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु धर्ममें रमण करने वाला होता है, योगाभ्यास (=भावना) में रमण करने वाला होता है, प्रहाण (=त्याग) में रमण करने वाला होता है, प्रविवेक (=एकान्त) में रमण करने वाला होता है, अव्यापज्झ (=दुखरहित होना)में रमण करनेवाला होता है, निष्प्रपंच (=निर्वाण) में रमण करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती है, वह इसी जन्ममें सुखी प्रमुदित रहता है, और उसकी आस्रवोंको क्षय करनेकी तैयारी रहती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अप्राप्त कुशल-धर्मको प्राप्त करनेमें तथा प्राप्त कुशल-धर्मोंमें वृद्धि करनेमें असमर्थ होता है। कौन-सी छह बातें ? सद्गुणोंको आने देनेमें कुशल (=आय-कुशल) नहीं होता; दुर्गुणोंको जाने देनेमें

कुशल (= अपाय कुशल) नहीं होता; उपाय-कुशल भी नहीं होता; अप्राप्त-कुशल धर्मोंकी प्राप्तिके लिये उत्साह नहीं दिखाता; प्राप्त कुशल-धर्मों (= गुणों) को संभालकर नहीं देखता ; सतत प्रयत्नशील नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अप्राप्त कुशल-धर्मों (= गुणों) को प्राप्त करनेमें तथा प्राप्त कुशल-धर्मोंमें वृद्धि करनेमें असमर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती है, वह अप्राप्त कुशल-धर्मोंको प्राप्त करनेमें तथा प्राप्त कुशल-धर्मोंमें वृद्धि करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी छह बातें ? सद्गुणोंको आने देनेमें कुशल (= आय कुशल) होता है; दुर्गुणोंको जाने देनेमें कुशल (= अपाय कुशल) होता है; उपाय-कुशल होता है,; अप्राप्त कुशल धर्मोंकी प्राप्तिके लिये उत्साह दिखाता है; प्राप्त कुशल -धर्मों (= गुणों) को संभाल कर रखता है तथा सतत प्रयत्नशील होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अप्राप्त कुशल-धर्मोंको प्राप्त करनेमें तथा प्राप्त कुशल-धर्मोंमें वृद्धि करनेमें समर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह शीघ्र ही धर्मके विषयमें महानताको विपुलताको प्राप्त कर लेता है। कौन-सी छह बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु ज्ञानरूपी प्रकाशसे युक्त (= अलोक बहुल) होता है, योगाभ्यासी (= योग बहुल) होता है, प्रमुदित रहने वाला (= वेद बहुल) होता है, कुशल –धर्मोंके विषयमें असन्तुष्ट रहने वाला तथा जुआ न रखने वाला, उत्तरोत्तर प्रयत्नशील। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह शीघ्र ही धर्मके विषयमें महानता को, विपुलता को प्राप्त कर लेता है।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर नरकमें डाल दिया गया हो। कौनसी छह बातें ? हिंसा करनेवाला होता है, चोरी करने वाला होता है, व्यभिचार करनेवाला होता है, झूठ बोलने वाला होता है, बुरी इच्छाओं वाला होता है तथा मिथ्या-दृष्टि होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर नरकमें डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिय गया हो। कौन सी छह बातें ? हिंसा करने वाला नहीं होता है, चोरी करने वाला नहीं होता है, व्यभिचार करने वाला नहीं होता है,झूठ बोलने वाला नहीं होता है, बुरी इच्छाओं वाला नहीं होता है तथा मिथ्या-दृष्टि वाला नहीं

होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है, जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर नरकमें डाल दिया गया है। कौन-सी छह बातें? हिंसा करने वाला होता है, चोरी करने वाला होता है, व्यभिचार करने वाला होता है, झूठ बोलनेवाला होता है, लोभी होता है, असंयत (=प्रगल्भ) होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती है, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर नरकमें डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती है, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिया गया हो। कौनसी छह बातें? हिंसा करनेवाला नहीं होता है, चोरी करने वाला नहीं होता है. व्यभिचार करनेवाला नहीं होता है, झूठ बोलने वाला नहीं होता है, लोभी नहीं होता है, असंयत नहीं होता है। भिक्षुओ, जिस व्यक्तिमें ये छह बातें होती हैं, वह ऐसा ही होता है जैसे लाकर स्वर्गमें डाल दिया गया हो।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह श्रेष्ठ पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षु अश्रद्धावान् होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप–) भीरु नहीं होता है, आलसी होता है, दुष्प्रज्ञ होता है, तथा शरीर और जीवनके प्रति अपेक्षा-युक्त होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह श्रेष्ठ-पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह श्रेष्ठ पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके योग्य होता है,। कौन-सी छह बातें? भिक्षुओ, भिक्षु श्रद्धावान होता है, लज्जाशील होता है, (पाप–) भीरु होता है, आलस्य-रहित होता है, प्रज्ञावान् रहता है, तथा शरीर और जीवनके प्रति अपेक्षा-रहित होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह श्रेष्ठ-पद अर्हत्वको प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, उसके लिये जो भी रात-दिन आता है, उसमें कुशल-धर्मोंके प्रति उसकी हानि ही होती है, वृद्धि नहीं होती। कौनसी छह बातें? वह जैसे-तैसे चीवर, पिण्डपात, शयनासन, भैषज्य-परिष्कारको लेकर महेच्छ रहता है, दुखी रहता है, असन्तुष्ट रहता है; अश्रद्धावान् होता है, दुश्शील होता है, आलसी होता है, मूढ़-स्मृति होता है तथा दुष्प्रज्ञ होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, उसके लिये जो भी रात दिन आता है, उसमें कुशल-धर्मोंके प्रति उसकी हानि ही होती है, वृद्धि नहीं होती।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, उसके लिये जो भी रात-दिन आता है, उसमें कुशल-धर्मोंके प्रति उसकी वृद्धि ही होती है, हानि नहीं होती। कौन-सी छह बातें ? वह जैसे -तैसे चीवर, पिण्डपात, शयनासन, भैषज्य-परिष्कारोंको लेकर, महेच्छ नहीं होता, दुखी नहीं होता, संतुष्ट होता है, श्रद्धावान होता है, शीलवान् होता है, प्रयत्नशील होता है, स्मृतिमान् होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, उसके लिये जो भी रात-दिन आता है, उसमें कुशल-धर्मोंके प्रति उसकी वृद्धि ही होती है, हानि नहीं होती।

९. सीति वर्ग

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु जिस समय चित्तका निग्रह करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्तका निग्रह नहीं करता ; जिस समय चित्तका प्रग्रह (=प्रेरणा देना) करनेकी आवश्यकता होती है, वह चित्तका प्रग्रह नहीं करता; जिस समय चित्तको प्रमुदित करनेकी आवश्यकता होती है, चित्तको संप्रहर्षित (=प्रमुदित) नहीं करता तथा जिस समय चित्तको उपेक्षा-युक्त करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्तको उपेक्षा-युक्त नहीं करता, हीन-प्रवृत्ति वाला होता है; सत्काय-दृष्टिमें रत। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु, जिस समय चित्तका निग्रह करनेकी आवश्यकता होती है, चित्तका निग्रह करता है; जिस समय चित्तका प्रग्रह करनेकी आवश्यकता होती है, चित्तका प्रग्रह करता है; जिस समय चित्तको संप्रहर्षित (=प्रमुदित) करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्त को संप्रहर्षित (=प्रमुदित) करता है, जिस समय चित्तको उपेक्षायुक्त करनेकी आवश्यकता होती है, उस समय चित्तको उपेक्षायुक्त करता है, श्रेष्ठ-प्रवृत्तिवाला होता है तथा निर्वाणाभिरत। भिक्षुओ, जिस समय भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अनुपम शान्ति-भावका साक्षात्कार करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मों में सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें ? पाँच आनन्तरिय-कर्मोंसे युक्त होता है, मिथ्या दृष्टि (=क्लेशों) से युक्त होता है, (अकुशल-कर्म-) विपाकसे युक्त होता है, अश्रद्धावान् होता है, अप्रयत्नशील होता है तथा दुष्प्रज्ञ होता

है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्वँ प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौनसी छह बातें? पाँच आनन्तरिय–कर्मोंसे युक्त नहीं होता है, मिथ्या-दृष्टि (= क्लेशों) से युक्त नहीं होता है, (अकुशल-कर्म)–विपाकसे युक्त नहीं होता है, श्रद्धावान् होता है, प्रयत्नशील होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें? मातृ-हत्याकी होती है, पितृ-हत्याकी होती है, अर्हत्की हत्याकी होती है, दुष्ट-चित्तसे तथागतके शरीरमेंसे लहू बहाया होता है, संघ-भेद किया होता है तथा वज्र मूर्ख होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बातें? मातृ-हत्या नहीं की होती है, पितृ-हत्या नहीं की होती है, अर्हत्की हत्या नहीं की होती है, दुष्ट चित्तसे तथागतके शरीरमें से लहू नहीं बहाया होता है, संघ-भेद नहीं किया होता है, तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है। कौन-सी छह बातें? तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मकी देशनाके समय उसे न सुनना चाहता है, न कान देता है, न ज्ञान प्राप्तिके लिये चित्तको उपस्थित करता है, अनर्थको ग्रहण करता है, अर्थको त्याग देता है, (शासनसे) बेमेल क्षान्तिसे युक्त होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ भी कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके अयोग्य होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है। कौन-सी छह बातें? तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मकी देशनाके समय उसे सुनना चाहता है, उधर कान देता है, ज्ञान-प्राप्तिके लिये चित्तको उपस्थित करता है, अर्थको ग्रहण करता है, अनर्थको त्याग देता है,

(शासनसे) मेल खानेवाली क्षान्तिसे युक्त होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह धर्म सुनता हुआ, कुशल-धर्मोंमें सम्यकत्व प्राप्त करनेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, बिना छह बातोंका त्याग किये (सम्यक्) दृष्टिरूपी सम्पदा प्राप्त करना असम्भव है। कौन-सी छह बातोंका ? सत्काय-दृष्टिका, विचिकित्साका, शील-व्रत परामाशका, नरककी ओर ले जानेवाले रागका, नरककी ओर ले जानेवाले द्वेषका तथा नरककी ओर ले जानेवाले मोहका। भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंका त्याग किये (सम्यक्) दृष्टिरूपी सम्पदा प्राप्त करना असम्भव है।

भिक्षुओ, छह बातोंका त्याग कर देनेसे (सम्यक्) दृष्टिरूपी सम्पदा प्राप्त करना सम्भव है। कौन-सी छह बातोंका ? सत्काय-दृष्टिका, विचिकित्साका, शील-व्रत-परामाशका, नरक की ओर ले जानेवाले रागका, नरककी ओर ले जानेवाले द्वेषका, नरककी ओर ले जानेवाले मोहका। भिक्षुओ, छह बातोंका त्याग कर देनेसे (सम्यक्) दृष्टि रूपी सम्पदा प्राप्त करना सम्भव है।

भिक्षुओ, (सम्यक) दृष्टि प्राप्त मनुष्यमें यह छह बातें प्रहीण हो गई रहती हैं। कौन-सी छह बातें ? सत्काय-दृष्टि, विचिकित्सा, शील-व्रत परामाश, नरककी ओर ले जानेवाला राग, नरककी ओर ले जानेवाला द्वेष तथा नरककी ओर ले जानेवाला मोह। भिक्षुओ, (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त मनुष्यमें यह छह बातें प्रहीण हो गई रहती हैं।

भिक्षुओ, (सम्यक्)-दृष्टि मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह इन छह बातोंसे युक्त हो। कौन-सी छह बातोंसे ? सत्काय-दृष्टि, विचिकित्सा, शील-व्रत परामाश, नरककी ओर ले जाने वाला राग, नरककी ओर ले जानेवाला द्वेष, नरककी ओर ले जानेवाला मोह। भिक्षुओ, (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह इन छह बातोंसे युक्त हो।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें हैं। कौन-सी छह ? (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह शास्ताके प्रति आदर-रहित, गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह धर्मके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह संघके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह शिक्षाओंके प्रति आदर-रहित गौरव-रहित होकर विचरे। (सम्यक् –) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव

है कि वह वह पुनः अकरणीय बातोंकी ओर मुड़े। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह आठवाँ जन्म धारण करे। भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें हैं।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें हैं। कौन-सी छह? (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी भी संस्कारको 'नित्य' करके ग्रहण करे। (सम्यक्–) दृष्टि पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी भी संस्कारको 'सुख' करके ग्रहण करे। (सम्यक् –) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी भी संस्कृत अथवा असंस्कृत धर्मको 'आत्मा' करके ग्रहण करे। (सम्यक् –) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह पाँच आनन्तरिय-कर्मोंमेंसे कोई एक कर्म करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह भले-बुरे शकुनों (= मंगलों) से आत्म-शुद्धिकी आशा करे, (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह (बुद्ध) शासनके बाहर दक्षिणार्ह व्यक्तियोंको खोजे।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें हैं। कौन-सी छह? (सम्यक्)– दृष्टि प्राप्त मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह मातृ-हत्या करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त मनुष्यके लिये यह असम्भव है कि वह पितृ-हत्या करे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त मनुष्य के लिये यह असम्भव है कि वह अर्हत्की हत्या करे। (सम्यक्)– दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह दुष्ट चित्तसे तथागतके शरीरसे लहू बहाये। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह संघमें भेद पैदा करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त पुरुषके लिये यह असम्भव है कि वह किसी अन्य शास्ताका अनुगामी बने।

भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें हैं। कौन-सी छह? (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह स्वयंकृत सुख-दुक्खका अनुगमन करे। (सम्यक्)– दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह पर-कृत सुख-दुखका अनुगमन करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह स्वयं-कृत तथा पर-कृत सुख-दुक्खका अनुगमन करे। (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह अस्वयं-कृत हेतु-उत्पन्न सुख-दुक्ख का अनुगमन करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह अ-परंकृत हेतु-उत्पन्न सुख-दुक्खका अनुगमन करे। (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिके लिये यह असम्भव है कि वह अस्वयं-कृत अ-परंकृत हेतु-उत्पन्न सुख-दुक्खका अनुगमन करे। यह

किसलिये ? भिक्षुओ, (सम्यक्-) दृष्टि प्राप्त व्यक्तिको हेतुओंका तथा हेतुओंसे उत्पन्न धर्मों (=अवस्थाओं) का वैसा ही यथार्थ ज्ञान रहता है। भिक्षुओ, ये छह असम्भव बातें हैं।

१० आनिसंस वर्ग

भिक्षुओ, संसारमें इन छहका प्रादुर्भाव दुर्लभ है। किन छहका ? संसारमें तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका प्रादुर्भाव दुर्लभ है। संसारमें तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मका उपदेश करनेवालोंका प्रादुर्भाव दुर्लभ है। संसारमें मध्यमण्डल[1] (=आर्य-आयन) में जन्म-ग्रहण करना दुर्लभ है। संसारमें चक्षु आदि छह इन्द्रियोंका पूर्ण-स्वस्थ रहना (=अविकलता) दुर्लभ है। संसारमें अजड़ता, अमूर्खता दुर्लभ है। संसारमें कुशल-धर्म (=शुभ-बातों) में रुचि (=छन्द) दुर्लभ है। भिक्षुओ, संसारमें इन छह का प्रादुर्भाव दुर्लभ है।

भिक्षुओ, स्रोतापत्ति फलके साक्षात् करनेके छह शुभ-परिणाम हैं। कौनसे छह ? सद्धर्ममें स्थिर होता है, पतनोन्मुख नहीं रहता, मर्यादित जीवन होनेसे दुःखको प्राप्त नहीं होता, (पृथक जनोंकी अपेक्षा) असाधारण ज्ञानको प्राप्त होता है। धर्मों (=अवस्थाओं) का हेतु (=कारण) और उन हेतुओंसे उत्पन्न धर्म उसके द्वारा भली प्रकार दृष्ट (=ज्ञात) रहते हैं। भिक्षुओ, स्रोतापत्ति फलके साक्षात् करनेके छह शुभ-परिणाम हैं।

---

१. मध्यप्रदेशकी पूर्व दिशामें कजंगल (वर्तमान कंकजोल, जिला संथाल परगना (विहार), नामक कस्बा है, उसके बाद बड़े शाल (वन) हैं, और फिर आगे सीमान्त देश। मध्यमें सललवती (वर्तमान सिलई नदी, हजारीबाग और मेदनीपुर जिला) नामक नदी है, उसके आगे सीमान्त देश हैं।......दक्षिण दिशामें सेत-कण्णिक (हजारीबाग जिलमें कोई स्थान) नामक कस्बा है, उसके बाद सीमान्त देश हैं। पश्चिम दिशामें थून (थानेसर, कर्नाल जिला) नामक ब्राह्मणोंका ग्राम है, उसके बाद सीमान्त देश हैं। उत्तर दिशामें उशीरध्वज (हिमालयका कोई पर्वत-भाग) नामक पर्वत है, उसके बाद सीमान्त देश....हैं।....यह मध्यदेश (मध्य-मण्डल) लम्बाईमें ३०० योजन, छौड़ाईमें २५० योजन और घेरेमें ९०० योजन है। (देखो, राहुल सांकृत्यायन कृत बुद्ध चर्या पृष्ठ-१)।

भिक्षुओ, जो भिक्षु किसी भी संस्कारको 'नित्य' समझेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त करेगा—इसकी कोई सम्भावना नहीं है। जो अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त नहीं होगा, वह सम्यक्जीवी होगा—इसकी कोई सम्भावना नहीं है। जो सम्यक्-जीवी नहीं होगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल वा अर्हत्-फल प्राप्त करेगा—इसकी कोई सम्भावना नहीं है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु किसी भी संस्कारको 'नित्य' नहीं समझेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना है। जो अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त करेगा, वह सम्यक् जीवी होगा—इसकी सम्भावना है। जो सम्यक्-जीवी होगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल वा अर्हत् फल प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, जो भी भिक्षु किसी भी संस्कारको सुख करके देखेगा.....सब संस्कारोंको दुःख करके देखेगा.......इसकी संभावना है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु किसी भी धर्म (=मनके विषय) को आत्मा करके देखेगा......सभी धर्मों (=मनके विषयों) को अनात्मक करके देखेगा....इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, जो भिक्षु निर्वाण (=दुःखके एकान्तिक निरोध) को दुःख करके जानेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त कर सकेगा—इसकी सम्भावना नहीं। जो अनुकूल क्षान्तिको नहीं प्राप्त करेगा, वह सम्यक्जीवी होगा—इसकी सम्भावना नहीं। जो सम्यक्जीवी नहीं रहेगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल, अर्हत्-फलको प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना नहीं।

भिक्षुओ, जो भिक्षु निर्वाण (=दुःखके एकान्तिक निरोध) को सुख करके जानेगा, वह अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त कर सकेगा—इसकी सम्भावना है। जो अनुकूल क्षान्तिको प्राप्त कर सकेगा, वह सम्यक्जीवी होगा—इसकी सम्भावना है। जो सम्यक्जीवी होगा, वह स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल, अर्हत्-फलकी प्राप्त करेगा—इसकी सम्भावना है।

भिक्षुओ, छह शुभ परिणामोंको दृष्टिमें रखकर भिक्षुको चाहिए कि वह बिना अपवादके सभी संस्कारोंको 'अनित्य' करके जाने। कौनसे छह शुभ-परिणाम? मुझे सभी संस्कार अस्थिर (=अनवस्थित) प्रतीत होने लगेंगे, समस्त लोकमें मेरा मन कहीं आसक्त (=रमण) नहीं होगा, समस्त लोकसे मेरा मन अनासक्त हो जायेगा, मेरा मन निर्वाणाभिमुख हो जायेगा, मेरे संयोजनों (=चित्तके बन्धनों) का

प्रहाण हो जायेगा तथा मैं परम श्रामण्यसे युक्त होऊँगा। भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोंको दृष्टिमें रखकर भिक्षुको चाहिए कि वह बिना अपवादके सभी संस्कारोंको 'अनित्य' करके जाने।

भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोंको दृष्टिमें रखकर भिक्षुको चाहिए कि वह बिना अपवादके सभी संस्कारोंको "दुःख" करके जाने। कौनसे छह परिणामोंको? सभी संस्कारोंके प्रति मेरे मनमें वैराग्य (=निर्वेद) की भावना घर कर जायेगी जैसी कि उस वधिकके प्रति जो सिरपर तलवारे उठाये खड़ा हो। समस्त लोकमें मेरा मन कहीं आसक्त न होगा। निर्वाणको शान्त-स्वरूप करके देखूँगा। मेरे अनुशय (=चित्तके बन्धन) विनाशको प्राप्त होंगे। मैं कृतकृत्य होऊँगा। मेरे द्वारा तथागतकी मैत्री-पूर्ण सेवा की जायेगी। भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोंको दृष्टिमें रखकर भिक्षुको चाहिए कि वह बिना अपवादके सभी संस्कारोंको "दुःख" करके जाने।

भिक्षुओ, इन छह-शुभ परिणामोंको दृष्टिमें रखकर भिक्षुको चाहिये कि वह बिना अपवादके सभी धर्मों (=मनके विषयों) को "अनात्म" करके जाने। कौनसे छह शुभ परिणामोंको? मैं समस्त लोकके प्रति तृष्णा-रहित हो जाऊँगा। मेरे अहंकारका नाश होगा। मेरे ममत्वका विनाश हो जायगा। मैं असाधारण ज्ञानसे युक्त हो जाऊँगा। सभी धर्मों (=मनके विषयों) का हेतु मेरी दृष्टिमें आ जायगा और हेतुओंसे उत्पन्न सभी धर्म (=मनके विषय)। भिक्षुओ, इन छह शुभ परिणामोंको दृष्टिमें रखकर भिक्षुको चाहिये कि वह बिना अपवाद के सभी धर्मों (=मनके विषयों) को "अनात्म" करके जाने।

भिक्षुओ, इन तीन भवोंका प्रहाण करना चाहिये और इन तीन शिक्षाओंका अभ्यास करना चाहिये। किन तीन भवोंका प्रहाण करना चाहिये? काम-भव, रूप-भव तथा अरूप-भवका। इन तीन भवोंका प्रहाण करना चाहिये। किन तीन शिक्षाओं का अभ्यास करना चाहिये? शील सम्बन्धी शिक्षाका, चित्त सम्बन्धी शिक्षाका तथा प्रज्ञा सम्बन्धी शिक्षा का। इन तीन शिक्षाओंका अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, जब भिक्षुके ये तीन भव प्रहीण हो गये रहते हैं और जब उसने तीन शिक्षाओंका अभ्यास किया रहता है, तो उस भिक्षुके बारेमें कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, संयोजनोंका नाश कर दिया तथा मान (=अभिमान) का सम्पूर्ण उन्मूलन कर दुःखका अन्त कर दिया।

भिक्षुओ, इन तीन तृष्णाओंका प्रहाण करना चाहिये तथा इन तीन मानों (=अहंकारों) का। किन तीन तृष्णाओंका प्रहाण करना चाहिये? काम-तृष्णा,

भव -तृष्णा तथा विभव-तृष्णा, इन तीन तृष्णाओंका प्रहाण करना चाहिये। किन तीन मानोंका प्रहाण करना चाहिये? मान, हीन-मान (=ओमान) तथा अतिमान (=अभिमान) का। इन तीनों मानोंका प्रहाण करना का चाहिये। भिक्षुओ, जब भिक्षुकी तीनों प्रकारकी तृष्णाओं तथा तीनों प्रकारके मानोंका मूलोच्छेद हो गया रहता है, तो उस भिक्षुके बारेमें कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, संयोजनोंका नाश कर दिया तथा मान (=अभिमान) का संपूर्ण रूपसे उन्मूलन कर दुःखका अन्त कर दिया।

११. तिक वर्ग

भिक्षुओ, य तीन अवगुण (=धर्म) हैं। कौनसे तीन? राग, द्वेष तथा मोह। भिक्षुओ, ये तीन अवगुण-धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीन अवगुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन गुण-धर्मोंकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन धर्मोंकी? रागका प्रहाण करनेके लिये अशुभ-भावनाका अभ्यास करना चाहिये। द्वेषका प्रहाण करनेके लिये मैत्री-भावनाका अभ्यास करना चाहिये। मोह (=मूढ़ता) का प्रहाण करनेके लिये प्रज्ञाका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन अवगुण-धर्म हैं? कौनसे तीन? शारीरिक दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मनकी दुश्चरित्रता। भिक्षुओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन बातों (=धर्मों) का अभ्यास करना चाहिये। शारीरिक दुश्चरित्रताका प्रहाण करनेके लिये शारीरिक शुभ कर्मोंका अभ्यास करना चाहिये, वाणीकी दुश्चरित्रताके प्रहाणके लिये वाणीके शुभ-कर्मोंका अभ्यास करना चाहिये, मनकी दुश्चरित्रताके प्रहाणके लिये मनके शुभ कर्मोंका अभ्यास करना चाहिये भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये, इन तीन सद्गुणोंका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन धर्म हैं। कौनसे तीन? काम-वितर्क, व्यापाद-वितर्क (=क्रोध) तथा विहिंसा-वितर्क। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण-) धर्म हैं। भिक्षओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये। किन तीन सद्गुणोंकी? काम-वितर्कका प्रहाण करनेके लिये निष्काम-वितर्कका अभ्यास करना चाहिये, व्यापाद-वितर्कका प्रहाण करनेके लिये अव्यापाद (=अक्रोध) -वितर्कका अभ्यास करना चाहिये, विहिंसा-वितर्कके प्रहाणके लिये अविहिंसा-वितर्क का अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन धर्म हैं। कौनसे तीन? काम-संज्ञा, व्यापाद-संज्ञा, विहिंसा-संज्ञा। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये। किन तीन सद्-गुणोंकी? काम-संज्ञाका प्रहाण करनेके लिये निष्काम-संज्ञाकी, व्यापाद-संज्ञाका प्रहाण करनेके लिये अव्यापाद-संज्ञाकी तथा विहिंसा-संज्ञाका प्रहाण करनेके लिये अविहिंसा-संज्ञाकी भावना करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीनों सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? काम-धातु, व्यापाद-धातु, विहिंसा-धातु। भिक्षुओ ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये। किन तीन सद्गुणोंकी? काम-धातुके प्रहाणके लिये निष्काम-धातुकी, व्यापाद-धातुके लिये अव्यापाद-धातुकी, विहिंसा-धातुके लिये अविहिंसा-धातुकी। भिक्षुओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? आस्वाद-दृष्टि, आत्म-दृष्टि, तथा मिथ्या-दृष्टि। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिए। कौनसे तीन सद्गुणोंकी? आस्वाद-दृष्टिके प्रहाणके लिये अनित्य-संज्ञाकी भावना करनी चाहिये, आत्म-दृष्टिके प्रहाणके लिये अनात्म-संज्ञाकी भावना करनी चाहिये, तथा मिथ्या-दृष्टिके प्रहाणके लिये सम्यक्-दृष्टिकी भावना करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? अरुचि, विहिंसा तथा अधर्म-चर्या। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीनों दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन सद्गुणोंकी? अरुचि (=अरति) का प्रहाण करनेके लिये मुदिता (=प्रसन्नता)की भावना करनी चाहिये, विहिंसाका प्रहाण करनेके लिये अविहिंसाकी भावना करनी चाहिये, अधर्म-चर्याका प्रहाण करनेके लिये धर्म-चर्याकी भावना (=अभ्यास) करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन? असन्तोष, अजागरूकता

(—असम्पजञ्ञं) तथा महेच्छता। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन सद्गुणोंकी ? असंतोषका प्रहाण करनेके लिये संतोषकी भावना करनी चाहिये, अजागरूकता (= असम्पजञ्ञं) के प्रहाणके लिये जागरूकताकी भावना करनी चाहिये तथा महेच्छताके प्रहाणके लिये अल्पेच्छताकी भावना करनी चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये, इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन ? दुर्वच होना, कुसंगति तथा चित्तका विक्षिप्त होना। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंकी भावना करनी चाहिये। कौनसे तीन सद्गुणोंकी ? दुर्वच होनेका प्रहाण करनेके लिये सुवचता (= विनम्रता) का अभ्यास करना चाहिये, कुसंगतिका प्रहाण करनेके लिये सत्संगतिका अभ्यास करना चाहिये, तथा चित्तके विक्षेपका प्रहाण करनेके लिये आनापान स्मृति (= स्वास पर ध्यान देना) का अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये इन तीन सद्गुणोंका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। कौनसे तीन ? उद्धतपन, असंयम तथा प्रमाद। भिक्षुओ, ये तीन (अवगुण–) धर्म हैं। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये तीन सद्गुणोंका अभ्यास करना चाहिये। कौनसे तीन सद्गुणोंका ? उद्धतपनका प्रहाण करनेके लिये शमथ-भावनाका अभ्यास करना चाहिये, असंयमके प्रहाण करनेके लिये संयमका अभ्यास करना चाहिये तथा प्रमादके प्रहाण करनेके लिये अप्रमादका अभ्यास करना चाहिये। भिक्षुओ, इन तीन दुर्गुणोंका प्रहाण करनेके लिये, इन तीन सद्गुणोंका अभ्यास करना चाहिये।

१२. श्रामण्य वर्ग

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े कायमें कायानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है। कौन-सी छह बातें ? कार्योंमें अत्यधिक संलग्नता, गप्पबाजी, निद्रा-प्रिय होना, संगति-प्रिय होना, इन्द्रियोंका असंयम तथा भोजनमें मात्रज्ञ न होना। भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े कायमें कायानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है।

भिक्षुओ, इन छह बातोंका त्याग कर देनेसे कायमें कायानुपश्यी होकर विहार करना सम्भव है। कौन-सी छह बातों का ? कार्योंमें अत्यधिक संलग्नताका,

गप्पबाजीका, निद्रा-प्रियताका, संगति-प्रियताका, इन्द्रियोंके असंयमका तथा भोजनमें अमात्रज्ञ होनेका। भिक्षुओ, इन छह बातोंका त्याग कर देनेसे कायमें कायानुपश्यी होकर विहार करना सम्भव है।

भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े अपने भीतरी-तौरपर कायमें कायानुपश्यी ..... बाहरी तौरपर कायमें ..... भीतरी-बाहरी तौरपर .... अपने भीतरी तौरपर वेदनामें वेदनानुपश्यी ...... बाहरी तौरपर वेदनामें ..... भीतरी-बाहरी तौरपर ...... अपने भीतरी-तौरपर चित्तमें चित्तानुपश्यी ...... बाहरी तौरपर चित्तमें ..... भीतरी-बाहरी तौरपर .... अपने भीतरी-तौरपर धर्मों (=चित्तके विषयों) में धर्मानुपश्यी ...... बाहरी तौरपर धर्मोंमें .... भीतरी-बाहरी तौरपर धर्मोंमें धर्मानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है। कौन-सी बातोंको? कार्योंमें अत्यधिक संलग्नताको, गप्पबाजीको, निद्रा-प्रियताको, संगति-प्रियताको, इन्द्रियोंके असंयमको तथा भोजनमें अमात्रज्ञ होनेको। भिक्षुओ, बिना इन छह बातोंको छोड़े भीतरी-बाहरी तौरपर धर्मोंमें धर्मानुपश्यी होकर विहार करना असम्भव है।

भिक्षुओ, तपुस्स गृहपतिमें ये छह गुण हैं, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत-दर्शी है, अमृतका साक्षात्कार कर विहार करता है। कौन-सी बातें? बुद्धके प्रति निश्चल श्रद्धासे युवत है, धर्मके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, संघके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, आर्य-शीलसे युक्त है, आर्य-ज्ञानसे युक्त है तथा आर्य-विमुक्तिसे युक्त है। भिक्षुओ, तपुस्स गृहपतिमें ये छह गुण हैं, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत-दर्शी है, अमृतका साक्षात्कार कर विहार करता है।

भिक्षुओ, भल्लिक गृहपतिमें ये छह गुण हैं...... सुदत्त अनाथपिण्डिक गृहपतिमें .... चित्त मच्छिका सण्डिक गृहपतिमें ...... हत्थक आळवक ..... महानाम शाक्यमें ...... उग्ग वेसालिक (=वैशालीके) गृहपतिमें ...... उग्गत गृहपतिमें .... सूर अम्बट्ठमें .... जीवक कौमारभृत्यमें ...... नकुलपिता गृहपतिमें .... तवकण्णिक गृहपतिमें .... पूरण गृहपतिमें .... इसिदत्त गृहपतिमें ...... सन्धान गृहपतिमें .... विचय गृहपतिमें ..... विजय माहिक गृहपतिमें ...... मेण्डक गृहपतिमें ...... वासेट्ठ उपासकमें ..... अरिट्ठ उपासकमें तथा सारग्ग उपासकमें ये छह गुण हैं, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत-दर्शी है, अमृतका साक्षात्कर विहार करता है। कौन-सी छह बातें? बुद्धके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, धर्मके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है

संघके प्रति निश्चल श्रद्धासे युक्त है, आर्य-शीलसे युक्त है, आर्य-ज्ञानसे युक्त है तथा आर्य-विमुक्तिसे युक्त है। भिक्षुओ, सारग उपासकमें ये छह गुण हैं, जिनके होनेसे वह तथागतके प्रति निष्ठावान् है, अमृत दर्शी है, अमृतका साक्षात्कार कर विहार करता है।

(१३) राग पेय्याल

भिक्षुओ, रागके प्रहाण (= अभिञ्ञा = यथार्थ जानकारी) के लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिए। किन छह बातोंका? सर्वोत्तम दर्शनका, सर्वोत्तम श्रवणका, सर्वोत्तम लाभका, सर्वोत्तम शिक्षाका, परिचर्य्यका तथा सर्वोत्तम अनुश्रुतका। भिक्षुओ, रागके प्रहाणके लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, रागके प्रहाण (= अभिज्ञान) के लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिए। किन छह बातोंका? बुद्धानुस्मृतिका, धर्मानुस्मृतिका, संघानुस्मृतिका, शीलानुस्मृतिका, त्यागानुस्मृतिका तथा देवतानुस्मृतिका। भिक्षुओ, रागके प्रहाण (= अभिज्ञान) के लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, रागके प्रहाण (= अभिज्ञान) के लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिये। कौन-सी छह बातोंका? अनित्य-संज्ञाका, अनित्यके प्रति दुःख-संज्ञाका, दुःखके प्रति अनात्मसंज्ञाका, प्रहाण-संज्ञाका, वैराग्य-संज्ञाका तथा निरोध-संज्ञाका। भिक्षुओ, रागके प्रहाणके लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, रागके परिज्ञानके लिये,..... परिक्षयके लिये...... प्रहाणके लिये.... क्षयके लिये... व्ययके लिये.... विरागके लिये..... निरोधके लिये ....त्यागके लिये...परित्यागके लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिए।

भिक्षुओ, द्वेषके..... मोहके..... क्रोधके..... शत्रुताके.... ढोंग... (= मुक्ष) के...... निर्दयता (= पळास) के.....ईर्षाके...... मात्सर्यके ...... मायाके..... शठताके...... स्तब्धताके..... कलहके..... मानके... .. अतिमानके.... मदके... प्रमादके... परिज्ञानके लिये... परिक्षयके लिये.... ..... प्रहाणके लिये...... क्षयके लिये..... व्ययके लिये..... विरागके लिये ...... निरोधके लिये...... त्यागके लिये.....परित्यागके लिये इन छह बातोंका अभ्यास करना चाहिये।

भगवान्ने यह कहा। उन भिक्षुओंने प्रमुदित मनसे भगवान्के कथनका समर्थन किया।

सातवाँ निपात

(१) धन वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीके अनाथपिण्डिकके जेतवनारामनें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ !" उन भिक्षुओंने भगवान्को प्रतिवचन दिया—" भदन्त !" भगवान्ने ऐसा कहा—

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होतीं हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोंका अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नहीं रहता। कौन-सी सात बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला होता है, सत्कारकी इच्छा करनेवाला होता है, प्रसिद्धि (=अनवञ्ञति) की इच्छा करनेवाला होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप–) भीरु नहीं होता, पापेच्छ होता है तथा मिथ्या-दृष्टि रखता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोंका अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नहीं रहता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोंका प्रिय होता है, उन्हें अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है। कौन-सी सात बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला नहीं होता है, सत्कारकी इच्छा करनेवाला नहीं होता है, प्रसिद्धिकी इच्छा करनेवाला नहीं होता है, लज्जा-शील होता है, (पाप–) भीरु होता है, अल्पेच्छ होता है तथा सम्यक्-दृष्टि रखनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोंका प्रिय होता है, उन्हें अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोंका अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नहीं रहता। कौन-सी सात बातें? भिक्षुओं, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला होता है, सत्कारकी इच्छा करनेवाला होता है, प्रसिद्धि (=अनवञ्ञत्ति) की इच्छा करनेवाला होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप–) भीरु नहीं होता, ईर्ष्या करनेवाला होता है तथा कंजूस होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोंका अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उनके गौरव तथा आदरका भाजन नहीं रहता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्मचारियोंका प्रिय होता है, उन्हें अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है। कौन-सी सात बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा करनेवाला नहीं होता है, सत्कारकी इच्छा करने वाला नहीं होता, प्रसिद्धिकी इच्छा करनेवाला नहीं होता, हैं लज्जा-शील होता है, (पाप–) भीरु होता है, ईर्ष्या करने वाला नहीं होता तथा कंजूस नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह अपने स-ब्रह्म-चारियोंका प्रिय होता है, उन्हें अच्छा लगता है, उनके गौरव तथा आदरका भाजन होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीके अनाथपिण्डिकके चेत-वनाराममें विहार करते थे।.......। भिक्षुओ, ये सात बल हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, लज्जा-बल, (पाप–) भीरुता बल, स्मृति-बल, समाधि-बल तथा प्रज्ञा-बल। भिक्षुओ, ये सात बल हैं।

सद्धाबलं विरियं च, हिरी ओतप्पियं बलं।
सतिबलं समाधि च, पञ्जा वे सत्तमं बलं॥
एतेहि बलवा भिक्खु, सुखं जीवति पण्डितो।
योनिसो विचिने धम्मं, पञ्जायत्थं विपस्सति।
पज्जोतस्सेव निब्बानं, विमोक्खो होति चेतसो॥

[श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, लज्जा-बल, (पाप–) भीरुता-बल, स्मृति-बल, समाधि-बल, तथा सातवाँ प्रज्ञा-बल। जो भिक्षु इन बलोंसे बलवान् होता है, वह पण्डित (भिक्षु) सुखपूर्वक जीता है। वह सम्यक् प्रकारसे धर्मोंका विचार करता है और प्रज्ञासे परीक्षण करता है। उसे प्रदीप (के बुझने) के समान निर्वाण प्राप्त होता तथा उसका चित्त विमुक्त होता है।]

भिक्षुओ, ये सात बल हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-बल, वीर्य-बल, लज्जा-बल, (पाप–) भीरुता-बल, स्मृति-बल, समाधि-बल तथा प्रज्ञा-बल।

भिक्षुओ, श्रद्धा-बल किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक श्रद्धावान् होता है, तथागतके बोधि-लाभके प्रति श्रद्धावान् होता है—यह भी वे भगवान् अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं........देव-मनुष्योंके शास्ता, भगवान बुद्ध हैं। भिक्षुओ, इसे श्रद्धा-बल कहते हैं।

भिक्षुओ, वीर्य-बल किसे कहते हैं! भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अकुशल धर्मों (= अशुभ-कर्मों) का प्रहाण करनेके लिये, कुशल-धर्मों (= शुभ-कर्मों) का सम्पादन

करनेके लिये प्रयत्नशील होता है। वह कुशल-धर्मोंके प्रति दृढ़ पराक्रमी होता है। भिक्षुओ, यह वीर्य-बल कहलाता है।

भिक्षुओ, लज्जा-बल किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक लज्जा-शील होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे दुष्कर्म करते हुए लज्जा अनुभव करता है, पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमें लज्जा-शील होता है। भिक्षुओ, इसे लज्जा-बल कहते हैं।

भिक्षुओ, (पाप–) भीरुता-बल किसे कहते हैं! भिक्षुओ, आर्य-श्रावक (पाप–) भीरु होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे पाप-कर्म करनेमें भय मानता है, पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमें भयका अनुभव करता है। भिक्षुओ, इसे (पाप–) भीरुता बल कहते हैं।

भिक्षुओ, स्मृति-बल किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक स्मृतिमान होता है, स्मृति-ज्ञानसे युक्त; उसे चिरकाल पूर्व कहा गया (वचन) चिरकालपूर्व किया गया (कार्य) भी स्मरण रहता है, अनुस्मरण रहता है। भिक्षुओ, इसे स्मृति-बल कहते हैं।

भिक्षुओ, समाधि-बल किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक काम-भोगों से पृथक ....चतुर्थ ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह समाधि -बल कहलाता है।

भिक्षुओ, प्रज्ञा-बल किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक उदय-व्यय सम्बन्धी प्रज्ञासे युक्त होता है, आर्य बींधनेवाली प्रज्ञासे युक्त होता है और युक्त होता है सम्यक् दुःखका क्षय करनेवाली प्रज्ञासे। भिक्षुओ, यह प्रज्ञा-बल कहलाता है। भिक्षुओ, ये सात बल हैं—

सद्धाबलं विरियं च, हिरी ओत्तप्पियं बलं,
सति बलं समाधि च, पञ्ञा वे सत्तमं बलं॥
एतेहि बलवा भिक्खु, सुखं जीवति पण्डितो।
योनिसो विचिने धम्मं, पञ्ञायत्थं विपस्सति।
पज्जोतस्सेव निब्बानं, विमोक्खो होति चेतसो॥

(अर्थ ऊपर आ ही गया है।)

भिक्षुओ, ये सात धन हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप–) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा प्रज्ञा-धन।

भिक्षुओ ये सात धन हैं:—

"सद्धाधनं सीलधनं, हिरी ओत्तप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं।।
यस्स एते धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा।
अदलिद्दो ति तं आहु, अमोघं तस्स जीवितं।
तस्यासद्धं च सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं।"

[श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप–) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा सातवाँ प्रजा-धन। जिस स्त्री या पुरुषके पास ये धन हों, वह 'दरिद्र' नहीं है। उसका जीवन सफल है। इसलिये आदमीको चाहिए कि वह बुद्धोंके अनुशासनका स्मरण कर श्रद्धा, शील, प्रसाद (=प्रीति) तथा धर्म दर्शनमें अनुयुक्त हो।]

भिक्षुओ, ये सात धन हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप–) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा प्रज्ञा-धन।

भिक्षुओ, श्रद्धा-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक श्रद्धावान होता है, तथागतके बोधि-लाभके प्रति श्रद्धावान् होता है—ये भी वे भगवान् अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं.........देवताओंके शास्ता, भगवान् बुद्ध हैं। भिक्षुओ, इसे श्रद्धा-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, शील-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक हिंसासे विरत होता है......सुरा, मेरय, मद्य आदि नशीली वस्तुओंका सेवन करनेसे विरत होता है। भिक्षुओ, इसे शील-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, लज्जा-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक लज्जा-शील होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे दुष्कर्म करते हुए लज्जा अनुभव करता है, पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमें लज्जा-शील होता है। भिक्षुओ, इसे लज्जा-धन कहते हैं। भिक्षुओ, (पाप–) भीरुता धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक (पाप–) भीरु होता है, वह शरीरसे, वाणीसे तथा मनसे पाप कर्ममें भय मानता है; पापी अशुभ-कर्मोंके करनेमें भयका अनुभव करता है। भिक्षुओ, इसे (पाप–) भीरुता धन कहते हैं।

भिक्षुओ, श्रुत-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक बहु-श्रुत होता है, श्रुतका धारण करनेवाला, श्रुतका संग्रह करनेवाला। जो धर्म आदि, मध्य तथा अन्तमें कल्याण कारक है, जो सार्थ, सव्यञ्जन-धर्म केवल परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य (=श्रेष्ठ जीवन) का स्तवन करते हैं, वैसे धर्मोंको इस आर्य-श्रावकने बहुत सुना

होता है, बहुत धारणा किया होता है, वाणीसे परिचित किया होता, मनसे परीक्षण किया होता है तथा दृष्टिसे बींध कर देखा होता है। भिक्षुओ, इसे श्रुत-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, त्याग-धन किसे कहते हैं। भिक्षुओ, आर्य-श्रावक कंजूसपनका त्याग कर गृहस्थ जीवन व्यतीत करता है, त्यागी होता है, खुले हाथ वाला होता है, परित्याग-शील होता है, दाता होता है, उदारतापूर्वक दान देनेवाला होता है। भिक्षुओ, इसे त्याग-धन कहते हैं।

भिक्षुओ, प्रज्ञा-धन किसे कहते हैं? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक प्रज्ञावान् होता है........सम्यक् दुःखका क्षय करनेवाली प्रज्ञासे। भिक्षुओ, ये सात धन हैं:—

सद्धाधनं सीलधनं, हिरी ओत्तप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं॥
यस्स एता धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा।
अदलिद्दो ति तं आहु, अमोघं तस्स जीवितं॥
तस्या सद्धं च सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं॥

(अर्थ ऊपर आ ही गया है।)

तब उग्ग (= उग्र) नामक राज-महामात्य[1] जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उग्र राज-महामात्यने भगवान्से यह कहा—

"भन्ते आश्चर्य्य है। भन्ते! अद्भुत है। भन्ते! इस रोहणेय्य मिगारके पास कितना धन है! कितना ऐश्वर्य है!"

"उग्र! रोहणेय्य मिगारके पास कितना धन है? कितना ऐश्वर्य है?"

भन्ते रूपयोंका तो कहना ही क्या, शत-सहस्र (= लाखों) हिरण्य (= सोनेके सिक्के) हैं।"

"उग्र! क्या यह 'धन' है? मैं कहता हूँ कि यह 'धन' नहीं है। उग्र! यह जो 'धन' है, यह अग्निके लिये, पानीके लिये, राजाओंके लिये, चोरोंके लिये तथा अप्रिय उत्तराधिकारियोंके लिये 'सामान्य' है। हे उग्र! ये सात 'धन' ऐसे हैं जो अग्निके लिये, पानीके लिये, राजाओंके लिये, चोरोंके लिये तथा अप्रिय उत्तरा-

१. कोशल-नरेश प्रसेनजित्का महामात्य।

धिकारियोंके लिये 'असामान्य' हैं। कौनसे सात? श्रद्धा-धन, शील-धन, लज्जा-धन, (पाप–) भीरुता धन, श्रुत-धन, त्याग-धन तथा प्रज्ञा धन। उग्र! ये सात 'धन' ऐसे हैं जो आगके लिये, पानीके लिये, राजाओंके लिये, चोरोंके लिये तथा अप्रिय उत्तराधिकारियोंके लिये असामान्य हैं।

सद्धाधनं सीलधनं, हिरी ओतप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं॥
यस्स एते धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा
स वे महद्धनो लोके, अजेय्यो देवमानुसे॥
तस्मा सद्धंच सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं॥

(श्रद्धा-धन, शील-धन .... तथा सातवाँ प्रज्ञा-धन। जिस स्त्री या पुरुषके पास ये धन हों, वही संसारमें महाधनवान है, और वह देव-मनुष्य लोकमें अजेय होता है। इसलिये आदमीको .... धर्म-दर्शनमें अनुयुक्त हो।)

भिक्षुओ, ये सात संयोजन हैं। कौनसे सात? अनुनय-संयोजन, पटिघ संयोजन, दृष्टि संयोजन, विचिकिच्छा संयोजन, मान संयोजन, भवराग-संयोजन, अविद्या संयोजन—भिक्षुओ, ये सात संयोजन हैं।

भिक्षुओ, इन सातों संयोजनों (=चित्तके बन्धनों) का प्रहाण करनेके लिये, नाश करनेके लिये ब्रह्मचर्य्य (=श्रेष्ठ जीवन) व्यतीत किया जाता है। कौनसे सात संयोजनोंका? अनुनय संयोजन (=कामराग)का प्रहाण करनेके लिये, नाश करनेके लिये, ब्रह्मचर्य्य-वास किया जाता है। पटिघ (=द्वेष) संयोजनका ..... (मिथ्या) दृष्टि-संयोजनका .... विचिकित्सा संयोजनका ...... मान संयोजनका..... भवराग संयोजनका, अविद्या संयोजनका नाश करनेके लिये, ब्रह्मचर्य-वास किया जाता है। भिक्षुओ, इन सात संयोजनोंके प्रहाण के लिये, नाशके लिये ब्रह्मचर्य्य-वास किया जाता है। भिक्षुओ, क्योंकि भिक्षुका अनुनय संयोजन प्रहीण हुआ रहता है, जड़-मूलसे नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड़ वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अभाव प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नहीं रहती है; पटिघ संयोजन .... दृष्टि संयोजन, ... विचिकिच्छा संयोजन ...... मानसंयोजन.... .... भवराग संयोजन .... अविद्या संयोजन प्रहीण हुआ रहता है, जड़-मूलसे नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड़-वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अभाव प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नहीं रहती है, इसलिए, भिक्षुओ उस भिक्षुके बारेमें

कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, संयोजनोंसे मुक्त हो गया, मानका सम्यक् मर्दन करके दुःखके क्षयको प्राप्त हो गया।

भिक्षुओ, ये सात संयोजन हैं। कौनसे सात? अनुनय संयोजन, पटिघ संयोजन, दृष्टि संयोजन, विचिकिच्छा संयोजन, मान संयोजन, इर्ष्या-संयोजन, मात्सर्य संयोजन। भिक्षुओ, ये सात संयोजन हैं।

२. अनुशय वर्ग

भिक्षुओ, सात अनुशय हैं। कौनसे सात? कामराग-अनुशय, पटिघ-अनुशय, दृष्टि-अनुशय, विचिकित्सा-अनुशय, मानानुशय, भवराग-अनुशय, अविद्या-अनुशय। भिक्षुओ, ये सात अनुशय हैं।

भिक्षुओ, इन सातों अनुशयोंके प्रहाणके लिये, नाशके लिये, ब्रह्मचर्य-वास किया जाता है। कौनसे सात संयोजनोंका? कामराग-अनुशयके प्रहाणके लिये, नाशके लिये ब्रह्मचर्य-वास किया जाता है, पटिघ-अनुशयके .... दृष्टि-अनुशयके .... विचिकित्सा-अनुशयके ...... मानानुशयके ...... भवराग-अनुशयके ...... अविद्या-अनुशयके प्रहाणके लिये, नाशके लिये ब्रह्मचर्य वास किया जाता है।

भिक्षुओ, क्योंकि भिक्षुका कामराग-अनुशय प्रहीण हुआ रहता है, जड़-मूल से नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड़-वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अभाव-प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नहीं रहती है; पटिघ-अनुशय ...... दृष्टि अनुशय ...... विचिकित्सा-अनुशय ...... मानानुशय .... भवरागानुशय ... . अविद्यानुशय प्रहीण हुआ रहता है, जड़-मूलसे नष्ट हो गया रहता है, कटे ताड़-वृक्षके सदृश हो गया रहता है, अमाव-प्राप्त हो गया रहता है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नहीं रहती है, इसलिए भिक्षुओ, उस भिक्षुके बारेमें कहा जाता है कि उसने तृष्णाका उच्छेद कर दिया, संयोजनोंसे मुक्त हो गया, मानका सम्यक् मर्दन करके दुःखके क्षयको प्राप्त हो गया।

भिक्षुओ, जिस (गृहस्थ-) कुलमें ये सात बातें हों, यदि उसके पास जाना न हुआ हो, तो समीप नहीं जाना चाहिए, यदि पास जाना हुआ हो, तो समीप नहीं बैठना चाहिए। कौन-सी सात बातें? प्रसन्न-मनसे उठकर स्वागत न किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे अभिवादन न किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे बैठनेके लिये आसन न दिया जाता हो, (वस्तु) रहनेपर भी छिपाई जाती हो, बहुत रहनेपर भी थोड़ी दी जाती हो, प्रणीत (= बढ़िया) रहनेपर भी रुक्ष (= घटिया) पदार्थ दिया जाता हो, तथा आदर-पूर्वक नहीं अनादर-पूर्वक दिया जाता हो।

भिक्षुओ, जिस (गृहस्थ–) कुलमें ये सात बातें हों, यदि उसके पास जाना न हुआ हो, तो समीप जाना चाहिए; यदि पास जाना हुआ हो, तो समीप बैठना चाहिए। कौन-सी सात बातें ? प्रसन्न-मनसे उठकर स्वागत किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे अभिवादन किया जाता हो, प्रसन्न-मनसे बैठनेके लिये आसन दिया जाता हो, (वस्तु) रहनेपर छिपाई न जाती हो, बहुत रहनेपर थोड़ी न दी जाती हो, प्रणीत (=बढ़िया) पदार्थ रहनेपर रुक्ष (=घटिया) न दिया जाता हो तथा अनादर-पूर्वक नहीं, आदर-पूर्वक दिया जाता हो। भिक्षुओ, जिस (गृहस्थ–) कुलमें ये सात बातें हों, यदि उसके पास जाना न हुआ हो, तो समीप जाना चाहिए, यदि पास जाना हुआ हो, तो समीप बैठना चाहिए।

भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं, स्वागत करने योग्य हैं, दक्षिणार्ह हैं, हाथ जोड़ने योग्य हैं तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं। कौनसे सात? उभतो भाग विमुत्तो (=रूप-काय तथा नाम-कायसे विमुक्त); पञ्ञा विमुत्तो- (=प्रज्ञा-विमुक्त); काय सक्खी (=आठों विमोक्षोंको कायसे स्पर्श करके विचरने-वाला), दिट्ठिपत्तो (=सम्यक्-दृष्टि प्राप्त); सद्धाविमुक्तो (=श्रद्धासे विमुक्त) धम्मानुसारी (=धर्मका अनुसरण करनेवाला) तथा सद्धानुसारी (=श्रद्धा का अनुसरण करने वाला)। भक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं, स्वागत करने योग्य हैं, दक्षिणार्ह हैं, हाथ जोड़ने योग्य हैं तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं।

भिक्षुओ, लोकमें ये सात आदमी पानी (की उपमा) के समान विद्यमान हैं। कौनसे सात ? भिक्षुओ, एक आदमी जो निमग्न हुआ (=डूबा) सो निमग्न ही रहता है, भिक्षुओ, एक आदमी ऊपर आकर फिर डूब जाता है; भिक्षुओ, एक आदमी ऊपर आकर पानीके ऊपर स्थित रहता है; भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर आकर देखता-भालता है, भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर आकर तैरता है; भिक्षुओ एक आदमी पानीके ऊपर तैरकर स्थान विशेष पर पहुँच कर रुक जाता है, भिक्षुओ, एक आदमी (=ब्राह्मण) ऊपर आकर, तैरकर, पार जाकर स्थलपर खड़ा होता है।

भिक्षुओ, एक आदमी एक बार डूबा, डूबा ही कैसे रहता है ? भिक्षुओ, एक आदमी पूर्ण रूपसे अशुभ कर्मोंसे ही युक्त रहता है। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी एक बार डूबा, डूबा हुआ ही रहता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आकर फिर डूब जाता है ? भिक्षुओ एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मों (=शुभ कर्मों) के प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है, . . . लज्जा होना अच्छी बात होती है, . . .

वीर्य होना अच्छी बात होती है . . . .कुशल धर्मोंके प्रति प्रीत प्रज्ञा होना, अच्छी बात होती है। उसकी वह श्रद्धा न स्थिर रहती है, न बढ़ती ही है, वह घटती ही है। उसकी वह लज्जा. . . उसकी वह (पाप–) भीरुता. . . उसका वह वीर्य. . . उसकी वह प्रज्ञा न स्थिर रहती है, न बढ़ती है, , वह घटती ही है। भिक्षुओ, इस प्रकार एक आदमी पानीसे ऊपर आकर फिर डूब जाता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आकर कैसे स्थिर रहता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोंके प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है,. . . .लज्जा होना अच्छी बात होती है, (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है. . . वीर्य होना अच्छी बात होती है. . . कुशल धर्मोंके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। उसकी वह श्रद्धा न कम होती है, न बढ़ती है, स्थिर रहती है। उसकी वह लज्जा. . . उसकी वह (पाप–) भीरुता. . . उसका वह वीर्य. . . उसकी वह प्रज्ञा न कम होती है, न बढ़ती है, स्थिर रहती है। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी पानीसे ऊपर आकर स्थिर रहता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आकर कैसे देखता-भालता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोंके प्रति-श्रद्धा होना अच्छी बात होती है,. . . . लज्जा होना अच्छी बात होती है. . . . (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है,. . . . वीर्य होना अच्छी बात होती है. . . .कुशल-धर्मोंके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। तीन संयोजनोंका क्षय हो जानेसे वह स्रोता-पन्न हो जाता है, पतनोन्मुख नहींरहता, उसकी बोधि-प्राप्ति निश्चित हो जाती है। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी पानीके ऊपर आकर देखता-भालता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर आकर तैरता कैसे है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोंके प्रति श्रद्धा होनी अच्छी बात होती है......लज्जा होना अच्छी बात होती है...... (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है. . . .वीर्य होना अच्छी बात होती है . . . .कुशल-धर्मोंके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। तीनों संयोजनोंका क्षय हो जानेसे, राग-द्वेष-मोह क्षीण पड़ जानेसे, वह सकृदागामि होता है, एक ही बार इस लोकमें (और) आकर दुःखका अन्त करनेवाला। भिक्षुओ, इस प्रकार आदमी पानीके ऊपर आकर तैरता है।

भिक्षुओ, एक आदमी पानीके ऊपर तैर कर स्थान विशेष पर पहुँच कर कैसे रुक जाता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है, उसकी कुशल-धर्मोंके

प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है. . . . लज्जा होना अच्छी बात होती है . . . (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है . . .वीर्य होना अच्छी बात होती है . . . . कुशल-धर्मोंके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। पाँचों पतनकी ओर ले जाने वाले संयोजनोंका क्षय कर वह ओपपातिक (=अनागामि) होता है, उसका वहीं परि-निर्वाण हो जाता है, वह उस लोकसे पुनः इस लोकमें लौट कर नहीं आता इस प्रकार भिक्षुओ, आदमी पानीके ऊपर तैरकर, स्थान-विशेष पर पहुँच कर रुक जाता है।

भिक्षुओ, एक आदमी (=ब्राह्मण) ऊपर आकर तैरकर, पार जाकर स्थल पर कैसे खड़ा हो जाता है? भिक्षुओ, एक आदमी पानीसे ऊपर आता है उसकी कुशल-धर्मोंके प्रति श्रद्धा होना अच्छी बात होती है. . . . लज्जा होना अच्छी बात होती है. . . . (पाप–) भीरुता होना अच्छी बात होती है. . . वीर्य होना अच्छी बात होती है,. . . . कुशल धर्मोंके प्रति प्रज्ञा होना अच्छी बात होती है। वह आस्रवोंका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्ति, इसी जन्ममें यहीं साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। इस प्रकार भिक्षुओ, आदमी (=ब्राह्मण) ऊपर आकर, तैरकर, पार जाकर, स्थल पर खड़ा हो जाता है।

भिक्षुओ, लोकमें ये सात आदमी पानीकी उपमाके समान विद्यमान हैं।

भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं, स्वागत करने योग्य हैं, दक्षिणार्ह हैं, हाथ जोड़ने योग्य हैं तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं। कौनसे सात? भिक्षुओ, एक आदमी सभी संस्कारोंके प्रति अनित्य-दर्शी होता है, अनित्य-संज्ञी होता है, अनित्य प्रतिसंवेदी होता है, सतत, निरंतर, अमिश्ररूपसे, चित्तसे त्याग-शील तथा प्रज्ञासे गहराईमें उतरने वाला। वह आस्रवोंका क्षय कर. . . प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह पहला जन है, जो स्वागत करने योग्य है, जो दक्षिणार्ह है, जो हाथ जोड़ने योग्य है तथा जो लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक (दूसरा) आदमी सभी संस्कारोंके प्रति अनित्य-दर्शी होता है, अनित्य-संज्ञी होता है, अनित्य-प्रतिसंवेदी होता है, सतत, निरंतर, अमिश्र-रूपसे, चित्तसे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमें उतरने वाला। उसका आस्रव-क्षय तथा जीवन-क्षय एक साथ ही होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा जन है, जो स्वागत करने योग्य है, जो दक्षिणार्ह है, जो हाथ जोड़ने योग्य है, तथा जो लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक (तीसरा) आदमी सभी संस्कारोंके प्रति अनित्य-दर्शी होता है, अनित्य-संज्ञी होता है, अनित्य-प्रतिसंवेदी होता है, सतत, निरंतर, अमिश्र-

रूपसे, चित्तसे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमें उतरने वाला। वह अधोगतिके कारण-भूत पाँचों संयोजनोंका क्षय कर बीचमें ही परिनिर्वाणको प्राप्त होने वाला होता है.... (जीवनके अन्तको) प्राप्त कर (परिनिर्वाण) को प्राप्त होने वाला होता है. . . असंस्कार-परिनिर्वाणको प्राप्त करने होने वाला होता है. . . ससंस्कार-परिनिर्वाणको प्राप्त होने वाला होता है. . . . जो छोटे नहीं हैं ऐसे देवताओंके पास जाने वाला (अकनिट्ठगामी) ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं, स्वागत करने योग्य हैं, दक्षिणार्ह हैं, हाथ जोड़ने योग्य हैं तथा लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं।

भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं. . . . अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं। कौनसे सात? भिक्षुओ, एक आदमी सभी संस्कारोंके प्रति दुःख-दर्शी होता है. . . .।

भिक्षुओ, एक आदमी सभी धर्मों (=चित्तके विषयों) के प्रति अनात्म-दृष्टि युक्त हो विहार करता है।

एक आदमी निर्वाणके प्रति सुख-दर्शी होता है, सुख-संज्ञी होता है, सुख-प्रति-संवेदी होता है, सतत निरंतर अमिश्ररूपसे, चित्तसे त्याग शील तथा प्रज्ञासे गहराईमें जाने वाला। वह आस्रवोंका क्षय कर. . . विहार कर प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह पहला जन है जो स्वागत करने योग्य होता है।...अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक जन निर्वाणके प्रति सुख-दर्शी होता है, सुख-संज्ञी होता है, सुख-प्रतिसंवेदी होता है, सतत, निरंतर, अमिश्ररूपसे, चित्तसे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमें जाने वाला। उसका आस्रव-क्षय तथा जीवन-क्षय एक साथ ही होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा जन है, जो स्वागत करने योग्य है. . . अनुपम पुण्य-क्षेत्र है।

भिक्षुओ, फिर एक (तीसरा) आदमी निर्वाणके प्रति सुख-दर्शी होता है, सुख-संज्ञी होता है, सुख-प्रतिसंवेदी होता है, सतत, निरंतर, अमिश्ररूपसे, चित्तसे त्यागशील तथा प्रज्ञासे गहराईमें जाने वाला। वह अधोगतिके कारणभूत पाँचों संयो-जनोंका क्षय कर बीचमें ही परिनिर्वाणको प्राप्त कर होनेवाला होता है. . . . (जीवनके अन्तको) प्राप्त कर परिनिर्वाणको प्राप्त करने वाला होता है....असंस्कार-परिनिर्वाणको प्राप्त करने वाला होता है. . . . ससंस्कार परिनिर्वाणको प्राप्त करने वाला होता है. . . जो छोटे नहीं हैं, ऐसे देवताओंके पास जानेवाला (अकनिट्ठगामी) ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ जन है. . . . अनुपम पुण्य-क्षेत्र। भिक्षुओ, ये सात जन आदरणीय हैं, स्वागत करने योग्य हैं. . . . अनुपम पुण्य-क्षेत्र।

भिक्षुओ, ये सात निर्देश-वस्तु (=बातें) हैं। कौनसी सात? भिक्षुओ, एक भिक्षु (अर्हत्व लाभसे पूर्व) शिक्षाओंके पालन करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें (अर्हत्व लाभ होनेपर) उत्साह-रहित; धर्म-निश्रान्तिके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित, तृष्णाका क्षय करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित; योगाभ्यासमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित, वीर्य (=पराक्रम) करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह-रहित; स्मृति तथा दक्षताके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह रहित; (सम्यक्–) दृष्टिके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, भविष्यमें उत्साह रहित। भिक्षुओ, ये सात निर्देश-वस्तुयें हैं।

३. वज्जिसप्तक वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वैशालीके सारन्दद चैत्यमें विहार करते थे। उस समय बहुतसे लिच्छवी जहाँ भगवान् थे, वहाँ आये। पास आकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए लिच्छवियोंसे भगवान्ने यह कहा—"लिच्छवियों! मैं तुम्हें सात ऐसे उपदेश देता हूँ, जिनके अनुसार चलनेसे तुम्हारा पराभव (=परिहानि) नहीं होगा। उन्हें सुनो। अच्छी तरह मनमें धारण करो। कहता हूँ।" लिच्छवियोंने "भन्ते! अच्छा" कह भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—

"लिच्छवियो! वे सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? लिच्छवियो! जब तक वज्जी (जनपदके) लोग (बैठकोंमें) इकट्ठे होते रहेंगे, सन्निपात-बहुल रहेंगे, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो! जबतक वज्जी लोग एकमत हो (बैठकोंमें) सम्मिलित होते रहेंगे, एकमत हो (बैठकोंसे) उठते रहेंगे, एकमत हो वज्जी जनपदके कृत्योंको करते रहेंगे, तबतक लिच्छवियों! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो! जबतक वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (=जो कानून नहीं है) को प्रज्ञप्त (=कानून) नहीं मानेंगे; प्रज्ञप्तका उल्लंघन नहीं करेंगे, जैसे पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसके अनुसार चलते रहेंगे, तबतक लिच्छवियो! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो! जब तक वज्जी-गण जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते रहेंगे., गौरव करते रहेंगे, मानते रहेंगे, पूजते रहेंगे और उनकी बातको

ध्यानसे सुनते रहेंगे, तब तक लिच्छवियों ! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो ! जब तक वज्जी-गण, जो उनकी कुल-स्त्रियाँ हैं, कुल-कुमारियाँ हैं, उन्हें छीनकर जबर्दस्ती (घर) नहीं बसाते रहेंगे, तबतक लिच्छवियो ! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो ! जबतक वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य हैं, उनका आदर करते रहेंगे, गौरव करते रहेंगे, मानते रहेंगे, पूजते रहेंगे और जो पूर्वसे उनके प्रति धार्मिक-देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नहीं करेंगे, तबतक लिच्छवियो ! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो ! जबतक वज्जी-गण-अर्हतोंके लिये धार्मिक सुरक्षा सुव्यवस्थित रहेगी, ताकि जो अर्हत-गण वज्जि जनपदमें नहीं आये हैं, वे पधारें तथा जो अर्हत-गण पधारे हैं, वे सुख-पूर्वक विचरें, तबतक लिच्छवियो ! वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"लिच्छवियो ! जबतक ये सात अपरिहानि-धर्म वज्जि-जन पदके लोगोंमें दिखाई देते रहेंगे, जबतक वज्जी-गण इन पर स्थिर रहेंगे, तबतक लिच्छवियों वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

ऐसा मैंने सुना[1] एक समय भगवान् राजगृहके गृध्र-कूट पर्वत पर विहार करते थे। उस समय वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजात शत्रु वज्जियोंपर आक्रमण करना चाहता था। उसका कहना था—"मैं इन वैभवशाली वज्जियोंको उजाड़ूँगा, उनका नाश करूँगा, उनपर आपत्ति ढाऊँगा।"

तब वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रुने अपने महामात्य वर्षकार ब्राह्मणको बुलाकर कहा—"हे ब्राह्मण ! जहाँ भगवान हैं, तू वहाँ जा। पास जाकर मेरे वचनसे भगवान्‌के चरणोंमें वन्दना कर। फिर उनसे आपका आरोग्य, निश्चिन्तता, शरीरका हलकापन, बल, सुख विहरण (कैसा है?) पूछना। कहना—'भन्ते ! वैदेही पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रु आपके चरणोंमें वन्दना करता है और आपका आरोग्य निश्चिन्तता, शरीरका हलकापन, बल, सुख, विहरण (कैसा है?) पूछता है।' और ऐसा कहना—'भन्ते ! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रु वज्जियों पर आक्र-

---

१—यह सम्पूर्ण सूत्र अक्षरशः दीर्घनिकायके 'महापरिनिर्वाण सूत्र'के अन्तर्गत विद्यमान है।

मण करना चाहता है।' उसका कहना है—"मैं इन वैभवशाली वज्जियोंको उजाड़ूँगा, इनका नाश करूँगा, उन पर आपत्ति ढाऊँगा। फिर जैसे तुझे भगवान कहें, उसे अच्छी तरह धारणकर, आकर मुझे कहना। तथागतोंका कथन अन्यथा नहीं होता।"

मगधके महामात्य वर्षकार ब्राह्मणने वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रुको 'बहुत अच्छा' कहा और वह जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्से प्रमुदित मनसे बातचीत की। प्रमुदित मनसे शिष्टाचार पूराकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए मगधके महामात्य वर्षकार ब्राह्मणने भगवान्से यह कहा—'हे गौतम! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रु आप गौतमके चरणोंमें सिरसे वन्दना करता है, और आपका आरोग्य, निश्चिन्तता, शरीरका हलकापन, बल, सुख-विहरण (कैसा है?) पूछता है? हे गौतम! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश वज्जियोंपर आक्रमण करना चाहता है। उसका कहना है—मैं इन वैभववशाली वज्जियोंको उजाड़ूँगा, इनका नाश करूँगा, इन पर आपत्ति ढाऊँगा।"

उस समय आयुष्मान् आनन्द भगवान्के पीछे खड़े उन्हें पंखा झल रहे थे। तब भगवान् ने आयुष्मान् आनन्दको सम्बोधित किया आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण (बैठकों में) इकट्ठे होते हैं, सन्निपात,-बहुल होते हैं?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण (बैठकोंमें) इकट्ठे होते हैं, सन्निपात-बहुल होते हैं।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण (बैठकोंमें) इकट्ठे होते रहेंगे, सन्निपात-बहुल रहेंगे, तब तक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण एकमत हो (बैठकोंमें) सम्मिलित होते हैं, एक मत हो (बैठकोंसे) उठते हैं, एकमत हो वज्जी-जनपदके कृत्योंको करते हैं।"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण एकमत हो (बैठकोंमें) सम्मिलित होते हैं, एकमत हो (बैठकोंसे) उठते हैं, एकमत हो वज्जी-जनपदके कृत्योंको करते हैं।"

आनन्द! जब तक वज्जी-गण एकमतसे (बैठकोंमें) सम्मिलित होते रहेंगे, एकमत हो (बैठकोंसे) उठते रहेंगे, एकमत हो वज्जी-जनपदके कृत्य करते रहेंगे, तब तक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (जो कानून नहीं है) को प्रज्ञप्त (कानून) नहीं मानते; प्रज्ञप्तका उल्लंघन नहीं करते, जैसे पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसके अनुसार चलते हैं?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (जो कानून नहीं है) को प्रज्ञप्त (=कानून) नहीं मानते, प्रज्ञप्तका उल्लंघन नहीं करते, जैसा पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसके अनुसार चलते हैं।"

"आनन्द! जब तक वज्जी-गण अप्रज्ञप्त (जो कानून नहीं है) को प्रज्ञप्त (=कानून) नहीं मानेंगे, प्रज्ञप्तका उल्लंघन नहीं करेंगे, जैसा पुराना वज्जि-धर्म चला आ रहा है, उसीके अनुसार चलते रहेंगे, तब तक वज्जियोंकी उन्निति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते हैं, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं और उनकी बात को ध्यानसे सुनते हैं?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते हैं, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं और उनकी बातको ध्यानसे सुनते हैं।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण, जो उनके वयोवृद्ध हैं, उनका आदर करते रहेंगे, गौरव करते रहेंगे, मानते रहेंगे, पूजते रहेंगे और उनकी बातको ध्यानसे सुनते रहेंगे, तबतक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनकी कुल-स्त्रियाँ हैं कुल-कुमारियाँ हैं, उन्हें छीनकर जबर्दस्ती (घर) नहीं बसाते?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण, जो उनकी कुल-स्त्रियाँ हैं, कुल-कुमारियाँ हैं, उन्हें छीनकर जबर्दस्ती (घर) नहीं बसाते।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण, जो उनका कुल-स्त्रियाँ हैं, कुल-कुमारियाँ हैं, उन्हें छीन कर जबर्दस्ती (घर) नहीं बसायेंगे, तबतक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"आनन्द! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य हैं, उनका आदर करते हैं, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं और जो पूर्वसे उनके प्रति धार्मिक देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नहीं करते?"

"भन्ते! मैंने सुना है कि वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य हैं, उनका आदर करते हैं, गौरव करते हैं, मानते हैं, पूजते हैं, और जो पूर्वसे उनके प्रति धार्मिक देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नहीं करते।"

"आनन्द! जबतक वज्जी-गण, उनके जो (नगरके) बाहर तथा भीतरके चैत्य हैं उनका आदर करते रहेंगे, गौरव करते रहेंगे, मानते रहेंगे, पूजते रहेंगे और

जो पूर्व से उनके प्रति धार्मिक देन बँधी हुई है, उसका अपहरण नहीं करते रहेंगे, तब तक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"आनन्द ! क्या तूने सुना है कि वज्जी-गण अ अर्हतोंके लिये धार्मिक सुरक्षा सुव्यवस्थित रखते हैं, ताकि जो अर्हत्-गण् वज्जी-जनपदमें नहीं आये, वे पधारें तथा जो अर्हत्-गण पधारे हैं, वे सुखपूर्वक विचरें ?"

"भन्ते ! मैंने सुना है कि वज्जी-गण अर्हतोंके लिये धार्मिक सुरक्षा व्यवस्थित रखते हैं, ताकि जो अर्हत्-गण वज्जी-जनपदमें नहीं आये, वे पधारें तथा जो अर्हत्-गण पधारे हैं, वे सुख-पूर्वक विचरें।"

"आनन्द ! जबतक वज्जी-गण अर्हतोंके लिये धार्मिक सुरक्षा व्यवस्थित रखेंगे, ताकि जो अर्हत् गण-वज्जी-जनपदमें नहीं आये, वे पधारें तथा जो अर्हत्-गण पधारे हैं, वे सुखपूर्वक विचरें, तब तक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

तब भगवानने मगधके महामात्य वर्षकार ब्राह्मणको सम्बोधित किया—ब्राह्मण ! एक बार मैं वैशालीमें सारदन्द चैत्यमें विहार कर रहा था। ब्राह्मण ! उस समय मैंने वज्जी जनपदके लोगोंको ये सात अपरिहानि-धर्मोंका उपदेश दिया। ब्राह्मण ! जबतक ये सात अपरिहानि-धर्म वज्जियोंमें बने रहेंगे और वज्जी-गण इन सात अपरिहानि-धर्मोंका पालन करते दिखाई देते रहेंगे; तबतक वज्जियोंकी उन्नति ही होती रहेगी, अवनति नहीं।"

"हे गौतम ! इन सातों अपरिहानि-धर्मोंका तो कहना ही क्या, इनमेंसे एक एक अपहिरानि-धर्मका पालन करते रहनेसे भी वज्जियोंकी उन्नति की ही आशा की जा सकती है, अवनतिकी नहीं। ओ गौतम ! वैदेही-पुत्र मगध-नरेश अजातशत्रुके लिये वज्जियोंपर आक्रमण अकरणीय है। उन्हें या तो विश्वास उत्पन्न कर (उपलापनसे) जीता जा सकता है या उनमें आपसी मत-भेद कर। हे गौतम ! अब हमें जानेकी अनुमति दें। हमें बहुत कार्य हैं, बहुत कृत्य हैं।"

"हे ब्राह्मण ! इस समय जिस कामका योग्य समय समझे, (वह कर)।

तब मगधका महामात्य वर्षकार ब्राह्मण भगवान्के भाषणका अभिनन्दन कर, अनुमोदन कर आसनसे उठकर चला गया।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् राजगृहके गृध्र-कूट पर्वतपर विहार कर रहे थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—'भिक्षुओ ! सात अपरिहानि-धर्मोंका उपदेश करता हूँ। उसे सुनो, अच्छी तरह मनमें धारण करो, कहता

हूँ।" उन भिक्षुओंने "बहुत अच्छा" कह भगवान्‌को प्रतिवचन दिया। भगवान्‌ने यह कहा––

"भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? भिक्षुओ, जबतक भिक्षु (बैठकों) में इकट्ठे होते रहेंगे, सन्निपात-बहुल रहेंगे, तब तक भिक्षओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

"भिक्षओ, जबतक भिक्षु एकमतसे (बैठकोंमें) सम्मिलित होते रहेंगे, एकमतसे (बैठकोंसे) उठते रहेंगे, एकमत हो संघ-कृत्य करते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

"भिक्षुओ, जबतक भिक्षु जो अप्रज्ञप्त (= अनियम) है, उसे नियम नहीं मानेंगे, जो नियम है उसका उल्लंघन नहीं करेंगे, भगवान्‌ने जिन-जिन शिक्षाओंके अनुसार जीवन-यापन करनेके लिए कहा है, उन-उन शिक्षाओंके अनुसार जीवन-यापन करते रहेंगे; तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

"भिक्षुओ, जबतक भिक्षु, ऐसे भिक्षुओंका, जो स्थविर हों, प्रसिद्ध हों, चिर-प्रव्रजित हों, संघके ज्येष्ठ हों, संघके नायक हों, सत्कार करते रहेंगे, गौरव करते रहेंगे, (उन्हें) मानते रहेंगे, पूजते रहेंगे, उनकी बात ध्यानसे सुनते रहेंगे; तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु फिर-फिर उत्पन्न होनेवाली तृष्णाके वशीभूत न होंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

"भिक्षुओ, जबतक भिक्षु आरण्य-शयनासनोंको चाहते रहेंगे; तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु व्यक्तिगत रूपसे यही चाहते रहेंगे कि जो सब्रह्मचारी भिक्षु (उनके विहारमें) नहीं आये हैं, वे आयें तथा जो पधारे हैं, वे सुखपूर्वक रहें; तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोंका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्मोंका उपदेश करता हूँ, इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो......भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? भिक्षुओ, जबतक भिक्षु काम-काजमें ही दिन रात लगे रहनेवाले नहीं होंगे, तबतक भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु बातचीतमें ही ..... निद्रामें ही ..... मण्डलीमें ही ..... पापी, पाप-पूर्ण संकल्पोंके वशीभूत ..... कुसंगतिमें, कुमित्रोंके साथ, कुसम्पर्कमें ही ..... आरम्भिक थोड़ी-सी उन्नतिसे ही संतुष्ट नहीं होते रहेंगे, तब तक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि धर्मोंका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

"भिक्षुओ, सात अपरिहानि धर्मोंकी देशना करता हूँ। इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो .... भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? भिक्षुओ, जबतक भिक्षु श्रद्धावान् रहेंगे, तबतक भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु लज्जा-शील रहेंगे ......(पाप-) भीरु रहेंगे ... . बहुश्रुत होंगे .... प्रयत्नशील होंगे .... स्मृतिमान होंगे ..... प्रज्ञावान् होंगे; तबतक भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि-धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोंका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्मोंकी देशना करता हूँ। इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो .... भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? भिक्षुओ, जबतक भिक्षु स्मृति-सम्बोधि अंगकी भावना (=अभ्यास) करते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु धम्म विचय सम्बोधि-अंगकी भावना (=अभ्यास) करते रहेंगे .... वीर्य सम्बोधि-अंगकी भावना ...... प्रीति सम्बोधि-अंग की भावना .... प्रश्रब्धि सम्बोधि-अंगकी भावना .... समाधि सम्बोधि-अंगकी भावना .... उपेक्षा समाधि सम्बोधि-अंगकी भावना (=अभ्यास) करते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि-धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोंका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्मोंकी देशना करता हूँ। इसे सुनो, अच्छी तरह मनमें रखो ...... भिक्षुओ, सात अपरिहानि-धर्म कौनसे हैं? भिक्षुओ, जब

तक भिक्षु अनित्य-संज्ञाकी भावना करेंगे, तबतक भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षु अनातम-संज्ञाकी भावना (=अभ्यास) करते रहेंगे...... अशुभ-संज्ञाकी भावना....... (दुष्कर्मोंके) दुष्परिणाम-संज्ञाकी भावना...... प्रहाण-संज्ञाकी भावना...... विराग-संज्ञाकी भावना.... निरोध-संज्ञाकी भावना, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होगी, हानि नहीं।

भिक्षुओ, जबतक भिक्षुओंमें ये सात अपरिहानि-धर्म स्थिर रहेंगे, जबतक भिक्षु इन सात अपरिहानि-धर्मोंका पालन करते दिखाई देते रहेंगे, तबतक भिक्षुओ, भिक्षुओंकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। उस समय भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ, ये सात बातें शैक्ष-भिक्षुओंकी अवनतिका कारण होती हैं। कौन-सी सात? दिन-रात किसी काममें ही लगे रहना, दिन-रात बातचीतमें ही लगे रहना, दिन-रात सोते ही रहना, दिन-रात मण्डलीमें ही मस्त रहना, इन्द्रियोंका असंयम, भोजनके विषयमें अमात्रज्ञ होना; संघमें संघ-कृत्य रहते ही हैं, शैक्ष-भिक्षु सोचता है, संघमें स्थविर भिक्षु हैं, प्रसिद्ध हैं, चिर प्रव्रजित हैं, कार्यका भार वहन करनेवाले हैं, वे उस कामको नहीं जानेंगे, और वह उनके कार्यमें सहायक होता है। भिक्षुओ, ये सात धर्म शैक्ष भिक्षुकी अवनतिका कारण होते हैं।

"भिक्षुओ, ये सात बातें शैक्ष-भिक्षुकी अवनतिका कारण नहीं होती। कौन-सी सात? दिन-रात किसी काममें न लगे रहना, दिन-रात बातचीतमें न लगे रहना, दिन-रात सोते न रहना, दिन-रात मण्डलीमें ही मस्त न रहना, इन्द्रियोंका असंयत न रहना, भोजनके विषयमें मात्रज्ञ होना; संघमें संघ-कृत्य रहते ही हैं, शैक्ष भिक्षु सोचता है, संघमें स्थविर भिक्षु हैं, प्रसिद्ध हैं, चिर-प्रव्रजित हैं, कार्यका भार वहन करनेवाले हैं, वे उसको जानेंगे, और वह उनके कार्यमें सहायक नहीं होता है। भिक्षुओ, ये सात बातें शैक्ष भिक्षुकी अवनतिका कारण नहीं होती।

भिक्षुओ, ये सात बातें उपासककी अवनतिका कारण होती हैं। कौन-सी सात बातें? वह भिक्षुओंका दर्शन करना छोड़ देता है, वह सद्धर्मके श्रवणमें प्रमाद करता है, (पाँच) शीलोंका अभ्यास नहीं करता, अश्रद्धावान् होता है, जो स्थविर भिक्षु होते हैं, जो मध्यम-दर्जेके होते हैं तथा जो नये भिक्षु होते हैं, उनको दोष ही

देते रहकर धर्म सुनता, छिद्रान्वेषी होता है, बुद्ध-शासनसे बाहर दक्षिणार्होंकी खोज करता है और पहले उन्हींका आदर-सत्कार करता है। भिक्षुओ, ये सात बातें उपासक की अवनतिका कारण होती हैं।

भिक्षुओ, ये सात बातें उपासककी उन्नतिका कारण होती हैं। कौन-सी सात बातें? वह भिक्षुओंका दर्शन करना नहीं छोड़ता है, वह सद्धर्मके श्रवणमें प्रमाद नहीं करता है, वह पाँच शीलोंका अभ्यास करता है, श्रद्धावान् होता है, जो स्थविर-भिक्षु होते हैं, जो मध्यम दर्जेके होते हैं तथा जो नये भिक्षु होते हैं, उनको दोष नहीं देते रहकर धर्म नहीं सुनता है, छिद्रान्वेषी नहीं होता है; (बुद्ध-शासन) से बाहर दक्षिणार्होंको नहीं खोजता है; पहले उन्हींका आदर-सत्कार करता है। भिक्षुओ, ये सात बातें उपासककी उन्नतिका कारण होती हैं।

भगवान्ने यह कहा। इतना कहकर सुगत शास्ताने आगे यह भी कहा—

दस्सनं भावितत्तानं, यो हापेति उपासको।
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले न सिक्खति॥
अप्पसादो च भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति॥
उपारम्भकचित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति॥
इतो च बहिद्धा अञ्ञं, दक्खिणेय्यं गवेसति,
तत्थेव च पुब्बकारं, यो करोति उपासको॥
एते खो परिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा परिहायति॥

[जो उपासक संयत भिक्षुओंका दर्शन करना त्याग देता है, जो आर्य-धर्मको सुनता नहीं है, जो पाँच शीलोंका अभ्यास नहीं करता है, जिसकी भिक्षुओंके प्रति अश्रद्धा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, वह उपालम्भ-युक्त चित्तसे सद्धर्मका श्रवण करता है, बुद्ध-शासनसे बाहर दूसरे लोगोंमें दक्षिणार्होंको खोजता रहता है और जो उपासक पहले उन्हींका आदर-सत्कार करता है, वह इन सात अपरिहानि-धर्मोंका उपदेश दिये रहनेके अनुसार, इनके अनुकूल आचरण करनेवाला होनेसे सद्धर्ममें अवनतिको प्राप्त होता है।]

दस्सनं भावितत्तानं, यो न हापेति उपासको।
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले च सिक्खति॥
पसादो चस्स भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति।
अनुपारम्भचित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति॥

न इतो बहिद्धा अञ्ञं, दक्खिणेय्यं गवेसति।
इधेव च पुब्बकारं, यो करोति उपासको।।
एते खो अपरिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा न परिहायति।।

[जो उपासक संयत भिक्षुओंका दर्शन करता रहता है, जो श्रेष्ठ-धर्मको सुनता रहता है, जो पाँच शीलोंका अभ्यस्त रहता है, जिसकी भिक्षुओंके प्रति श्रद्धा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है, जो उपालम्भ रहित चित्तसे सद्धर्म सुननेकी इच्छा करता है, जो बुद्ध-शासनसे बाहर दूसरे दक्षिणार्होंकी खोज नहीं करता तथा जो उपासक पहले इन्हींका आदर-सत्कार करता है, वह इन सात अपरिहानि-धर्मोंका उपदेश दिये रहनेके अनुसार, इनके अनुकूल आचरण करनेवाला होनेसे सद्धर्मसे पतित नहीं होता।]

भिक्षुओ, ये सात उपासक की विपत्तियाँ हैं। कौनसी सात? . . . भिक्षुओ, ये सात उपासककी सम्पत्तियाँ हैं। कौन सी सात?

भिक्षुओ, ये सात उपासकके पतनके कारण (=पराभव) हैं। कौनसे सात? . . . भिक्षुओ, ये सात उपासककी उन्नतिके कारण (=सम्भव) हैं। कौनसे सात? वह भिक्षुओंका दर्शन करना नहीं छोड़ता है, वह सद्धर्मके श्रवणमें प्रमाद नहीं करता है, वह पाँच शीलोंका अभ्यास करता है, श्रद्धावान् होता है, जो स्थविर भिक्षु होते हैं, जो मध्यम दर्जेके होते हैं तथा जो नये भिक्षु होते हैं, उनको दोष नहीं देता रहकर सद्धर्म सुनता है, छिद्रान्वेषी नहीं होता है, (बुद्ध) शासनसे बाहर दक्षिणार्हों को नहीं खोजता है; पहले इन्हींका आदर-सत्कार करता है। भिक्षुओ, ये सात उपासक की उन्नतिके कारण (=सम्भव) हैं।

दस्सनं भावितत्तानं, यो हापेति उपासको
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले न सिक्खति।
अप्पसादो च भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति
उपारम्भक चित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति।।
इतो च बहिद्धा अञ्ञं, दक्खिणेय्यं गवेसति।
तत्थेव च पुब्बकारं, यो करोति उपासको।।
एते खो परिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा परिहायति।।
दस्सनं भावितत्तानं, यो न हापेति उपासको,
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले च सिक्खति।।

पसादो चस्स भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति ।
अनुपारम्भ चित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति ।।
न इतो बहिद्धा अञ्ञं, दक्खिणेय्यं गवेसति ।
इधेव च पुब्बकारं यो करोति उपासको ।।
एते खो अपरिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते ।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा न परिहायति ।।

[अर्थ ऊपर ही आ गया है ।]

४. देवता वर्ग

तब एक प्रकाशमान देवता प्रकाशमान रात्रिमें सारे जेतवन को प्रकाशयुक्त करके जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा । पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर खड़ा हुआ । एक ओर खड़े हुए देवताने भगवान्को यह कहा––

"भन्ते ! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नति (= अपरिहानि) के लिये होती हैं । कौनसी सात ? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, संघका गौरव, शिक्षाओंका गौरव, समाधिका गौरव, अप्रमादका गौरव तथा मैत्री-भावका गौरव । भन्ते, ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं । उस देवताने यह कहा । शास्ताने समर्थन किया । यह जान कि शास्ताने समर्थन किया, वह देवता-प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्धान हो गया ।

तब भगवान्ने उस रातके बीतने पर भिक्षुओंको सम्बोधित किया–– भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवता, प्रकाशमान रात्रिमें, सारे जेतवनको प्रकाश-युक्त करके जहाँ मैं था, वहाँ पहुँचा । पास जाकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया । भिक्षुओ, एक ओर खड़े हुए उस देवताने मुझे यह कहा––भन्ते ! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं । कौनसी सात ? शास्ताका गौरव धर्मका गौरव, संघका गौरव, शिक्षाओंका गौरव, समाधिका गौरव, अप्रमादका गौरव तथा मैत्री-भावका गौरव । भन्ते ! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं ।

भिक्षुओ, उस देवताने मुझे यह कहा । इतना कह, मुझे अभिवादन कर (मेरी प्रदक्षिणा) कर वह देवता वहीं अन्तर्धान हो गया ।

सत्थुगरु धम्मगरु, संघे च तिब्बगारवो,
समाधिगरु आतापी, सिक्खाय तिब्बगारवो ।।
अप्पमाद गरु भिक्खु, पटिसन्थार गारवो ।
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके ।।

[शास्ताके प्रति गौरव, धर्मका गौरव, संघके प्रति तीव्र गौरवका भाव, समाधिके प्रति गौरवका भाव, प्रयत्नशील, शिक्षाओंके प्रति तीव्र गौरवका भाव, अप्रमादके प्रति गौरवका भाव तथा मैत्री-भावके प्रति गौरवका भाव जिस भिक्षुमें होता है, उसका पतन असम्भव होता है, वह निर्वाणके समीप पहुँचा हुआ होता है।]

भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवता, प्रकाशमान रात्रिमेंसारे जेतवन को प्रकाशयुक्त करके जहाँ मैं था, वहाँ पहुँचा। पास आकर मुझे अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। भिक्षुओ, एक ओर खड़े हुए उस देवताने मुझे यह कहा—भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। कौनसीं सात बातें? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, संघका गौरव, शिक्षाओंका गौरव, समाधिका गौरव, लज्जाका गौरव, (पाप–) भीरुताका गौरव। भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने मुझे यह कहा इतना कह, मुझे अभिवादन कर, (मेरी) प्रदक्षिणा कर वह देवता वहीं अन्तर्धान हो गया।

सत्थुगरु धम्मगरू, संघे च तिब्बगारवो,
समाधिगरु, आतापी, सिक्खाय, तिब्बगारवो॥
हिरि ओत्तप्पसम्पन्नो, सप्पतिस्सो सगारवो,
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके॥

[शास्ताके प्रति गौरव. . . .शिक्षाओंके प्रति तीव्र गौरवका भाव। लज्जा तथा (पाप–) भीरुता से युक्त, इन सबके प्रति गौरवका भाव जिस भिक्षुके मनमें होता है, उसकी अवनति असम्भव है। वह निर्वाणके ही समीप है।]

भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवताने. . . .मुझे यह कहा—"भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। कौन सी सात बातें? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, संघका गौरव, शिक्षाओंका गौरव, समाधिका गौरव, शिक्षा कामी होना तथा सत्संगति (=कल्याण-मित्रता)। भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिकी के लिये होती हैं। भिक्षुओ, इस देवताने मुझे यह कहा। इतना कह, मुझे अभिवादन कर (मेरी) प्रदक्षिणा कर वह देवता वहीं अन्तर्धान हो गया।

सत्थुगरु धम्म गरु, संघे च तिब्बगारवो,
समाधिगरु आतापी, सिक्खाय तिब्बगारवो॥
कल्याण मित्तो सुवचो, सप्पतिस्सो सगारवो,
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके॥

[शास्ताके प्रति गौरव. . . . . .शिक्षाओंके प्रति तीव्र गौरवका भाव

सत्संगतिमें रहने वाला तथा शिक्षा-कामी—इन सबके प्रति गौरवका भाव, जिस भिक्षुके मनमें होता है, उसकी अवनति असम्भव है, वह निर्वाणके ही समीप है।]

भिक्षुओ, इस रातको एक प्रकाशमान देवता.....मुझे यह कहा—"भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। कौनसी सात बातें? शास्ताका गौरव, धर्मका गौरव, संघका गौरव, शिक्षाओंका गौरव, समाधिका गौरव, शिक्षा-कामी होना, तथा सत्संगति। भन्ते! ये सात बातें भिक्षुकी उन्नतिके लिये होती हैं। भिक्षुओ, उस देवताने मुझे यह कहा। इतना कह, मुझे अभिवादन कर (मेरी) प्रदक्षिणा कर वह देवता वहीं अन्तर्धान हो गया।

ऐसा कहने पर आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवान्से कहा—भन्ते! भगवान्के द्वारा जो कुछ संक्षेपमें कहा गया है, मैं उसे विस्तारसे इस प्रकार जानता हूँ। भन्ते! भिक्षु स्वयं शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है तथा गौरवका भाव रखनेकी प्रशंसा करने वाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते हैं, जो शास्ताके प्रति गौरवका भाव नहीं रखते उन्हें वैसा करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाले होते हैं, उनकी समयानुकूल यथार्थ प्रशंसा करने वाला होता है। स्वयं धर्मके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है....संघके प्रति भाव रखने वाला होता है....शिक्षाओंके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है ....समाधिके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है.....शिक्षाकामी होता है.....सत्संगतिमें रहनेवाला होता है तथा सत्संगतिकी प्रशंसा करनेवाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते हैं, उन्हें वैसा करनेकी प्रेरणा करता है। जो दूसरे भिक्षु सत्संगमें रहने वाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशंसा करनेवाला होता है। भन्ते! भगवान्के द्वारा जो कुछ संक्षेपमें कहा गया है, मैं उसे विस्तारसे इस प्रकार जानता हूँ।

"सारिपुत्र बहुत अच्छा। सारिपुत्र, बहुत अच्छा। सारिपुत्र! जो कुछ मैंने संक्षेपमें कहा, तू उसकी विस्तारसे इस प्रकार अर्थ जानता है। सारिपुत्र! भिक्षु स्वयं शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है तथा गौरवका भाव रखनेकी प्रशंसा करनेवाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते हैं, जो शास्ताके प्रति गौरवका भाव नहीं रखते, उन्हें वैसा करनेकी प्रेरणा देता है। जो दूसरे भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखने वाले होते हैं, उनकी समयानुकूल यथार्थ प्रशंसा करने वाला होता है। स्वयं धर्मके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है....संघके प्रति गौरवका भाव रखने वाला होता है....शिक्षाओंके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है .....समाधिके प्रति गौरवका भाव रखनेवाला होता है....शिक्षाकामी

होता है. . . .सत्संगतिमें रहने वाला होता है. . . . .तथा सत्संगतिकी प्रशंसा करने वाला। जो दूसरे ऐसे भिक्षु होते हैं, जो सत्संगतिमें रहने वाले नहीं होते हैं उन्हें वैसा करनेकी प्रेरणा करता है। जो दूसरे भिक्षु सत्संगतिमें रहने वाले होते हैं, उनकी समयानुसार यथार्थ प्रशंसा करने वाला होता है। सारिपुत्र ! इस प्रकार जो कुछ मैंने संक्षेपमें कहा, उसका तू ने विस्तारसे अर्थ जान लिया।

भिक्षुओ, जिसमें ये सात गुण हों, ऐसे मित्रकी संगति करनी चाहिये। कौन से सात ? जो कठिनतासे दी जा सकती है, वह वस्तु भी देता है; जो कठिनतासे किया जा सकता है, वह काम भी करता है; जो कठिनतासे सहन की जा सकती है, ऐसी बात भी सहन करता है; जो अपने रहस्य की बात है वह भी प्रकट कर देता है, जो उसका रहस्य है, उसे छिपा कर रखता है, आपत्ति पड़ने पर साथ नहीं छोड़ता तथा निर्धन हो जानेकी अवस्था में भी अवहेलना नहीं करता। भिक्षुओ, जिसमें ये सात गुण हों, ऐसे मित्रकी संगति करनी चाहिये।

दुद्दं ददाति मित्तो, दुक्करं चा पि कुब्बति।
अथोपिस्स दुरुत्तानि, खमति दुक्खमानि च॥
गुय्हं च तस्स अक्खाति, गुय्हस्स परिगूहति।
आपदासु न जहाति, खीणेन नातिमञ्ञति॥
यम्हि एतानि ठानानि, संविज्जन्तीध पुग्गले।
सो मित्तो मित्तकामेन, भजितब्बो तथाविधो॥

[जो (वस्तु) कठिनाईसे दी जा सकती है, वह देता है; जो (कार्य) कठिनाईसे किया जा सकता है, वह करता है; जो असह्य दुरुक्त वचन होते हैं, उन्हें भी सहन करता है; जो (अपना) रहस्य होता है, वह भी उस पर प्रकट कर देता है, जो उसका रहस्य है, उसे छिपा कर रखता है; आपत्ति पड़ने पर साथ नहीं छोड़ता तथा निर्धन हो जाने पर भी अवहेलना नहीं करता—जिस व्यक्तिमें ये सात गुण हों, ऐसे मित्रकी संगति करनी चाहिये।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण हों, उसी मित्र भिक्षुकी संगतिमें रहना चाहिये, ऐसे ही मित्र भिक्षुकी सेवामें रहना चाहिये, भले ही उसकी ओरसे उपेक्षित (=पनुज्जमान) ही हो। कौनसे सात गुण ? प्रिय होता है, अनुकूल होता है, गौरव का भाजन होता है, पूज्य होता है, वक्ता होता है, वचन-क्षम होता है, गम्भीर बातका करने वाला होता है तथा अनुचित रास्ते पर नहीं डालता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये

सात गुण हों, उसी मित्र भिक्षुकी संगतिमें रहना चाहिये, भले ही उसकी ओरसे उपेक्षित (=पनुज्जमान) भी हो।

पियो गरु भावनीयो, वत्ता च वचनक्खमो।
गम्भीरं च कथं कत्ता, नो चट्ठाने नियोजको॥
यम्हि एतानि ठानानि, संविज्जन्तीध पुग्गले,
सो मित्तो मित्तकामेन, अत्थकामानुकम्पतो।
अपि नासियमानेन, भजितब्बो, तथाविधो॥

[जो प्रिय हो, जो गौरवार्ह हो, जो पूज्य हो, जो वक्ता हो, जो वचन-क्षम हो, जो गंभीर बात करनेवाला हो और जो अनुचित मार्ग न दिखाने वाला हो— जिस भिक्षुमें ये गुण हों, ऐसा हितचिन्तक भिक्षु ही, अपना हित चाहने वाले भिक्षु द्वारा अपना मित्र बनाया जाना चाहिये, भले ही वह उसे दण्ड-देने वाला हो।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण होते हैं वह अचिरकालमें ही चारों ज्ञानों (पटिसम्भिदाओं) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करेगा। कौनसे सात गुण? भिक्षुओ, वह भिक्षु अपने चित्तकी लीनताको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त लीन है; वह भिक्षु भीतरी संक्षेपको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त भीतरी कारणसे संक्षिप्त है, वह भिक्षु, बाह्य विक्षेपको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त बाह्य कारणसे विक्षिप्त है; उसकी जानकारीमें वेदनाओं की उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है; उसकी जानकारी में संज्ञाओंकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है; उसकी जानकारीमें वितर्कोंकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है, उसने अपनी प्रज्ञासे अनुकूल-प्रतिकूल, बढ़िया-घटिया, कृष्ण-शुक्ल सप्रतिभाग धर्मों (=चित्तके विषयों) के निमित्तों (=चित्तके ध्यानके आधार) को भली प्रकार ग्रहण किया होता है, मनमें स्थान दिया होता है, अच्छी तरह धारण किया होता है तथा अच्छी तरह बींधा होता है, भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण होते हैं, वह अचिरकालमें ही चारों ज्ञानों (पटिसम्भिदाओं) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर, विहार करता है।

भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये सात गुण हैं, जिनके कारण सारिपुत्र चारों ज्ञानों (=पटिसम्भिदाओं) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। कौन से सात गुण? भिक्षुओ, सारिपुत्र अपने चित्तकी लीनताको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त लीन है, सारिपुत्र भीतरी विक्षेपको यथार्थ रूपसे जानता है कि उसका चित्त भीतरी कारणसे संक्षिप्त है; सारिपुत्र बाह्य विक्षेपको यथार्थ-रूपसे जानता

है कि उसका चित्त बाह्य कारणसे विक्षिप्त है ; सारिपुत्रकी जानकारी में वेदनाओंकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है ; सारिपुत्रकी जानकारीमें संज्ञाओंकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है, सारिपुत्रकी जानकारीमें वितर्कोंकी उत्पत्ति, स्थिति, निरोध होता है; सारिपुत्रने अपनी प्रज्ञासे अनुकूल-प्रतिकूल, बढ़िया-घटिया, कृष्ण-शुक्ल सप्रतिभाग धर्मों (= चित्तके विषयों) के निमित्त (= चित्तके ध्यानके आधार) को भली प्रकार ग्रहण किया है, मनमें स्थान दिया है, अच्छी तरह धारण किया है तथा अच्छी तरह बींधा है। भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये सात गुण हैं, जिनके कारण सारिपुत्र चारों ज्ञानों (पटिसम्भिदाओं) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर प्राप्तकर विहार करता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, चित्त उस भिक्षुके वशमें रहता है, वह भिक्षु चित्तके वशमें नहीं रहता। कौनसी सात बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु समाधि-कुशल होता है, समाधि लगानेमें कुशल होता है, समाधिकी स्थितिमें रहनेमें कुशल होता है, समाधि-अवस्थासे उठनेमें कुशल होता है, समाधिका सुफल (= कल्याण) प्राप्त करनेमें कुशल होता है, समाधि अवस्थाके आसपास रहनेमें कुशल होता है, समाधि सम्बन्धी अभिनीहार (= पृथक् होना) में कुशल होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, चित्त उस भिक्षुके वशमें रहता है, वह भिक्षु चित्तके वशमें नहीं रहता।

भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये सात बातें हैं जिनके कारण चित्त उसके वशमें रहता है, वह चित्तके वशमें नहीं रहता। कौनसी सात बातें ? भिक्षुओ, सारिपुत्र समाधि-कुशल है, समाधि लगानेमें कुशल है, समाधिकी स्थितिमें रहनेमें कुशल है, समाधि-अवस्थासे उठनेमें कुशल है, समाधिका सुफल प्राप्त करनेमें कुशल है, समाधि अवस्थाके आसपास रहनेमें कुशल है, तथा समाधि सम्बन्धी अभिनीहारमें कुशल है। भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये सात बातें हैं, जिनके कारण चित्त उसके वशमें रहता है, वह चित्तके वशमें नहीं रहता।

उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र पूर्वाह्नमें (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुए। तब आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमें यह बात आई–श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्ब से है। तब तक मैं जहाँ दूसरे तैर्थिकों (= मत वालों)का परिब्राजक– आराम है, वहाँ ही चलूँ। तब आयुष्मान् सारिपुत्र जहाँ अन्य तैर्थिकोंका परिब्राजक-आराम था वहाँ पहुँचे। जाकर उन अन्य तैर्थिक परिब्राजकोंसे कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ

चुकने पर एक ओर बैठे। उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंमे यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो, जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्यवास करता है, उसे विशिष्ट (=निद्दस) कहा जा सकता है।

आयुष्मान् सारिपुत्रने उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंके कथनका न समर्थन किया, न खण्डन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठकर चले गये भगवान्से उस कथनका स्पष्टीकरण जानूँगा।

तब आयुष्मान् सारिपुत्र श्रावस्तीमें भिक्षाटन कर, भिक्षा ग्रहण करनेके अनन्तर जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकरे भगवानको प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे यह कहा :—

"भन्ते! मैं पूर्वाह्नमें (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले, श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुआ। भन्ते! उस समय मेरे मनमें यह हुआ—श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्बसे है। तबतक मैं जहाँ दूसरे तैर्थिकों (मत वालों) का परिव्राजक—आराम है वहाँ ही चलूँ। तब भन्ते! जहाँ अन्य तैर्थिकोंका परिव्राजक-आराम था, वहाँ गया। जाकर उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंसे कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने पर एक ओर बैठा। भन्ते! उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए, अन्य तैर्थिक-परिव्राजकोंमें यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो! जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य-वास करता है, उसे विशिष्ट (=निद्दस) कहा जा जाता है। भन्ते! मैंने उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंके कथनका न समर्थन किया, न खण्डन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठकर चला आया कि भगवानसे इस कथनका स्पष्टीकरण जानूँगा। भन्ते! क्या बुद्ध शासन (=धर्म-विनय)में केवल वर्ष-गणना से किसी भिक्षुको विशिष्ट माना जा सकता है?"

"सारिपुत्र! इस बुद्ध शासन (=धर्म-विनय) में केवल वर्ष-गणनासे किसी भिक्षुको विशिष्ट नहीं घोषित किया जा सकता। सारिपुत्र! ये सात विशेषताओं के लक्षण मैंने स्वयं जानकर, साक्षात् कर घोषित किये हैं। कौनसे सात? सारिपुत्र! भिक्षु शील ग्रहण करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है और भविष्य में शिक्षा ग्रहण करनेमें भी उत्साह-युक्त; धर्म-सन्तति (=धर्म-परम्परा) के प्रति अत्यन्त उत्साही होता है, और भविष्यमें भी धर्म-सन्ततिके प्रति उत्साह-युक्त; इच्छा (=तृष्णा) का मर्दन करनेमें अत्यन्त उत्साही होता है, तथा भविष्यमें भी इच्छाका मर्दन करनेमें उत्साह-युक्त; एकान्त-चिन्तन के प्रति अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमें भी एकान्त-

चिन्तनके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त; प्रयत्नके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमें भी प्रयत्न करनेके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त; स्मृति-विवेकके प्रति अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमें भी स्मृति-विवेकके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त; और दृष्टि द्वारा बींधनेके प्रति भी अत्यन्त उत्साही होता है तथा भविष्यमें भी दृष्टि द्वारा बींधनेके प्रति अत्यन्त उत्साह-युक्त। सारिपुत्र! ये सात विशेषताओंके लक्षण मैंने स्वयं जानकर, साक्षात् कर घोषित किये हैं। सारिपुत्र! इन सात विशेषताओंके लक्षणोंसे युक्त भिक्षु यदि बारह वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है, यदि चौबीस वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जाता सकता है; यदि छत्तीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है; यदि अड़तालीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् कौसम्बीके घोषितारामम़ें विहार करते थे। तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्नमें (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले श्रावस्तीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुए। तब आयुष्मान् आनन्दके मनमें यह बात आई—कौसम्बीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्बसे है। तब तक मैं जहाँ दूसरे तैर्थिकोंका परिब्राजक-आराम है, वहाँ ही चलूँ। तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ अन्य तैर्थिकोंका परिब्राजक-आराम था, वहाँ पहुँचे। जाकर अन्य तैर्थिक परिब्राजकोंसे कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकनेपर एक ओर बैठे। उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए अन्य तैर्थिक परिब्राजकोंमें यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो! जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य-वास करता है, उसे विशिष्ट (= निद्दस) कहा जा सकता है।

आयुष्मान् आनन्दने उन अन्य तैर्थिक परिब्राजकोंके कथनका न समर्थन किया, न खण्डन किया, न समर्थन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठ कर चले गये—भगवान् से इस कथनका स्पष्टीकरण जानूंगा।

तब आयुष्मान् आनन्द कौसम्बीमें भिक्षाटन कर, भिक्षा ग्रहण करनेके अनन्तर, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् आनन्दने भगवान् से यह कहा —

"भन्ते! मैं पूर्वाह्नमें (चीवर) पहन तथा पात्र-चीवर ले, कौसम्बीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुआ। भन्ते! उस समय मेरे मनमें यह हुआ—कौसम्बीमें भिक्षाटनके लिये घूमनेका ठीक समय अभी कुछ विलम्बसे है, तबतक मैं जहाँ दूसरे

तैर्थिकोंका परिव्राजक-आराम है, वहाँ ही चलूँ। तब भन्ते!....कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने पर एक ओर बैठा। भन्ते! उस समय उन बैठे हुए, उन एकत्र हुए अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंमें यह बातचीत चल रही थी कि आयुष्मानो! जो कोई बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य-वास करता है, उसे विशिष्ट (=निद्दस) कहा जा सकता है। भन्ते! मैंने उन अन्य तैर्थिक परिव्राजकोंके कथनका न समर्थन किया, न खण्डन किया। बिना समर्थन किये, बिना खण्डन किये, उठकर चला आया कि भगवान्‌से इस कथन का स्पष्टीकरण जानूँगा। भन्ते! क्या बुद्ध शासन (=धर्म-विनयमें) में केवल वर्ष-गणना से किसी भिक्षुको विशिष्ट माना जा सकता है?

आनन्द! इस बुद्ध-शासन (=धर्म-विनयमें) केवल वर्ष-गणनासे किसी भिक्षुको विशिष्ट नही घोषित किया जा सकता। आनन्द! विशेषताओंके ये सात लक्षण मैंने स्वयं जानकर, साक्षात् कर, घोषित किये हैं। कौनसे सात? आनन्द! भिक्षु श्रद्धा-वान् होता है, लज्जाशील होता है, (पाप-) भीरु होता है, बहुश्रुत होता है, प्रयत्नशील होता है, स्मृतिमान होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। आनन्द! विशेषताके ये सात लक्षण मैंने स्वयं जानकर, साक्षात् कर, घोषित किये हैं। आनन्द! विशेषताके इन सात लक्षणोंसे युक्त भिक्षु यदि बारह वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है, यदि चौबीस वर्ष तक भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है; यदि छत्तीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है; यदि अड़तालीस वर्ष भी ब्रह्मचर्य-वास करता है, तो भी उसे विशिष्ट माना जा सकता है।

(५) महायज्ञ वर्ग

भिक्षुओ, ये सात विज्ञान[1] (=चित्त) की स्थितियाँ हैं। कौन सी सात? भिक्षुओ, ऐसे प्राणी हैं, जिनके नाना तरहके आकार-प्रकार तथा नाना तरहकी संज्ञायें होती हैं, जैसे मनुष्य, कुछ देवता तथा कुछ प्रेत। यह पहली विज्ञानकी स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जिनके नाना तरहके आकार-प्रकार किन्तु एक ही तरहकी संज्ञा होती है, जैसे प्रथम ध्यानसे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मकायिक देवता। यह दूसरी विज्ञान-स्थिति है।

१-विज्ञान = प्रतिसन्धि-विज्ञान।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जिनके एक ही तरहके आकार-प्रकार होते हैं, किन्तु नाना तरह की संज्ञा होती है जैसे आभस्वर देवता। यह तीसरी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जिनके एक ही तरहके आकार-प्रकार और एक ही तरहकी संज्ञा होती है, जैसे शुभ-कृष्ण देवता। यह चौथी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जो सभी रूप संज्ञाओंका अतिक्रमण कर, प्रतिघ-संज्ञाओके अन्तर्धान हो जानेपर, नानात्व-संज्ञाके न होनेपर 'आकाश अनन्त है' इस आकाशानञ्चायतन स्थितिको प्राप्त होते हैं। यह पाँचवीं विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जो सभी आकाशानञ्चायतनका अतिक्रमण कर 'विज्ञान अनन्त है' इस विज्ञानञ्चायतन-स्थितिको प्राप्त होते हैं। यह छठी विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ऐसे प्राणी होते हैं, जो सभी 'विज्ञानञ्चायतन' का अतिक्रमण कर 'कुछ नहीं है' इस 'अकिञ्चञ्ञायतन' स्थितिको प्राप्त होते हैं। यह सातवीं विज्ञान-स्थिति है।

भिक्षुओ, ये सात विज्ञान-स्थितियाँ हैं।

भिक्षुओ, ये सात समाधिके सहायक-कारण (= परिष्कार) हैं। कौनसे सात? सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम तथा सम्यक् स्मृति। भिक्षुओ, जो चित्तकी एकाग्रता इन सात अंगोंसे युक्त होती है, इन सात अंगोंसे घिरी होती है, भिक्षुओ, इसे ही सउपनिशय सपरिष्कार सम्यक् समाधि कहते हैं।

भिक्षुओ, ये सात अग्नियाँ हैं। कौन सी सात? राग-अग्नि, द्वेष-अग्नि, मोह-अग्नि, सत्कार-भाजन-अग्नि, गृहपति-अग्नि, दक्षिणार्ह-अग्नि तथा काष्ठ अग्नि। भिक्षुओ, ये सात अग्नियाँ हैं।

उस समय उद्गत-शरीर ब्राह्मणके यहाँ महायज्ञ होने वाला था। यज्ञके निमित्त पाँच सौ वृषभ यूपके समीप लाये गये थे, यज्ञके निमित्त पाँच-सौ बछड़े यूपके समीप-लाये गये थे, यज्ञके निमित्त पाँच सौ बछड़ियाँ यूपके समीप लाई गई थीं, यज्ञके निमित्त पाँच सौ बकरे यूपके समीप लाये गये थे तथा यज्ञके निमित्त पाँच सौ मेंढें यूपके समीप लाये गये थे। तब उद्गत-शरीर ब्राह्मण जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवानका कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछ चुकने पर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—

"हे गौतम ! मैंने सुना है कि (यज्ञ के लिये) अग्नि का लाना और यूपका गड़वाना (उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

"हे ब्राह्मण ! मैंने भी सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गड़वाना (= उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

दूसरी बार और तीसरी बार भी उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—

"हे गौतम ! मैंने सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गड़वाना (= उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

"ब्राह्मण ! मैंने भी यह सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गड़वाना (= उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है।"

"हे गौतम ! तो आपका और हमारा कथन पूरी तरह एक दूसरेसे मेल खाता है।"

ऐसा कहने पर आयुष्मान् आनन्दने उद्गत-शरीर ब्राह्मणसे यह कहा— हे ब्राह्मण ! तथागतोंसे इस प्रकार प्रश्न नहीं करना चाहिये कि "हे गौतम ! मैंने सुना है कि (यज्ञके लिये) अग्निका लाना और यूपका गड़वाना (= उठवाना) महान् फलदायक होता है, बहुत शुभ होता है। "हे ब्राह्मण ! तथागतोंसे इस प्रकार याचना करनी चाहिये— "भन्ते ! मैं (यज्ञके लिये) अग्नि लाना चाहता हूँ, यूप गड़वाना (= उठवाना) चाहता हूँ। भन्ते ! भगवान् ! मुझे उपदेश दें। भन्ते ! भगवान् ! आप मुझे शिक्षा दें जो दीर्घ काल तक मेरे हित और सुखके लिये हो।"

तब उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवानसे यह कहा "भन्ते ! मैं (यज्ञके लिये) अग्नि लाना चाहता हूँ, यूप गड़वाना (= उठवाना) चाहता हूँ। भन्ते ! भगवान् ! मुझे उपदेश दें। भन्ते ! भगवान् ! आप मुझे शिक्षा दें जो दीर्घ काल तक मेरे हित और सुखके लिये हो।"

"ब्राह्मण ! (यज्ञके लिये) आग लाने वाला, यूप गड़वाने (= उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व तीन शस्त्र उठाता है, जो अकुशल (= अशुभ) होते हैं, जो दुःखदायी होते हैं तथा जिनका विपाक दुःख होता है,। कौनसे तीन शस्त्र ? शारीरिक शस्त्र, वाणीका शस्त्र तथा मनका शस्त्र। ब्राह्मण ! (यज्ञके लिये) अग्नि लाने वाला यूप गड़वाने (= उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस प्रकारके संकल्पको मनमें जगह देता है—'यज्ञके लिये इतने बैल (वृषभ) मारे जायें, यज्ञके लिये इतने बछड़े मारे जायें, यज्ञके लिये इतनी बछड़ियाँ मारी जायें, यज्ञके लिये इतने बकरे

मारे जायें, यज्ञके लिये, इतने मेढें मारे जायें। वह 'पुण्य करने जाकर' अपुण्य करता करता है, 'शुभ-कर्म (=कुशल कर्म) करने जाकर' अशुभ-कर्म करता है, सुगति (=स्वर्ग) का मार्ग खोजने जाकर दुर्गति (=नरक) का मार्ग खोजता है। ब्राह्मण (यज्ञके लिये) अग्नि लाने वाला, यूप गड़वाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस पहले मनके शस्त्रको उठाता है, जो अकुशल (=अशुभ) होता है, जो दुःखदायी होता है तथा जिसका विपाक दुःख होता है।

ब्राह्मण! फिर (यज्ञके लिये) अग्नि लानेवाला, यूप गड़वाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस प्रकारकी वाणी बोलता है—"यज्ञके लिये इतने बैल (=वृषभ) मारे जायें, यज्ञके लिये इतने बछड़े मारे जायें, यज्ञके लिये इतनी बछड़ियाँ मारी जायें, यज्ञके लिये इतने बकरे मारे जायें, यज्ञके लिये इतने मेढे मारे जायें।' वह 'पुण्य करने जाकर' अपुण्य करता है, 'शुभ कर्म (=कुशल कर्म) करने जाकर' अशुभ कर्म करता है, सुगति (=स्वर्ग) का मार्ग खोजने जाकर दुर्गति (=नरक) का मार्ग खोजता है। ब्राह्मण! (यज्ञके लिये) अग्नि लाने वाला, यूप गड़वाने (=उठवाने) वाला, यज्ञ करनेसे भी पूर्व इस दूसरे वाणीके शस्त्रको उठाता है, जो अकुशल (=अशुभ) होता है, जो दुःखदायी होता है तथा जिसका विपाक दुःख होता है।

ब्राह्मण! फिर (यज्ञके लिये) अग्नि लानेवाला, यूप गड़वाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व, प्रथम स्वयं ही यज्ञके लिये बैलों (=वृषभों) को मारता है, प्रथम स्वयं ही यज्ञके लिये बछड़ोंको मारता है, प्रथम स्वयं ही यज्ञके लिये बछड़ियोंको मारता है, प्रथम स्वयं ही यज्ञके लिये बकरोंको मारता है, प्रथम स्वयं ही यज्ञके लिये मेढोंको मारता है। वह 'पुण्य करने जाकर' अपुण्य करता है, 'शुभ कर्म' करने जाकर अशुभ-कर्म करता है, सुगति (=स्वर्ग) का मार्ग खोजने जाकर दुर्गति (=नरक) का मार्ग खोजता है। ब्राह्मण! (यज्ञके लिये) अग्नि लाने वाला, यूप गड़वाने (=उठवाने) वाला, यज्ञ करनेसे भी पूर्व, इस तीसरे शारीरिक शस्त्रको उठाता है, जो अकुशल होता है, जो दुःखदायी होता है तथा जिसका विपाक दुःख होता है। ब्राह्मण! (यज्ञके लिये) आग लानेवाला, यूप गड़वाने (=उठवाने) वाला यज्ञ करनेसे भी पूर्व तीन शस्त्र उठाता है, जो अकुशल होते हैं, जो दुःखदायी होते हैं तथा जिनका विपाक दुःख होता है।

ब्राह्मण! इन तीन अग्नियोंका त्याग कर देना चाहिए, दूर कर देना चाहिए; इनका सेवन नहीं करना चाहिए। कौन-सी तीन अग्नियोंका? राग-अग्निका, द्वेष-अग्निका तथा मोह-अग्निका।

ब्राह्मण ! राग-अग्निको क्यों त्याग देना चाहिये, क्यों दूर कर देना चाहिये, क्यों उसका सेवन नहीं करना चाहिये ? ब्राह्मण ! जो रागसे अनुरक्त रहता है, जो रागके वशीभूत रहता है, वह शारीरिक दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर अपायको (= दुर्गति) प्राप्त होता है तथा नरकमें जन्म ग्रहण करता है। इसलिए इस राग-अग्निको त्याग देना चाहिये, दूर कर देना चाहिये, इसका सेवन नहीं करना चाहिए।

ब्राह्मण ! द्वेष-अग्निको क्यों त्याग देना चाहिये, क्यों दूर कर देना चाहिये, क्यों उसका सेवन नहीं करना चाहिये ? ब्राह्मण ! जो द्वेषसे दूषित रहता है, जो द्वेषके वशीभूत रहता है, वह शारीरिक दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर अपायको (= दुर्गति) प्राप्त होता है तथा नरकमें जन्म ग्रहण करता है। इसलिये इस द्वेष-अग्निको त्याग देना चाहिए, दूर कर देना चाहिये, इसका सेवन नहीं करना चाहिए।

ब्राह्मण ! मोह-अग्निको क्यों त्याग देना चाहिये, क्यों दूर कर देना चाहिये, क्यों उसका सेवन नहीं करना चाहिये ? ब्राह्मण ! जो मोहसे मूढ़ रहता है, जो मोहके वशीभूत रहता है, वह शारीरिक दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है तथा मनसे दुष्कर्म करता है। वह शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म करके, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर अपायको (= दुर्गति) प्राप्त होता है तथा नरकमें जन्म ग्रहण करता है। इसलिये इस द्वेष अग्निको त्याग देना चाहिए, दूर कर देना चाहिए, इसका सेवन नहीं करना चाहिये।

ब्राह्मण ! तीन अग्नियाँ हैं ऐसी हैं जिनको सतत करना चाहिये, जिनका गौरव करना चाहिये, जिन्हें मानना चाहिये, जिन्हें पूजना चाहिये तथा जिनका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये। कौन-सी तीन ? सत्कार-भाजन अग्नि, गृह-पति—अग्नि तथा दक्षिणार्ह—अग्नि।

ब्राह्मण ! सत्कार-भाजन अग्नि कौन-सी है ? ब्राह्मण ! जो किसीके माता-पिता होते हैं, यही सत्कार-भाजन अग्नि है। ऐसा क्यों ! ब्राह्मण ! इसी आगसे आना हुआ, उत्पन्न होना हुआ; इसलिये इस सत्कार-भाजन अग्निका सत्कार करना चाहिये, गौरव करना चाहिये, मानना चाहिये, पूजा करनी चाहिये तथा इसका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये।

ब्राह्मण ! गृहपति-अग्नि कौन-सी है ? हे ब्राह्मण ! जो किसीके पुत्र, स्त्री, दास, नौकर-चाकर होते हैं, हे ब्राह्मण ! यही गृहपति-अग्नि है। इस लिये गृहपति-अग्निका सत्कार करना चाहिये, गौरव करना चाहिये, मानना चाहिये, पूजा करनी चाहिये तथा इसका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये।

ब्राह्मण ! दक्षिणार्ह—अग्नि कौन-सी होती है ? ब्राह्मण ! ऐसे श्रमण-ब्राह्मण होते हैं, जो पर-प्रवादों (= दूसरे विरोधी मतों) से विरत होते हैं, क्षमा तथा विनम्रतासे युक्त, अपने-आप अपना दमन करनेवाले, अपने-आप अपना शमन करने वाले, अपने-आप परिनिर्वाण (अग्नि-त्रयके शमन) को प्राप्त करने वाले होते हैं; ब्राह्मण ! ये ही दक्षिणार्ह-अग्नि कहलाते हैं। इसलिये इस दक्षिणार्ह—अग्निका सत्कार करना चाहिये, गौरव करना चाहिये, मानना चाहिये, पूजा करनी चाहिये तथा इसका अच्छी तरह सुखपूर्वक वहन करना चाहिये।

और हे ब्राह्मण ! यह जो काष्ठाग्नि है, इसे समय-समयपर प्रज्वलित करना होता है, समय-समयपर इसकी ओरसे उपेक्षावान् होता है, समय-समयपर बुझाना होता है, समय-समयपर सँभाल कर रखना होता है।

ऐसा कहनेपर उद्गत-शरीर ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—हे गौतम ! बहुत सुन्दर है। हे गौतम ! बहुत सुन्दर है........हे गौतम ! अबसे प्राण रहने तक आप मुझे अपना शरणागत उपासक समझें। हे गौतम ! मैं इन पाँच सौ बैलों (= वृषभों) को छोड़ता हूँ, इन्हें जीवन-दान देता हूँ। मैं इन पाँच सौ बछड़ोंको छोड़ता हूँ, इन्हें जीवन-दान देता हूँ। मैं इन पाँच सौ बछड़ियोंको छोड़ता हूँ, इन्हें जीवन-दान देता हूँ। मैं इन पाँच सौ बकरोंको छोड़ता हूँ, इन्हें जीवन-दान देता हूँ। इन पाँच सौ मेढ़ोंको छोड़ता हूँ, इन्हें जीवन-दान देता हूँ। ये हरी-हरी घास खायें। ये शीतल जल पीयें ! इन्हें ठण्डी-ठण्डी हवा लगे।

भिक्षुओ, ये सात संज्ञायें हैं, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है तथा अमृतकी प्राप्ति होती है। कौन-सी सात ? अशुभ-संज्ञा (= असौन्दर्य-भावना), मरण-संज्ञा, आहारके विषयमें प्रतिकूल-संज्ञा, सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी संज्ञा, अनित्य-संज्ञा, अनित्यके प्रति दुःख-संज्ञा, जो दुःखद है उसके अनात्म होनेकी संज्ञा। भिक्षुओ, ये सात संज्ञायें हैं, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है तथा अमृत की प्राप्ति होती है।

भिक्षुओ, ये सात संज्ञायें हैं, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ-परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, तथा अमृतकी प्राप्ति होती है। कौन-सी सात? अशुभ-संज्ञा (= असौन्दर्य्य–भावना) मरण-संज्ञा, आहारके विषयमें प्रतिकूल-संज्ञा, सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी संज्ञा अनित्य-संज्ञा, अनित्य के प्रति दुःख-संज्ञा, जो दुःख है उसके अनात्म होनेकी संज्ञा। भिक्षुओ, ये सात संज्ञायें हैं, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है तथा अमृतकी प्राप्ति होती है।

"भिक्षुओ, अशुभ-संज्ञाकी भावना (= अभ्यास) करनेसे, वृद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निग्न होना होता है, अमृत की प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अशुभ-संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त मैथुनकी इच्छासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो मैथुनकी ओर से उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है। भिक्षुओ, जैसे मुर्गीके परको या नहारुददुल (?) को आग पर डाला जाय, तो वह सिकुड़ जाता है, सिमट जाता है, उलट जाता है, फैलता नहीं है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अशुभ-संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त मैथुनकी इच्छासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो मैथुनकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

भिक्षुओ, यदि अशुभ-संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुका मन भी मैथुन-धर्मकी ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिए कि मैंने अशुभ-संज्ञाकी भावना (= अभ्यास) नहीं किया, जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ, मुझे भावनासे प्राप्त होनेवाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि अशुभ-संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवावेले भिक्षुका मन मैथुनकी इच्छासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो मैथुनकी इच्छासे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने अशुभ-संज्ञाकी भली प्रकार भावना की, जैसा मैं पहले था, वैसा अब नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है।

भिक्षुओ, अशुभ-संज्ञाकी भावना (= अभ्यास) करनेसे, वृद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है 'अमृतकी प्राप्ति होती है—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

'भिक्षुओ, मरण-संज्ञाकी भावना (= अभ्यास) करनेसे, वद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृत की प्राप्ति होती है,'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त मरण-संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त जीवनकी तृष्णा (= जीवित-निकन्ति) से प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो जीवनकी तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है। भिक्षुओ, जैसे मुर्गीके परको या नहारु दद्‌दुल (?) को आग पर डाला जाय, तो वह सिकुड़ जाता है, सिमट जाता है, उलट जाता है, फैलता, नहीं है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त मरण-संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त जीवनकी तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो जीवन-तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है, या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

भिक्षुओ, यदि मरण-संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन भी जीवनकी तृष्णा की ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने मरण-संज्ञा का अभ्यास नहीं किया, जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होनेवाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि मरण-संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन जीवनकी तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो जीवनकी तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने मरण-संज्ञा की भली प्रकार भावना की; जैसा मैं पहले था, वैसा अब नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, मरण संज्ञाकी भावना करनेसे, वृद्धि करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृत की प्राप्ति होती है—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, आहारके विषयमें प्रतिकूल संज्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा

गया, यह किस अर्थमें कहा गया ? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त आहारके विषयमें प्रतिकूल-संज्ञा से परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त रस-तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है. . . .उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है। भिक्षुओ, जैसे मुर्गीके परको या नहारु दद्दुल को आग पर डाला जाय, तो वह सिकुड़ जाता है, सिमट जाता है, उलट जाता है, फैलता नहीं है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त आहारके विषयमें प्रतिकूल संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त रस-तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता; या तो रस तृष्णाकी ओर से उपेक्षावान् हो जाता है, या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

"भिक्षुओ, यदि आहारके विषयमें प्रतिकूल संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन भी रस-तृष्णा की ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ ! उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने आहारके विषयमें प्रतिकूल संज्ञाका अभ्यास नहीं किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि आहारके विषयमें प्रतिकूल संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन रस–तृष्णासे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता ; या तो रस-तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता; या तो रस-तृष्णाकी ओरसे उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने आहारके विषयमें प्रतिकूल-संज्ञा की भली प्रकार भावना की; जैसा मैं पहले था, वैसा अब नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, आहारके विषयमें प्रतिकूल संज्ञाकी भावना करनेसे, महान फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है––यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

"भिक्षुओ, सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी की संज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'––यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया ? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी संज्ञा से परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त चित्र-विचित्र लोकसे प्रतिकूल हो

जाता है. . . . .उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है. . . . .भिक्षुओ जैसे. . . . फैलता नहीं है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त चित्र-विचित्र लोकसे प्रतिकूल हो जाता है, विरुद्ध हो जाता है, बदल जाता है, अनुकूल नहीं रहता, या तो चित्र-विचित्र लोककी ओर से उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

"भिक्षुओ, यदि सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी संज्ञा के अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन भी लोकोंके प्रति आसक्ति की ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने लोकोंके प्रति अनासक्ति की संज्ञाका अभ्यास नहीं किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि सभी लोकोंके प्रति अनासक्ति की संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुका मन चित्र-विचित्र लोकसे प्रतिकूल हो जाता है. . . .उपेक्षा-वान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ ! उस भिक्षुको यही समझना चाहिये, कि मैंने लोकोंके प्रति अनासक्तिकी संज्ञाकी भली प्रकार भावना की है। जैसा मैं पहले था, वैसा अब नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। भिक्षुओ, सभी लोकोंके प्रति अनासक्तिकी संज्ञा फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, इसी अर्थमें कहा गया।

'भिक्षुओ, अनित्य-संज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमेंकहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अनित्य संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त लाभ-सत्कार-प्रशंसासे प्रतिकूल हो जाता है. . . .उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है. . . . . .भिक्षुओ जैसे. . . . .फैलता नहीं है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त अनित्य-संज्ञासे परिचित होता है, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुका चित्त लाभ-सत्कार-प्रशंसासे प्रतिकूल हो जाता है. . . . .उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है।

"भिक्षुओ, यदि अनित्य संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुका मन भी लाभ-सत्कार-प्रशंसा की ओर झुकता है, अप्रतिकूल रहता है, तो

भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने अनित्य-संज्ञाका अभ्यास नहीं किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होनेवाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि अनित्य संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुका मन लाभ-सत्कार-प्रशंसासे प्रतिकूल हो जाता है. . . . उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है. . . . उपेक्षावान् हो जाता है या सर्वथा प्रतिकूल हो जाता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने अनित्य-संज्ञा की भली प्रकार भावना की है। जैसा मैं पहले था, वैसा अब नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, अनित्य संज्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थ में कहा गया।

भिक्षुओ, जो अनित्य है उसके प्रति दुःख-संज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त जो अनित्य है उसके प्रति दुःख-संज्ञासे परिचित होता है जो, प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुके चित्तमें आलस्यके प्रति, काहिलीके प्रति, आश्वस्त भावके प्रति, प्रमादके प्रति, अननुयोग (=योगाभ्यासमें न लगने) के प्रति तथा अप्रत्यवेक्षणा (=विचार न करने) के प्रति तीव्र भय की भावना जाग्रत हो जाती है, जैसे वधिकके द्वारा सिरपर तलवार उठी होने पर।

भिक्षुओ, यदि जो अनित्य है उसके प्रति दुःख संज्ञा के अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुके मनमें भी आलस्यके प्रति, काहिलीके प्रति, आश्वस्त भावके प्रति, प्रमादके प्रति, अननुयोग (=योगाभ्यास में न लगने) के प्रति, तथा अप्रत्यवेक्षणा (=विचार न करने) के प्रति तीव्र भयकी भावना जाग्रत नहीं होती, जैसी वधिकके द्वारा सिर पर तलवार उठी होने पर; तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने जो अनित्य है, उसके प्रति दुःख-संज्ञाका अभ्यास नहीं किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि जो अनित्य है, उसके प्रति दुःख संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुके मनमें आलस्यके प्रति, काहिलीके प्रति, अश्वस्त भावके प्रति, प्रमादके प्रति, अननुयोग (=योगाभ्यासमें न लगने) के प्रति तथा अप्रत्यवेक्षणा (=विचार न करने) के प्रति तीव्र भयकी भावना जाग्रत होती

है, जैसी वधिकके द्वारा सिरपर तलवार उठी होनेपर; तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने जो अनित्य है उसके प्रति दुःख-संज्ञाकी भली प्रकार भावना की है। जैसा मैं पहले था, वैसा अब नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, जो अनित्य है, उसके प्रति दुःख-संज्ञा की भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, जो दुःख है उसके प्रति अनात्म-संज्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'— यह जो कहा गया, यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, जिस भिक्षुका चित्त जो दुःख है उसके प्रति अनात्म-संज्ञासे परिचित होता है, जो प्रायः उसीमें रमण करता है, उस भिक्षुके चित्तसे इस सविज्ञान (= चेतना युक्त) शरीरके प्रति तथा सभी निमित्तों (= मनके विषयों)के प्रति जो अहंकार ('मैं-मेरा की') भावना होती है, उससे उसका चित्त रहित होता है, उसका चित्त विधा (नानात्व?) को लाँघ गया होता है, शान्त होता है, विमुक्त होता है।

भिक्षुओ, यदि जो दुःख है उसके प्रति अनात्म-संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करनेवाले भिक्षुके चित्तसे उस सविज्ञान (= चेतनायुक्त) शरीरके प्रति तथा सभी निमित्तों (= मनके विषयों) के प्रति जो अहंकार ('मैं-मेरा') की भावना होती है, उससे उसका चित्त रहित नहीं होता, उसका चित्त विधा (= नानात्व) को लाँघ नहीं गया होता, शान्त नहीं होता, विमुक्त नहीं होता, तो भिक्षुओ! उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने जो दुःख है उसके प्रति अनात्म-संज्ञा कर अभ्यास नहीं किया। जैसा मैं पहले था, वैसा ही अब हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल अप्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। लेकिन भिक्षुओ, यदि जो दुःख है, उसके प्रति अनात्म-संज्ञाके अभ्यासी, प्रायः उसीमें रमण करने वाले भिक्षुके चित्तसे उस सविज्ञान (= चेतना युक्त) शरीरके प्रति तथा सभी निमित्तों (= मनके विषयों)के प्रति जो अहंकार ('मैं मेरा')की भावना होती है, उससे उसका उचित रहित होता है, उसका चित्त विधा (नानत्व)?) को लाँघ गया होता है, शान्त होता है, विमुक्त होता है, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको यही समझना चाहिये कि मैंने जो दुःख है उसके प्रति अनात्म संज्ञाका भली प्रकार अभ्यास किया है।

जैसा मैं पहले था, अब वैसा नहीं हूँ। मुझे भावनासे प्राप्त होने वाला बल प्राप्त है। यही यथार्थ ज्ञान होता है। 'भिक्षुओ, जो दुःख है, उसके प्रति अनात्म-संज्ञाकी भावना करनेसे, महान् फल होता है, महान् शुभ परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है, अमृतकी प्राप्ति होती है'—यह जो कहा गया, यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षओ, ये सात संज्ञायें हैं, जिनका अभ्यास करनेसे, जिनमें वृद्धि होनेसे, महान फल होता है, महान् शुभ-परिणाम होता है, अमृतमें निमग्न होना होता है तथा अमृतकी प्राप्ति होती है।

तब जाणुस्सोणि ब्राह्मण जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान से कुशल-क्षेम पूछा। कुशल-क्षेम पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए जाणुस्सोणि ब्राह्मणने भगवान् से यह कहा—"हे गौतम! आप भी अपने ब्राह्मचारी होनेकी घोषणा करते हैं?"

"ब्राह्मण! यदि किसीके बारेमें किसीको ठीक-ठीक यह कहना हो कि वह अखण्डित, छिद्र-रहित, धब्बे रहित, दाग-रहित, परिपूर्ण, परिशुद्ध, ब्रह्मचर्यका आचरण करता है, तो वह मेरे ही बारेमें ठीक ठीक यह कह सकता है। ब्राह्मण! मैं अखण्डित, छिद्र-रहित, धब्बे-रहित, दाग-रहित, परिपूर्ण, परिशुद्ध, ब्रह्मचर्यका आचरण करता हूँ।"

"हे गौतम! क्या ब्रह्मचर्य भी खण्डित होता है, क्या ब्रह्मचर्यमें भी छिद्र होता है, क्या ब्रह्मचर्यमें भी धब्बा लगता है, क्या ब्रह्मचर्यमें भी दाग लगता है?"

ब्राह्मण! कोई-कोई श्रमण या ब्राह्मण अपनेको 'सम्यक् ब्रह्मचारी हूँ' कहनेके बावजूद किसी स्त्रीके साथ सहवास (=दो दोका एक होना) तो नहीं करते किन्तु स्त्री द्वारा उबटन लगवाना, मालिकशा-करवाना, स्नान करवाया जाना, बदन दबवाया जाना पसन्द करते हैं। वे उसका मजा लेते हैं, उसे चाहते हैं, उससे तृप्तिको प्राप्त होते हैं। ब्राह्मण! यह भी ब्रह्मचर्य में छेद होना है, यह भी ब्रह्मचर्य में धब्बा लगना है, यह भी ब्रह्मचर्यमें दाग लगना है। ब्राह्मण! इसको भी कहा जाता है कि यह ब्रह्मचर्यका अशुद्ध आचरण है, यह मैथुन-चेतनासे संयुक्त है। मैं कहता हूँ कि ऐसा आचरण करने वाला जन्म, जरा, मरण, शोक, रोना पीटना, दुःख, दौर्मनस्य तथा पश्चात्तापसे मुक्त नहीं होता और मुक्त नहीं होता है (सम्पूर्ण) दुःखसे।

फिर ब्राह्मण! कोई-कोई श्रमण या ब्राह्मण अपनेको 'सम्यक् ब्रह्मचारी हूँ' कहनेके बावजूद न स्त्रीके साथ सहवास (=दो दो का एक होना) करता है, न स्त्री

द्वारा उबटन लगवाना, मालिश करवाना, स्नान करवाया जाना, बदन दबवाया जाना पसन्द करता है, न उसमें मजा लेता है, न उसे चाहता है तथा न उससे तृप्ति प्राप्त करता है; किन्तु स्त्रियोंके साथ मजाक करता है, खेलता है तथा मनोविनोद करता है. . . .। न स्त्रियोंके साथ मजाक करता है, खेलता है, न मनोविनोद करता है; किन्तु स्त्रियोंसे आँखसे आँख मिलाकर उनकी ओर देखता है. . .। न स्त्रियोंसे आँख मिलाकर उनकी ओर देखता है; किन्तु दीवार या चारदीवारी की ओरसे स्त्रियोंके हँसनेका, बोलनेका, गानेका अथवा रोनेका शब्द सुनता है। न दीवार या चारदीवारीकी ओरसे स्त्रियोंके हँसनेका, बोलनेका, गानेका अथवा रोनेका शब्द सुनता है; किन्तु उसने स्त्रियोंके साथ पहले जो हँसना, बोलना, खेलना किया होता है, उसे याद करता है. . . .। न स्त्रियोंके साथ पहले जो हँसना, बोलना, खेलना किया होता है, उसे याद करता है, किन्तु दूसरे गृहपतियों या गृहपति-पुत्रोंकी ओर देखता है कि वह पाँचों इन्द्रियोंके भोगोंको भोग रहे हैं. . . .। न दूसरे गृहपतियों या गृहपति पुत्रोंकी ओर देखता है कि वे पाँचों इंद्रियोंके भोगोंको भोग रहे हैं, किन्तु वह किसी-न-किसी देव-लोकपर दृष्टि लगाकर ब्रह्मचर्य-वास करता है, कि इस शील-पालन वा व्रत-पालन वा तपस्याके फलस्वरूप मैं देवता होकर उत्पन्न होऊँगा वा देव पुत्र। वह उसमें मजा लेता है, वह उसे चाहता है, वह उससे तृप्ति प्राप्त करता है। ब्राह्मण! यह भी ब्रह्मचर्यमें छेद होना है, यह भी ब्रह्मचर्यमें धब्बा लगना है, यह भी ब्रह्मचर्यमें दाग लगना है। ब्राह्मण! इसको भी कहा जाता है कि यह ब्रह्मचर्यका अशुद्ध आचरण है, यह मैथुन-चेतनासे संयुक्त है। मैं कहता हूँ कि ऐसा आचरण करनेवाला, जन्म-जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य तथा पश्चातापसे मुक्त नहीं होता और मुक्त नहीं होता है (सम्पूर्ण) दुःखसे।

ब्राह्मण! जबतक मैंने इन सातों मैथुन-संयोगोंमेंसे एक को भी अपनेमें विद्यमान देखा, तबतक मैंने यह घोषणा नहीं की कि सदेव, समार, सब्रह्म तथा श्रमण-ब्राह्मणों और देव-मनुष्योंसे युक्त इस जनता (=प्रजा) में रहकर मैंने सम्यक् सम्बोधि को प्रत्यक्ष कर लिया।

ब्राह्मण! जब मैंने इन सातों मैथुन-संयोगोंमें से एक को भी अपनेमें विद्यमान नहीं देखा, तब ही मैंने यह घोषणा की कि सदेव, समार, सब्रह्म तथा श्रमण-ब्राह्मणोंसे और देव-मनुष्योंसे युक्त इस जनता (=प्रजा) में रहकर मैंने सम्यक् सम्बोधिको प्रत्यक्ष कर लिया। 'मुझे ज्ञान-दर्शन प्राप्त हुआ। मेरी विमुक्ति दृढ़ है। यह अन्तिम जन्म है। अब पुनर्भव नहीं है।"

ऐसा कहने पर जाणुस्सोणि ब्राह्मणने भगवानसे कहा—"भो गौतम ! बहुत सुन्दर है ! भो गौतम ! बहुत सुन्दर है।. . . .आप गौतम ! आजसे जीवन पर्यन्त मुझे अपना उपासक स्वीकार करें।

भिक्षुओ, संयोग–विसंयोग नामक प्रवचन (=धर्म परियाय) का उपदेश करता हूँ। उसे सुनो. . . . भिक्षुओ, वह संयोग-विसंयोग धर्म-परियाय कौनसा है ?

भिक्षुओ, स्त्री अपने स्त्रीत्व (स्त्री-इन्द्रिय) का ध्यान करती है, स्त्रियोंके हाव-भावका, स्त्रियोंकी वेश-भूषाका, स्त्रियोंके रंग-ढंगका, स्त्रियोंकी इच्छाओंका, स्त्रियों के स्वरका तथा स्त्रियोंके अलंकारका वह उन इन सबका ध्यान कर आनन्दित होती है, प्रमुदित होती है। इन सबको लेकर आनन्दित होती हुई, प्रमुदित होती हुई (अपनेसे) बाहर पुरुषत्व (=पुरुषेन्द्रिय) का ध्यान करती है, पुरुषोंके हाव-भावका, पुरुषोंकी वेश-भूषाका, पुरुषोंके रंग ढंगका, पुरुषोंकी इच्छाओंका, पुरुषोंके स्वरका तथा पुरुषोंके अलंकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित होती है, प्रमुदित होती है। इन सबको लेकर आनन्दित होती हुई, प्रमुदित होती हुई वह (अपनेसे) बाहर पुरुषके साथ संयोग (=सहवास) की इच्छा करती है। उस संयोग (=सहवास) से उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा करती है। भिक्षुओ, स्त्रीत्वमें रमण करनेवाले प्राणी पुरुषोंके साथ संयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री स्त्रीत्वका अतिक्रमण नहीं करती।

भिक्षुओ, पुरुष अपने पुरुषत्व (=पुरुष-इन्द्रिय) का ध्यान करता है, पुरुषों के हाव-भावका, पुरुषोंकी वेश-भूषाका, पुरुषोंके रंग-ढंगका, पुरुषोंकी इच्छाओं का, पुरुषोंके स्वरका तथा पुरुषोंके अलंकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित होता है, प्रमुदित होता है। इन सबको लेकर आनन्दित होता हुआ, प्रमुदित होता हुआ (अपनेसे) बाहर स्त्रीत्व (=स्त्री-इन्द्रिय) का ध्यान करता है, स्त्रियोंके हाव-भावका, स्त्रियोंकी वेश-भूषाका, स्त्रियोंके रंग-ढंगका, स्त्रियोंकी इच्छाओंका, स्त्रियोंके स्वरका तथा स्त्रियोंके अलंकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित होता है। प्रमुदित होता है। इन सबको लेकर आनन्दित होता हुआ, प्रमुदित होता हुआ वह (अपनेसे) बाहर स्त्रीके साथ संयोग (=सहवास) की इच्छा करता है। उस संयोग (=सहवास) से उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा करता है। भिक्षुओ, पुरुषत्व-भावमें रमण करने वाले प्राणी स्त्रियोंके

साथ संयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार पुरुष पुरुषत्वका अतिक्रमण नहीं करता। भिक्षुओ, इस प्रकार संयोग होता है।

भिक्षुओ, विसंयोग कैसे होता है? भिक्षुओ, स्त्री अपने स्त्रीत्व (=स्त्री-इन्द्रिय) का ध्यान नहीं करती है, स्त्रियों के हाव-भावका, स्त्रियोंकी वेश-भूषाका, स्त्रियोंके रंग-ढंगका, स्त्रियोंकी इच्छाओंका, स्त्रियोंके स्वरका तथा स्त्रियोंके अलंकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित नहीं होती है, प्रमुदित नहीं होती है। इन सबको लेकर आनन्दित न होती हुई, प्रमुदित न होती हुई (अपनेसे) बाहर पुरुषत्व (=पुरुषेन्द्रिय) का ध्यान नहीं करती है, पुरुषोंके हाव-भावका, पुरुषोंकी वेश-भूषाका, पुरुषोंके रंग-ढंगका, पुरुषोंकी इच्छाओंका, पुरुषोंके स्वरका तथा पुरुषोंके अलंकारका वह इन सबका ध्यान न कर आनन्दित नहीं होती है, प्रमुदित नहीं होती है। इन सबको लेकर आनन्दित न होती हुई, प्रमुदित न होती हुई, वह (अपने) से बाहर पुरुषके साथ संयोग (=सहवास) की इच्छा नहीं करती है। उस संयोग (=सहवास) से उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा नहीं करती है। भिक्षुओ, स्त्रीत्वमें रमण न करने वाले प्राणी पुरुषोंके साथ विसंयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री स्त्रीत्वका अतिक्रमण कर जाती है।

भिक्षुओ, पुरुष अपने पुरुषत्व (=पुरुष-इन्द्रिय) का ध्यान नहीं करता है, पुरुषोंके हाव-भावका, पुरुषोंकी वेश-भूषाका, पुरुषोंके रंग-ढंगका, पुरुषोंकी इच्छाओंका, पुरुषोंके स्वरका तथा पुरुषोंके अलंकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित नहीं होता है प्रमुदित नहीं होता है। इन सबको लेकर आनन्दित न होता हुआ, प्रमुदित न होता हुआ (अपनेसे) बाहर स्त्रीत्व (=स्त्री-इन्द्रिय) का ध्यान नहीं करता है, स्त्रियोंके हाव-भावका, स्त्रियोंकी वेश-भूषाका, स्त्रियोंके रंग-ढंगका, स्त्रियोंकी इच्छाओंका, स्त्रियोंके स्वरका तथा स्त्रियोंके अलंकारका। वह इन सबका ध्यान कर आनन्दित नहीं होता है, प्रमुदित नहीं होता है। इन सबको लेकर आनन्दित न होता हुआ, प्रमुदित न होता हुआ, वह (अपनेसे) बाहर स्त्रीके साथ संयोगकी इच्छा नहीं करता है। उस संयोगसे उसे जिस सुख, सौमनस्यकी प्राप्ति होती है, उसकी इच्छा नहीं करता है। भिक्षुओ, पुरुषत्वमें रमण न करने वाले प्राणी स्त्रियोंके साथ विसंयोगको प्राप्त हुए। भिक्षुओ, इस प्रकार पुरुष पुरुष-भावका अतिक्रमण कर जाता है। भिक्षुओ, यही संयोग-विसंयोग धर्म-परियाय है।

एक समय भगवान चम्पामें गगरा पुष्करिणी के किनारे बिहार कर रहे थे। उस समय चम्पा नगरीके बहुतसे उपासक जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र थे, वहाँ पहुँचे।

पास जाकर आयुष्मान् सारिपुत्र को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए चम्पाके उपासकोंने आयुष्मान् सारिपुत्रसे यह कहा—"भन्ते! भगवान्से धार्मिक कथा सुने चिरकाल हो गया। भन्ते! अच्छा हो, यदि हमें भगवानसे धर्मोपदेश सुननेको मिले।"

"तो आयुष्मानो! उपोसथके दिन चले आना। हो सकता है कि भगवान् का प्रवचन सुननेके लिये मिल जाय।"

"भन्ते! अच्छा" कह चम्पाके उपासक, आयुष्मान् सारिपुत्रको प्रतिवचन दे आसनसे उठ, आयुष्मान् सारिपुत्र को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर, चले गये।

तब चम्पाके उपासक उपोसथके दिन जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर आयुष्मान् सारिपुत्रको प्रणामकर एक ओर बैठ गये। तब उन चम्पाके उपासकोंको साथ ले, आयुष्मान् सारिपुत्र जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे यह कहा—

"भन्ते! क्या ऐसा होता है कि एक के द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान फल-दायक होता है न उसका महान् शुभ परिणाम होता है? भन्ते! क्या ऐसा होता है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान फल-दायक होता है तथा महान् शुभ परिणाम वाला?"

"सारिपुत्र! ऐसा होता है कि एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान् फल-दायक होता है, न उसका महान् शुभ परिणाम होता है।

सारिपुत्र! ऐसा होता है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान फल-दायक होता है तथा महान् शुभ-परिणाम वाला।

"भन्ते! इसका क्या हेतु है, क्या कारण है, कि एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान फल-दायक होता है, न उसका महान् शुभ परिणाम होता है। भन्ते! इसका क्या हेतु है, क्या कारण है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान् फल-दायक होता है, उसका महान् शुभ परिणाम होता है?"

"सारिपुत्र! यहाँ कोई-कोई व्यक्ति तृष्णा-युक्त चित्तसे, आसक्ति-युक्त चित्तसे, इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि उसका परलोकमें भोग करूँगा, दान देता है। वह श्रमण या ब्राह्मणको वह दान—अन्न (=भोजन), पान (पेय्य), वस्त्र, वाहन,

माला गन्ध विलेपन, शयनासन, निवासस्थान तथा प्रदीपकी सामग्री—देता है। सारिपुत्र ! तो क्या मानते हो, इस तरहका दान दिया जाता है न ?"

"भन्ते ! हाँ।"

'हे सारिपुत्र ! जो व्यक्ति इस प्रकार तृष्णा-युक्त चित्तसे दान देता है, आसक्ति, युक्त चित्तसे दान देता है, इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि इसका परलोकमें भोग करूँगा दान देता है। वह उस दानको देकर, शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, चातुर्महा-राजिक देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न होता है। उस कर्मके फलको भोग चुकनेके अनन्तर, उस समृद्धि, उस ऐश्वर्य, उस आधिपत्यसे रहित होकर वह फिर इसी लोकमें जन्म ग्रहण करता है।

"किन्तु हे सारिपुत्र ! एक व्यक्ति न तृष्णा-युक्त चित्तसे दान देता है, न आसक्ति-युक्त चित्तसे दान देता है, न इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि इसका परलोकमें भोग करूँगा, दान देता है। किन्तु दान देना अच्छा है, यही समझकर दान देता है.......। दान देना अच्छा है, यही समझकर दान नहीं देता है, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वंश-मर्यादाका त्यागना उचित नहीं.....। यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वंश-मर्यादाका त्यागना उचित नहीं' सोच दान नहीं देता, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि मैं तो पकाता हूँ, और ये नहीं पकाते हैं, और यह उचित नहीं है कि पकानेवाला, न पकानेवालोंको न दे....।" मैं तो पकाता हूँ, किन्तु ये नहीं पकाते हैं, और यह उचित नहीं हैं कि पकानेवाला, न पकानेवालोंको न दे, सोच दान नहीं देता है, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियोंके वे महान यज्ञ हुए—अष्ठकके, वामके, वामदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अंगीरसके, भारद्वाजके, वसिष्ठके, काश्यपके, भृगुके—उन्हींके समान मेरा यह दान बँटवारा होगा सोचकर दान देता हैं...। यह सोचकर दान नहीं देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियोंके वे महान् यज्ञ हुए—अष्ठकके, वामके, वामदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अंगीरसके, भारद्वाजके वसिष्ठके, काश्यपके, भृगके—उन्हींके समान मेरा यह दान-बँटवारा होगा, सोच दान नहीं देता; किन्तु यह सोचकर दान देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता हैं, सन्तुष्ट होता है, सौमनस्य पैदा होता है.....। यह सोचकर भी दान नहीं देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता है, सन्तुष्ट होता है, सौमनस्य पैदा होता है, किन्तु यह समझकर दान देता है कि दान देना चित्तका अलंकार है, दान देना चित्तका परिष्कार है। वह

श्रमण या ब्राह्मणको वह दान—अन्न (=भोजन) पान (=पेय्य) वस्त्र, वाहन, माला गन्ध विलेपन, शयनासन, निवासस्थान तथा प्रदीपकी सामग्री—देता है। सारिपुत्र! तो क्या मानते हो, इस तरह का दान दिया जाता है न?

"भन्ते! हाँ।"

"सारिपुत्र! जो व्यक्ति न तृष्णा-युक्त चित्तसे दान देता है, न आसक्ति-युक्त चित्तसे दान देता है, न इकट्ठा भोगनेकी भावनासे कि इसका परलोकमें भोग करूँगा, दान देता है; किन्तु दान देना अच्छा है, यही समझकर दान देता है.....। दान देना अच्छा है, यही समझकर दान नहीं देता, किन्तु यह सोचकर दान देता है कि यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वंश-मर्यादाका त्यागना उचित नहीं.....। यह पिता-पितामहसे चली आई परम्परा है, इस पुरानी वंश-मर्यादाका त्यागना उचित नहीं है, सोच दान नहीं देता; किन्तु यह सोचकर दान देता है कि मैं तो पकाता हूँ, और ये नहीं पकाते हैं; और यह उचित नहीं है कि पकाने वाला न पकाने वालेको न दे.....। मैं तो पकाता हूँ, किन्तु ये नहीं पकाते हैं, और यह उचित नहीं है कि पकाने वाला न पकाने वालेको न दे, सोच दान नहीं देता है; किन्तु यह सोचकर दान देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियोंके वे महान यज्ञ, हुए—अष्ठकके, वामके, वामदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अंगीरसके, भारद्वाजके वसिष्ठके, काश्यपके, भृगुके—इन्हींके समान मेरा यह दान-बँटवारा होगा, सोच दान देता है.......। यह सोच कर दान नहीं देता है कि जैसे उन पूर्वके ऋषियों के वे महान यज्ञ हुए-अष्ठकके, वामके, वांमदेवके, विश्वामित्रके, यमदग्निके, अंगीरसके, भारद्वाजके, वसिष्ठके, काश्यपके, भृगुके—इन्हींके समान मेरा यह दान-बँटवारा होगा, सोच दान नहीं देता! किन्तु यह सोचकर दान देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता है, सन्तुष्ट होता है, सौमनस्य पैदा होता है....। यह सोचकर भी दान नहीं देता है कि इस दानके देते समय मेरा चित्त प्रसन्न होता है, सन्तुष्ट होता है, सोमनस्य पैदा होता है; किन्तु यह समझकर दान देता है कि यह दान चित्तका अलंकार है, दान देना चित्तका परिष्कार है। वह इस दानको देकर, शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर ब्रह्मकायिक देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न होता है। उस कर्मके फलको भोग चुकनेके अनन्तर, उस ऋद्धि, उस ऐश्वर्य, उस अधिपत्यसे रहित होकर वह अनागामि होता है—फिर इस लोकमें जन्म न ग्रहण करने वाला।

सारिपुत्र! उसका यह हेतु है, यह कारण है कि एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान न महान फलदायक होता है, न उसका महान् शुभ परिणाम होता है।

सारिपुत्र ! इसका यह हेतु है, इसका यह कारण है कि (दूसरे) एकके द्वारा दिया गया वैसा ही दान महान् फल-दायक होता है, उसका महान् शुभ परिणाम होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र तथा आयुष्मान् महा-मौद्गल्यायन बड़े भारी भिक्षु संघके साथ दक्षिण गिरिमें चारिका कर रहे थे। उसी समय (की बात है कि) वेळुकण्डक नगरमें रहनेवाली नन्दमाता उपासिका रात्रिके ब्राह्म-मुहूर्त (=प्रत्यूषकाल) में उठकर (मधुर) स्वरसे पारायनं सूत्र[1] का पाठ करती थी।

उस समय महाराज वैश्रवण किसी कामसे उत्तर दिशासे दक्षिण दिशाकी ओर जा रहे थे। महाराज वैश्रवणने सुना कि उपासिका नन्दमाता (मधुर-) स्वरसे पारायनं-सूत्रका पाठ कर रही है। महाराज वैश्रवण पाठ (=कथा) की समाप्तिकी प्रतीक्षा करते रहे।

तब नन्दमाता उपासिका मधुर स्वरसे पारायनं सूत्रका पाठ कर चुकनेपर चुप हो गई। तब महाराज वैश्रवणने जब यह जाना कि उपासिका नन्दमाताका सस्वर पाठ समाप्त हो गया है तो उन्होंने उसका अनुमोदन किया--"बहन ! बहुत अच्छा। बहन ! बहुत अच्छा।"

"भद्रमुख ! यह आप कौन हैं?"

"बहिन ! मैं तेरा भाई हूँ वैश्रवण महाराज।"

"भद्रमुख; तो मैंने जो यह धर्म-परियाय (=पाठ) कहा, वही तेरा आतिथ्य हो।"

"अच्छा ! बहन ! यही मेरा आतिथ्य हो। कल प्रातःकाल ही सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसंघ बिना जलपान किये वेळुकण्डक आ रहे हैं। उस भिक्षु-संघको भोजन कराकर 'दक्षिणा' की घोषणा मेरी ओरसे कर देना। यही मेरा आतिथ्य होगा।

तब उस रातके बीतनेपर उपासिका नन्द माताने अपने घरपर बढ़िया भोजन तैयार करवाया। तब सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसंघ बिना ही जलपान किये वेळुकण्डक पहुँचा। तब उपासिका नन्द माताने एक आदमीको सम्बोधित किया --हे पुरुष। यहाँ आओ। विहार जाकर भिक्षुसंघको (भोजनके) समयकी सूचना दो--"भन्ते ! आर्या नन्द माताके घरपर भोजन तैयार है।"

---

१. संयुक्त निकाय

'आर्ये ! अच्छा' कह उस आदमीने उपासिका नन्द माताको प्रति-वचन दिया और विहार पहुँच कर भिक्षुसंघको (भोजनके) समयकी सूचना दी—भन्ते। आर्या नन्दमाताके घर भोजन तैयार है, (चलनेका) समय है।

तब सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसंघने पूर्वान्ह समय पात्र-चीवर ले, जहाँ उपासिका नन्दमाताका घर था, वहाँ प्रवेश किया। जाकर भिक्षु-गण बिछे आसनपर बैठे। तब उपासिका नन्दमाताने सारिपुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षुसंघको अपने हाथसे परोस-परोसकर बढ़िया भोजन कराया।

आयुष्मान् सारिपुत्रके भोजन कर चुकनेपर, पात्रसे हाथ खींच लेनेपर उपासिका नन्द माता एक ओर बैठी। एक ओर बैठी उपासिका नन्दमातासे आयुष्मान् सारिपुत्रने प्रश्न किया—"नन्दमाते ! तुझे भिक्षुसंघके आगमनकी पूर्व-सूचना किसने दी ?"

"भन्ते ! रात्रिके प्रत्यूष कालमें उठकर मैंने पारायन-सूत्रका सस्वर पाठ किया और तदनन्तर चुप हो गई। तब भन्ते ! महाराज वैश्रवणने मेरा सूत्र-पाठ समाप्त हुआ जान उसका अनुमोदन किया—

"बहन ! बहुत अच्छा। बहन ! बहुत अच्छा।"

"भद्रमुख ! तू कौन है ?" मैंने पूछा।

"बहन ! मैं तेरा भाई महाराज वैश्रवण हूँ" उत्तर दिया।

"भद्रमुख। तो मैंने जो यह धर्म-पर्याय कहा, यही तेरे लिये आतिथ्य हो," मैंने कहा।

"बहन ! अच्छा है, यही मेरा आतिथ्य हो। कल प्रातःकाल ही सारि-पुत्र-मौद्गल्यायन प्रमुख भिक्षु-संघ बिना जल-पान किये वेळुकण्डक पधार रहे हैं। उस भिक्षु-संघको भोजन कराकर 'दक्षिणा' की घोषणा मेरी ओरसे कर देना। इस प्रकार मेरा आतिथ्य होगा," उत्तर था।

"भन्ते ! इस दानमें जो पुण्य है तथा जो पुण्यमय है, वह महाराज वैश्रवणके सुखका हेतु हो।"

"नन्दमाता, आश्चर्य है। नन्दमाता ! अद्भुत है। तूने इस प्रकारके ऋद्धिवान महान प्रतापी देवपुत्र महाराज वैश्रवणसे आमने सामने बात की।"

"भन्ते ! यही आश्चर्यकी अद्भुत बात नहीं है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्भुत बात है। भन्ते ! नन्द नामका मेरा अत्यन्त प्रिय इकलौता पुत्र था। उसे राजाके आदमियोंने किसी सिलसिलेमें घसीट कर, दबाकर जानसे मार डाला।

भन्ते ! उस बच्चेके पकड़ लिये जानेपर या पकड़ लिये जाते समय, वध किये जानेपर या वधे किये जाते समय, मार डालनेपर या मारे जाते समय मेरे चित्तमें कुछ भी विकृति नहीं आयी।

"नन्दमाता ! आश्चर्य है, अद्भुत है। तू चित्तकी उत्पत्ति तककी शुद्धता की रक्षा करती है।"

"भन्ते ! यही आश्चर्य की अद्भुत बात नहीं है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्भुत है। भन्ते ! मेरा पति मरकर यक्ष होकर उत्पन्न हुआ है। वह अपने उसी पूर्व-रूपमें अपने आपको प्रकट करता है। भन्ते ! मैं नहीं जानती कि उससे मेरे चित्तमें कुछ भी विकृति आई हो।

"नन्दमाता ! आश्चर्य है, अद्भुत है। तू चित्तकी उत्पत्ति तककी शुद्धता की रक्षा करती है।"

"भन्ते ! यही आश्चर्यकी अद्भुत बात नहीं है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्भुत बात है। भन्ते ! जब मेरा पति छोटा था और मैं भी छोटी थी, तभी मैं अपने स्वामीके लिये लाई गई। मैं नहीं जानती कि मनसे भी मैंने कभी कदाचार किया हो, शरीरकी बात ही नहीं।"

"नन्दमाता ! आश्चर्य है, अद्भुत है। तू चित्तकी उत्पत्ति तककी शुद्धताकी रक्षा करती है।"

"भन्ते ! यही आश्चर्य की अद्भुत बात नहीं है। एक दूसरी भी आश्चर्यकी अद्भुत बात है। भन्ते ! जबसे मैं उपासिका बनी हूँ, मैं नहीं जानती कि मैंने जान बूझकर एक भी शिक्षा-पदका उल्लंघन किया हो।"

"नन्दमाता ! आश्चर्य है। नन्दमाता ! अद्भुत है।"

"भन्ते ! यही आश्चर्यप्रद अद्भुत बात नहीं है। एक दूसरी भी आश्चर्य-प्रद अद्भुत बात है। भन्ते ! मैं जब भी आकांक्षा करती हूँ तभी काम-वितर्कोंसे रहित हो, बुरे विचारोंसे रहित हो सवितर्क, सविचार, विवेकसे उत्पन्न प्रीति-सुख युक्त प्रथम-ध्यानको प्राप्त कर विहार करती हूँ। वितर्क और विचारोंके उपशमनसे, अन्दरकी प्रसन्नता और एकाग्रता रूपी वितक-रहित, विचार-रहित, विवेकसे उत्पन्न, प्रीति-सुख युक्त द्वितीय ध्यानको प्राप्त हो विहार करती हूँ। प्रीतिसे भी विरक्त हो, उपेक्षावान् वन विहार करती हूँ—स्मृतिमान्, ज्ञानवान्, (मन–) शरीरसे सुखका अनुभव करती हुई। जिसे 'आर्य-जन उपेक्षावान्, स्मृतिमान्, सुखविहारी' कहते हैं, उस तृतीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करती हूँ। सुख और दुःख दोनोंके

प्रहाणसे, सौमनस्य और दौर्मनस्यके पहले ही अस्त हुए रहनेसे, दुःख-रहित, सुख-रहित केवल उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि युक्त चतुर्थ-ध्यान को प्राप्त कर विहार करती हूँ।"

"नन्दमाता! यह आश्चर्यप्रद है। नन्दमाता! यह अद्भुत है।

"भन्ते! यही आश्चर्यप्रद अद्भुत बात नहीं है। एक दूसरी भी आश्चर्य-प्रद अदभुत बात है। भन्ते! भगवानने जो कामावचर लोकके संयोजन बताये हैं, उनमें एक भी ऐसा नहीं है, जो मुझमें विद्यमान हो।"

"नन्दमाता! आश्चर्य है। नन्दमाता! अद्भुत है।"

तब आयुष्मान् सारिपुत्र उपासिका नन्दमाताको धार्मिक बातचीत प्रकट कर, उससे परिचित कर, उससे उत्साहित कर, उससे प्रफुल्लित कर, आसनसे उठकर चले गये।

(६) अव्याकृत वर्ग

उस समय एक भिक्षु जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उस भिक्षुने भगवान्से यह कहा--"भन्ते! इसका क्या हेतु है, क्या कारण है कि जो ज्ञानी आर्य श्रावक है, उसके मनमें अव्याकृत-विषयोंके बारेमें सन्देह उत्पन्न नहीं होता?"

"भिक्षु, जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, (मिथ्या-) दृष्टिका निरोध हो चुका रहनेके कारण, उसके मनमें अव्याकृत-विषयोंके बारेमें शंका पैदा नहीं होती! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते हैं', भिक्षु! यह भी (मिथ्या-) दृष्टि है; 'तथागत मरनेके अनन्तर नहीं होते हैं', भिक्षु! यह भी (मिथ्या-) दृष्टि है; 'तथागत मरनेके अनन्तर होते भी हैं और नहीं भी होते हैं, भिक्षु! यह भी (मिथ्या-) दृष्टि है; तथागत नहीं होते हैं और नहीं नहीं होते हैं,' भिक्षु! यह भी (मिथ्या-) दृष्टि है, भिक्षु! जो अज्ञानी है, वह (मिथ्या-) दृष्टिको नहीं जानता, (मिथ्या-) दृष्टिकी उत्पत्तिको नहीं जानता, (मिथ्या-) दृष्टिके निरोधको नहीं जानता; (मिथ्या-) दृष्टिके निरोधकी ओर ले जानेवाले मार्गको नहीं जानता। उसकी वह (मिथ्या-) दृष्टि वृद्धिको प्राप्त होती है। वह जन्म, जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, पश्चात्तापसे मुक्त नहीं होता, मैं कहता हूँ कि वह (सम्पूर्ण) दुःखसे मुक्त नहीं होता।

भिक्षु! ज्ञानी (बहुश्रुत) आर्य-श्रावक दृष्टिको जानता है, (मिथ्या–) दृष्टिकी उत्पत्तिको जानता है, (मिथ्या–) दृष्टिके निरोधको जानता है, (मिथ्या–) दृष्टिके निरोधकी ओर ले जानेवाले मार्गको जानता है। उसकी वह' (मिथ्या–) दृष्टि निरोधको प्राप्त होती है, वह जन्म-जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, पश्चातापसे मुक्त होता है; मैं कहता हूँ कि वह (सम्पूर्ण) दुःख से मुक्त होता है। भिक्षु! इस प्रकार जानता हुआ, इस प्रकार देखता हुआ जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, वह यह नहीं कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर होते हैं'; वह यह भी नहीं कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर नहीं होते हैं;' वह यह भी नहीं कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर होते भी हैं, और नहीं भी होते हैं; वह यह भी नहीं कहता कि 'तथागत मरनेके अनन्तर न होते हैं और न नहीं होते हैं,' भिक्षु। इस प्रकार जानने वाला, इस प्रकार देखनेवाला जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है वह अव्याकृत-बातोंको बे कहा (=अव्याकृत) ही रखता है। भिक्षु! इस प्रकार जाननेवाला, इस प्रकार देखनेवाला जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है वह अव्याकृत-विषयोंको लेकर न घबराता है, न काँपता है, न रोमांचित होता है और न त्रासको प्राप्त होता है।

४. भिक्षु! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते हैं', यह मान्यता तृष्णा-मात्र है; ......संज्ञा-मात्र है; मान्यता-मात्र है,.......प्रपंच मात्र है; ...... उपादान-मात्र है........। भिक्षु! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते हैं', यह पश्चात्ताप मात्र है; भिक्ष! 'तथागत मरनेके अनन्तर नहीं होते,' यह भी पश्चात्ताप मात्र है; भिक्षु! 'तथागत मरनेके अनन्तर होते भी हैं और नहीं भी होते हैं' यह भी पश्चात्ताप-मात्र है; भिक्षु! 'तथागत नहीं होते हैं और नहीं नहीं होते हैं', यह भी पश्चात्ताप मात्र है। भिक्षु! जो अज्ञानी पृथकजन (=सामान्यजन) है वह 'पश्चात्ताप' को नहीं जानता, 'पश्चात्ताप' के समुदयको नहीं जानता, 'पश्चात्ताप' के निरोधको नहीं जानता, 'पश्चात्ताप' के निरोधकी ओर ले जानवाली प्रतिपदाको नहीं जानता। उसका 'पश्चात्ताप' बढ़ता है। वह जन्म, जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुःख, दौर्मनस्य, पश्चात्तापसे मुक्त नहीं होता और मैं कहता हूँ कि (सम्पूर्ण) दुःखसे मुक्त नहीं होता।

भिक्षु! जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, वह 'पश्चात्ताप' को जानता है, 'पश्चा-त्ताप' के समुदयको जानता है, 'पश्चात्ताप' के निरोधको जानता है, 'पश्चात्ताप' के निरोधकी ओर ले जाने वाले मार्गको जानता है। उसका वह 'पश्चात्ताप' निरोधको प्राप्त होता है, वह जन्म, जरा.......मुक्त होता है। भिक्षु, इस प्रकार जानता

हुआ, वह यह नहीं कहता कि तथागत मरनके अनन्तर होते है...... वह यह भी नहीं कहता कि तथागत मरनेके अनन्तर न होते हैं और न नहीं होते हैं। भिक्षु! इस प्रकार जानने वाला, इस प्रकार देखने वाला जो आर्य-श्रावक है वे अव्याकृत-बातोंको बे कहा (=अव्याकृत) ही रखता है। भिक्षु! इस प्रकार जाननेवाला, इस प्रकार देखनेवाला जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, वह अव्याकृत विषयोंको लेकर न घबराता है, न काँपता है, न रोमांचित होता है और न त्रासको प्राप्त होता है। भिक्षु! इसका यही हेतु है, यही कारण है कि जो ज्ञानी आर्य-श्रावक है, उसके मनमें अव्याकृत विषयोंके बारेमें सन्देह उत्पन्न नहीं होता।

भिक्षुओ, मैं सात पुरुष-गतियों (=ज्ञानकी अवस्थाओं) की देशना करता हूँ तथा अप्रत्यय निर्वाण की। उसे सुनो। अच्छी तरह मनमें धारण करो, कहता हूँ। "भन्ते! बहुत अच्छा" कह उन भिक्षुओंने भगवान्को प्रतिवचन दिया। भगवान्ने ऐसा कहा—

"भिक्षुओ, सात पुरुष-गतियाँ कौन-सी हैं?

"भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्य्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होने वाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है; (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा; भविष्यमें मेरा (जन्म) न होगा; जो है, जो विद्यमान है;—उसे छोड़ता हूँ—इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह न (पूर्व–) भवमें अनुरक्त होता है और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठ तर पद (=स्थान) को देखता है। वह पद उसने सम्पूर्णतः साक्षात् नहीं किया होता। उसका मान-अनुशय (=मैल) भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका भवराग-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। वह काम-लोक सम्बन्धी पाँचों (कामच्छन्द आदि) संयोजनोंका क्षय कर अनागामी अर्थात बीचमें ही परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला (अन्तरापरिनिब्बायी) होता है। भिक्षुओ, जैसे दिनभरके तप्त लोहेके तवेसे रगड़ खाकर उत्पन्न हुई चिनगारी पैदा होकर बुझ जाती है। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षु की ऐसी चर्य्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है; (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा; भविष्यमें मेरा (जन्म) न होगा; जो है, जो विद्यमान है—उसे छोड़ता हूँ। इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह (पूर्व–) भवमें न अनुरक्त होता है और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे

उससे श्रेष्ठतर पद (=स्थान) को देखता है। वह पद उसने पूर्णतः साक्षात् नहीं किया होता। उसका मान-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका भव-राग-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। वह काम-लोक सम्बन्धी पाँचों (कामच्छन्द आदि) संयोजनोंका क्षय कर अनागामी (अन्तरा परिनिब्बायी) होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूतकालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है; (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा; भविष्यमें मेरा (जन्म) न होगा; जो है, जो विद्यमान है—उसे छोड़ता हूँ—इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह (पूर्व–) भवमें अनुरक्त होता है और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठतर पद (=स्थान) को देखता है। वह पद उसने सम्पूर्णतः साक्षात् नहीं किया होता। उसका मान-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका भव-राग अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका अविद्यानुशय भी सर्वांश में नष्ट हुआ नहीं रहता। वह ओरम्भागिय (= निम्म्नताकी ओर ले जानेवाले) पांचों संयोजनोंका क्षय कर अनागामी (अन्तरा परिनिब्बायी) होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेके तवेसे रगड़ खाकर उत्पन्न हुई चिनगारी उत्पन्न होकर ऊपर जाकर बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका) कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है ....। वह पाँचों ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय कर अनागामी होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होने वाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है........वह पाँचों ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगड़ खाकर उत्पन्न हुई चिनगारी उत्पन्न होकर, ऊपर जाकर, बिना (भूमि) तलपर गिरे ही बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूतकालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें यह जन्म) है........वह पाँचों ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय कर अन्तरा-परिनिर्वाण-प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्चा होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म)

है.........वह पाँचों ओरम्भीगीय संयोजनोंका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगड़कर उत्पन्न हुई चिनगारी उत्पन्न होकर, ऊपर जाकर, (भूमि-) तलपर गिरकर बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुको ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण कारण होने वाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है.......वह पाँचों ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षयकर उपहत्य-परिनिर्वाण-प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है...........वह पाँचों ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगड़कर उत्पन्न हुई चिनगारी, उछलकर, सीमित तिनकोंके ढेर वा लकड़ीके ढेर पर गिर पड़े। उससे वहाँ आग भी लग जाय, धुआँ भी पैदा हो। आग लगकर भी, धुआँ पैदा होकर भी, वह (चिनगारी) उस सीमित तिनकोंके ढेर वा लकड़ीके ढेरको जलाकर और ईंधन न रहनेके कारण बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है........वह पाँचों ओरम्भीय संयोजनोंका क्षय कर असंस्कार परि-निर्वाण-प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत-कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है........वह पाँचों ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय कर अनागामी होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रागड़कर उपन्न हुई चिनगारी, उछल कर, बहुत बड़े तिनकोंके ढेरका लकड़ीके ढेरपर गिर पड़े। उससे वहाँ आग भी लग जाय, धुआँ भी पैदा हो। आग लग कर भी, धुआँ पैदा होकर भी, वह (चिनगारी) उस बहुत बड़े तिनकोंके ढ़ेर वा लकड़ीके ढ़ेरको जलाकर और ईंधन न रहनेके कारण बुझ जाय। इसी प्रकार भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ, न (वर्तमानमें य जन्म) है.......वह पाँच ओरम्भागीय संयोजनोंका क्षय कर ससंस्कार परि-निर्वाण प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि यह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म)

है; (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बनने वाला कर्म) न होगा; भविष्यमें मेरा जन्म न होगा; जो है, जो विद्यमान है––उसे छोड़ता हूँ––इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह न पूर्व-भवमें अनुरक्त होता है और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है। वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठतर पद (स्थान) को देखता है। वह पद उसने सम्पूर्णतः साक्षात् नहीं किया होता, उसका मानानुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका भव-राग अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ नहीं रहता। वह काम-लोक सम्बन्धी पाँचों संयोजनोंका क्षय कर अकनिष्ठ-गामी ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, जैसे दिन भरके तप्त लोहेसे रगड़कर उत्पन्न हुई चिनगारी, उछलकर, बहुत बड़े तिनकोंके ढेर वा लकड़ीके ढेरपर गिर पड़े। इससे वहाँ आग भी लग जाय, धुआँ भी पैदा हो। आग लगकर भी, धुआँ पैदा होकर भी वह (चिनगारी) उस बहुत बड़े तिनकोंके ढेर वा लकड़ीके ढेरको जला कर अरक्षित जंगल तथा सुरक्षित जंगल दोनोंको जला दे। अरक्षित जंगल तथा सुरक्षित जंगल दोनोंको जलाकर जहाँ हरियाली हो, जहाँ रास्ता हो, जहाँ पर्वत हो, जहाँ पानी हो अथवा जहाँ रमणीय भूमि-भाग हो, वहाँ पहुँचकर कर ईंधन न मिलने के कारण बुझ जाय। भिक्षुओ, इसी प्रकार एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूत कालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ; न (वर्तमानमें यह जन्म) है.........वह काम लोक सम्बन्धी पाँचों संयोजनोंका क्षय कर अकनिष्ठगामी ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, ये सात पुरुष-गतियाँ हैं।

भिक्षुओ, अनुत्पाद-परिनिर्वाण किसे कहते हैं? भिक्षुओ, एक भिक्षुकी ऐसी चर्या होती है कि वह सोचता है कि (भूतकालमें जन्मका कारण होनेवाला कर्म मुझसे) न हुआ। न (वर्तमानमें यह जन्म) है; (भविष्यमें मेरे जन्मका कारण बननेवाला कर्म) न होगा; भविष्यमें मेरा जन्म न होगा; जो है, जो विद्यमान् है, उसे छोड़ता हूँ––इस प्रकार उपेक्षा करता है। वह न पूर्व-भवमें अनुरक्त होता है, और न भावी-भवमें अनुरक्त होता है, वह प्रज्ञासे उससे श्रेष्ठतर पद (स्थान) को देखता है, वह पद उसने सम्पूर्णतः साक्षात् किया होता है, उसका मानानुशय भी सर्वांश में नष्ट हुआ रहता है। उसका भव-राग अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ रहता है। उसका अविद्या-अनुशय भी सर्वांशमें नष्ट हुआ रहता है। वह आस्रवोंका क्षय कर.........प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं अनुत्पाद-निर्वाण। भिक्षुओ, ये सात पुरुष-गतियाँ तथा अनुत्पाद परिनिर्वाण हैं।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् राजगृहमें गृध्रकूट पर्वतपर विहार करते थे। उस समय दो प्रकाशमान् देवता, प्रकाशमान् रात्रिमें सारेके सारे गृध्रकूट पर्वतको प्रकाशित कर जहाँपर भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर खड़े हुए। एक ओर खड़े हुए एक देवताने भगवान्से यह कहा——"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ विमुक्त हैं।" दूसरे देवताने भी भगवान्को कहा——"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ निरुपाधि शेष सुविमुक्त हैं।" उन देवताओंने यह कहा। शास्ता प्रसन्न हुए। जब उन देवताओंने यह जाना कि शास्ता प्रसन्न हुए हैं, तो वे भगवान्को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर, वहीं अन्तर्धान हो गये।

तब भगवान्ने उस रातके बीतनेपर भिक्षुओंको निमंत्रित किया——भिक्षुओ, आजकी रात दो प्रकाशमान् देवता, प्रकाशमान् रात्रिमें, सारे के सारे गृध्रकूट (पर्वत) को प्रकाशित कर जहाँ मैं था, वहाँ आये। पास आकर मुझे प्रणाम कर, एक ओर बैठे। भिक्षुओ, एक ओर खड़े हुए एक देवताने मुझसे यह कहा——"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ विमुक्त हैं।" दूसरे देवताने मुझसे यह कहा——"भन्ते! ये भिक्षुणियाँ निरुपाधिशेष विमुक्त हैं।" भिक्षुओ, उन देवताओंने यह कहा। इतना कह, मुझे प्रणाम कर, प्रदक्षिणा कर, वहीं अन्तर्धान हो गये।

उस समय आयुष्मान् महामौद्गल्यायन भगवान्के पास ही बैठे थे। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनके मनमें यह जिज्ञासा पैदा हुई——"किन देवताओंको यह ज्ञान होता है कि यह उपाधि-शेष (विमुक्ति) है वा निरुपाधि-शेष विमुक्ति है?" उस समय कुछ ही काल पूर्व मृत्युको प्राप्त हुआ तिस्स नामका एक भिक्षु ब्रह्मलोकमें उत्पन्न हुआ था। वहाँ भी उसकी प्रसिद्ध थी——"तिस्स ब्रह्मा महा ऋद्धिवान् है, महा प्रतापवान् है।"

तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन——जैसे कोई बलवान् आदमी सिकुड़ी हुई बाँहको फैलाये, या फैली हुई बाँहको सिकोड़े, उसी प्रकार गृध्रकूटसे अन्तर्धान हो ब्रह्मलोकमें प्रकट हुए। तिस्स ब्रह्माने आयुष्मान् महामौद्गल्यायनको दूरसे आते हुए देखा। देखकर आयुष्मान् महामौद्गल्यायनसे यह कहा——"मित्र मौद्गल्यायन आये। मित्र मौद्गल्यायन! स्वागत है। मित्र मौद्गल्यायन चिरकालके बाद इधर आने की कृपा की है। मित्र मौद्गल्यायन! यह आसन बिछा है। बैठें।" आयुष्मान् महामौद्गल्यायन! बिछे आसनपर बैठे। तिस्स ब्रह्मा भी आयुष्मान् महामौदगल्यायन-को नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए तिस्स ब्रह्मासे आयुष्मान् महा मौद्गल्यायनने पूछा——"तिस्स! किन देवताओंको उपाधिशेष होने पर उपाधिशेष होनेका और निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है?"

"मित्र मौद्गल्यायन ! ब्रह्मकायिक देवताओंको उपाधिशेष होनेपर उपाधि-शेष होनेका निरुपाधि शेष होनेपर निरुपाधि शेष होनेका ज्ञान होता है।"

"मित्र मौद्गल्यायन ! जो ब्रह्मकायिक देवता ब्राह्म आयु, ब्राह्म वर्ण, ब्राह्म सुख, ब्राह्म यश तथा ब्राह्म आधिपत्यसे संतुष्ट होते हैं, और उससे श्रेष्ठतर पदकी यथार्थ जानकारी नहीं रखते, उन्हें उपाधिशेष होनेपर उपाधि शेष होनेका, निरुपाधि-शेष होने-पर निरुपाधि शेष होनेका ज्ञान नहीं होता। मित्र मौद्गल्यायन ! जो ब्रह्मकायिक देवता ब्राह्म आयु, ब्राह्म वर्ण, ब्राह्म सुख, ब्राह्म यश, तथा ब्राह्म आधिपत्यसे संतुष्ट नहीं होते हैं और उससे श्रेष्ठतर पदकी यथार्थ जानकारी रखते हैं, उन्हें उपाधि-शेष होनेपर उपाधि शेष होनेका, निरुपाधि शेष होनेपर निरुपाधि शेष होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु दोनों तरहसे विमुक्त होता है। उसके बारेमें देवताओंकी जानकारी होती है।—'यह आयुष्मान् दोनों तरहसे विमुक्त है। इसका शरीर रहते भी इसे देव-मनुष्य नहीं देख सकते। इसका शरीर न रहनेपर भी इसे देव-मनुष्य नहीं देख सकते।' मित्र मौद्गल्यायन ! इस प्रकार भी उन देवताओं-को उपाधि शेष होनेपर उपाधि शेष होनेका, निरुपाधि शेष होनेपर निरुपाधि शेष होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु प्रज्ञा-विमुक्त होता है। उसके बारेमें देवताओंकी जानकारी होती है—'यह आयुष्मान प्रज्ञा-विमुक्त है। इस का शरीर रहते भी इसे देव-मनुष्य नहीं देख सकते। इसका शरीर न रहनेपर भी इसे देव-मनुष्य नहीं देख सकते।' मित्र मौद्गल्यायन ! इस प्रकार भी उन देवताओंको उपाधि-शेष होनेपर उपाधि-शेष होनेका,निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु शरीर-साक्षी होता है। उसके बारेमें देवता सोचते हैं—यह आयुष्यमान् शरीर-साक्षी है। अच्छा हो यदि 'यह आयुष्मान उचित (= अनुकूल) शयनासनोंका सेवन करता हुआ, सत्पुरुषोंकी संगति करता हुआ, इन्द्रियोंको संयत रखता हुआ, जिस परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुल-पुत्र घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होते हैं, उस श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य-शीर्ष परमार्थको इसी जन्ममें स्वयं जानकर साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करे।' मित्र मौद्गल्यायन् ! इस प्रकार भी उन देवताओंको उपाधि-शेष होनेपर उपाधि-शेष होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है।

मित्र मौद्गल्यायन ! एक भिक्षु (सम्यक्–) दृष्टि प्राप्त होता है.... श्रद्धाविमुक्त होता है.......धर्मानुसार आचरण करनेवाला होता है। उसके

बारेमें देवता सोचते हैं—'यह आयुष्मान् धर्मानुसार आचरण करनेवाला है। अच्छा हो, यदि यह आयुष्मान् उचित (=अनुकूल) शयनासनोंका सेवन करता हुआ सत्पुरुषोंकी संगति करता हुआ, इन्द्रियोंको संयत रखता हुआ, जिस परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुल-पुत्र घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होते हैं—उस श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य-शीर्ष परमार्थको इसी जन्ममें स्वयं जानकर साक्षात् कर, प्राप्त कर, विहार करे।' मित्र मौद्गल्यायन! इस प्रकार भी उन देवताओंको उपाधि शेष होनेपर उपाधि-शेष होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है।

तब आयुष्मान् महा मौद्गल्यायन तिस्स ब्रह्माके भाषणका अभिनन्दन कर, अनुमोदन कर—जैसे कोई बलवान् आदमी सिकुड़ी हुई बाँहको फैलाये, या फैली हुई बाँहको सिकोड़े, उसी प्रकार ब्रह्मलोकसे अन्तर्धान हो गृध्रकूट पर प्रकट हुआ। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने तिस्स ब्रह्माके साथ जितनी बातचीत हुई थी, वह सब भगवान्को कह सुनाई।

"मौद्गल्यायन! तिस्स ब्रह्माने तुझे अनिमित्त–विहारी सातवें पुरुष के बारेमें नहीं कहा।"

"भगवान्! इसीका समय है। भगवान्! इसीका काल है। भगवान् सातवें अनिमित्त-विहारी पुरुष के बारेमें देशना करें। भिक्षु उसे सुनकर ग्रहण करेंगे।"

"मौद्गल्यायन! तो सुन। अच्छी तरह मनमें धारण कर। कहता हूँ। भन्ते! अच्छा" कह महा मौद्गल्यायनने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—

"मौद्गल्यायन! एक भिक्षु सभी निमित्तों (=ध्यानके विषयों) की ओरसे चित्तको हटा निमित्त रहित चित्त-समाधिकी प्राप्त कर विहार करता है। उसके बारेमें देवता सोचते हैं—यह आयुष्मान् सभी निमित्तोंकी ओरसे चित्तको हटा निमित्त-रहित चित्त-समाधिको प्राप्त कर विहार करता है। अच्छा हो यदि यह आयुष्मान् उचित शयनासनोंका सेवन करता हुआ, सत्पुरुषोंकी संगति करता हुआ, इन्द्रियोंको संयत रखता हुआ, जिस परमार्थको प्राप्त करनेके लिये कुल-पुत्र घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होते हैं, उस श्रेष्ठ ब्रह्मचर्य--शीर्ष परमार्थको इसी जन्ममें स्वयं जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करे।' मौद्गल्यायन! इस प्रकार उन देवताओंको उपाधि-शेष होने पर उपाधि-शेष होनेका, निरुपाधि-शेष होनेपर निरुपाधि-शेष होनेका ज्ञान होता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वैशालीके महावनमें कूटागार शालामें विहार करते थे। तब सिंह सेनापति भगवान्के पास आया। पास आकर भगवान्को

नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए सिंह सेनापतिने भगवानसे प्रश्न किया——

"भन्ते! क्या दानका सांदृष्टिक फल कहा जा सकता है?"

"सिंह! तो तुझसे ही प्रश्न पूछता हूँ, जैसा तुझे लगे वैसा उत्तर देना। सिंह! तो तुम क्या मानते हो——यहाँ दो आदमी हैं। एक आदमी अश्रद्धावान् है, कंजूस है, मक्खीचूस है, निन्दक है; दूसरा आदमी श्रद्धावान् है, दानशील है, त्यागी है। सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन दोनोंमें से पहले किस आदमी पर कृपा करेंगे——जो अश्रद्धावान् है, जो कंजूस है, जो मक्खीचूस है, जो निन्दक है, उस पर? अथवा, जो श्रद्धावान् है, दानशील है, त्यागी है, उस पर?

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन कृपा करते समय पहले उस पर क्या करेंगे? वे पहले उसी पर कृपा करेंगे जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन पहले किस आदमीके पास जायेंगे ——जो अश्रद्धावान् है, जो कंजूस है, जो मक्खीचूस है, जो निन्दक है, उसके पास? अथवा, जो श्रद्धावान् है, दान शील है, त्यागी है, उसके पास?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन पास जाते समय पहले उसके पास क्या जायेंगे?! वे पहले उसीके पास जायेंगे जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन पहले किस आदमीका स्वागत करेंगे——जो अश्रद्धावान् होगा, जो कंजूस होगा, जो मक्खीचूस होगा, जो निन्दक होगा, उसका? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, उसका?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन पहले उसका क्या स्वागत करेंगे। वे पहले उसीका स्वागत करेंगे जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, अर्हत् जन पहले किस आदमीको धर्मोपदेश देंगे—— जो अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, उसे? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, उसे?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, अर्हत् जन धर्मोपदेश देते हुए उसे पहले-पहले क्या धर्मोपदेश देंगे? वे पहले उसे ही धर्मोपदेश देंगे जो श्रद्धावान् होगा, दान-शील होगा तथा त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, यश-प्रशंसा किसकी होगी—जो अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, उसकी? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, उसकी?"

"भन्ते! जो आदमी अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, यश-प्रशंसा उसकी क्या होगी? यश-प्रशंसा उसकी होगी जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, क्षत्रिय-परिषद्, ब्राह्मण-परिषद्, गृहपति-परिषद्, श्रमण-परिषद् अथवा अन्य किसी परिषद्में जानेवाला विश्वासके साथ और सिर ऊँचा करके कौन जायगा—जो अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खी-चूस होगा, निन्दक होगा, वह? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी-होगा, वह?

"भन्ते! जो अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, निन्दक होगा, वह क्षत्रिय-परिषद्, ब्राह्मण-परिषद्, गृहपति-परिषद्, श्रमण-परिषद् अथवा अन्य किसी परिषद्में जाने पर विश्वासके साथ, सिर ऊँचा करके क्या जायेगा? भन्ते! जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, वही क्षत्रिय-परिषद्, ब्राह्मण-परिषद्, गृहपति-परिषद्, श्रमण-परिषद् अथवा अन्य किसी परिषद्में जाने पर विश्वासके साथ, सिर ऊँचा करके जायगा।"

"सिंह! तुम क्या मानते हो, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर कौन सुगति को प्राप्त होगा, कौन स्वर्ग लोकमें उत्पन्न होगा—जो अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, वह? अथवा जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा वह?"

"भन्ते! जो अश्रद्धावान् होगा, कंजूस होगा, मक्खीचूस होगा, वह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर सुगतिको क्या प्राप्त होगा, स्वर्ग लोकमें क्या उत्पन्न होगा? भन्ते! जो श्रद्धावान् होगा, दानशील होगा, त्यागी होगा, वही मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होगा, वही स्वर्ग लोकमें उत्पन्न होगा।"

भन्ते! भगवान्के द्वारा जो सांदृष्टिक-फल बताये गये, उन्हें मैं भगवान्के प्रति श्रद्धा होनेके कारण ही स्वीकार नहीं करता हूँ। मैं भी इन्हें जानता हूँ। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, अर्हत् जन पहले मुझपर ही कृपा करते हैं। भन्ते! मैं दाता हूँ, दान-पति हूँ, अर्हत् जन पहले मेरे पास ही आते हैं। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, अर्हत् जन पहले मेरा ही स्वागत करते हैं। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, अर्हत्-जन

पहले मुझे ही उपदेश देते हैं। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, मेरी ही यश-प्रशंसा होती ह कि सिंह सेनापति दाता है (दान) करने वाला है, संघकी सेवा करनेवाला है। भन्ते! मैं दाता हूँ, दानपति हूँ, जिस किसी परिषदमें भी जाता हूँ चाहे क्षत्रिय-परिषद् हो. . . . चाहे श्रमण-परिषद् हो, विश्वासके साथ ही जाता हूँ, सिर ऊँचा किये ही जाता हूँ। भन्ते! भगवान्के द्वारा जो सांदृष्टिक-फल बताये गये, इन्हें मैं भगवानके प्रति श्रद्धा होनेके ही कारण स्वीकार नहीं करता। मैं भी इन्हें जानता हूँ। भन्ते! लेकिन आपने मुझे यह जो बताया कि हे सिंह! दाता, दानपति शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है, स्वर्ग लोकमें उत्पन्न होता है--यह मैं नहीं जानता हूँ, इसे मैं भगवान्के प्रति श्रद्धा होनेके ही कारण स्वीकार करता हूँ।"

"सिंह! यह ऐसा ही है। सिंह! यह ऐसा ही है--दाता, दानपति शरीर छूटनेपर मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होता है, स्वर्ग लोक में जन्म ग्रहण करता है।

भिक्षुओ, चार विषयोंमें तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नहीं और तीन विषयोंमें तथागत पर दोषारोपण नहीं किया जा सकता। वे कौनसे चार विषय हैं, जिनमें तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नहीं। भिक्षुओ, तथागतके शारीरिक -कर्म परिशुद्ध हैं। तथागतका कोई शारीरिक दुष्कर्म ऐसा नहीं, जिसके विषयमें तथागतको यह सावधानी बरतनी पड़े कि इसे दूसरे न जान लें। भिक्षुओ, तथागतके वाणीके कर्म परिशुद्ध हैं। तथागतका कोई वाणीका दुष्कर्म ऐसा नहीं, जिसके विषयमें तथागतको यह सावधानी बरतनी पड़े कि इसे दूसरे न जान लें। भिक्षुओ, तथागतके मनके कर्म परिशुद्ध हैं। तथागतका कोई मानसिक दुष्कर्म ऐसा नहीं, जिसके विषयमें तथागतको यह सावधानी बरतनी पड़े कि इसे दूसरे न जान लें। भिक्षुओ, तथागतकी जीविका परिशुद्ध है। तथागतकी कोई ऐसी मिथ्या-जीविका नहीं, जिसके विषयमें तथागतको यह सावधानी बरतनी पड़े कि इसे दूसरे न जान लें। इन चार विषयोंमें तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नहीं।

कौनसे तीन विषयोंमें तथागत पर दोषारोपण नहीं किया जा सकता? भिक्षुओ, तथागतने धर्मको अच्छी तरह समझा दिया है। भिक्षुओ, मैं ऐसा कोई लक्षण नहीं देखता कि कोई श्रमण, कोई ब्राह्मण, कोई देव, कोई मार, कोई ब्रह्मा मुझ पर यह दोषारोपण करे कि तुमने धर्मको अच्छी तरहसे समझाया नहीं है। भिक्षुओ, इस प्रकारका कोई लक्षण न दिखाई देनेके कारण मैं सुखी, निर्भय, समर्थ हो विचरता हूँ।

"भिक्षुओ, मैंने अपने शिष्योंके लिये निर्वाणगामी मार्ग स्पष्ट कर दिया है, जिस मार्गपर चलकर मेरे शिष्य, आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-

विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वयं जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करते हैं। भिक्षुओ, मैं ऐसा कोई लक्षण नहीं देखता कि कोई श्रमण, कोई ब्राह्मण, कोई देव, कोई मार वा कोई ब्रह्मा मुझ पर यह दोषारोपण करे कि तुमने अपने शिष्योंके लिये निर्वाणगामी मार्ग स्पष्ट नहीं किया है, जिस पर चलकर तुम्हारे शिष्य . . . प्राप्त कर विहार करते हैं। भिक्षुओ, इस प्रकारका कोई लक्षण न दिखाई देनेके कारण मैं सुखी, निर्भय, समर्थ हो विचरता हूँ।

"भिक्षुओ, मेरी सैकड़ोंकी शिष्य-मंडली आस्रवोंका क्षय कर . . . . . . साक्षात् कर प्राप्त कर विहार करती है। भिक्षुओ, मैं ऐसा कोई लक्षण नहीं देखता कि कोई श्रमण, कोई ब्राह्मण, कोई देव, कोई मार वा कोई ब्रह्मा मुझपर यह दोषारोपण करे कि तुम्हारी सैकड़ों की शिष्य-मण्डली, आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वयं जानकर, साक्षात कर, प्राप्त कर विहार नहीं करती है। भिक्षुओ, इस प्रकारका कोई लक्षण न दिखाई देनेके कारण मैं सुखी, निर्भय, समर्थ हो विचरता हूँ। इन तीन विषयोंमें तथागत पर दोषारोपण नहीं किया जा सकता।

भिक्षुओ, इन चार विषयोंमें तथागतको सुरक्षाकी अपेक्षा नहीं और इन तीन विषयोंमें तथागतपर दोषारोपण नहीं किया जा सकता।

ऐसा मैंने सुना। एक समय किम्बिला के निचुल वनमें विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् किमिल जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् किमिलने भगवानसे कहा— भन्ते! ऐसे कौनसे हेतु हैं, कौनसे कारण हैं, जिनके होनेपर तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी नहीं होता?"

किमिल! तथागतके परिनिर्वृत्त हो जाने पर भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक, उपासिकायें शास्ताके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती हैं, धर्मके प्रति अगौरव अनादर सहित विहार करती हैं, संघके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती हैं, शिक्षाओंके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती हैं, समाधिके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती हैं, अप्रमादके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती हैं तथा मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति अगौरव-अनादर सहित विहार करती हैं। किमिल! ये हेतु हैं, ये कारण हैं, जिनके होनेपर, तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी नहीं होता।"

"भन्ते! कौनसे हेतु हैं, कौनसे कारण हैं, जिनके होनेपर तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी होता है?"

"किमिल ! तथागतके परिनिर्वृत्त हो जानेपर, भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक, उपासिकायें शास्ताके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती हैं, धर्मके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती हैं, संघके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती हैं, शिक्षाओंके प्रति गौरव-सहित आदर सहित विहार करती हैं, समाधिके प्रतिआदर-गौरव सहित आदर सहित विहार करती हैं, अप्रमादके प्रति गौरव सहित आदर सहित व्यवहार करती हैं तथा मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति गौरव-आदर सहित विहार करती हैं। किम्मिल ! ये हेतु हैं, ये कारण हैं, जिनके होनेपर, तथागतके परिनिर्वृत्त होनेपर सद्धर्म चिरस्थायी होता है।

भिक्षुओ, सात बातोंसे युक्त भिक्षु अचिरकालमें ही आस्रवोंका क्षय कर---साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। कौनसी सात बातोंसे ? भिक्षुओ, भिक्षु श्रद्धावान होता है, शीलवान होता है, बहुश्रुत होता है, ध्यानी होता है, प्रयत्नवान होता है, स्मृतिमान् होता है तथा प्रज्ञायुक्त होता है। भिक्षुओ, इन सात बातोंसे युक्त भिक्षु अचिरकालमें ही आस्रवोंका क्षय कर------साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् भग्ग (जनपद) में संसुमार गिरिके भेसकला वनके मृगदायमें विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् महामौद्गल्यायन मगध (जनपद) के कल्लवाळपुत्त ग्राममें बैठे ऊँघ रहे थे। भगवान्ने अपने दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे देखा कि आयुष्मान महामौद्गल्यायन मगध (जनपद) के कल्लवाळपुत्त ग्राममें बैठे ऊँघ रहे हैं। देखकर, जैसे कोई बलवान आदमी सिकुड़ी हुई बाँहको पसारे, अथवा पसारी हुई बाँहको सिकोड़े, इसी प्रकार भगवान् भग्ग (जनपद) में संसुमार गिरिके भेसकला वनके मृगदायसे अन्तर्धान हो मगधमें कल्लवाळपुत्त ग्राममें आयुष्मान् महामौद्गल्यायनके सम्मुख प्रकट हुए। भगवान्ने आयुष्मान् महामौद्गल्यायनको यह कहा--

"मौद्गल्यायन ! तू ऊँघ रहा है न ? मौद्गल्यायन ! तू ऊँघ रहा है न ?"

"भन्ते ! हाँ"

"इसलिए, मौद्गल्यायन ! जिस संज्ञासे युक्त होनेपर तन्द्रा आती हो, उस संज्ञाको मनमें स्थान न दे, उस संज्ञाको मनमें बार-बार मत ला मौद्गल्यायन ! इसकी गुंजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।"

"यदि, इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो तो हे मौद्गल्यायन ! तू ने जैसे सुना है, जैसे कण्ठस्थ किया है, उसी के अनुसार उस धर्म पर तर्क-वितर्क

कर, विचार कर, मनसे मनन कर, इसकी गुंजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

"यदि, इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू ने जैसा सुना है, जैसे कण्ठस्थ किया है, उसीके अनुसार उस धर्मका विस्तारपूर्वक पाठ कर। इस की गुंजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

"यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू दोनों कानोंको रगड़ दे, हाथसे शरीरको मल। इसकी गुंजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

"यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू आसनसे उठ, आँखोंपर पानीके छींटे गिरा, (चारों) दिशाओंकी ओर देख, तारागण नक्षत्रोंको देख। इस की गुंजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू आलोक (= प्रकाश) संज्ञाको मनमें स्थान दे। ऐसा समझ कि दिन है—जैसा दिन वैसा ही रातको भी समझ, जैसी रात वैसा ही दिन। इस प्रकार विवृत्त आवरण-रहित चित्तसे प्रभाश्वर चित्त की भावना कर। इस की गुंजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू इन्द्रियोंको भीतर संयत कर, चित्तको बाहर न जाने देकर, आगे-पीछेका ख्याल कर चन्क्रमण (= चहल कदमी) कर, इसकी गुंजाइश है कि ऐसा करनेसे जो तन्द्रा है, वह दूर हो जाय।

यदि इस प्रकार विहार करनेसे भी वह तन्द्रा दूर न हो, तो हे मौद्गल्यायन! तू पाँव पर पाँव रख, स्मृति तथा सम्प्रजन्य युक्त हो, उठनेके संकल्पको मनमें जगह देकर दाहिनी करवट लेट जा। हे मौद्गल्यायन! तुझे प्रबुद्ध रहकर शीघ्र ही उठ जाना होगा—शय्या सुख, करवट लेटनेका सुख, तन्द्रा-युक्त रहनेका सुख अनुभव नहीं करना होगा। हे मौद्गल्यायन! तुझे इसी प्रकार सीखना चाहिए।

"इसलिए मौद्गल्यायन! इस प्रकार सीखना चाहिए—मैं अभिमानकी भावना लेकर (गृहस्थ) कुलोंमें आना-जाना नहीं करूँगा। मौद्गल्यायन! यदि भिक्षु अभिमानकी भावना लेकर (गृहस्थ-) कुलोंमें आना-जाना करता है, तो हे मौद्गल्यायन! (गृहस्थ-) कुलोंके बहुतसे काम-काज होते हैं, जिनमें लगे रहनेके कारण लोग आनेवाले

भिक्षुकी ओर ध्यान नहीं दे पाते। तब भिक्षुके मनमें होता है—किसने इन (गृहस्थ-) कूलोंके मनमें मेरे प्रति दुराव पैदा कर दिया। लोग मेरे प्रति विरक्त हो गए।" इस प्रकार (स्वागत-) लाभ न होनेपर निस्तेज होना, निस्तेज होनेपर उद्धत होना, उद्धत होनेपर असंयत होना, असंयतका चित्त समाधिसे दूर हो जाता है।

"इसलिए मौद्गल्यायन! ऐसा सीखना चाहिए—मैं विग्रहकी बातचीत नहीं करूँगा। मौद्गल्यायन! तुझे ऐसा ही सीखना चाहिए। मौद्गल्यायन! विग्रहकी बातचीत आरम्भ होनेपर बहुत बोलनेकी संभावना रहती है, अधिक बोलना होनेसे उद्धतपन, उद्धतका असंयम तथा असंयतका चित्त समाधिसे दूर होता है। मौद्गल्यायन! न मैं सभी संगतियोंकी प्रशंसा करता हूँ, न मैं सभी संगतियोंकी निन्दा करता हूँ। हे मौद्गल्यायन! मैं गृहस्थ-प्रव्रजितोंकी मण्डलीमें ही रहनेकी प्रशंसा नहीं करता हूँ। लेकिन जो ऐसे शयनासन हैं, जहाँ अल्प-शब्द रहता है, जहाँ अल्पघोष रहता है, जहाँ एकान्त रहता है, जो जनाकीर्ण नहीं रहते हैं तथा जो योगाभ्यासके अनुकूल हैं, ऐसे स्थानों पर रहनेकी प्रशंसा करता हूँ।

ऐसा कहने पर आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने भगवान्से कहा—"भन्ते! किन बातोंके होनेसे भिक्षु तृष्णा-क्षय-विमुक्त होता है, अत्यन्त निष्ठावान्, अत्यन्त योगक्षेम युक्त, श्रेष्ठतम ब्रह्मचारी, आदर्श-मनुष्य, देवताओं तथा मनुष्योंमें परमश्रेष्ठ?"

मौद्गल्यायन! एक भिक्षुने सुना होता है कि जितने भी धर्म (= इन्द्रियों तथा मनके विषय) हैं उनमें एक भी ऐसा नहीं, जिससे आसक्त रहा जाय। मौद्गल्यायन! यदि किसी भिक्षुने ऐसा सुना होता है कि जितने भी धर्म हैं, उनमें एक भी ऐसा नहीं, जिससे आसक्त रहा जाय और वह सभी धर्मोंसे परिचित होता है, सभी धर्मोंको पहचानता है, सभी धर्मोंको पहचान कर जिस किसी भी वेदनाका—चाहे दुःख-वेदना हो, चाहे सुख वेदना हो, चाहे अदुःख-असुख वेदना हो—अनुभव करता है, उसे अनित्य समझता है, उससे विरक्त रहता है, उसके निरोधको देखता है, उसे परित्यक्त रखता है। वह उन वेदनाओंको अनित्य समझता हुआ, उनसे विरक्त रहता हुआ, उनके निरोधको देखता हुआ, उन्हें परित्यक्त रखता हुआ, इस संसारमें किसी वस्तुको (मैं, मेरा करके) ग्रहण नहीं करता। आसक्ति रहित होनेसे त्रासको प्राप्त नहीं होता, अत्रसित रहकर व्यक्तिगत रूपसे निर्वाणको प्राप्त होता है। उसे बोध होता है—जन्म(—मरण) क्षीण हो गया, ब्रह्मचर्य-वासका उद्देश्य पूरा हो गया, जो कृत्य था वह कर लिया, अब यहाँके लिये और कुछ करणीय नहीं है। मौद्गल्यायन! भिक्षु इतना होनेसे तृष्णा-क्षय-

विमुक्त, होता है, अत्यन्त निष्ठावान्, अत्यन्त योग-क्षेम-युक्त, श्रेष्ठतम-ब्रह्मचारी, आदर्श मनुष्य, देवताओं तथा मनुष्योंमें परमश्रेष्ठ।

भिक्षुओ, पुण्य (-कर्मों) से मत डरो। भिक्षुओ, पुण्य (-कर्म) सुखका ही पर्याय है। भिक्षुओ, मैं जानता हूँ कि मैंने दीर्घकाल तक जो पुण्य (-कर्म) किये उनका दीर्घ-काल तक इष्ट, सुन्दर, काम्य फल अनुभव किया। मैंने सात वर्ष तक मैत्री-चित्त की भावना की। सात वर्ष तक मैत्री-चित्त की भावना करनेके पुण्य-कर्मके फल-स्वरूप सात संवर्त- विवर्त कल्पों तक फिर इस लोकमें जन्म ग्रहण नहीं किया। भिक्षुओ, संवर्त (= लोक-विकास) के समय मैं आभश्वर-रूपमें हुआ, विवर्त (= लोक-ह्रास) के समय शून्य ब्रह्म-विमानमें उत्पन्न हुआ।

भिक्षुओ, वहाँ मैं ब्रह्मा हुआ, महाब्रह्मा, अभिभू, अनभिभूत, सर्व--दर्शी, वश-वर्ती। भिक्षुओ, छत्तीस बार मैं शक्र, देवेन्द्र हुआ, अनेक सौ बार राजा हुआ, चक्रवर्ती, धार्मिक, धर्मराजा, चतुर्दिशा-विजयी, शान्त-जनपद तथा सात रत्नोंसे युक्त। भिक्षुओ, मेरे पास ये सात रत्न थे—चक्ररत्न, हस्ति-रत्न, अश्व-रत्न, मणि-रत्न, स्त्री-रत्न, गृहपति-रत्न तथा सातवाँ नायक-रत्न। भिक्षुओ, मेरे सहस्राधिक पुत्र थे वीरङ्गसमान, शत्रु-सेना का मर्दन करने वाले। उस मैं ने सागर तक इस सारी पृथ्वीको बिना दण्डकें, बिना शस्त्रके, धर्मसे जीत कर शासन किया।

पस्स पुञ्ञानं विपाकं, कुसलानं सुखेसिनो,
मेत्तं चित्तं विभावेत्वा, सत्तवस्सानि भिक्खवे।
सत्तसंवट्ट विवट्टकप्पे, नयिमं लोकं पुनागमिं॥
संवट्टमाने लोकम्हि, होमि आभस्सरूपगो।
विवट्टमाने लोकस्मिं, सुञ्ञब्रह्मूपगो अहुं॥
सत्तक्खत्तुं महाब्रह्मा, वसवत्ती तदा अहुं।
छत्तिसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जमकारयिं॥
चक्कवत्ती अहुं राजा, जम्बुमण्डस्स इस्सरो
मुद्धाभिसित्तो खत्तियो, मनुस्साधिपती अहुं॥
अदण्डेन असत्थेन, विजेय्य पथविं इमं।
असाहसेन कम्मेन, समेन मनुसासि तं॥
धम्मेन रज्जं कारेत्वा, अस्मिं पथविमण्डले।
महद्धने महाभोगे, अड्ढे अजायिहं कुले॥

सब्बकामेहि सम्पन्ने, रतनेहि च सत्तहि।
बुद्धा संगाहका लोके, तेहि एतं सुदेसितं ॥
एसो हेतु महन्तस्स, पथब्यो ये न विपज्जति।
पहूतवित्तूपकरणो, राजा होति पतापवा ॥
इद्धिमा यसवा होति, जम्बुमण्डस्स इस्सरो।
को सुत्वा नप्पसीदेय्य, अपि कण्हाभिजातियो ॥
तस्मा हि अत्तकामेन, महत्तमभिकङ्खता।
सद्धम्मो गरुकातब्बो, सरं बुद्धानसासनं ॥

[सुख-कारक कुशल-कर्मों, पुण्योंके विपाकको देखो। भिक्षुओ, सात वर्ष तक मैत्री-भावना करनेसे सात संवर्त-विवर्त कल्पों तक फिर इस लोकमें आगमन नहीं हुआ। लोकका संवर्त (= विकास) होनेके समय मैं आभश्वर-स्वरूप प्राप्त रहा ; लोकका विवर्त (= ह्रास) होनेके समय शून्य ब्रह्म विमानमें उत्पन्न हुआ। भिक्षुओ, मैं सात बार वशवर्ती महाब्रह्मा हुआ। छत्तीस बार देवेन्द्र शक्र होकर देवताओंपर राज्य किया। मैं जम्बुद्वीपका राज्याभिषिक्त क्षत्रिय राजा हुआ। मैंने बिना दण्डके, बिना शस्त्रके, इस पृथ्वीको जीत लिया और फिर उसपर बिना जबर्दस्ती (= साहसिक कर्म) किये राज्य किया। इस पृथ्वी-मण्डल पर धर्मानुकूल राज्य कर, महा धनवान्, महा ऐश्वर्यशाली कुलमें जन्म ग्रहण किया ; जहाँ सभी कामनाओंकी पूर्तिके साधन थे और सातों रत्न विद्यमान थे। लोकमें बुद्ध लोक संग्रह करनेवाले हैं। उनकी ही यह देशना है। महान् होनेका यह हेतु है। राजा होना मुझसे विरुद्ध नहीं पड़ता। (मैत्री-भावना करनेवाला) महान साधन-सम्पन्न होता है तथा प्रतापी राजा होता है। वह ऋद्धि सम्पन्न होता है, ऐश्वर्य-युक्त होता है तथा जम्बुद्वीपका मालिक होता है। "नीच जाति" का होनेपर भी होता है। इस बात को सुनकर कौन प्रसन्न नहीं होगा। इसलिये जो अपना हित चाहता हो, जिसके मनमें महत्त्वाकांक्षा हो, उसे बुद्धोंके अनुशासनका स्मरण कर सद्धर्मके प्रति गौरव प्रदर्शित करना चाहिये।]

तब भगवान् पूर्वाह्न समय (पहनकर) पात्र चीवर ले, जहाँ अनाथपिण्डिक गृहपतिका घर था, वहाँ पहुँचे। पहुँचकर आसनपर बैठे। उस समय अनाथपिण्डिक गृहपतिके घर पर लोग बहुत ऊंचे-ऊंचे बोल रहे थे, हल्ला मचा रहे थे। तब अनाथपिण्डिक गृहपति भगवान्के पास आया। पास आकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए अनाथपिण्डिक गृहपतिको भगवानने यह कहा—

"हे गृहपति ! तुम्हारे घरमें लोग बहुत ऊँचे-ऊँचे क्यों बोल रहे हैं, बहुत हल्ला क्यों कर रहे हैं, मानो मछुवे मछलियोंके लिये झगड़ रहे हों ?"

"भन्ते ! यह सुजाता पुत्र-बधू धनी घरसे लाई गई है। न यह सासका आदर करती है, न श्वसुरका आदर करती है, न स्वामीका आदर करती है और न भगवान्का ही सत्कार करती है, गौरव करती है, मानती है, पूजती है,।"

तब भगवान्ने पुत्र-बधू सुजाताको सम्बोधित किया—"सुजाते ! यहाँ आ।"

सुजाताने 'भन्ते ! अच्छा' कह भगवान्को प्रतिवचन दिया और जहाँ भगवान थे वहाँ समीप पहुँची। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर, एक ओर बैठी। एक ओर बैठी हुई पुत्र-बधू सुजातासे भगवान्ने पूछा —

"सुजाता ! आदमीकी सात प्रकारकी भार्यायें होती हैं। कौन सी सात प्रकारकी ? वधक जैसी, चोरिणी जैसी, मालिकिन जैसी, माता जैसी, बहिन जैसी, सखी जैसी तथा दासी जैसी। सुजाता ! आदमीकी ये सात प्रकारकी भार्यायें होती हैं। उनमेंसे तू कौनसी है ?"

"भन्ते ! भगवानके इस संक्षिप्त कथनका मैं विस्तारपूर्वक अर्थ नहीं जानती। भगवान् अच्छा हो कि आप मुझे ऐसा धर्मोपदेश दें, जिससे मैं भगवान्के इस संक्षिप्त कथनका विस्तारपूर्वक अर्थ जान सकूँ।"

"सुजाता ! तो सुन। अच्छी तरह मनमें धारण कर। कहता हूँ।"

"भन्ते अच्छा" कह पुत्र-बधु सुजाता ने भगवान् को प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा

पदुट्ठचित्ता अहितानुकम्पिनी,
अञ्ञेसु रत्ता अतिमञ्ञाते पतिं।
धनेन कीतस्स वधाय उस्सुका,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया।
'वधा च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[जो दूषित चित्तवाली होती है, जो अहित चाहनेवाली होती है, जो पतिकी उपेक्षा कर अन्योंके प्रति अनुरक्त रहती है, जो धन द्वारा क्रीतके वधके लिये उत्सुक रहती है—पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'वधक जैसी भार्य्या' कहलाती है।']

यं इत्थिया विन्दति सामिको धनं,
सिप्पं वणिज्जं च कसिं अधिट्ठहं।
अप्पं पि तस्स अपहातुमिच्छति

या एवरूपा पुरिसस्स भरिया
'चोरी च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[शिल्प, वाणिज्य वा कृषि से प्राप्त जो धन स्वामी स्त्रीको देता है, वह उस मेंसे कुछ भी नहीं छोड़ती है--पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'चोरिणी जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

अकम्मकामा अलसा महग्घसा,
फरुसा च चण्डी दुरुत्तवादिनी।
फरुसा च चण्ड़ी दुरुत्तवादिनी।
उट्ठायकानं अभिभुय्य वत्तति,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया
'अय्या च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[निकम्मी रहनेवाली, आलस्य-प्रधान, खूब खाने-पीने वाली, कठोर-स्वभाव-वाली, प्रचण्ड, अपशब्द बोलने वाली तथा पतिके उत्साहको दबा देनेवाली--पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'मालकिन जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

या सब्बदा होति हितानुकम्पिनी,
माता व पुत्तं अनुरक्खते पतिं।
ततो धनं सम्भतमस्स रक्खति,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया,
'माता च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[जो सदैव हित चाहने वाली होती है, जो पतिकी इस प्रकार देख-भाल रखती है, जैसे माता पुत्रकी, जो पतिके कमाये हुए धनकी रक्षा करती है। पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'माता जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

यथा पि जेट्ठा भगिनी कनिट्ठका,
सगारवा होति सकम्हि सामिके।
हिरीमना भत्तुवसानुवत्तिनी,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया ॥
'भगिनी च भरिया' ति च सा पवुच्चति ॥

[जो छोटी या बड़ी बहनके समान अपने स्वामी के प्रति गौरवका भाव रखती है, लज्जाशील होती है, पतिकी आज्ञामें रहनेवाली होती है--पुरुषकी इस प्रकारकी भार्या 'बहन जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

या चीध दिस्वान पतिं पमोदति,
सखी सखारं व चिरस्समागतं।
कोलेय्यका सीलवती पतिब्बता,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया।
'सखी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[जैसे चिरकालके अनन्तर आगत सखा को देखकर कोई सखी प्रसन्न होती ह, उसी प्रकार जो कुलीन, शीलवान् पतिव्रता नारी अपने पतिको देखकर प्रमुदित होती है--पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'सखी जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

अक्कुद्ध सन्ता वधदण्डतज्जिता
अदुट्ठचित्ता पतिनो तितिक्खति।
अक्कोधना भत्तुवसानुवत्तिनी,
या एवरूपा पुरिसस्स भरिया॥
'दासी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[जो मारने-पीटनेका डर दिखाये जानेपर भी क्रोधित न होनेवाली, शान्त रहने वाली, द्वेष रहित चित्तसे पति (की हर बात) को सहन करती है, जिसे क्रोध नहीं आता, जो स्वामीके वशमें रहने वाली होती है-- पुरुषकी इस प्रकारकी भार्य्या 'दासी जैसी भार्य्या' कहलाती है।]

"या चीध भरिया वधका ति वुच्चति,
'चोरी च अय्या' ति च या पवुच्चति।
दुस्सीलरूपा फरुसा अनादरा,
कायस्स भेदा निरयं वजन्ति ता॥

[जो 'वधक जैसी भार्य्या' कहलाती है, जो 'चोरिणी जैसी भार्य्या' कहलाती है तथा जो 'मालकिन जैसी भार्य्या' कहलाती है-- ये दुश्शील होती हैं, कठोर स्वभावकी होती हैं, (पतिका) आदर न करने वाली होती हैं--ऐसी भार्यायें शरीरके न रहनेपर नरक गामिनी होती है।]

'या चीध माता भगिनी सखी' ति च,
'दासी च भरिया' ति च सा पवुच्चति।
सीले ठितत्ता चिर रत्त संवुंता,
कायस्स भेदा सुगतिं वजन्ति ता ति॥

[जो 'माता जैसी भार्य्या' कहलाती है, 'बहन जैसी भार्य्या' कहलाती है, 'सखी जैसी भार्य्या' कहलाती है, तथा 'दासी जैसी भार्य्या' कहलाती है—ये शीलवान् भार्यायें दीर्घकाल तक संयत जीवन व्यतीत करनेके कारण शरीर छुटनेपर स्वर्ग लोकमें जन्म ग्रहण करती हैं।]

सुजाता! आदमीकी ये सात प्रकारकी भार्यायें होती हैं। उनमें तू कौन सी है?

"भन्ते! आजसे भगवान् मुझे स्वामीकी 'दासी समान भार्य्या' जानें।"

भिक्षुओ, ये सात बातें ऐसी हैं जो वैरियोंको प्रिय हैं, वैरियोंको अच्छी लगती हैं, और जो स्त्री अथवा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती हैं। कौन सी सात? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा है कि वह दुर्वर्ण हो जाय। ऐसा किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीको सुवर्ण देखकर प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधसे अभिभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसने चाहे कितना भी स्नान किया हो, लेप किया हो, हजामत बनाई हो, श्वेत-वस्त्र पहने हों, वह क्रोधके वशीभूत होनेके कारण दुर्वर्ण ही होता है। भिक्षुओ, यह पहली बात है जो वैरियोंको प्रिय है, जो वैरियोंको अच्छी लगती है और जो स्त्री अथवा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो यदि वह दुःखी लेटे। यह किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीको कभी सुखी देखकर प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधसे अभिभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, वह चाहे जैसे भी पलंग पर सोये—चाहे झालरदार ऊनी आस्तरण वाले पलंगपर, चाहे फूलदार ऊनी आस्तरण वाले पलंगपर, चाहे कदलि-मृगकी छालके आस्तरण वाले पलंगपर, चाहे वितानवाले पलंगपर तथा चाहे दोनों ओरसे लाल रंगके तकियों वाले पलंग पर—वह क्रोधके वशीभूत होनेके कारण दुखी ही सोता है। भिक्षुओ, यह दूसरी बात है जो वैरियोंको प्रिय है, जो वैरियोंको अच्छी लगती है, और जो स्त्री अथवा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि उसके पास प्रचुर धन न हो। यह किस लिये? भिक्षुओ एक वैरी अपने वैरीके पास प्रचुर धन देखकर प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके अभीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, वह अर्थको अनर्थ और अनर्थको अर्थ मानता है।

क्रोधके वशीभूत होनेके कारण, वह इन बातोंको उलटा ही ग्रहण करता है और इसी कारण दीर्घ काल तक उसे दुःख होता है, उसका अहित होता है। भिक्षुओ, यह तीसरी बात है जो वैरियोंको प्रिय है, जो वैरियोंको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि उसके पास धन न हो। यह किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके पास ऐश्वर्य देखकर प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसने उत्साह तथा प्रयत्नसे, बाहुओंके बलसे, पसीना बहाकर, धर्मानुसार, धार्मिक रीतिसे भी जो धन कमाया होता है, वह भी उसके क्रोधी होनेके कारण राजपुरुष राजकीय-कोषमें जमा कर लेते हैं। भिक्षुओ, यह चौथी बात है, जो वैरियोंको प्रिय है, जो वैरियोंको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि इसके पास ऐश्वर्य न हो। यह किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके पास ऐश्वर्य देखकर प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसने आलस्य रहित होकर जो ऐश्वर्य कमाया होता है, वह भी उसके क्रोधी होनेके कारण नष्ट हो जाता है। भिक्षुओ, यह पांचवी बात है, जो वैरियोंको प्रिय है, जो वैरियोंको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी दूसरे वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि इसके कोई मित्र न रहें। यह किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी अपने वैरीके मित्र देखकर प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है, उसके जो यार-दोस्त रक्त-सम्बन्धी होते हैं, वे भी उसके क्रोधी होनेके कारण, उससे दूर दूर हो जाते हैं। भिक्षुओ, यह छठी बात है, जो वैरियों को प्रिय है, जो वैरियोंको अच्छी लगती है, और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

फिर भिक्षुओ, एक वैरी दूसरे वैरीके लिये कामना करता है—अच्छा हो, यदि यह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त हो, नरकमें जन्म ग्रहण करे। यह किस लिये? भिक्षुओ, एक वैरी दूसरे वैरीके सुगति-गमनसे प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ, जो क्रोधी होता है, क्रोधके वशीभूत होता है, क्रोधके आधीन होता है,

वह शरीरसे दुष्कर्म करता है, वाणीसे दुष्कर्म करता है, मनसे दुष्कर्म करता है। वह क्रोधी होनेके कारण शरीर, वाणी तथा मनसे दुष्कर्म कर, शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह सातवीं बात है, जो वैरियोंको प्रिय है, जो वैरियोंको अच्छी लगती है और जो स्त्री वा पुरुषके मनमें क्रोध उत्पन्न करती है।

कोधनो दुब्बणो होति, अथो दुक्खंपि सेति सो।
अथो अत्थं गहेत्वान, अनत्थं अधिपज्जति ॥

[जो क्रोधी होता है, वह दुर्वर्ण होता है, वह दुक्खको प्राप्त होता है, वह अर्थ को अनर्थ करके ग्रहण करता है।]

ततो कायेन वाचाय, वधं कत्वान कोधनो।
कोधाभिभूतो पुरिसो, धनजानिं निगच्छति ॥

[तब क्रोधी आदमी शरीर तथा वाणीसे वध (=दुष्कर्म) कर धनकी हानि को प्राप्त होता है।]

कोधसम्मदसम्मत्तो, आयसक्य निगच्छति।
जातिमित्तासुहज्जा च, परिवज्जन्ति कोधनं॥

[क्रोध रूपी मद से उन्मत्त हुए आदमीका यश (ऐश्वर्य) नष्ट हो जाता है। क्रोधी आदमी के रिशतेदार तथा मित्र गण उसे त्याग देते हैं।]

अनत्थजननो कोधो, कोधो चित्तप्पकोपनो,
भयमन्तरतो जातं, तं जनो नावबुज्झति॥

[क्रोध अनर्थकारी होता है, क्रोधसे चित्त प्रकुपित होता है, अपने अन्दरसे ही भय उत्पन्न हो जाता है--आदमी उसे नहीं जान पाता।]

कुद्धो अत्थं न जानाति, कुद्धो धम्मं न पस्सति।
अन्धतमं सदा होति, यं कोधो सहते नरं॥

[क्रोधी आदमीके लिये अर्थ-अनर्थका बोध नहीं रहता। क्रोधी आदमी धर्मको नहीं देख सकता। उस पर सदा अन्धकार छाया होता है, जिस पर क्रोध सवार रहता है।]

यं कुद्धो उपरोधेति, सुकरं विय दुक्करं।
पच्छा सो विगते कोधे, अग्गिदड्ढोवतप्पति॥

[जिस दुष्कर कार्यको, क्रोधी आदमी, सुकरकी तरह (नष्ट) कर डालता है बादमें क्रोधके उतर जाने पर, वह आगसे जलाये गये की तरह अनुतप्त होता है।]

दुग्मङ्कुयं पदस्सेति, धूमं धूमीव पावको
यतोपतायति कोधो, येन कुज्झन्ति मानवा ॥

[जिस क्रोधसे आदमी क्रोधित होते हैं, वह क्रोध उतर जानेपर आदमी उसी प्रकार निस्तेज हो जाते हैं जैसे धुएँ वाली अग्नि।]

नास्स हिरी न ओत्तप्पं, न वाचो होति गारवा।
कोधेन अभिभूतस्स, न दीपं होति किञ्चनं ॥

[जो क्रोधके वशीभूत होता है, न उसे लज्जा होती है, न (पाप–) भीरुता होती है, न उसकी वाणीमें गौरवका भाव रहता है। उसके लिये कुछ भी आश्रय-स्थान नहीं रहता।]

तपनीयानि कम्मानि, यानि धम्मेहि आरका।
तानि आरोचयिस्सामि, तं सुणाथ यथातथं ॥

[जो कर्म तपाने वाले हैं, जो धर्म से (बहुत) दूर हैं, उन्हें कहता हूँ, उन्हें यथार्थ रूपसे सुनो।]

कुद्धो हि पितरं हन्ति, हन्ति कुद्धो समातरं
कुद्धोहि ब्राह्मणं हन्ति, हन्ति कुद्धो पुथुज्जनं ॥

[क्रोधी आदमी पिताकी हत्या कर डालता है। क्रोधी आदमी माताकी हत्या कर डालता है। क्रोधी आदमी श्रेष्ठ पुरुष की हत्या कर डालता है। क्रोधी आदमी अज्ञ जनकी हत्या कर डालता है।]

याय मातु भतो पोसो, इमं लोकं अवेक्खति।
तंपि पाणददिं सन्तिं, हन्ति कुद्धो पुथुज्जनो ॥

[जिस माताके द्वारा पोषित होकर प्राणी इस लोकको देखता है, क्रुद्ध अज्ञानी आदमी उस प्राण देने वाली जननीकी भी हत्या कर डालता है।]

अत्तूपमा हि ते सत्ता, अत्ता हि परमो पियो।
हन्ति कुद्धो पुथुत्तानं, नानारूपेसु मुच्छितो ॥

[सभी प्राणी अपने समान हैं, किन्तु अपना-आप ही सर्वाधिक प्रिय होता है। क्रोधसे मूर्छित हुए प्राणी नाना रूपसे आत्म-हत्या तक कर डालते हैं।]

असिना हन्ति अत्तानं, विसं खादन्ति मुच्छिता,
रज्जुया वज्झ मीयन्ति, पब्बतामपि कन्दरे ॥

[(क्रोधसे) मूर्छित जन तलवारसे आत्म-हत्या कर लेते हैं, वे विष खा लेते हैं, वे (गलेमें) फाँसी लगाकर भी मर जाते हैं तथा पर्वतोंकी कन्दराओंमें गिरकर भी प्राण गवाँ देते हैं।]

भूनहच्चानि कम्मानि, अत्तमारणियानि च।
करोन्ता नावबुज्झन्ति, कोधजातो पराभवो॥

[ऐसे लोग भ्रूण-हत्या तथा आत्म-हत्या आदि कर्म करते हुए भी कुछ नहीं समझते। क्रोध ही पतनका जनक है।]

इतायं कोधरूपेन, मच्चुपासो गुहासयो।
तंदमेन समुच्छिन्दे, पञ्ञाविरियेन दिट्ठिया॥

[इस प्रकार क्रोधके रूपमें यह छिपा हुआ मृत्यु-पाश है। बुद्धिमान आदमीको चाहिये कि इन्द्रिय-संयम, प्रज्ञा, वीर्य्य तथा (सम्यक्) दृष्टि से इसकी जड़ काट दे।]

यथा मेतं अकुसलं, समुच्छिन्देथ पण्डितो।
तथेव धम्मे सिक्खेथ, मा नो दुम्मंकुयं अहु॥

[पण्डित आदमीको चाहिये कि जिस प्रकार वह इस अकुशल (अशुभ) कर्मकी जड़ खोदे, उसी प्रकार वह धर्मका शिक्षण ग्रहण करे, जिससे वह निस्तेज न हो।]

वीतकोधा आनायासा, वीतलोमा अनुस्सुका।
दन्ता कोधं पहन्त्वान, परिनिब्बन्ति अनासवा॥

[जो क्रोध-रहित होते हैं, जो आयास (= दुःख)–रहित होते हैं, जो लोभ रहित होते हैं, जो उत्सुकता (= चंचलता) रहित होते हैं, जो संयत होते हैं—ऐसे जन क्रोधका त्यागकर परिनिर्वाण को प्राप्त होते हैं।]

(७) महावग्ग

भिक्षुओ, लज्जा तथा (पाप) भीरुताके न रहने पर, लज्जा तथा (पाप) भीरुताका अभाव हो जाने पर (आदमीके) इन्द्रिय-संयमका ऱ्हास हो जाता है; इन्द्रिय-संयमके न रहने पर, इन्द्रिय-संयमका अभाव हो जाने पर (आदमीके) शीलका ऱ्हास हो जाता है; शीलके न रहनेपर, शीलका अभाव हो जाने पर सम्यक् समाधि का ऱ्हास हो जाता है; सम्यक् समाधिके न रहने पर, सम्यक् समाधिका ऱ्हास हो जाने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका ऱ्हास हो जाता है; यथाभूत ज्ञान-दर्शन के न रहने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका अभाव हो जाने पर, निर्वेद-वैराग्यका ऱ्हास हो जाता है; निर्वेद-वैराग्यके न रहने पर, निर्वेद-वैराग्यका ऱ्हास हो जानेपर विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनका ऱ्हास हो जाता है।

भिक्षुओ, जैसे किसी वृक्षकी शाखायें और पत्ते न रहें। उसकी पपड़ी, त्वचा फेग्गु तथा सार भी पूर्णता को प्राप्त नहीं होता। इसी प्रकार भिक्षुओ, लज्जा

तथा (पाप)–भीरुताके न रहने पर, लज्जा तथा (पाप) का अभाव हो जाने पर (आदमीके) इन्द्रिय-संयमका ह्रास हो जाता है। इन्द्रिय-संयमके न रहनेपर, इन्द्रिय-संयमका अभाव हो जाने पर, शीलका ह्रास हो जाता है; शीलके न रहने पर, शीलका अभाव हो जाने पर, सम्यक् समाधिका ह्रास हो जाता है; सम्यक् समाधिके न होनेपर, सम्यक् समाधिका ह्रास हो जाने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका ह्रास हो जाता है; यथाभूत ज्ञान-दर्शनके न रहने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनका अभाव हो जाने पर, निर्वेद-वैराग्यका ह्रास हो जाता है; निर्वेद-वैराग्यके न रहने पर, निर्वेद वैराग्यका ह्रास हो जाने पर विमुक्ति-ज्ञान-दर्शनका ह्रास हो जाता है।

भिक्षुओ, लज्जा तथा (पाप–) भीरुताके रहने पर, लज्जा तथा (पाप–) भीरुतासे युक्त होने पर इन्द्रिय-संयम में वृद्धि होती है; इन्द्रिय संयमके रहने पर, इन्द्रिय-संयमसे युक्त होने पर शीलमें वृद्धि होती है; शीलके रहने पर, शीलसे युक्त होने पर, सम्यक् समाधिमें वृद्धि होती है; सम्यक् समाधिके रहने पर, सम्यक् समाधिसे युक्त होने पर, यथाभूत ज्ञान-दर्शनमें वृद्धि होती है; यथाभूत-ज्ञान-दर्शनके रहने पर यथाभूत ज्ञान-दर्शनसे युक्त होने पर, निर्वेद-वैराग्यमें वृद्धि होती है; निर्वेद-वैराग्यके रहने पर, निर्वेद-वैराग्यसे युक्त होने पर, विमुक्ति ज्ञान-दर्शनमें वृद्धि होती है।

भिक्षुओ, जैसे वृक्ष शाखाओं और पत्तोंसे युक्त हो। उसकी पपड़ी, त्वचा, फेग्गु तथा सार-सभी पूर्णताको प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार भिक्षुओ, लज्जा तथा (पाप-) भीरुता के रहने पर, लज्जा तथा (पाप–) भीरुतासे युक्त होने पर . . . . विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन में वृद्धि होती है।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वैशालीके अम्बपाली-वनमें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओंको आमन्त्रित किया––"भिक्षुओ!" उन भिक्षुओंने भगवानको "भदन्त" कह कर प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा––

भिक्षुओ, संस्कार अनित्य हैं; भिक्षुओ, संस्कार अध्रुव हैं; भिक्षुओ, संस्कार अविश्वसनीय हैं। भिक्षुओ, जितने भी संस्कार हैं, उन सभी संस्कारोंसे निर्वेद प्राप्त करना, वैराग्य प्राप्त करना, मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, जो सिनेरु (सुमेरु) पर्वत-राजा है, उसकी चौरासी हजार योजन की लम्बाई है, चौरासी हजार योजन की चौड़ाई है, चौरासी हजार योजन तक महा समुद्रके अन्दर धँसा है, चौरासी हजार योजन तक महासमुद्रके ऊपर उठा है। भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घ काल तक, बहुत वर्षों तक, बहुतसे सैकड़ों वर्षों तक, बहुतसे हजारों वर्षों तक, बहुतसे लाखों वर्षों तक वर्षा नहीं होती। भिक्षुओ

देवता (= वर्षा) के न बरसनेपर जितने भी बीज हैं, जितने भी पौधे हैं—औषधियाँ, घास, वनस्पतियाँ—वे सूख जाते हैं, एक दम सूख जाते हैं, नहीं रहते हैं। भिक्षुओ, संस्कार ऐसे अनित्य हैं; भिक्षुओ, संस्कार ऐसे अध्रुव हैं. . . . . मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घ कालके बाद दूसरा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, दूसरे सूर्यके उदय होने से, जो छोटी-मोटी नदियाँ होती हैं, जो छोटे-मोटे तालाब होते हैं, वे सूख जाते हैं, भिक्षुओ, संस्कार ऐसे अनित्य हैं. . . . मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घकालके बाद तीसरा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, तीसरे सूर्यके उदय होनेसे, जो महानदियाँ होती हैं, जैसे गंगा, यमुना, अचिरवती, सरभु (= सरयू) तथा मही, वे सूख जाती हैं, एक दम सूख जाती हैं, नहीं रहती हैं। भिक्षुओ, संस्कार ऐसे अनित्य हैं. . . . मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घ कालके बाद चौथा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, चौथे सूर्यके उदय होने पर जो वे महान् सरोवर होते हैं—जिनसे ये नदियाँ निकलती हैं—जैसे अनोतप्त, सिंहप्रपात, रथकार, कर्णमुण्ड, कुणाल, षड़दन्त तथा मन्दाकिनी —वे सूख जाती हैं, एकदम सूख जाती हैं, नहीं रहती हैं। भिक्षुओ, संस्कार ऐसे ही अनित्य हैं. . . . . मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है जब कभी कभी दीर्घकालके बाद पाँचवा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, पाँचवें सूर्यके उदय होने पर महासमुद्रका पानी सौ योजन भी नीचे उतर जाता है, दो सौ योजन भी नीचे उतर जाता है, तीन सौ योजन भी, चार सौ योजन भी, पाँच सौ योजन भी, छह सौ योजन भी तथा महासमुद्रका पानी सात सौ योजन भी नीचे उतर जाता है। तब महासमुद्रमें सात ताड़की गहराई तक पानी रहता है, छह ताड़ तक भी, पाँच ताड़ तक भी, चार ताड़ तक भी, तीन ताड़ तक भी, दो ताड़ तक भी तथा महासमुद्रमें एक ताड़ की गहराई तक का भी पानी रहता है। तब महासमुद्रमें सात पोरसा पानी भी रहता है, छह पोरसा भी, पाँच पोरसा भी, चार पोरसा भी, तीन पोरसा भी, दो पोरसा भी, एक पोरसा भी, आधा पोरसा भी, कमर तक भी, घुटने तक भी तथा महासमुद्रमें केवल एड़ी तककी गहराई भर भी पानी रहता है। भिक्षुओ जैसे शीत कालमें थोड़ी वर्षा होनेपर जहाँ तहाँ गौओंके खुरोंके निशानोंमें पानी रुका रहता है, इसी प्रकार भिक्षुओ महासमुद्रका

पानी जहाँ तहाँ एड़ी भर की गहराई तक रहता है। भिक्षुओ, पाँचवें सूर्यके उदय होनेपर महासमुद्रमें उँगलीके पोर भर भी पानी नहीं रहता, भिक्षुओ, संस्कार ऐसे ही अनित्य हैं....... मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घकालके बाद छठा सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, छठे सूर्यके उदय होने पर, यह महापृथ्वी तथा सिनेरु (= सुमेरु) पर्वतराज धुँधवाने लगता है, बहुत धुंधवाने लगता है, बहुत बहुत धुँधवाने लगता है। भिक्षुओ, जैसे कुम्हारका आवा चढ़ने पर पहले धुँधवाता है, बहुत धुँधवाता है, बहुत बहुत धुँधवाता है। भिक्षुओ, इसी प्रकार छठे सूर्यके उदय होने पर, यह महापृथ्वी तथा सिनेरु (= सुमेरु) पर्वतराज धुँधवाने लगता है, बहुत धुँधवाने लगता है, बहुत बहुत धुँधवाने लगता है। भिक्षुओ, संस्कार ऐसे ही अनित्य हैं ... मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, ऐसा समय आता है, जब कभी कभी दीर्घकालके बाद सातवाँ सूर्य उदय होता है। भिक्षुओ, सातवें सूर्यके उदय होने पर यह महापृथ्वी और यह सिनेरु पर्वतराज जलता है, प्रज्वलित होता है, एक ज्वाला हो जाता है।

भिक्षुओ, इस महापृथ्वी तथा सिनेरु पर्वत-राजके जलनेपर, दहनेपर, अग्नि-ज्वाला वायुके वेगसे ब्रह्मलोक तक भी पहुँचती है। भिक्षुओ, सिनेरु पर्वतराजके जलने पर, दहने पर, विनष्ट होने पर, महान् अग्नि-स्कन्धसे पराभूत होनेके कारण सौ योजनके शिखर भी जल उठते हैं, दो सौ योजनके शिखर भी, तीन सौ योजनके, चार सौ योजनके तथा पाँच सौ योजनके शिखर भी जल उठते हैं। भिक्षुओ, इस महापृथ्वी तथा सिनेरु पर्वतराजके जलने पर उसकी राख या कालिख नहीं दिखाई देती। भिक्षुओ, जैसे घी या तेलके जलने पर, दहने पर, न उसकी राख दिखाई देती है, न कालिख। भिक्षुओ, इसी प्रकार, इस महापृथ्वी तथा सिनेरु पर्वतराजके जलने पर, दहने पर, न राख दिखाई देती है, न कालिख। भिक्षुओ, इस प्रकार संस्कार अनित्य हैं, भिक्षुओ, संस्कार अध्रुव हैं; भिक्षुओ, संस्कार अविश्वसनीय हैं। भिक्षुओ, जितने भी संस्कार हैं, उन सभी संस्कारोंसे निर्वेद प्राप्त करना, वैराग्य प्राप्त करना, मोक्ष प्राप्त करना उचित है।

भिक्षुओ, दृष्ट-पद (= स्रोतापन्न आर्य-श्रावक) के अतिरिक्त कौन है जो यह माने, जो यह विश्वास करे कि यह पृथ्वी और सिनेरु पर्वतराजा जलेगा, दहेगा?

भिक्षुओ, पहले सुनेत्र नामका, काम-भोगोंके प्रति वीत राग तीर्थंकर शास्ता हुआ। भिक्षुओ सुनेत्र शास्ताके अनेक सौ शिष्य हुए। भिक्षुओ, सुनेत्र शास्ता

अपने शिष्योंको ब्रह्म-सायुज्य का उपदेश देता था। भिक्षुओ, जिन (श्रावकोंने) सुनेत्र शास्ताके ब्रह्मसायुज्य के धर्मोपदेश को सुनकर उसके अनुसार सम्पूर्ण रूपसे आचरण किया, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त हुए, ब्रह्मलोकमें उत्पन्न हुए। जिन्होंने सम्पूर्ण रूपसे उस मार्गका अनुसरण नहीं किया, उनमें से कुछ शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, परनिर्मित—वशवर्ती दिव्य-लोकमें पैदा हुए। कुछ निर्माण-रति देवताओंके लोकमें उत्पन्न हुए, कुछ त्रयोत्रिंश देवताओंके लोकमें उत्पन्न हुए, कुछ चातुर्महाराजिक देवताओंके लोकमें उत्पन्न हुए; कुछ ऐश्वर्यशाली क्षत्रियोंके साथी होकर उत्पन्न हुए; कुछ ऐश्वर्यशाली ब्राह्मणोंके साथी होकर उत्पन्न हुए तथा कुछ ऐश्वर्य शाली गृहपतियोंके साथी होकर उत्पन्न हुए।

भिक्षुओ, तब सुनेत्र शास्ताके मनमें यह विचार पैदा हुआ कि यह मेरे लिये योग्य नहीं कि परलोकमें मेरी भी वह गति हो, अपने श्रावकों जैसी ही हो, मैं विशेष मैत्रीकी भावना करूँ।

भिक्षुओ, सुनेत्र शास्ताने सात वर्ष तक मैत्री-चित्तकी भावना की। सात वर्ष तक मैत्री-चित्तकी भावना करनेके पुण्य-कर्मके फलस्वरूप सात संवर्त—विवर्त कल्पों तक फिर इस लोकमें जन्म ग्रहण नहीं किया। भिक्षुओ, संवर्तके समय आभास्वर रूप होता है। विवर्तके समय शून्य ब्रह्म-विमानमें उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, वहाँ ब्रह्मा होता है, महाब्रह्मा, अभिभूत, अनभिभूत, सर्वदर्शी, वशवर्ती। भिक्षुओ, छत्तिस बार वह शक्र देवेन्द्र हुआ, अनेक सौ बार राजा हुआ, चक्रवर्ती, धार्मिक, धर्म-राजा, चतुर्दिश-विजयी, शान्त-जनपद तथा सात रत्नोंसे युक्त। भिक्षुओ, उसके सहस्राधिक पुत्र थे, वीरंग-समान, शत्रु सेनाका मर्दन करने वाले। उसने सागर तक, इस सारी पृथ्वीको बिना दण्डके, बिना शस्त्रके, धर्मसे जीतकर शासन किया। भिक्षुओ, वह सुनेत्र शास्ता इतनी लम्बी आयु वाला होनेपर भी, इस प्रकार चिरस्थायी होने पर भी, मैं कहता हूँ कि जन्म,जरा, मरण, शोक, रोना-पीटना, दुक्ख-दौर्मनस्य, पश्चातापसे दुखसे—मुक्त नहीं था।

यह किसलिये? भिक्षुओ, चार बातोंके विषयमें अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण। कौन सी चार बातोंके? भिक्षुओ, आर्य-शीलके विषयमें अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण; आर्य समाधिके विषयमें अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण; आर्य-प्रज्ञाके विषयमें अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण; आर्य-विमुक्ति के विषयमें अज्ञ रहनेके कारण, अनभ्यस्त रहनेके कारण। भिक्षुओ, आर्य-शीलका ज्ञान होनेसे, अभ्यास होनेसे; आर्य-समाधिका ज्ञान

होनेसे, अभ्यास होनेसे; आर्य-प्रज्ञाका ज्ञान होनेसे, अभ्यास होनेसे भव-तृष्णाकी जड़ खुद गई, जन्म-परम्परा क्षीण हो गई ; अब पुनर्भव नहीं है।

भगवान् ने यह कहा। तदनन्तर शास्ताने यह कहा—

सीलं समाधि पञ्ञा च, विमुत्तिच अनुत्तरा।
अनुबुद्धा इमे धम्मा, गोतमेन यसस्सिना॥
इति बुद्धो अभिञ्ञाय, धम्ममकखासि भिक्खुनं।
दुक्खस्सन्तकरो सत्था, चक्खुमा परिनिब्बुतो॥

[यशस्वी गौतमने शील, समाधि, प्रज्ञा तथा श्रेष्ठतम विमुक्तिको जाना। बुद्धने धर्मको जानकर भिक्षुओंको उपदेश किया। दुःखका अन्त करनेवाले चक्षुमान शास्ता परिनिर्वाणको प्राप्त हो गये]

भिक्षुओ, जब राजाका सीमा-प्रदेशका नगर सात आवश्यकताओंसे युक्त होता है तथा उस नगरको चार प्रकारके आहार सुलभ होते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं, प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं तो वह नगर बाह्य शत्रुओंके लिये, दुश्मनोंके लिये आक्रमण करनेके अयोग्य हो जाता है।

वह नगर किन सात बातोंसे युक्त होकर सुरक्षित होता है ? भिक्षुओ, राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें गहराई तक, अच्छी तरह गड़ा हुआ, अचल, स्थिर स्तम्भ होता है। यह नगरकी पहली आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर रहने वालों को सुरक्षित रख सकता है और बाहर वालोंसे संघर्ष कर सकता है।

फिर भिक्षुओ, राजाके सीमा-प्रदेशके नगरके गिर्द गहरी तथा चौड़ी खाई होती है। यह नगरकी दूसरी आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर रहने वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहरवालोंसे संघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें चौगिर्द, ऊँचा, चौड़ा उपपथ होता है। यह नगरकी तीसरी आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहर वालोंसे संघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें बहुतसे आयुध-अस्त्र-शस्त्र—इकट्ठे किये होते हैं। यह नगरकी चौथी आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहर वालोंसे संघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें बहुत-सी सेना रहती है, जैसे हाथी-सवार, अश्वारोही, रथिक, धनुर्धारी, ध्वजा लेकर चलने वाले (= चेलका) सेना व्यूहकारक (= चलक), साहसी महायोद्धा (= पिण्ड दायक), उग्र राजपुत्र

उछल कर शत्रुका हथियार छीन ले आने वाले (= पक्खन्दिनो), हाथियोंसेभी जूझ सकने वाले (= महानाग), शूर, चर्म-योद्धा तथा दास-पुत्र। यह नगरकी पाँचवीं आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहर वालोंसे संघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें पण्डित, व्यक्त, मेधावी द्वारपाल होता है, जो परिचितोंको नगरमें प्रविष्ट होने देता है, अपरिचितोंको नगरमें प्रविष्ट होने नहीं देता है। यह नगरकी छठी आवश्यकता है, जिससे युक्त होनेपर नगर भीतर वालोंको सुरक्षित रख सकता है, तथा बाहर वालोंसे संघर्ष कर सकता है।

भिक्षुओ, फिर राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें चार-दीवारी होती है, जो ऊँची होती है, चौड़ी होती है तथा सभी छिद्रोंको बन्द कर देने वाले चूनेसे पुती होती है। यह नगरकी सातवीं आवश्यकता है, जिससे युक्त होने पर नगर भीतर वालोंको सुरक्षित रख सकता है तथा बाहर वालोंसे संघर्ष कर सकता है। इन सात आवश्यकता-ओंसे नगर सुरक्षित होता है।

कौनसे चार प्रकार के आहार सुलभ होते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं, प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं? फिर भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमें बहुत सा घास, लकड़ी तथा पानी एकत्र किया हुआ होता है, जिससे नगरवासी प्रसन्न रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुखपूर्वक रहते हैं तथा बारहवालोंसे संघर्ष हो सकता है।

भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमें बहुत सा धान-जौ एकत्र किया हुआ होता है, जिससे नगर-वासी प्रसन्न रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुखपूर्वक रहते हैं तथा बाहर बालोंसे संघर्ष हो सकता है।

फिर भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमें बहुत से तिल, मूँग, मास तथा दूसरे धान्य इकट्ठे किये होते हैं, जिससे नगर वासी प्रसन्न रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुखपूर्वक रहते हैं तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है।

फिर भिक्षुओ, राजाके सीमान्त-नगरमें बहुत भैषज्य जैसे घी, मक्खन, मधु, शक्कर तथा लवण, इकट्ठे किये होते हैं जिससे नगर वासी प्रसन्न रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुख-पूर्वक रहते हैं तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है। भिक्षुओ, ये चार प्रकारके आहार सुलभ होते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं, प्रचुर मात्रमें प्राप्त होते हैं।

भिक्षुओ, जब राजाका सीमा-प्रदेशका नगर सात आवश्यकताओंसे युक्त होता है तथा उस नगरको चार प्रकारके आहार सुलभ होते हैं, बिना कष्टके प्राप्य

होते हैं, प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं, तो वह नगर बाह्य शत्रुओंके लिये, दुश्मनोंके लिये आक्रमण करनेके अयोग्य हो जाता है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक सात गुणोंसे युक्त होता है और उसे इसी जन्ममें सुख देने वाले चारों चैतसिक ध्यान सुलभ रहते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं तथा प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं, तो भिक्षुओ, आर्य-श्रावक पापी मारके आक्रमणके अयोग्य हुआ कहलाता है। वह किन सात गुणोंसे युक्त होता है?

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें गहराई तक, अच्छी तरह गड़ा हुआ, अचल, स्थिर स्तम्भ होता है, जो भीतर वालोंको सुरक्षित रखता है और जिसके होनेसे बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक श्रद्धावान् होता है, तथागतकी बोधिके प्रति श्रद्धायुक्त होता है, 'यह भगवान् अर्हत, हैं. . . . . भगवान् हैं।' भिक्षुओ, श्रद्धारूपी स्तम्भ वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोड़कर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोंका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस प्रथम गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरके गिर्द गहरी तथा चौड़ी खाईं होती है, जो भीतर वालोंको सुरक्षित रखती है और जिसके होनेसे बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य श्रावक लज्जावान् होता है। उसे शरीर, वाणी, मनसे दुष्कर्म करते लज्जा आती है। वह पाप-कर्मोंसे दूर रहता है। भिक्षुओ, लज्जारूपी खाईं वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोड़कर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोंका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस दूसरे गुण (सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें चौगिर्द, ऊँचा, चौड़ा उपपथ होता है, जो भीतरवालोंको सुरक्षित रखता है और जिसके होनेसे बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक (पाप–) भीरु होता है। उसे शरीर, वाणी, मन से दुष्कर्म करते डर लगता है। वह पाप-कर्मोंसे दूर दूर रहता है। भिक्षुओ, (पाप–) भीरुता रूपी उप-पथ वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोड़कर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोंका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस तीसरे गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें बहुतसे आयुध—अस्त्र-शस्त्र—इकट्ठे किये होते हैं, जो भीतर वालोंको सुरक्षित रखते हैं, और जिनके होनेसे बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक बहुश्रुत होता है—. . .सम्यक् दृष्टिसे भली प्रकार ज्ञात किये रहते हैं। भिक्षुओ, श्रुत (ज्ञान) रूपी आयुध वाला आर्य—श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोड़कर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोंका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस चौथे गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें बहुत-सी सेना रहती है—हाथी-सवार, अश्वारोही, रथिक, धनुर्धारी, ध्वजा लेकर चलने वाले (=चेलका), सेना व्यूह कारक (=चलक) साहसी महायोध (=पिण्डदायक) उग्र राजपुत्र, उछलकर शत्रुसे हथियार छीन ले आने वाले (पक्खन्दिनो), हाथियोंसे भी जूझ सकने वाले (महा नाग), शूर, चर्म-योद्धा तथा दास-पुत्र। ये भीतर वालों को सुरक्षित रखते हैं, और इनके होनेसे बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक अकुशल धर्म (=अशुभ आचरण) का त्याग करनेके लिये, सदाचरणका अभ्यास करनेके लिये प्रयत्नशील होता है। वह कुशल धर्मों (=शुभ-कर्मों) के करने में शक्ति—सम्पन्न होता है, दृढ़ होता है, उसने कंधेका जुआ नहीं रख दिया होता है। भिक्षुओ, वीर्यरूपी सेना वाला आर्य-श्रावक अकुशल (=अशुभ) को छोड़कर कुशल (=शुभ) कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोंका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्य्या शुद्ध रखता है। वह इस पाँचवें गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें पण्डित-व्यक्त, मेधावी द्वारपाल होता है, जो परिचितोंको नगरमें प्रविष्ट होने देता है। यह भीतरवालों को सुरक्षित रखता है और इसके होनेसे बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक स्मृतिमान होता है, श्रेष्ठ स्मृतिसे युक्त—चिर-काल-पूर्व किये गये कार्य, चिर-काल-पूर्वकी गई बातको भी स्मरण रख सकने वाला। भिक्षुओ स्मृति रूपी द्वारपाल वाला आर्य-श्रावक अकुशलको छोड़कर कुशल कर्मका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोंका त्यागकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्या शुद्ध रखता है। वह इस छठे गुण (=सद्धर्म) से युक्त होता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमा-प्रदेशके नगरमें चार-दीवारी होती है, जो ऊँची होती है, चौड़ी होती है तथा सभी छिद्रोंको बन्दकर देने वाले चूनेसे पुती होती है।

इससे युक्त होने पर भीतर वाले सुरक्षित रहते हैं तथा बाहर वालोंसे संघर्ष किया जा सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक प्रज्ञावान् होता है, (वस्तुओंके) विकास-ह्रासका ज्ञान कराने वाली प्रज्ञासे युक्त, श्रेष्ठ बींधने वाली प्रज्ञासे युक्त, दु:खके क्षय की ओर ले जाने वाली प्रज्ञासे युक्त। भिक्षुओ, जो आर्यश्रावक प्रज्ञा रूपी सभी छिद्रोंको बन्द कर देनेवाले चूनेसे पूती चार-दीवारीसे युक्त होता है, वह अकुशलको छोड़कर कुशलका अभ्यास करता है, सदोष कर्मोंका त्यगकर निर्दोष कर्म करता है, अपनी चर्या शुद्ध रखता है। वह इस सातवें गुण (= सद्धर्म)से युक्त होता है।

कौनसे चार इसी जन्ममें सुख देनेवाले चैतसिक ध्यान सुलभ होते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं, तथा प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं? भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमान्त-नगरमें बहुतसी लकड़ी तथा पानी एकत्र किया हुआ होता है, जिससे नगर-वासी प्रसन्न होते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुखपूर्वक रहते हैं तथा बाहर वालोंसे संघर्ष करते हैं। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक काम -भोगोंसे पृथक हो. . . . . प्रथम ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है तथा सुखी रहता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमान्त-प्रदेशमें बहुत सा धान-जौ एकत्र किया हुआ रहता है, जिससे नगरवासी प्रसन्न रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुखपूर्वक रहते हैं तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक वितर्क-विचारों के उपशमनके अनन्तर. . .द्वितीय ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है, सुखी रहता है तथा निर्वाण की ओर अग्रसर हुआ रहता है।

भिक्षुओ, जैसे राजाके सीमान्त-प्रदेशमें बहुत से तिल,मूँग, मास तथा दूसरे धान्य इकट्ठे किये होते हैं, जिससे नगर वासी प्रसन्न रहते हैं, निश्चिन्त रहते हैं, सुख पूर्वक रहते हैं, तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य-श्रावक प्रीतिके भी वैराग्यको प्राप्त हो . . . . तृतीय ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है, सुखी रहता है तथा निर्वाणकी ओर अग्रसर हुआ रहता है।

भिक्षुओ जैसे राजाके सीमान्त-प्रदेशमें बहुत भैषज्य जैसे घी, मक्खन, तैल, मधु, शक्कर तथा लवण इकट्ठे किये होते हैं, जिससे नगरवासी प्रसन्न होते हैं, तथा बाहर वालोंसे संघर्ष हो सकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, आर्य श्रावक सुख तथा

दुक्ख दोनोंका प्रहाण करनेके अनन्तर, इससे पूर्व ही सौमनस्य-दौर्मनस्य अस्त हुए रहनेके कारण, अदुख-असुख स्वरूप, उपेक्षा-स्मृति रूपी परिशुद्ध भावसे युक्त चतुर्थ ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है, जिससे वह प्रसन्न रहता है, निश्चिन्त रहता है, सुखी रहता है तथा निर्वाणकी ओर अग्रसर हुआ रहता है। ये चार, इसी जन्ममें सुख देने वाले, चैतसिक ध्यान सुलभ होते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं तथा प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं।

भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक सात गुणोंसे युक्त होता है और उसे इसी जन्ममें सुख देने वाले चारों चैतसिक ध्यान सुलभ रहते हैं, बिना कष्टके प्राप्य होते हैं, तथा प्रचुर मात्रामें प्राप्य होते हैं तो भिक्षुओ, आर्य-श्रावक पापी मारके आक्रमणके अयोग्य कहलाता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण (= धर्म) होते हैं, वह आदरणीय होता है....लोगोंके लिये पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे सात गुण? भिक्षुओ, भिक्षु धर्मज्ञ होता है, अर्थज्ञ होता है, अपने आपको जानने वाला होता है, मात्रज्ञ होता है, कालज्ञ होता है, परिषदज्ञ होता है तथा व्यक्तियोंके विषयमें श्रेष्ठ-श्रेष्ठतर की जानकारी रखता है।

भिक्षुओ, भिक्षु धर्मज्ञ कैसे होता है? भिक्षुओ, भिक्षु धर्मका जानकार होता है—सूत्रका, गेय्यका, वेय्याकरणका, गाथाका, उदानका, इतिवुत्तक का, जातक का, अद्भुत-धर्मका, तथा वेदल्लका। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको धर्मका—सुत्त, गेय्य ....वेदल्लका—ज्ञान नहीं होगा, तो "धर्मज्ञ" नहीं कहलायेगा। क्योंकि भिक्षुओ, भिक्षुको धर्मका—सुत्त-गेय्य....वेदल्लका ज्ञान होता है, इसलिये वह 'धर्मज्ञ' कहलाता है। यह 'धर्मज्ञ' हुआ।

'अर्थज्ञ' कैसे होता है? भिक्षुओ, भिक्षु उस उस कथनका अर्थ जानता है—इस कथनका यह अर्थ है, इस कथनका यह अर्थ है। भिक्षुओ, यदि भिक्षु उस उस कथनके अर्थको नहीं जानेगा कि इस कथनका यह अर्थ है, इस कथनका यह अर्थ है, तो वह 'अर्थज्ञ' नहीं कहलायेगा। क्योंकि भिक्षुओ, भिक्षु उस उस कथनके अर्थको जानता है कि इस कथनका यह अर्थ है, इस कथनका यह अर्थ है, इसलिये 'अर्थज्ञ' कहलाता है। यह हुआ धर्मज्ञ तथा अर्थज्ञ।

अपने आपको जाननेवाला कैसे होता है? भिक्षुओ, भिक्षु अपने आपको जानता है कि मुझमें इतनी श्रद्धा है, इतना शील है, इतना ज्ञान (= श्रुत) है, इतना त्याग है, इतनी प्रज्ञा है, इतनी प्रतिभा है। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको यह ज्ञान न हो कि उसमें इतनी श्रद्धा है, इतना शील है, इतना ज्ञान (= श्रुत) है, इतना त्याग है, इतनी प्रज्ञा है,

इतनी प्रतिभा है, तो वह अपने आपको जानने वाला नहीं कहलायेगा। क्योंकि भिक्षुओ, भिक्षु अपने आपको जानता है कि मुझमें इतनी श्रद्धा है, इतना शील है, इतना ज्ञान (= श्रुत) है, इतना त्याग है, इतनी प्रज्ञा है, इतनी प्रतिभा है, इसलिये वह 'अपने आपको जानने वाला' कहलाता है। यह हुआ, धर्मज्ञ, अर्थज्ञ तथा आत्मज्ञ।

'मात्रज्ञ' कैसे होता है? भिक्षु, भिक्षु चीवर, पिण्डपात, शयनासन, ग्लान-प्रत्यय भैषज्य आदि आवश्यकताओंके ग्रहण करनेकी मात्रा जानता है। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको चीवर, पिण्डपात (= भिक्षा), शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य आदि आवश्यकताओंके ग्रहण करनेकेकी मात्राका ज्ञान नहीं होगा, तो वह 'मात्रज्ञ' नहीं कहलावेगा। क्योंकि भिक्षुओ, भिक्षु चीवर, पिण्डपात, शयनासन, ग्लान-प्रत्यय भैषज्य आदि आवश्यकताओंके ग्रहण करनेकी मात्राको जानता है, इसलिये वह 'मात्रज्ञ' कहलाता है। यह हुआ, धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ तथा मात्रज्ञ।

'कालज्ञ' कैसे होता है? भिक्षुओ, भिक्षु समय जानता है कि यह समय उपदेश (= उद्देस) देनेका है, यह समय प्रश्न पूछनेका है, यह समय (योग-) अभ्यास का है, यह समय एकान्त-सेवनका है। भिक्षुओ, यदि भिक्षुको समयका ज्ञान न हो कि यह समय उपदेश (= उद्देश) देने का है, यह समय प्रश्न पूछनेका है, यह समय योग (–अभ्यास) का है, यह समय एकान्त-सेवनका है, तो वह 'कालज्ञ' नहीं कहलायेगा। क्योंकि भिक्षुओ, भिक्षु समय जानता है कि यह समय उपदेश देनेका है, यह समय प्रश्न पूछनेका है, यह समय योग (–अभ्यास) का है, यह समय एकान्त-सेवनका है, इसलिए वह 'कालज्ञ' कहलाता है। यह हुआ धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ, मात्रज्ञ तथा कालज्ञ।

'परिषदज्ञ' किसे कहते हैं? भिक्षुओ, भिक्षु 'परिषद' से परिचित होता है—'यह क्षत्रिय-परिषद है, यह ब्राह्मण-परिषद है, यह गृहपति-परिषद है, यह श्रमण-परिषद है। इस परिषदमें इस प्रकार पहुँचना चाहिये, इस प्रकार ठहरना चाहिये, इस प्रकार करना चाहिये, इस प्रकार बैठना चाहिये, इस प्रकार बोलना चाहिये तथा इस प्रकार चुप रहना चाहिये। 'भिक्षुओ, यदि भिक्षु 'परिषद' से परिचित न हो कि यह क्षत्रिय-परिषद है....... इस प्रकार चुप रहना चाहिये' तो वह भिक्षु 'परिषदज्ञ' नहीं कहलायेगा। क्योंकि भिक्षुओ, भिक्षु परिषदसे परिचित होता है—'यह क्षत्रिय परिषद है, यह ब्राह्मण-परिषद है, यह गृहपति-परिषद है, यह श्रमण-परिषद है। इस परिषदमें इस प्रकार पहुँचना चाहिये, इस प्रकार ठहरना चाहिये, इस प्रकार करना चाहिये, इस प्रकार बोलना चाहिये तथा इस प्रकार चुप रहना

चाहिये', इसलिये वह 'परिषदज्ञ' कहलाता है। यह हुआ धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ, मात्रज्ञ, कालज्ञ तथा परिषदज्ञ।

व्यक्तियोंके विषयमें श्रेष्ठ श्रेष्ठतर की जानकारी रखनेवाला कैसे होता है? भिक्षुओ, भिक्षु दो (प्रकारके) आदमियोंसे परिचित होता है। एक आर्योंका दर्शन करनेकी इच्छा रखता है, दूसरा आर्योंका दर्शन करनेकी इच्छा नहीं रखता है। जो आदमी आर्योंका दर्शन करनेकी इच्छा नहीं रखता, उतने अंशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी आर्योंका दर्शन करनेकी इच्छा रखता है, उतने अंशमें वह प्रशंसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी आर्योंका दर्शन करनेकी इच्छा रखते हैं। एक सद्धर्म सुनना चाहता है, दूसरा सद्धर्म नहीं सुनना चाहता है। जो आदमी सद्धर्म नहीं सुनना चाहता, उतने अंशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी सद्धर्म सुनना चाहता है, उतने अंशमें वह प्रशंसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी सद्धर्म सुननेकी इच्छा रखते हैं। एक ध्यानसे सद्धर्म सुनता है, दूसरा ध्यानसे सद्धर्म नहीं सुनता। जो आदमी ध्यानसे सद्धर्म नहीं सुनता, उतने अंशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी ध्यानसे सद्धर्म सुनता है, उतने अंशमें वह प्रशंसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी ध्यानसे सद्धर्म सुनते हैं। एक सुनकर धर्मको याद रखता है। दूसरा सुनकर धर्मको याद नहीं रखता। जो आदमी सुनकर धर्मको याद नहीं रखता, उतने अंशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी सुनकर धर्मको याद रखता है, उतने अंशमें वह प्रशंसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी सुनकर धर्मको याद रखते हैं। एक याद (= धारण) रखे धर्मोंके अर्थपर विचार करता है। दूसरा याद (= धारण) रखे धर्मोंके अर्थपर विचार नहीं करता। जो आदमी याद (= धारण) रखे धर्मोंके अर्थपर विचार नहीं करता, उतने अंशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी याद (= धारण) रखे धर्मोंके अर्थपर विचार करता है, उतने अंशमें वह प्रशंसनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी धारण किये हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करते हैं। एक आदमी धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण करता है। दूसरा धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण नहीं करता। जो आदमी धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण नहीं करता, उतने अंशमें वह

निन्दनीय है। जो आदमी धर्म और उसके अर्थको जानकर धर्मानुसार आचरण करता है, उतने अंशमें-वह प्रशसंनीय है।

दो (प्रकारके) आदमी अर्थ तथा धर्मको जानकर धर्मानुसार आचरण करते हैं। एक आत्महितमें रत रहता है, पर-हितमें नहीं। दूसरा आत्म-हित तथा पर-हित दोनोंमें रत रहता है। जो आदमी आत्म-हितमें रत रहता है, पर-हितमें नहीं, उतने अंशमें वह निन्दनीय है। जो आदमी आत्म-हित तथा पर-हित दोनोंमें रत रहता है, उतने अंशमें वह प्रशंसनीय है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु दो (प्रकारके) आदमियोंसे परिचित होता है। भिक्षुओ, इस प्रकार भिक्षु, व्यक्तियोंके विषयमें श्रेष्ठ-श्रेष्ठतरकी जानकारी रखनेवाला होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात गुण (=धर्म) होते हैं, वह आदरणीय होता है.......लोगोंके लिये पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारके पत्ते पीले पड़ जाते हैं, उस समय भिक्षुओ, त्रयोत्रिंशके देवतागण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळारके पत्ते पीले पड़ गये हैं, अचिरकालमें ही अब ये पत्ते गिरेंगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारके पत्ते गिर जाते हैं, उस समय भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवलोकके देवता गण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळारके पत्ते गिर गये हैं, अचिर-कालमें ही अब इसमें पत्ते तथा फूल (एक साथ) उगेंगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारमें पत्ते तथा फूल एक साथ उगते हैं, उस समय भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळार जालक-युक्त हो गया है अर्थात् अब इसमें पत्ते तथा फूल (एक साथ) उग आये हैं। अचिर कालमें ही ये फूल-पत्ते पृथक-पृथक हो जायेंगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारके फूल-पत्ते पृथक-पृथक हो जाते हैं, उस समय, भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळार खारक-युक्त हो गया, अचिरकालमें ही अब इसमें कलियाँ लगेंगी।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारमें कलियाँ लगती हैं, उस समय, भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते हैं--अब पारिछत्तक कोविळारमें कलियाँ (कुड्मल) लगी हैं, अचिरकालमें ही अब इसमें अविकसित पुष्प (कोरक) लगेंगे।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकके पारिछत्तक कोविळारमें अविकसित पुष्प लगते हैं, उस समय भिक्षुओ त्रयोत्रिंश देवतागण प्रसन्न होते हैं—अब पारिछत्तक कोविळारमें अविकसित पुष्प लगे हैं, अचिरकालमें ही अब यह सर्वत्र पुष्पित हो जायेगा।

भिक्षुओ, जिस समय त्रयोत्रिंश देव-लोकका पारिछत्तक कोविळार सर्वत्र पुष्पित हो जाता है, भिक्षुओ, त्रयोत्रिंश देवतागण सन्तुष्ट हो पारिछत्तक कोविळारके नीचे चार दिव्य महीने पाँचों काम-भोगों सहित, उनमें ही समर्पित रहकर व्यतीत करते हैं।

भिक्षुओ, सर्वत्र पुष्पित पारिछत्तक कोविळारके चारों ओर पचास योजन तक उसकी आभा फैली होती है, सौ योजन तक वायुकी दिशाके अनुसार उसकी सुगन्ध जाती है—यह पारिछत्तक कोविळारका प्रताप है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जब आर्य-श्रावक घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेका संकल्प करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओंके पारिछत्तक कोविळारके 'पत्ते पीले पड़ने' के समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक केश-दाढ़ी मुँड़वाकर, काषाय वस्त्र पहन-घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओंके पारिछत्तक कोविळारके 'पत्ते गिरने' के समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक काम-भोगोंसे पृथक हो......प्रथम ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओंके पारिछत्तक कोविळारमें पत्ते तथा फूल (एक साथ) लगनेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक वितर्क विचारोंके उपशमनके अनन्तर.............द्वितीय ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओंके पारिछत्तक कोविळारके फूल-पत्ते पृथक-पृथक हो जानेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक प्रीतिसे भी वैराग्य प्राप्त कर....तृतीय ध्यान प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओंके पारिछत्तक कोविळार में कलियाँ लगनेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक सुख तथा दुःख दोनोंका प्रहाण कर.....चतुर्थ ध्यानको प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओंके पारिछत्तक कोविळारमें अविकसित पुष्प लगनेके समान होता है।

भिक्षुओ, जिस समय आर्य-श्रावक आस्रवोंका क्षय कर........प्राप्त कर विहार करता है, तो यह आर्य-श्रावकका त्रयोत्रिंश देवताओंके पारिछत्तक कोविळार-के सर्व-पुष्पित होनेके समान होता है।

भिक्षुओ, उस समय भुम्म देवता-गण घोषणा करते हैं—अमुक नामके आयुष्मान्का यह अमुक नामका शिष्य, अमुक गाँव या निगमसे, घरसे बेघरहो प्रब्रजित हुआ। यह आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वयं जानकर, साक्षात्कर, प्राप्त कर विहार करता है। भुम्म देवताओंकी घोषणा सुन चातुर्ममहाराजिक देवता.......त्रयोत्रिंश देवता.......याम देवता ....तुसित देवता........म्मानरती देवता.......परनिर्मित वशवर्ती देवता.........ब्रह्मकायिक देवता घोषणा करते हैं—अमुक नामके आयुष्मान्का यह अमुक नामका शिष्य, अमुक गाँव या निगमसे, घरसे बेघर हो प्रब्रजित हुआ। वह आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। उस क्षण, उस मुहूर्त वह घोषणा ब्रह्मलोक तक पहुँचती है। यह क्षीणास्रव भिक्षुका प्रताप है।

उस समय एकान्त-चिन्तन करते हुए आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमें यह संकल्प पदा हुआ—भिक्षु किसका सत्कार करनेसे, किसका गौरव करनेसे, किसके आश्रित रहनेसे अकुशल (= अशुभ) कर्मका त्याग करता है, तथा कुशल (= शुभ) कर्मका अभ्यास करता है? तब आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमें यह हुआ—"भिक्षु, शास्ता का सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे अकुशलका त्याग करता है, कुशल का अभ्यास करता है। भिक्षु, धर्मका........भिक्षु संघका .....भिक्षु शिक्षा-ओंका ......भिक्षु समाधिका.......भिक्षु अप्रमादका.....भिक्षु मैत्री-पूर्ण व्यवहारका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है।

तब आयुष्मान् सारिपुत्रके मनमें यह हुआ—मेरे ये धर्म परिशुद्ध हैं, पूर्ण स्वच्छ हैं। तो भी मैं भगवानको जाकर इन धर्मोंकी सूचना दूँ। इससे मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेंगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी। जैसे किसी आदमीको शुद्ध, स्वच्छ सोना मिल जाय। उसे यह विचार आये—मेरे पासका यह सोना शुद्ध है, स्वच्छ है; तो भी मैं इस सोनेको ले जाकर सुनारोंको दिखाऊँ। इससे मेरा यह सोना 'सुनारके पास हो आया' हो जायेगा और इसका खरापन निश्चित हो जायेगा। इसी प्रकार मेरे ये धर्म परिशुद्ध तथा स्वच्छ हैं, तो भी मैं जाकर इन्हें

भगवानसे निवेदन करूँ। इस प्रकार मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेंगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी।"

तब आयुष्मान् सारिपुत्र शामके समय एकान्त-चिन्तनसे उठ जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्‌को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे यह कहा——

"भन्ते! एकान्तमें चिन्तन करते समय मेरे मनमें यह संकल्प पैदा हुआ——भिक्षु किसका सत्कार करनेसे, किसका गौरव करनेसे, किसके आश्रित रहनेसे, अकुशल-कर्मका त्याग करता है, कुशल-कर्मका अभ्यास करता है? तब भन्ते! मेरे मनमें यह हुआ——भिक्षु शास्ताका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। भिक्षु धर्मका........भिक्षु मैत्री-पूर्ण व्यवहारका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। भन्ते! तब मेरे मनमें यह आया——मेरे ये धर्म परिशुद्ध हैं, पूर्ण स्वच्छ हैं, तब भी मैं भगवान्‌को जाकर इन धर्मोंकी सूचना दूँ। इससे मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेंगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी। जैसे किसी आदमीको शुद्ध, स्वच्छ सोना मिल जाय। उसे यह विचार आये——मेरे पासका यह सोना शुद्ध है, स्वच्छ है; तो भी मैं इस सोनेको ले जाकर सुनारको दिखाऊँ। इससे मेरा यह सोना 'सुनारके पास हो आया' हो जायेगा और इसका खरापन निश्चित हो जायेगा। इसी प्रकार, मेरे ये धर्म परिशुद्ध तथा स्वच्छ है, तो भी मैं जाकर इन्हें भगवानसे निवेदन करूँ। इस प्रकार मेरे ये धर्म अधिक परिशुद्ध हो जायेंगे तथा इनकी स्वच्छता निश्चित हो जायेगी।

सारिपुत्र! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। सारिपुत्र! भिक्षु शास्ताका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। सारिपुत्र! भिक्षु धर्मका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे, अकुशलका त्याग करता है, कुशलका अभ्यास करता है। भिक्षु संघका.....शिक्षाओंका......समाधिका......अप्रमादका........मैत्री-पूर्ण व्यवहारका सत्कार करनेसे, गौरव करनेसे, आश्रित रहनेसे अकुशलका त्याग करता है, कुशलकी भावना करता है।

ऐसा कहनेपर आयुष्मान् सारिपुत्रने भगवानसे निवेदन किया——भन्ते! भगवानके इस संक्षिप्त कथनको मैं विस्तारसे इस प्रकार समझता हूँ। भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रखकर, धर्मके प्रति गौरवका भाव रखेगा——

इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, वह धर्मके प्रति भी अगौरवका भाव रखेगा।

भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरव, धर्मके प्रति अगौरव, किन्तु संघके प्रति गौरवका भाव रखेगा––इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका धर्म तथा संघके प्रति भी अगौरवका ही भाव होगा।

भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरव, धर्मके प्रति अगौरव, संघके प्रति अगौरव, किन्तु शिक्षाओंके प्रति गौरवका भाव रखेगा––इस की गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका शिक्षाओंके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, किन्तु समाधिके प्रति गौरव का भाव रखेगा––इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका समाधिके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति अगौरवका भाव रखेगा; किन्तु अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा––इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका अप्रमादके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति, अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, किन्तु मैत्री-पूर्ण व्यवहार के प्रति गौरवका भाव रखेगा––इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति.......अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी अगौरवका भाव रहेगा।

भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, वह धर्मके प्रति अगौरवका भाव रखेगा––इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा......।

भन्ते! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा.....अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा; किन्तु मैत्री-पूर्व व्यवहारके प्रति अगौरवका भाव रखेगा–– इसकी गुंजाइश नहीं। भन्ते! जो भिक्षु शास्ताके प्रति.......अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा।

भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा——इसकी गुंजाइश है। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, वह धर्मके प्रति भी गौरवका भाव रखेगा.......।

भन्ते ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा......अप्रमादके प्रति भी गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा——इसकी गुंजाइश है। भन्ते ! जो भिक्षु शास्ता, धर्म, संघ, शिक्षाओं, समाधि तथा अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, वह मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव रखेगा।

भन्ते ! भगवानके संक्षिप्त कथनका मैं इस प्रकार विस्तारसे अर्थ जानता हूँ।

सारिपुत्र ! बहुत अच्छा। सारिपुत्र ! यह बहुत अच्छा है कि मेरे संक्षिप्त कथनका तू इस प्रकार विस्तृत अर्थ जानता है। सारिपुत्र ! कोई भिक्षु शास्ताके प्रति अगौरवका भाव रख कर, धर्मके प्रति गौरवका भाव रखेगा——इसकी गुंजाइश नहीं।.........सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका अप्रमादके प्रति भी अगौरवका भाव होगा।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति, अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहार-के प्रति गौरवका भाव होगा——इसकी गुंजाइश नहीं। सारिपुत्र ! जो भिक्षु, शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति, संघके प्रति, शिक्षाओंके प्रति, समाधिके प्रति, अप्रमादके प्रति अगौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यवहारके प्रति भी अगौरवका ही भाव होगा।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति अगौरवका भाव होगा, इसकी गुंजाइश नहीं......सारिपुत्र ! जिस भिक्षुका शास्ताके प्रति गौरवका भाव होगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति, धर्मके प्रति......अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्री-पूर्ण व्यबहारके प्रति अगौरवका भाव होगा——इसकी गुंजाइश नहीं। सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा.... .....अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्रीपूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव रहेगा।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा––इसकी गुंजाइश है। सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका धर्मके प्रति भी गौरवका भाव होगा ....।

सारिपुत्र ! जो भिक्षु शास्ताके प्रति .....अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्रीपूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा––इसकी गुंजाइश है। सारिपुत्र ! जो भिक्षु शाताके प्रति .....अप्रमादके प्रति गौरवका भाव रखेगा, उसका मैत्रीपूर्ण व्यवहारके प्रति भी गौरवका भाव होगा।

सारिपुत्र ! इस प्रकार जो कुछ मैंने संक्षिप्त रूपमें कहा है, उसका विस्तार पूर्वक अर्थ जानना चाहिये।

भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना (योगाभ्यास) में नहीं लगा हुआ है, उसके मनमें चाहे कितनी भी यह इच्छा उत्पन्न हो कि काश मेरा चित्त आस्रवोंसे आसवित-रहित विमुक्तिको प्राप्त हो। किन्तु उसका चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित विमुक्ति को प्राप्त नहीं होता। यह किसलिये ? यही कहना चाहिये कि अभ्यास (= भावना) न करनेके कारण ? किसका अभ्यास न करनेके कारण ? चारों स्मृति-उपस्थानोंका, चारों सम्यक् प्रधानोंका, चारों ऋद्धिपादोंका, पाँचों इन्द्रियोंका, पाँचों बलोंका, सातों बोज्झंगोंका तथा आर्य अष्टांगिक मार्गका।

भिक्षुओ, जैसे किसी मुर्गीके आठ-दस या बारह अण्डे हों। लेकिन वह अण्डे उस मुर्गीके द्वारा भली प्रकार सेये न गये हों, उन्हें भली प्रकार गर्मी न पहुँचाई गई हो, उन्हें भली प्रकार प्रभावित न किया गया हो। उस मुर्गीकी चाहे कितनी भी यह इच्छा हो कि काश ! मेरे चोजे अपने पंजों या चोंचसे अण्डोंको फोड़कर सकुशल बाहर आ जायें, किन्तु इसकी गुंजाइश नहीं है कि वह चोजे अपने पंजों या चोंचसे अण्डोंको फोड़कर सकुशल बाहर आ जायें। यह किसलिये ? भिक्षुओ, उस मुर्गीने अण्डोंको भली प्रकार सेया नहीं है, भली प्रकार गर्मी नहीं पहुँचाई गई है, भली प्रकार प्रभावित नहीं किया है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना (= योगाभ्यास) में नहीं लगा हुआ है, उसके मनमें चाहे जितनी भी यह इच्छा उत्पन्न हो कि काश मेरा चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित मुक्तिको प्राप्त हो। किन्तु उसका चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित विमुक्तिको प्राप्त नहीं होता। यह किस लिये ? यही कहना चाहिये कि अभ्यास(= भावना)न करनेके कारण। किसका अभ्यास न करनेके कारण ? चारों स्मृति उपस्थानोंका, चारों सम्यक् प्रधानोंका, चारों ऋद्धिपादोंका, पाँचों इन्द्रियोंका, पाँचों बलोंका, सातों बोज्झंगोंका तथा आर्य अष्टांगिक मार्गका।

भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना (= योगाभ्यास) में लगा हुआ है, उसके मनमें चाहे यह इच्छा उत्पन्न न हो कि काश! मेरा चित्त आस्रवोंसे आसक्ति-रहित विमुक्तिको प्राप्त हो; तो भी उसका चित्त आस्रवोंसे आसक्ति रहित विमुक्तिको प्राप्त होगा। यह किसलिये? यही कहना चाहिये कि अभ्यास (= भावना) करनेके कारण। किसका अभ्यास करनेके कारण? चारों स्मृति-उपस्थानोंका, चारों सम्यक्-प्रधानोंका चारों ऋद्धिपादोंका, पाँचों इन्द्रियोंका, पाँचों बलोंका, सातों बोज्झंगोंका तथा आर्य अष्टांगिक-मार्गका।

भिक्षुओं, जैसे किसी मुर्गीके आठ, दस या बारह अण्डे हों। वे अण्डे उस मुर्गीके द्वारा भली प्रकार सेये गये हों, उन्हें भली प्रकार गर्मी पहुँचाई गई हो, उन्हें भली प्रकार प्रभावित किया गया हो। उस मुर्गीकी चाहे यह इच्छा न भी हो कि काश! मेरे चोजे अपने पंजों या चोंचसे अण्डोंको फोड़ कर सकुशल बाहर निकल आयें। इसकी गुंजाइश है कि वे चोजे अपने पंजों या चोंचसे अण्डोंको फोड़कर सकुशल बाहर आ जायें। यह किस लिये? भिक्षुओ, उस मुर्गीने अण्डोंको भली प्रकार सेया है, भली प्रकार गर्मी पहुँचाई है, भली प्रकार प्रभावित किया है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जो भिक्षु भावना(= योगाभ्यास)में लगा हुआ है, चाहे उसके मनमें यह इच्छा उत्पन्न न हो कि काश! मेरा चित्त आस्रवोंसे आसक्तिरहित मुक्तिको प्राप्त हो, तो भी उसका चित्त आस्रवोंसे आसक्ति रहित मुक्तिको प्राप्त होगा। यह किसलिये? यही कहना चाहिये कि अभ्यास (= भावना) करनेके कारण। किसका अभ्यास करनेके कारण? चारों स्मृति-उपस्थानोंका. . . .आर्य अष्टांगिक मार्गका।

भिक्षुओ, जैसे बढ़ई वा बढ़ईके शिष्यको अंगुलियोंका निशान वा अंगूठेका निशान कुल्हाड़ी (= वासी) पर दिखाई देता है। उसे इस बातका ज्ञान नहीं होता कि कुल्हाड़ीका इतना हिस्सा आज घिसा था, इतना कल घिसा था, इतना परसों घिसा था, उसे घिसनेपर 'घिस गया'—यही ज्ञान होता है। इसी प्रकार भिक्षुओ, जो भिक्षु योगाभ्यास (= भावना) में लगा होता है, उसे यह ज्ञान नहीं होता कि आस्रवोंका इतना हिस्सा आज क्षीण हुआ, इतना हिस्सा कल क्षीण हुआ, इतना परसों क्षीण हुआ। उसे क्षीण होनेपर आस्रव-क्षय हो गया, यही ज्ञान होता है।

भिक्षुओ, जैसे वेंतसे बँधी नौका छह महीने तक पानीमें रहनेके बाद हेमन्त ऋतुमें स्थलपर लानेसे, हवा-धूप लगनेसे, वर्षा-ऋतुके मेघोंसे स्पष्ट होनेपर उसके बंधन बिना कठिनाईके ही क्षीण पड़ जाते हैं, सड़ जाते हैं। इसी प्रकार भिक्षुओ,

जो भिक्षु योगाभ्यास (= भावना) में लगा होता है, उसके संयोजन बिना कठिनाईके ही क्षीण पड़ जाते हैं, सड़ जाते हैं।

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् बड़े भारी भिक्षु संघके साथ कोशल (जनपद) में चारिका कर रहे थे। मार्गारूढ़ भगवानने एक प्रदेशमें बड़ा भारी आगका ढेर देखा, जलता हुआ, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ। उसे देख, भगवान् मार्गसे हट एक वृक्षके नीचे , एक आसनपर बैठ गये। बैठकर भगवानने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ ! तुम इस जलते हुए, प्रज्ज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके बड़े ढेरको देखते हो न ?"

"भन्ते। हाँ"

"तो भिक्षुओ, किसे अधिक अच्छा समझते हो—इस जलते हुए, प्रज्ज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके बड़े ढेरका आलिंगन कर उसके साथ बैठने वा लेटनेको, अथवा किसी मृदु-तलवे तथा मृदु-हथेलीवाली क्षत्रिय कन्या वा ब्राह्मण-कन्या वा गृहपति-कन्याका आलिंगन कर उसके साथ बैठने वा लेटनेको ?"

"भन्ते ! यही अच्छा है कि किसी मृदु-तलवे तथा मृदु-हथेलीवाली क्षत्रिय-कन्या वा ब्राह्मण-कन्या वा गृहपति-कन्याका आलिंगन कर उसके साथ वैठा वा लेटा जाय; क्योंकि इस जलते हुए, प्रज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके बड़े ढेरका आलिंगन कर उसके साथ बैठना वा लेटना तो दुखद है।"

"भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है, पापी है, अपवित्र आचरण वाला है, छिपकर पाप-कर्म करनेवाला है, श्रमण होनेकी घोषणा करनेके बावजूद अश्रमण है, ब्रह्मचारी होनेकी घोषणा करनेके बावजूद अब्रह्मचारी है, अन्दरसे सड़ा हुआ है, छिद्र-युक्त है तथा क्षुद्र है, उसके लिये यही अधिक अच्छा है कि वह इस जलते हुए, प्रज्ज्वलित, लाटें निकलते हुए आगके बढ़े ढेरका अलिंगन कर, उसके साथ बैठे वा लेटे। यह किसलिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु मात्र दुःख है । किन्तु उसके कारण शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गतिको प्राप्त नहीं होगा, वह नरकमें उत्पन्न नहीं होगा।

"भिक्षुओ, जो दुश्शील है, पापी है, अपवित्र आचरण वाला है, क्षुद्र है, वह यदि मृदु तलवे तथा मृदु-हथेलीवाली क्षत्रिय कन्या वा ब्राह्मण-कन्या वा गृहपति-कन्याका आलिंगन कर, उसके साथ बैठता वा लेटता है, तो भिक्षुओ, यह उसके लिये दीर्घ काल तकके लिये अहितकर होता है, दुःखद होता है, वह शरीरके छूटनेपर, मरने के अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान पुरुष मजबूत, बालोंकी बनी रस्सीसे दोनों जंघोंको कसकर बाँध दे और उन्हें रगड़े, जिससे वह रस्सी छबि छेद डाले, छबि छेदकर चमड़ी छेद डाले, चमड़ी छेद कर हड्डी छेद डाले, हड्डी छेद कर, हड्डीकी चर्बीसे जाकर सट जाये, अथवा वह महा-ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों ब्राह्मणों, गृहपतियोंका अभिवादन स्वीकार करे ?" "भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहपतियोंका अभिवादन स्वीकार करे, क्योंकि भन्ते यह तो दुखद है कि कोई बलवान् पुरुष मजबूत बालोंकी बनी रस्सीसे.........हड्डीकी चर्बी से जाकर सट जाय।"

"भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है....क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष मजबूत, बालोंकी बनी रस्सीसे जाँघोंको कसकर बाँध दे......हड्डीकी चर्बीसे जाकर सट जाय। यह किसलिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु-मात्र दुःख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर, वह दुर्गतिको प्राप्त नहीं होगा, वह नरकमें उत्पन्न नहीं होगा। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील.......क्षुद्र, महा एश्वर्य-शाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों तथा गृहपतियोंका अभिवादन स्वीकार करता है, यह उसके लिये, दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर होता है, दुःखद होता है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान् आदमी तेलसे धुली हुई तेज बर्छी छातीमें घोंप दे, अथवा वह महाऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहपतियोंका "हाथ जोड़ना" स्वीकार करे ?"

"भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महा एश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहपतियोंका "हाथ जोड़ना" स्वीकार करे, क्योंकि भन्ते ! यह तो दुखद है कि कोई बलवान मनुष्य तेलसे धुली हुई तेज बर्छी छातीमें घोंप दे।"

"भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है. . . . क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् आदमी तेलसे धुली हुई तेज बर्छी छातीमें घोंप दे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु मात्र दुःख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गति को प्राप्त नहीं होता, वह नरकमें उत्पन्न नहीं होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दुःशील .... महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों तथा गृहपतियोंका "हाथ जोड़ना" स्वीकार करता है, यह उसके लिये, दीर्घकाल तक के लिये, अहितकर होता है, दुःखद

होता है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान आदमी तप्त, जलता हुआ, प्रज्ज्वलित लाट निकलता हुआ लोहेका पट्टा शरीर पर लपेट दे, अथवा वह महाऐश्वर्य शाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों वा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये चीवरोंका उपभोग करे ?"

"भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महाऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों वा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये चीवरोंका उपभोग करे। क्योंकि भन्ते ! यह तो दुःखद है कि कोई बलवान् आदमी तप्त, जलता हुआ, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ, लोहे (= अयस्) का पट्टा शरीर पर लपेट दे।"

"भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है. . . . क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् आदमी तप्त, जलता हुआ, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहे(= अयस्) का पट्टा शरीरपर लपेट दे। यह किस लिये ? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप , उसका मरण हो सकता है, मृत्यु-मात्र दुःख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर, वह दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता, वह नरकमें उत्पन्न नहीं होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील. . . . क्षुद्र महा ऐश्वर्य-शाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों तथा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये चीवरोंका उपभोग करता है, यह उसके लिये, दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर होता है, दुःखद होता है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है, कोई बलवान् पुरुष गर्म संडसी से मुँह खोलकर उसमें तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहेका गोला डाल दे और वह उसके होठोंको जला दे, जिह्वाको जलादे, कण्ठको भी जला दे, हृदयको भी जला दे, आँतोंको भी जला दे, छोटी आँतोंको भी जला दे और नीचे के हिस्सेसे बाहर निकल आये; अथवा वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों वा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये पिण्डपात (= भिक्षा) का उपभोग करे ?"

"भन्ते ! यही अच्छा है कि वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों वा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये पिण्डपात(= भिक्षा) का उपभोग करे। क्योंकि भन्ते ! यह तो दुःखद है कि कोई बलवान् पुरुष गर्म संडसीसे मुँह खोलकर, उसमें

तप्त, ज्वलित, प्रज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहेका गोला डाल दे और वह उसके होठोंको जला दे, मुँहको जला दे, जिह्वाको जला दे, कण्ठको भी जला दे, हृदयको भी जला दे, आँतोंको भी जला दे, छोटी आँतोंको भी जला दे और नीचेके हिस्सेसे बाहर निकल आये।"

"भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है. . .क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष गर्म सण्डसीसे मुँह खोलकर, उसमें तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलता हुआ लोहेका गोला डाल दे और वह उसके होठोंको जला दे, मुँहको जला दे, जिह्वाको जला दे, कण्ठको भी जला दे, हृदयको भी जला दे, आतोंको भी जला दे, छोटी आँतोंको भी जला दे और नीचेके हिस्सेसे बाहर निकल आये। यह किस लिये? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है; मृत्यु-मात्र दुःख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता, वह नरकमें उत्पन्न नहीं होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील. . .क्षुद्र, महाऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों तथा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये पिण्डपात(= भिक्षा) का उपभोग करता है, यह उसके लिये दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर होता है, दुःखद होता है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

"भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है कि कोई बलवान् आदमी सिर या कन्धेसे पकड़कर गर्म लोहेके पीढ़े पर बिठा दे या गर्म लोहेके मंच पर लिटा दे; अथवा वह महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों, वा गृहपतियों द्वारा श्रद्धा-पूर्वक दिये गये मंचपीठका उपभोग करे?"

"भन्ते! यही अच्छा है कि वह ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों वा गृह पतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये मंच-पीठका उपभोग करे। क्योंकि भन्ते! यह तो दुःखद है कि कोई बलवान् आदमी सिर या कन्धेसे पकड़कर गर्म लोहेके पीढ़ेपर बिठा दे या गर्म लोहेके मंच पर लिटा दे।

भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है, पापी है . . . क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष सिर या कन्धेसे पकड़कर गर्म लोहेके पीढ़ेपर बिठा दे या गर्म लोहेके मंचपर लिटा दे। यह किस लिये? भिक्षुओ, उसके फलस्वरूप उसका मरण हो सकता है, मृत्यु-मात्र दुःख है। किन्तु, उसके कारण शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गति को प्राप्त नहीं होता, वह नरकमें उत्पन्न नहीं होता किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील. . . . क्षुद्र महा ऐश्वर्यशाली

क्षत्रियों, ब्राह्मणों तथा गृहस्थों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये मंच-पीठका उपभोग करता है, यह उसके लिये, दीर्घ काल तक के लिये, अहितकर, होता है, दुःखद होता है। वह शरीर के छूटनेपर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

भिक्षुओ, तो क्या मानते हो कि क्या अधिक अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष सिर नीचे, पैर ऊपर करके तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलते हुए लोहे के कड़ाहेमें डाल दे। ऊपर बुलबुले उठाते हुए वह उसमें पके और एक बार ऊपर आये, एक बार नीचे जाये, एक बार तिर्यक् (=तरल पदार्थके ऊपर ऊपर) तैरे, अथवा महा ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणोंका वा गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये विहारोंका उपभोग करना ?"

"भन्ते! यही अच्छा है कि वह ऐश्वर्यशाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये विहारोंका उपभोग करें। क्योंकि भन्ते! यह तो दुःखद है कि कोई बलवान् पुरुष सिर नीचे, पैर ऊपर करके तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलते हुए लोहेके कड़ाहेमें डाल दे। ऊपर बुलबुले उठाते हुए—वह आदमी उसमें पके, एक बार ऊपर आये, एक बार नीचे जाये, एक बार तिर्यक् (=तरल पदार्थके ऊपर ऊपर) तैरे।"

भिक्षुओ, मैं कहता हूँ, मैं सूचित करता हूँ कि जो दुश्शील है, पापी है, ... क्षुद्र है, उसके लिये यही अच्छा है कि कोई बलवान् पुरुष सिर नीचे, पैर ऊपर करके तप्त, ज्वलित, प्रज्ज्वलित, लाट निकलते हुए लोहेके कड़ाहेमें डाल दे। ऊपर बुलबुले उठाते हुए, वह आदमी उसमें पके और एक बार ऊपर आये, एक बार नीचे जाये, एक बार तिर्यक (=तरल पदार्थके ऊपर ऊपर) तैरे। यह किसलिये भिक्षुओ, उसके फलस्वरुप, उसका मरण हो सकता है, मृत्यु मात्र दुःख है। किन्तु उसके कारण शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर वह दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता, वह नरकमें उत्पन्न नहीं होता। किन्तु भिक्षुओ, जो दुश्शील, पापी . . . .क्षुद्र महा ऐश्वर्य-शाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों, गृहपतियों द्वारा श्रद्धापूर्वक दिये गये विहारोंका उपभोग करता है, यह उसके लिये, दीर्घ कालतकके लिये, अहितकर होता है, दुःखद होता है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त होता है, नरकमें उत्पन्न होता है।

इसलिये भिक्षुओ, यह सीखना चाहिये—कि हम जिन (गृहस्थोंके दिये हुए) चीवर, पिण्डपात (=भिक्षा) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य परिस्कारोंका

उपभोग करते हैं, उनके लिये उनके वे दान महोपकारी, महाफलदायक, महान् प्रति-फल दायक होंगे और हमारी यह प्रव्रज्या भी अबध्या होगी, सफल होगी, उद्देश्य-पूर्ण होगी,

"भिक्षुओ, इसी प्रकार सीखना चाहिये—भिक्षुओ, जिसे आत्मार्थ (= स्व-हित) का ध्यान हो उसे भी अप्रमाद पूर्वक रहना चाहिये। जिसे परार्थ (= परहित) का ध्यान हो उसे भी अप्रमाद पूर्वक रहना चाहिये। जिसे आत्म-हित तथा पर-हित दोनोंका ध्यान हो, उसे भी अप्रमाद पूर्वक रहना चाहिये।"

भगवान्ने यह कहा। इस वेय्याकरण (= व्याख्यान) के कहे जाते समय साठ भिक्षुओंके मुँहसे खून निकलने लगा। 'भगवान्! (भिक्षुजीवन) दुष्कर है, भगवान् (भिक्षुजीवन) दुष्कर है, कहते हुए साठ भिक्षु उप-प्रव्रजित (= गृहस्थ) हो गये। साठ भिक्षुओंको आसक्ति-रहित चित्त-विमुक्ति प्राप्त हुई।

भिक्षुओ, पूर्व समयमें सुनेत्त नामका काम-भोगोंके प्रति वीत-राग तैर्थिक शास्ता हुआ। भिक्षुओ, सुनेत्त शास्ताके अनेक सौ शिष्य हुए। सुनेत्त शास्ता अपने शिष्योंको ब्रह्म-सायुज्यताका धर्मोपदेश देता था। भिक्षुओ, सुनेत्त शास्ताके ... सायुज्यका धर्मोपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न नहीं हुआ, वे शरीर छूटने पर मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त हुए, नरकमें उत्पन्न हुए। भिक्षुओ, सुनेत्त शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्मोपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न हुआ, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको प्राप्त हुए, स्वर्ग-लोकमें उत्पन्न हुए।

भिक्षुओ, पूर्व समयमें मृगपक्ष नामका शास्ता हुआ. . . अरनेमि नामका शास्ता हुआ. . . . कुद्दालक नामका शास्ता हुआ . . . हत्थिपाल नामका शास्ता हुआ. . . . जोतिपाल नामका शास्ता हुआ. . .अरक नामका काम भोगोंके प्रति वीत-राग तैर्थिक शास्ता हुआ। भिक्षुओ, अरक शास्ताके अनेक सौ शिष्य हुए। अरक शास्ता अपने शिष्योंको ब्रह्म-सायुज्यताका धर्मोपदेश देता था। भिक्षुओ, अरक शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका धर्मोपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न नहीं हुआ, वे शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर दुर्गतिको प्राप्त हुए, नरकमें उत्पन्न हुए। भिक्षुओ, अरक शास्ताके ब्रह्म-सायुज्यका उपदेश देते समय जिनका चित्त प्रसन्न हुआ, वे शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, सुगतिको प्राप्त हुए, स्वर्ग लोकमें उत्पन्न हुए।

भिक्षुओ, तो तुम मानते हो कि जो इन काम-भोगोंके प्रति वीत-राग, अनेक सौ शिष्योंके श्रावक-संघ वाले सातों तैर्थिक शास्ताओंको दूषित चित्तसे बुरा-भला कहेगा, वह बहुत अपुण्यका भागी होगा?"

"भन्ते ! हाँ।"

भिक्षुओ, जो इन काम भोगोंके प्रति वीत-राग, अनेक सौ शिष्योंके श्रावक संघ वाले सातों तैर्थिक शास्ताओंको दूषित चित्तसे बुरा भला कहेगा, वह बहुत अपुण्य का भागी होगा। जो एक सम्यक्-दृष्टि प्राप्त (=स्रोतापन्न) व्यक्ति को दूषित चित्तसे बुरा-भला कहता है, वह उससे भी अधिक अपुण्यका भागी होता है। यह किस लिये ? भिक्षुओ, जैसी क्षमा मेरे शिष्योंमें है, वैसी क्षमा अपने शिष्योंसे बाहर मैं अन्यत्र कहीं नहीं देखता।

इसलिये भिक्षुओ यह सीखना चाहिये—हम अपने साथियों (=सब्रह्मचारियों) के प्रति अपना चित्त मैला (=दुष्ट) नहीं करेंगे। भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये।"

भिक्षुओ, पूर्व कालमें अरक नामका काम-भोगोंके प्रति वीत-राग तैर्थिक शास्ता हुआ। भिक्षुओ, अरक शास्ताके अनेक सौ शिष्य हुए। अरक शास्ता अपने शिष्योंको इस प्रकार धर्मका उपदेश देता था—ब्राह्मण, मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोडा है, बहुत दुःख-पूर्ण है, बहुत चिन्ता पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल-कर्म करना चाहिये, ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।"

ब्राह्मण ! जैसे तिनकेके सिरे पर ओस की बूँद हो, सूर्यके उदय होने पर वह शीघ्र ही सूख जाती है, चिरस्थायी नहीं होती ; इसी प्रकार ब्राह्मण ! ओसकी बूँदके समान ही मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोड़ा है, बहुत दुःख-पूर्ण है, बहुत चिन्ता-पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल कर्म करना चाहिये, ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण ! जैसे बड़ी-बड़ी बूँदे पड़ने पर पानी के बुलबुले शीघ्र ही मिट जाते हैं, चिरस्थायी नहीं रहते; इसी प्रकार ब्राह्मण ! पानीके बुलबुलेके समान ही मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोड़ा है, बहुत दुःख पूर्ण है, बहुत चिन्ता-पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञानप्राप्त करना)चाहिये, ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण ! जैसे पानी पर खींची गई लकीर शीघ्र ही मिट जाती है, चिर स्थायी नहीं होती; इसी प्रकार ब्राह्मण ! पानी पर खींची गई लकीरके समान ही मनुष्योंका जीवन है. . . . उसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण ! जैसे कोई पर्वतकी नदी हो, दूर तक जाने वाली, शीघ्रगामी, सब कुछ बहाकर ले जाने वाली; ऐसा कोई क्षण या लमहा या मुहूर्त नहीं होता जब

वह उल्टे, वह चली ही जाती है, वह बहती ही रहती है, इसी प्रकार ब्राह्मण! पर्वत की नदीके समान ही मनुष्योंका जीवन है. . . .इसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जैसे कोई बलवान आदमी जिह्वाके सिरे पर थूक लाये और उसे तुरन्त ही थूक दे; इसी प्रकार ब्राह्मण! थूक-पिण्डके समान ही मनुष्योंका जीवन है. . . . इसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जिस प्रकार दिन भर तपे हुए लोहेके तवेपर डाली गई मांस-पेशी शीघ्र ही जल जाती है, चिर-स्थायी नहीं रहती; इसी प्रकार ब्राह्मण! मांसकी पेशीके समान मनुष्योंका जीवन है. . . .इसका मरण ध्रुव है।

ब्राह्मण! जैसे वधके लिये ले जाई जाती हुई गौ जो जो पाँव उठाती है वह वधके समीप ही होती जाती है, मरणके समीप ही होती जाती है; इसी प्रकार ब्राह्मण गौके वधके समान ही मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोड़ा है, बहुत दुःखपूर्ण है, बहुत चिन्तापूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिए, कुशल (-कर्म) करना चाहिये, ब्रह्मचर्य पालना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

भिक्षुओ, उस समय मनुष्योंकी साठ हजार वर्षकी आयु होती थी, पाँच सौ वर्ष की कुमारी विवाहके योग्य (अलंपतेय्या?) होती थी। भिक्षुओ, उस समय मनुष्योंको केवल छह ही रोग होते थे—सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास, पाखाना तथा पेशाब। भिक्षुओ, अरक नामक वह शास्ता, इतनी दीर्घ आयु वाले, इतने चिर-स्थायी, इतने अल्प-रोगी शिष्योंको इस प्रकार धर्मोपदेश देता है—ब्राह्मण! मनुष्यों का जीवन अल्प है, थोड़ा है, बहुत दुःख पूर्ण है, बहुत चिन्ता पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल (-कर्म) करना चाहिये, ब्रह्मचर्य पालना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है।

भिक्षुओ, इस समय ही यह ठीक ठीक कहा जाना चाहिये—"मनुष्योंका जीवन अल्प है, थोड़ा है, बहुत दुःख पूर्ण है, बहुत चिन्ता-पूर्ण है, प्रज्ञासे जानना (=ज्ञान प्राप्त करना) चाहिये, कुशल (-कर्म) करना चाहिये, ब्रह्मचर्य पालना चाहिये, जिसका जन्म हुआ है, उसका मरण ध्रुव है, "भिक्षुओ, इस समय जो अधिक समय तक जीता है, वह न्यूनाधिक सौ वर्ष तक ही जीता है। भिक्षुओ, जो सौ वर्ष तक ही जीता है। वह केवल तीन सौ ऋतुमें ही जीता है सौ हेमन्त ऋतुमें, सौ ग्रीष्म ऋतुमें तथा सौ वर्षा ऋतुमें। भिक्षुओ, जो तीन सौ ऋतुमें जीता है, वह (केवल) बारह सौ महीने ही जीता है—हेमन्त ऋतुके चार सौ महीने, ग्रीष्म-ऋतुके चार सौ महीने तथा वर्षा-ऋतुके

चार सौ महीने। भिक्षुओ, जो बारह सौ महीने जीता है, वह (केवल) चौबीस सौ आधे-महीने ही जीता है—हेमन्त ऋतुके आठ सौ आधे-महीने ग्रीष्म-ऋतुके आठ सौ आधे महीने, वर्षाऋतुके आठ सौ आधे महीने। भिक्षुओ, जो चौबीस सौ आधे महीने जीता है, वह (केवल) छत्तीस हजार रातें जीता है—हेमन्त ऋतुकी बारह हजार रातें, ग्रीष्म ऋतुकी बारह हजार रातें, वर्षाऋतुकी बारह हजार रातें। भिक्षुओ, जो छत्तीस हजार रातें जीता है, वह (केवल) बहत्तर हजार समय भोजन करता है—हेमन्त ऋतुके चौबीस हजार समय, ग्रीष्म ऋतुके चौबीस हजार समय तथा वर्षा-ऋतुके चौबीस हजार समय। इन्हीं समयोंमें वे 'समय' शामिल रहते हैं, जब बच्चा माँ का स्तन चूसता रहता है और जब-जब भोजन में बाधक-कारण (=अन्तराय) उपस्थित हो जाता है।

ये भोजनके बाधक-कारण (=अन्तराय) हैं, क्रोधकी अवस्थामें आदमी भोजन नहीं ग्रहण करता, चित्त दुखी रहनेकी अवस्थामें आदमी भोजन नहीं करता, रोगी होनेकी अवस्थामें आदमी भोजन नहीं करता, उपोसथ (=व्रती) होने पर भी भोजन ग्रहण नहीं करता तथा कोई हानि हो जाने पर भी भोजन ग्रहण नहीं करता।

भिक्षुओ, इस प्रकार मैंने सौ वर्ष जीने वाले आदमीकी आयु भी कही, आयुका माप भी कहा, ऋतुयें भी कहीं, वर्ष-गणना भी कही, महीने भी कहे, अर्द्ध-मास भी कहे, रातें भी कहीं, दिन भी कहे (?), भोजन करनेके समय भी कहे तथा भोजनके बाधक-कारण (=अन्तराय) भी कहे। भिक्षुओ, अपने शिष्योंका हित चाहने वाले दयालु शास्ताको दया करके जो कुछ करना चाहिये, वह मैंने कर दिया। भिक्षुओ, ये वृक्षोंकी छाया (=मूल) है, ये शून्यागार (=एकान्त स्थान) हैं। भिक्षुओ, ध्यान लगाओ। प्रमाद मत करो। पीछे पश्चात्ताप न करना। यही हमारी अनुशासना है।

८. विनय वर्ग

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर होता है। कौन सी सात? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है; वह जानता है कि यह अदोष (=अनापत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी दोष है; वह सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोंका पालन करने वाला, आचार-सम्पन्न, अल्प मात्र दोष में भी भय मानने वाला, शिक्षाओंको सम्यक् प्रकार ग्रहण करने वाला; इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको अनायास, बिना कठिनाईके प्रचुर मात्रामें प्राप्त करने वाला होता है; आस्रवोंका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-

विमुक्ति को इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्तकर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह 'विनय-धर' होता होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर होता है। कौनसी सात? वह यह जानता है कि यह दोष (= आपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अदोष (= अनापत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी दोष है; उसे भिक्षु-प्रातिमोक्ष तथा भिक्षुणी-प्रातिमोक्ष दोनों विस्तार पूर्वक सुविभक्त, सुप्रवर्तित, सुनिश्चित–सूत्र तथा स्कन्ध परिवार (= व्यंजन) की दृष्टिसे हृदयंगम होते हैं; इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानों को अनायास, बिना कठिनाईके, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करने वाला होता है; आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात्कर, प्राप्त कर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह 'विनय-धर' होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर होता है। कौन सी सात! वह यह जानता है कि यह दोष (= आपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अदोष (= अनापत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी-दोष है; वह स्थिर रूपसे विनयका पालन करने वाला होता है; इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको अनायास, बिना कठिनाईके, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करने वाला होता है; आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्तकर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह 'विनय-धर' होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर होता है। कौन सी सात? वह यह जानता हैं कि यह दोष (= आपत्ति) है; वह जानता है कि यह अदोष (= अनापत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी दोष है; वह अनेक प्रकारके पूर्व-जन्मोंका अनुस्मरण करता है, जैसे एक जन्म-दो जन्म. . . . .इस प्रकार आकार और उद्देश्य सहित नाना प्रकारके पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करता है; दिव्य-विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे कर्मानुसार योनि-प्राप्त प्राणियोंको जानता है; आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये सात बातें होती हैं, वह 'विनय-धर' होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौनसी सात बातें? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अदोष (=अनापत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी दोष है; वह सदाचारी होता है . . .शिक्षाओंको सम्यक् प्रकार ग्रहण करने वाला, इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको अनायास, बिना कठिनाईके प्रचुर मात्रामें प्राप्त करने वाला होता है; आस्रवोंका क्षय कर . . . . प्राप्तकर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौनसी सात? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी दोष है; उसे, भिक्षु-प्रातिमोक्ष तथा भिक्षुणी-प्रतिमोक्ष दोनों, विस्तार-पूर्वक, सुविभक्त, सुप्रवर्तित सुनिश्चित सूत्र तथा स्कन्ध-परिवार (=व्यंजन) की दृष्टिसे, हृदयंगम होते हैं, इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको. . .प्राप्त करने वाला होता है; आस्रवों का क्षय कर. . .प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौन सी सात? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अदोष (=आनपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी दोष है; वह स्थिर रूपसे विनयका पालन करने वाला होता है; इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको . . . प्राप्त करने वाला होता ह; आस्रवोंका क्षय कर. . . विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

भिक्षुओ, जिस विनय-धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है। कौन सी सात बातें? वह यह जानता है कि यह दोष (=आपत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अदोष (=अनापत्ति) है; वह यह जानता है कि यह अल्प-दोष है; वह यह जानता है कि यह भारी-दोष है; वह अनेक प्रकारके पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करता है, जैसे एक जन्म, दो जन्म. . . . .इस प्रकार आकार और उद्देश्य-सहित नाना प्रकारके पूर्व-जन्मोंका अनुस्मरण करता है; दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे. . . आस्रवों

का क्षय कर. . . . साक्षात् कर-प्राप्त कर, विहार करता है। भिक्षुओ, जिस विनय धरमें ये सात बातें होती हैं, वह विनय-धर सुशोभित होता है।

आयुष्मान् उपालि जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् उपालिने भगवान् से निवेदन किया—

"भन्ते! अच्छा हो, यदि भगवान् संक्षिप्त रूपमें मुझे धर्मका ऐसा उपदेश दें कि जिसे सुनकर मैं एकाकी, निर्मल, अप्रमादी, उत्साही, प्रयत्नशील[1] हो विहार करूं।"

"उपालि! जिन धर्मोंके बारेमें तू जाने कि ये धर्म न सम्पूर्ण निर्वेदके लिये हैं, न वैराग्यके लिये हैं, न निरोधके लिये हैं, न उपशमनके लिये हैं, न अभिज्ञा के लिये हैं, न सम्बोधिके लिये हैं तथा न निर्वाणके लिये हैं; उन धर्मोंके बारेमें उपालि यह निश्चितरूपसे समझना कि ये न धर्म हैं, न विनय हैं और न शास्ताके अनुशासन हैं। लेकिन उपालि! जिन धर्मोंके बारेमें तू जाने कि ये धर्म सम्पूर्ण निर्वेदके लिये हैं, वैराग्यके लिये हैं, निरोधके लिये हैं, उपशमनके लिये हैं, अभिज्ञाके लिये हैं, सम्बोधिके लिये हैं, निर्वाणके लिये हैं, उन धर्मोंके बारेमें उपालि! यह निश्चित रूपसे समझना कि 'ये धर्म हैं, ये विनय हैं, ये शास्ताके अनुशासन हैं।

भिक्षुओ, ये सात उपाय (=धर्म) हैं, जिन से जो जो झगड़े-मुकदमे होते हैं, वे शान्त हो जाते हैं। कौनसे सात? (उभय-पक्ष की) उपस्थितिमें निर्णय देना, स्मृति (के अनुसार) निर्णय देना, अमूढ़ता (के अनुसार) निर्णय देना, प्रतिज्ञा (=स्वीकारोक्ति) के अनुसार निर्णय देना, बहुमतके अनुसार निर्णय देना, उसके पाप-कर्मके अनुसार निर्णय देना तथा उभय-पक्षकी सहमतिसे मुकदमा समेट देना।

भिक्षुओ, ये सात उपाय (=धर्म) हैं, जिनसे जो जो झगड़े-मुकदमे होते हैं, वे शान्त हो जाते हैं।

९. श्रमण वर्ग

भिक्षुओ सात धर्मों (=विषयों) में (छिन्न-) भिन्नता होनेसे 'भिक्षु' होता है। कौन से सात? सत्काय-दृष्टि छिन्न-भिन्न होती है; विचिकित्सा छिन्न-भिन्न होती है; शील-व्रत परामाश छिन्न-भिन्न होता है, राग छिन्न-भिन्न होता है, द्वेष

---

१. पहित्तत्तो की बुद्धघोषाचार्य ने 'प्रेषित-आत्म' करके व्याख्या की है, जो चिन्त्य है।"

छिन्न-भिन्न होता है, मोह छिन्न-भिन्न होता है तथा मान छिन्न-भिन्न होता है, भिक्षुओ, इन सात धर्मों (=वषयों) में (छिन्न–) भिन्नता होनेसे 'भिक्षु' होता है।

भिक्षुओ, सात धर्मोंके शमित होनेसे श्रमण (=समण) होता है....।

बाहर होनेसे 'ब्राह्मण' होता है....।

निश्रुत (=स्रोतयुक्त) होनेसे श्रोत्रिय (सोत्तिय) होता है....।

स्नात होने से स्नातक (न्हातक) होता है......।

विदित (=जानकार) होनेसे वेदगू होता है.......।

आरक (=पाप कर्मोंसे दूर) होने से आर्य होता है.....।

आरकत्व (=दूरत्व) होनेसे अर्हत होता है। किन सात बातोंसे (दूर होनेसे)? सत्काय-दृष्टिसे दूर होनेसे, विचिकित्सासे दूर होनेसे, शील-व्रत-परामाश से दूर होनेसे, रागसे दूर होनेसे, दोषसे दूर होनेसे, मोहसे दूर होनेसे तथा मानसे दूर होने से। भिक्षुओ, इन सात धर्मों (=विषयों) से दूर रहनेसे अर्हत् होता है।

भिक्षुओ, ये सात असद्धर्म हैं। कौन से सात? अश्रद्धावान् होता है, निर्लज्ज होता है, (पाप–) भीरु नहीं होता है, अल्पश्रुत होता है, आलसी होता है, मूढ़-स्मृति होता है तथा दुष्प्रज्ञ होता है। भिक्षुओ, ये सात असद्धर्म हैं।

भिक्षुओ, ये सात सद्धर्म हैं। कौनसे सात? श्रद्धावान् होता है, लज्जावान् होता है, (पाप–) भीरु होता है। बहु-श्रुत होता है, प्रयत्न-शील होता है, स्मृतिमान होता है तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ, ये सात सद्धर्म हैं।

(१०) आहुनेय्य वर्ग

भिक्षुओ, ये सात व्यक्ति आदरणीय.....दक्षिणाके योग्य, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य तथा लोगोंके लिये श्रेष्ठतम पुण्य-क्षेत्र होते हैं। कौनसे सात? भिक्षुओ, एक व्यक्ति चक्षुको 'अनित्य' समझता हुआ, विहार करता है, अनित्य संज्ञा रखकर, अनित्य-प्रतिसंवेदना रखकर, निरन्तर सम्पूर्ण-भावसे, चित्तसे स्थिर, प्रज्ञासे गहराईमें गया हुआ। वह आस्रवोंका क्षय कर अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा विमुक्तिको इसी जन्ममें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह पहला व्यक्ति है जो आदरणीय...दक्षिणाके योग्य, हाथ जोड़कर नमस्कार करनेके योग्य....लोगोंका सर्वश्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।

फिर भिक्षुओ, एक व्यक्ति चक्षु को 'अनित्य' समझता हुआ विहार करता है, अनित्य संज्ञा रखकर, अनित्य प्रतिसंवेदना रखकर, निरन्तर सम्पूर्ण भावसे, चित्तसे

स्थिर, प्रज्ञासे गहराई मे गया हुआ। उसका पूर्वसे, अन्ततक आस्रव-क्षय तथा जन्म-मरण (= जीवित) का क्षय होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा व्यक्ति है जो आदरणीय. . . . लोगोंके लिये सर्वश्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।

फिर भिक्षुओ, एक व्यक्ति चक्षु को अनित्य समझता हुआ विहार करता है, अनित्य-संज्ञा रखकर, अनित्य-प्रतिसंवेदना रखकर, निरंतर सम्पूर्ण-भावसे, चित्तसे स्थिर, प्रज्ञासे गहराई में गया हुआ। वह पाँचों ह्रासोन्मुख संयोजनोंका क्षय कर बीचमें ही परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है . . . . . . (जन्म-मरणके अन्तको) पहुँचकर परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है . . . . . असंस्कार-परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है . . . . . . संस्कार-परिनिर्वाण प्राप्त करनेवाला होता है . . . . . पतनोन्मुख न रहकर ऊर्ध्व-स्रोत होता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ व्यक्ति है, जो आदरणीय. . . . . . लोगोंके लिये सर्वश्रेष्ठ पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, ये सात व्यक्ति आदरणीय हैं, सत्कार करने योग्य हैं . . . . लोगोंके लिये श्रेष्ठतम पुण्य-क्षेत्र हैं। कौनसे सात? भिक्षुओ, एक आदमी चक्षुको 'दुक्ख' करके समझता है . . . . . चक्षुको 'अनात्म' करके समझता है . . . . . 'चक्षु' को 'क्षय-धर्म' करके समझता है . . . . 'चक्षु' को वय-धर्म करके समझता है . . . . चक्षुको 'विराग-धर्म' करके समझता है . . . . . . चक्षुको 'निरोध-धर्म' करके समझता है . . . . चक्षुको 'प्रति-निसर्ग (परित्याग)-धर्म' करके समझता है . . . . . .।

श्रोत्रको . . . . . . घ्राणको . . . . . जिह्वाको . . . . . काम (= स्पर्शेन्द्रिय) को . . . . . . मनको . . . . . .।

रूपोंको . . . . . शब्दोंको . . . . . . स्पर्शोंको . . . . . गन्धोंको . . . . . स्पृष्टव्यों-को . . . . धर्मों (= मनके विषयों) को।

चक्षुर्विज्ञानोंको . . . . श्रोत्र-विज्ञानोंको . . . . . . घ्राण विज्ञानोंको . . . . . जिह्वा-विज्ञानोंको . . . . काम-विज्ञानोंको . . . . मनोविज्ञानोंको . . . . .।

चक्षु-संस्पर्शोंको . . . . श्रोत्र-संस्पर्शोंको . . . . घ्राग-संस्पर्शोंको . . . . जिह्वा-संस्पर्शोंको. . . . . . काम-संस्पर्शोंको. . . . . . मनोसंस्पर्शोंको. . . . .।

चक्षु संस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको . . . . . . श्रोत्र-संस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको . . . . घ्राण संस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको . . . . जिह्वा संस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको . . . . काम संस्पर्शसे उत्पन्नको . . . . . . मन संस्पर्शसे उत्पन्न वेदनाको . . . .।

रूप-संज्ञाको . . . . शब्द-संज्ञाको . . . . . गन्ध-संज्ञाको . . . . . रस-संज्ञा-को . . . . . स्पृष्टव्य-संज्ञाको . . . . . . धर्म-संज्ञाको . . . . . .।

रूप संचेतनाको......शब्द संचेतनाको.....गन्ध संचेतनाको......रस-संचेतनाको......स्पृष्टव्य-संचेतनाको......धर्म-संचेतनाको.....।

रूप-तृष्णाको......शब्द तृष्णाको....गन्ध तृष्णाको.....रस-तृष्णा-को.......स्पृष्टव्य-तृष्णाको.....धर्म-तृष्णाको......।

रूप-वितर्कोंको.......शब्द-वितर्कोंको.....गन्धवितर्कोंको.......रस-वितर्कोंको.......स्पृष्टव्य-वितर्कोंको......धर्म-वितर्कोंको......।

रूप-विचारोंको......शब्द-विचारोंको.....गन्ध-विचारोंको.......रस विचारोंको.......स्पृष्टव्य-विचारोंको.......धर्म-विचारोंको....।

पंच स्कन्धोंको......रूप स्कन्धको.....वेदना स्कन्धको....संज्ञा-स्कन्धको.......संस्कार-स्कन्धको.....विज्ञान-स्कन्धको 'अनित्य' करके समझ झता है......'दुक्ख' करके समझता है.....'अनात्म' करके समझता है.....'क्षय-धर्म' करके समझता है.......'वय-धर्म' करके समझता है.....'विराग-धर्म' करके समझता है,.....निरोध-धर्म करके समझता है......प्रतिनिसर्ग-धर्म करके समझता है......लोगोंके लिये श्रेष्ठतम पुण्य क्षेत्र होता है।

११. राग-पेय्याल

भिक्षुओ रागका क्षय (=अभिञ्ञा) करनेके लिये सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये। कौनसे सात? स्मृति सम्बोधि-अंग.....उपेक्षा सम्बोधि-अंग। भिक्षुओ, रागका क्षय (=अभिञ्ञा) करनेके लिये इन सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करनी चाहिए।

भिक्षुओ, रागका क्षय करनेके लिये सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करना चाहिए। कौनसे सात? अनित्य-संज्ञा, अनात्म-संज्ञा, अशुभ-संज्ञा, आदीनव (=दुष्परिणाम)-संज्ञा, प्रहाण-संज्ञा, विराग-संज्ञा, निरोध-संज्ञा। भिक्षुओ, रागका क्षय करनेके लिये, इन सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागका क्षय करनेके लिये सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये। कौनसे सात? अशुभ-संज्ञा, मरण-संज्ञा, आहारके प्रतिकूल होनेकी संज्ञा, समस्त लोकके प्रति अनासक्ति-संज्ञा, अनित्य-संज्ञा, अनित्यके दुक्ख होनेकी संज्ञा, दुक्ख के अनात्म होनेकी संज्ञा। भिक्षुओ, राग के क्षयके लिये इन सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करनी चाहिए।

भिक्षुओ, रागके परिज्ञानके लिये......परिक्षयके लिये.....प्रहाणके लिये ......क्षयके लिये...व्ययके लिये....विरागके लिये...निरोधके लिये

.....त्यागके लिये.....परित्यागके लिये....इन सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, द्वेषके......मोहके....क्रोधके.....शत्रुताके.....ढोंगके.....निर्दयताके.....ईर्षाके.....मात्सर्यके.....मायाके.....शठताके..........कठोरताके.....झगड़ालूपनके.....मानके....अतिमानके.....मदके......प्रमादके परिज्ञानके लिये......परिक्षयके लिये......प्रहाणके लिये.......क्षयके लिये.....व्ययके लिये......विरागके लिये.....निरोधके लिये......त्यागके लिये......परित्यागके लिये इन सात धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भगवान्‌ने यह कहा। उन भिक्षुओंने संतुष्ट हो भगवान्‌के भाषणका अभिनन्दन किया।

आठवाँ निपात

१ मेत्ता वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको आमंत्रित किया—"भिक्षुओ।" उन भिक्षुओंने "भदन्त" कह भगवान्को प्रतिवचन दिया।

भिक्षुओ, यदि चित्तकी विमुक्ति मैत्री-भावनाका सेवन किया जाय, भावना की जाय, बढ़ाया जाय, अभ्यास किया जाय, साक्षात् किया जाय, अनुष्ठान किया जाय, परिचय किया जाय तथा सम्यक् प्रकारसे समृद्ध किया जाय तो उसके आठ शुभ परिणाम होते हैं। कौनसे आठ? सुख-पूर्वक सोता है, सुखसे जागता है, बुरा स्वप्न नहीं देखता है, मनुष्योंका प्रिय होता है, मनुष्येतरोंका प्रिय होता है, देवता रक्षा करते हैं, अग्नि, विष वा शस्त्रसे उसे हानि नहीं पहुँचती; कम-से-कम ब्रह्मलोकको अवश्य प्राप्त होता है। भिक्षुओ, यदि चित्तकी विमुक्ति-भावनाका सेवन किया जाय, भावना की जाय, बढ़ाया जाय, अभ्यास किया जाय, साक्षात् किया जाय, अनुष्ठान किया जाय, परिचय किया जाय तथा सम्यक् प्रकारसे समृद्ध किया जाय तो उसके आठ शुभ परिणाम होते हैं—

यो च मेत्तं भावयति, अप्पमाणं पटिस्सतो।
तनू संयोजना होन्ति, पस्सतो उपधिक्खयं।।

एकं पि चे पाणमदुट्ठचित्तो,
मेत्तायति कुसली तेन होति।
सब्बे च पाणे मनसानुकम्पी,
पहूतमरियो पकरोति पुञ्ञं।।
ये सत्तसण्डं पथविं विजेत्वा,
राजिसयो यजमाना अनुपरियगा।
सस्समेधं पुरिसमेधं,
सम्मापासं वाजपेय्यं निरग्गळं।।
मेत्तस्स चित्तस्स सुभावितस्स,
कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा व सब्बे,
यथा न अग्घन्ति कलं पि सोळसिं।।

यो न हन्ति न घातेति, न जिनाति न जापये।
मेत्तंसो सब्ब भूतानं, वेरं तस्स न केनची ।।

[जो स्मृति-युक्त हो असीम मैत्री-भावना करता है, उसके संयोजनोंका तथा उपाधियों (= चित्त मलों) का क्षय होता है। यदि द्वेष-रहित चित्तसे कोई एक प्राणीके प्रति भी मैत्री-भावना करता है तो यह भी उसका कुशल-कर्म होता है। यदि कोई सभी प्राणियोंके प्रति मैत्री-भावना करता है, तो ऐसा आर्य (= श्रेष्ठ) पुरुष बहुत पुण्यका लाभ करता है।

जिन राजर्षियोंने सातों खण्डोंवाली पृथ्वीको जीतकर अश्व-मेध, पुरुष-मेध, सम्यक्पाश, वाजपेय्य तथा निरर्गल यज्ञ किये उन्होंने उस फलको सोलहवें हिस्से को भी नहीं प्राप्त किया जो मैत्री-भावना करनेवालेको प्राप्त होता है। वैसे ही जैसे सारे तारे मिलकर भी चन्द्रमाके सोळहवें हिस्सेके भी बराबर नहीं होते।

जो न किसीका घात करता है, न करवाता है; जो न किसीको हानि पहुँचाता है, न दूसरेके द्वारा पहुँचवाता है, उसकी सभीके प्रति मैत्री है, वह किसीका वैरी नहीं होता।]

भिक्षुओ, ये आठ हेतु हैं, आठ कारण हैं, जिनसे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है। कौनसे आठ? भिक्षुओ, एक भिक्षु शास्ता अथवा अपने किसी ऐसे गौरव-भाजन साथीके साथ रहता है, जिसके प्रति उसके मनमें तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है। भिक्षुओ, यह पहला हेतु है, यह पहला कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह शास्ताके अथवा अपने किसी ऐसे गौरव-भाजन साथीके रहते हुए, जिसके प्रति उसके मनमें तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है, उससे समय-समय पर प्रश्न करता है, शंका समाधान करता है—भन्ते! यह कैसे? भन्ते! इसका क्या अर्थ? वे उस आयुष्मान्को जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते हैं, जो ढँका रहता है, उसे उघाड़ देते हैं तथा धर्मके विषयमें अनेक शंकाओंका समाधान कर देते हैं। भिक्षुओ, यह दूसरा हेतु है, यह दूसरा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह भिक्षु उस धर्मको सुनकर शरीर तथा मन दोनोंसे ग्रहण करता है,। भिक्षुओ, यह तीसरा हेतु है, यह तीसरा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णता को प्राप्त होती है।

वह सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोंका पालन करनेवाला, योग्य नियमोंके अनुसार रहने वाला तथा योग्य स्थानपर विचरने वाला, छोटेसे छोटे दोषके करनेसे भी भयभीत होने वाला तथा शिक्षाओंके अनुसार सम्यक् प्रकारसे जीवन व्यतीत करने वाला। भिक्षुओ, यह चौथा हेतु है, यह चौथा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह बहुश्रुत होता है, श्रुतका धारण करने वाला, श्रुतका संग्रह करने वाला। ऐसे सब धर्म, जो आदि, मध्य तथा अन्तमें कल्याणकारक हैं; जो अर्थ-सहित, व्यंजन-सहित, सम्पूर्ण रूपसे परिशुद्ध ब्रह्मचर्यका प्रकाश करने वाले हैं, उसके द्वारा बहुश्रुत होते हैं, धारण किये गये होते हैं, वाणी द्वारा सुपरिचित होते हैं, मन द्वारा सुपरीक्षित होते हैं तथा प्रज्ञा द्वारा सम्यक् रूपसे ज्ञात होते हैं। भिक्षुओ, यह पाँचवा हेतु है, यह पाँचवाँ कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह अकुशल-धर्मों (=बुराइयों) का त्याग करनेके लिये, कुशल-धर्मों (=अच्छाइयों) को ग्रहण करनेके लिये कटिबद्ध रहता है, शक्ति-सम्पन्न, दृढ़-पराक्रमी, कुशल धर्मोको वहन करनेके लिये प्रस्तुत। भिक्षुओ, यह छठा हेतु है, यह छठा कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह संघमें सम्मिलित होनेपर नाना तरहकी बातें बनाने वाला नहीं होता, फिजूल बातें करने वाला नहीं होता या तो वह स्वयं धर्मको पढ़ता है, या दूसरेको पढ़ाता है, अथवा आर्य-मौन धारण किये रहता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ हेतु है, यह सातवाँ कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है।

वह पाँचों उपादान-स्कन्धोंकी उत्पत्ति और निरोधका चिन्तन करने वाला होता है—'यह रूप है, यह रूप का समुदय है, यह रूपका अस्त होना है; यह वेदना है, यह वेदनाका समुदय है, यह वेदनाका अस्त होता है; यह संज्ञा है. . . . ; ये संस्कार

हैं. . . .यह विज्ञान है, यह विज्ञानका समुदय हैं, यह विज्ञानका अस्त होना है।' भिक्षुओ, यह आठवाँ हेतु है, यह आठवाँ कारण है, जिससे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती है, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णता को प्राप्त होती है।

उसके साथी-ब्रह्मचारी उसको इस प्रकार मानते हैं कि यह भिक्षु शास्ता अथवा अपने किसी ऐसे गौरव भाजन साथीके साथ रहता है, जिसके प्रति इसके मनमें तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है। यह आयुष्मान्, 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।'

यह एक धर्म (=बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है, तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् शास्ताके अथवा अपने किसी ऐसे गौरव-भाजन साथीके रहते हुए--जिसके प्रति इसके मनमें तीव्र लज्जा-भयका भाव रहता है, तथा प्रेम और आदरकी भावना होती है, उससे समय समय पर प्रश्न करता है, शंका समाधान करता है—भन्ते, यह कैसे? भन्ते! इसका क्या अर्थ? वे इस आयुष्मान् को जो अस्पष्ट रहता है, उसे स्पष्ट कर देते हैं; जो ढँका रहता है, उसे उघाड़ देते हैं तथा धर्मके विषयमें अनेक शंकाओंका समाधान कर देते हैं। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (=बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान उस धर्मको सुनकर शरीर तथा मन दोनोंसे ग्रहण करता है। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (=बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोंका पालन करने वाला, योग्य-नियमोंके अनुसार रहने वाला तथा योग्य स्थानपर विचरने वाला, छोटेसे छोटे दोषके करनेसे भी भयभीत होने वाला तथा शिक्षाओंके अनुसार सम्यक् प्रकारसे जीवन व्यतीत करने वाला। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म धर्म (=बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् बहुश्रुत होता है, श्रुतका धारण करने वाला, श्रुतका संग्रह करने वाला। ऐसे सब धर्म; जो आदि, मध्य तथा अन्तमें कल्याणकारक हैं; जो अर्थ-सहित, व्यंजन-सहित, सम्पूर्ण रूपसे परिशुद्ध ब्रह्मचर्यका प्रकाश करने वाले हैं; उसके द्वारा बहुश्रुत होते हैं, धारण किये गये होते हैं, वाणी द्वारा सुपरिचित होते हैं, मन द्वारा सुपरीक्षित होते हैं तथा प्रज्ञा द्वारा सम्यक् रूपसे ज्ञात होते हैं। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् अकुशल धर्मों (= बुराइयों) का त्याग करनेके लिये, कुशल धर्मों (= अच्छाइयों) को ग्रहण करनेके लिये कटिबद्ध रहता है, शक्ति-सम्पन्न, दृढ़ पराक्रमी, कुशल-धर्मोंको वहन करनेके लिये प्रस्तुत। यह आयुष्मान् 'निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् संघमें सम्मिलित होने पर नाना तरहकी बातें बनाना वाला नहीं होता, फिजूल बातें करने वाला नहीं होता। या तो वह स्वयं धर्मको पढ़ता है, या दूसरेको पढ़ाता है, अथवा आर्य-मौन धारण किये रहता है। यह आयुष्मान् 'निश्चित-रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

यह आयुष्मान् पाँचों उपादान-स्कन्धोंकी उत्पत्ति और निरोधका चिंतन करने वाला होता है—'यह रूप है, यह रूपका समुदय है, यह रूपका अस्त होना है; यह वेदना है, यह वेदनाका समुदय है, यह वेदनाका अस्त होना है; यह संज्ञा है. . . . ये संस्कार हैं. . . . यह विज्ञान है, यह विज्ञानका समुदय है, यह विज्ञानका अस्त होना है।' यह आयुष्मान् निश्चित रूपसे जानता हुआ जानता है, देखता हुआ देखता है।' यह एक धर्म (= बात) भी उसे प्रिय बनाता है, गौरवार्ह बनाता है, आदरणीय बनाता है, श्रमण-धर्मके योग्य बनाता है तथा एकाग्रता-युक्त बनाता है।

भिक्षुओ, ये आठ हेतु हैं, आठ कारण हैं जिनसे अनुपलब्ध आरम्भिक प्रज्ञाका लाभ होता है, लब्ध प्रज्ञामें वृद्धि होती, वह विपुलताको प्राप्त होती है, वह संपूर्णताको प्राप्त होती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह अपने साथियोंके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उसका न गौरव होता न है न आदर। कौनसी आठ बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु अप्रियजनोंकी प्रशंसा करने वाला होता है, प्रियजनोंकी निन्दा करने वाला होता है, लाभकी इच्छा रखने वाला होता है, सत्कारकी इच्छा रखने वाला होता है, लज्जा-रहित होता है, भय-रहित होता है, बुरी इच्छाओं वाला होता है तथा मिथ्या-दृष्टि वाला होता है । भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं वह अपने साथियोंके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उसका न गौरव होता है, न आदर ।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह अपने साथियोंके लिये प्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा लगता है, उसका गौरव होता है, आदर होता है। कौन सी आठ बातें ? वह अप्रियजनोंकी प्रशंसा करने वाला नहीं होता, वह प्रियजनोंकी निन्दा करने वाला नहीं होता, वह लाभ की इच्छा रखने वाला नहीं होता, वह सत्कार की इच्छा रखने वाला नहीं होता, वह लज्जा-रहित नहीं होता, वह भय-रहित नहीं होता, वह बुरी इच्छाओं वाला नहीं होता तथा मिथ्या-दृष्टि वाला नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह अपने साथियोंके लिये प्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा लगता है, उसका गौरव होता है, आदर होता है ।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह अपने साथियोंके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उसका न गौरव होता है न आदर। कौनसी आठ बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा रखने वाला होता है, सत्कारकी इच्छा रखने वाला होता है, अपने अवगुणोंको दूसरोंसे छिपाये रखनेकी इच्छा वाला होता है, न कालज्ञ होता है, न मात्रज्ञ होता है, अपवित्र होता है, बकवादी होता है तथा अपने साथियोंको बुरा-भला कहने वाला होता है । भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह अपने साथियोंके लिये अप्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा नहीं लगता, उसका न गौरव होता है, न आदर।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह अपने साथियोंके लिये प्रिय हो जाता है, उन्हें अच्छा लगता है, उसका गौरव होताहै, आदर होता है। कौनसी आठ बातें ? भिक्षुओ, वह भिक्षु लाभकी इच्छा रखने वाला नहीं होता, सत्कार की इच्छा रखने वाला नहीं होता, अपने अवगुणोंको दूसरोंसे छिपाये रखनेकी इच्छावाला नहीं होता, सत्कारकी इच्छा रखने वाला नहीं होता, अपने अवगुणोंको दूसरोंसे छिपाये रखनेकी इच्छा रखने वाला नहीं होता, कालज्ञ होता है, मात्रज्ञ होता है, पवित्र होता

है, बकवादी नहीं होता तथा अपने साथियोंको बुरा-भला कहने वाला नहीं, होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह अपने साथियोंके लिये प्रिय हो जाता है उन्हें अच्छा लगता है, उसका गौरव होता है, आदर होता है।

भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमें व्याप्त हैं और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोंके अनुसार परिवर्तित होता है। कौनसे आठ? लाभ, अलाभ (=हानि), यश, अपयश, निन्दा, प्रशंसा, सुख तथा दुक्ख। भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमें व्याप्त हैं और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोंके अनुसार परिवर्तित होता है।

"लाभो अलाभो च यसायसो च,
निन्दा प्रसंसा च सुखं दुखं च।
एते अनिच्चा मनुजेसु धम्मा,
असस्सता विपरिणामधम्मा।
एते च ञत्वा सतिमा सुमेधो,
अवेक्खति विपरिणामधम्मे।
इट्ठस्स धम्मा न मथेन्ति चित्तं
अनिट्ठतो नो पटिघातमेति।।
"तस्सानुरोधा अथवा विरोधा
विधूपिता अत्थङ्गता न सन्ति।
पदं च ञत्वा विरजं असोकं
सम्मप्पजानाति भवस्स पारगू" ति।।

[लाभ, अलाभ (=हानि), यश, अयश, निन्दा-प्रशंसा, सुख तथा दुःख—ये आठ बातें ऐसी हैं जो मनुष्योंमें अनित्य हैं, अशाश्वत हैं तथा परिवर्तित होने वाली हैं।

जो स्मृतिमान है, जो बुद्धिमान है वह इन धर्मोंको परिवर्तनशील समझता है। जो इष्ट (=अनुकूल) धर्म हैं वे भी उसके चित्तका मंथन नहीं करते तथा जो अनिष्ट (=प्रतिकूल) धर्म हैं, वे भी उसके चित्तको हानि नहीं पहुँचाते।

इन धर्मोंके अनुरोध (=अनुकूलता) अथवा विरोध (=प्रतिकूलता) से विध्वंसित होनेपर, वह चंचल नहीं होता। ये धर्म (अनित्य होनेके कारण) अस्त हो जाते हैं, नहीं रहते हैं।

जो स्मृतिमान होता है, वह विरज, अशोक, (निर्वाण-) पदको जानकर भव (=संसार) के पार का ज्ञाता हो जाता है।]

भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमें व्याप्त हैं और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोंके गिर्द घूमता रहता है। कौनसे आठ? लाभ, अलाभ (= हानि), यश, अपयश, निन्दा, प्रशंसा, सुख तथा दुःख। भिक्षुओ, ये आठ लोक-धर्म विश्वमें व्याप्त हैं और यह विश्व इन आठ लोक-धर्मोंके गिर्द घूमता रहता है।

"भिक्षुओ, जो अश्रुतवान् (= अज्ञानी) पृथक जन है, उसे भी लाभ–अलाभ दोनों होते हैं, यश-अपयश दोनों होते हैं, निन्दा-प्रशंसा दोनों होती हैं, तथा सुख-दुःख दोनों होते हैं। भिक्षुओ, इसी प्रकार जो श्रुतवान् (= ज्ञानी) आर्य-श्रावक होता है, उसे भी लाभ-अलाभ दोनों होते हैं, यश-अपयश दोनों होते हैं, निन्दा-प्रशंसा दोनों होती हैं तथा सुख-दुःख दोनों होते हैं, तो भिक्षुओ, श्रुतवान् (= ज्ञानी) आर्य-श्रावक तथा अश्रुतवान् (= अज्ञानी) पृथक जनमें क्या भेद है, क्या अन्तर है, क्या फर्क है?

"भन्ते! हमारा जो धर्म है, उसके आप ही मूल हैं, आप ही नेता हैं, आप ही प्रतिशरण हैं। भन्ते! अच्छा हो इस कथनका अर्थ आप ही स्पष्ट कर दें। आपसे सुनकर भिक्षु ग्रहण करेंगे।"

"तो भिक्षुओ, सुनो। अच्छी तरह मनमें धारण करो। कहता हूँ।" "भन्ते! ऐसा ही" कह उन भिक्षुओंने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवान्ने यह कहा—"भिक्षुओ, जब अश्रुतवान् (= अज्ञानी) पृथक्जनको किसी वस्तुका लाभ होता है, तो वह इस प्रकार विचार नहीं करता कि 'यह जो मुझे लाभ हुआ है, वह अनित्य है, दुःख-स्वरूप है, परिवर्तनशील है।' वह इस यथार्थ बातको नहीं जानता। उसे अलाभ होता है. . . . उसे यश मिलता है. . . .उसका अपयश होता है . . . उसकी निन्दा होती है. . . उसकी प्रशंसा होती है . . . उसे सुख होता है . . . .उसे दुःख होता है। वह इस प्रकार विचार नहीं करता कि 'यह जो मुझे दुःख हुआ है, यह अनित्य है, दुःख है, परिवर्तनशील है।' उसे यथार्थ ज्ञान नहीं होता।

उसके चित्तको लाभ भी ग्रस लेता है, अलाभ भी ग्रस लेता है, यश भी चित्त को ग्रस लेता है, अपयश भी चित्त को ग्रस लेता है, निन्दा भी चित्तको ग्रस लेती है, प्रशंसा भी चित्तको ग्रस लेती है, सुख भी चित्तको ग्रस लेता है, दुःख भी चित्तको ग्रस लेता है। उसे जो लाभ होता है, उसके प्रति उसके मनमें राग उत्पन्न हो जाता है, उसे जो अलाभ (= हानि) होता है उसके प्रति उसके मनमें विरोध उत्पन्न हो जाता है; यशके प्रति राग उत्पन्न होता है, अपयशके प्रति विरोध;

प्रशंसाके प्रति राग उत्पन्न हो जाता है, निन्दाके प्रति विरोध; सुखके प्रति राग उत्पन्न हो जाता है, दुखःके प्रति विरोध। इस प्रकार राग-द्वेषमें फँसा हुआ वह जन्म, जरा, मरण, शोक, पश्चात्ताप, दुःख-दौर्मनस्य तथा अशान्तिसे मुक्त नहीं होता—मैं कहता हूँ कि वह दुःखसे मुक्त नहीं होता।

भिक्षुओ, जब श्रुतवान् (= ज्ञानी) आर्य श्रावकको किसी वस्तुका लाभ होता है, तो वह इस प्रकार विचार करता है कि 'यह जो मुझे लाभ हुआ है, वह अनित्य है, दुःख स्वरूप है, परिवर्तन-शील है'। वह इस यथार्थ बातको जानता है। उसे अलाभ होता है.....उसे यश मिलता है......उसका अपयश होता है.....उसकी निन्दा होती है....उसकी प्रशंसा होती है.....उसे सुख होता है.....उसे दुःख होता है। वह इस प्रकार विचार करता है कि यह जो मुझे दुःख हुआ है, यह अनित्य है, दुःख है, परिवर्तनशील है', उसे यथार्थ-ज्ञान होता है।

उसके चित्तको लाभ भी नहीं ग्रस सकता है, अलाभ भी नहीं ग्रस सकता है, यश भी चित्तको नहीं ग्रस सकता है, अपयश भी चित्तको नहीं ग्रस सकता है, निन्दा भी चित्तको नहीं ग्रस सकती है, प्रशंसा भी चित्तको नहीं ग्रस सकती है, सुख भी चित्तको नहीं ग्रस सकता है, दुःख भी चित्तको नहीं ग्रस सकता है, उसे जो लाभ होता है उसके प्रति उसके मनमें राग उत्पन्न नहीं होता, उसे जो अलाभ होता है उसके प्रति उसके मनमें विरोध उत्पन्न नहीं होता; यश के प्रति राग उत्पन्न नहीं होता; अपयशके प्रति विरोध उत्पन्न नहीं होता; प्रशंसाके प्रति राग उत्पन्न नहीं होता, निन्दाके प्रति विरोध उत्पन्न नहीं होता; सुखके प्रति राग उत्पन्न नहीं होता, दुःखके प्रति विरोध उत्पन्न नहीं होता। इस प्रकार राग-द्वेषसे मुक्त वह व्यक्ति जन्म, जरा, मरण, शोक, पश्चात्ताप, दुःख-दौर्मनस्य तथा अशान्तिसे मुक्त होता है। मैं कहता हूँ कि वह दुःखसे मुक्त होता है। भिक्षुओ, श्रुतवान् (= ज्ञानी) आर्य-श्रावक तथा अश्रुतवान् (= अज्ञानी) पृथक जनमें यह भेद है, यह अन्तर है, यह फर्क है।

लाभो अलाभो च यसायसो च,
निन्दा पसंसा च सुखं दुखं च।
एते अनिच्चा मनुजेसु धम्मा
असस्सता विपरिणाम धम्मा॥
एते च ञत्वा सतिमा सुमेधो
अवेक्खति विपरिणाम धम्मे।
इट्ठस्स धम्मा न मथेन्ति चित्तं,
अनिट्ठतो नो पटिघातमेति॥

तस्सानुरोधा अथवा विरोधा
विधूपिता अत्थङ्गता न सन्ति।
पदं च ञत्वा विरजं असोकं,
सम्मप्पजानाति भवस्स पारगू॥

[अर्थ ऊपर आ गया है।]

एक समय—जब देवदत्तको संघका त्याग कर गए थोड़ा ही समय हुआ था—भगवान् राजगृहके गृध्रकूट पर्वतपर विहार कर रहे थे। उस समय भगवान्ने देवदत्तके बारेमें भिक्षुओंको सम्बोधित किया :—

भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोंकी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर अपनी निर्दोषता (=आत्म सम्पत्ति) के बारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोंकी निर्दोषताके बारेमे विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, देवदत्त आठ बातों से अभिभूत रहने पर, उनके वशीभूत हुआ रहने पर अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ।

किन आठ बातोंसे? भिक्षुओ देवदत्त लाभसे अभिभूत होनेपर, उसके वशीभूत होनेपर अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, अलाभ (=हानि) से.....यशसे.....अपयशसे .....सत्कारसे.....असत्कार (=निन्दा) से.....पापेच्छासे....पापमित्रता (=कुसंगति) से अभिभूत होनेपर उसके वशीभूत होनेपर अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्पभर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, इन आठ बातोंसे अभिभूत होनेपर, उनके वशीभूत होनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ।

भिक्षुओ, भिक्षुके लिये यह अच्छा है कि वह उत्पन्न लाभ से अपनेको अभिभूत न होने दे, उत्पन्न अलाभसे......उत्पन्न यशसे.....उत्पन्न अपयशसे...... उत्पन्न सत्कारसे......उत्पन्न असत्कारसे......उत्पन्न पापेच्छासे....उत्पन्न पाप-मित्रतासे अपनेको अभिभूत न होने दे।

भिक्षुओ, किस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होने दे.....उत्पन्न अलाभसे.....उत्पन्न यशसे....उत्पन्न अपयशसे... उत्पन्न सत्कारसे....उत्पन्न असत्कारसे.....उत्पन्न पापेच्छासे....उत्पन्न पापमित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दें?

भिक्षुओ, उत्पन्न लाभसे अभिभूत हो जाने पर जो घातक जलानेवाले आस्रव पैदा हो जाते हैं, उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होनेपर वह घातक जलानेवाले आस्रव पैदा नहीं होते। भिक्षुओ, उत्पन्न अलाभसे....उत्पन्न यशसे ....उत्पन्न अपयशसे....उत्पन्न सत्कारसे.....उत्पन्न असत्कारसे....उत्पन्न पापेच्छासे....उत्पन्न पापमित्रतासे अभिभूत हो जानेपर जो घातक जलाने वाले आस्रव पैदा हो जाते हैं, उत्पन्न पापमित्रतासे अभिभूत न होनेपर वह घातक जलाने वाले आस्रव पैदा नहीं होते। भिक्षुओ, इस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभ से अभिभूत न होने दे....उत्पन्न अलाभसे.....उत्पन्न यशसे....उत्पन्न अयशसे.... उत्पन्न पापेच्छासे....उत्पन्न पापमित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दे।

इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम उत्पन्न लाभसे अनभिभूत होकर विचरेंगे.....उत्पन्न अलाभसे....उत्पन्न यशसे....उत्पन्न अपयशसे... उत्पन्न सत्कारसे....उत्पन्न असत्कारसे....उत्पन्न पापेच्छासे....उत्पन्न पापमित्रतासे अनभिभूत होकर विचरेंगे।

एक समय आयुष्यमान् उत्तर महिसवत्थु (महिष्मति) के सङ्खेय्यक पर्वत पर वटजालिका (विहार) में विहार करते थे। वहाँ आयुष्मान् उत्तरने भिक्षुओंको सम्बोधित किया:—

"आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोंकी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर अपनी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोंकी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है।"

उस समय वैश्रवण(= कुबेर)महाराज किसी कामसे उत्तर दिशासे दक्षिण दिशा जा रहे थे। वैश्रवण महाराजने सुना कि महिसवत्थुके संखेय्यक पर्वतपर स्थित वटजालिका (विहार) वासी आयुष्मान् उत्तर भिक्षुओंको इस प्रकार धर्मोपदेश दे रहे हैं—

आयुष्मानो ! भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोंकी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर अपनी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय समय पर दूसरोंकी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है।

तब, जैसे कोई बलवान आदमी मुड़ी हुई बाँहको पसार ले अथवा पसारी हुई बाँहको मोड़ ले, उसी प्रकार शीघ्रतासे वैश्रवण महाराज महिसवत्थु स्थित संखेय्यक पर्वत पर के वटजालिका विहारसे अन्तर्धान हो त्रयत्रिंश देव-लोकमें प्रकट हुआ। तब वैश्रवण महाराज जहाँ देवेन्द्र शक्र था, वहाँ गया। पास जाकर देवेन्द्र (शक्र) से कहा—मित्र! मालूम है यह महिसवत्थु स्थित संखेय्यक पर्वतके वट-जालिका विहारमें रहनेवाला आयुष्मान् उत्तर भिक्षुओंको इस प्रकार धर्मोपदेश देता है—'आयुष्मानो। भिक्षुका समय-समय पर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। आयुष्मानो, भिक्षुका समय-समय पर दूसरोंकी सदोषता......अपनी निर्दोषता.....दूसरोंकी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है।"

तब, जैसे कोई बलवान आदमी मुड़ी हुई बाँहको पसार ले अथवा पसारी हुई बाँहको मोड़ ले, उसी प्रकार शीघ्रतासे देवेन्द्र शक्र त्रयोत्रिंश देव-लोकसे अन्तर्धान हो महिसवत्थु स्थित संखेय्यक पर्वतपरके वटजालिक विहारमें आयुष्मान् उत्तरके सम्मुख उपस्थित हुआ। तब देवेन्द्र शक्र आयुष्यमान् उत्तरके पास गया। आयुष्मान् उत्तरके पास पहुँच, आयुष्मान् उत्तरको अभिवादन कर एक ओर खड़ा रहा। एक ओर खड़े हुए देवेन्द्र शक्रने आयुष्मान् उत्तरसे कहा—

"भन्ते! क्या आप आयुष्मान् उत्तर सचमुच भिक्षुओंको यह धर्मोपदेश देते हैं कि आयुष्मानो! भिक्षुका समय-समयपर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुका समय-समयपर दूसरोंकी सदोषता......अपनी निर्दोषता.........दूसरोंकी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है?"

"देवेन्द्र! हाँ।"

"भन्ते! क्या यह धर्मोपदेश आयुष्मान् उत्तरकी अपनी सूझ-बूझ है, या उन भगवान अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका वचन है?"

"देवेन्द्र! तुझे एक उपमा द्वारा समझाता हूँ। कुछ विज्ञ लोग उपमाके द्वारा भी समझ जाते हैं।

देवेन्द्र! जैसे किसी गाँव या निगमसे थोड़ी दूर पर महान् धन-राशि हो। वहाँ से लोग धन ढो-ढोकर ले जायें—कोई बहँगीसे, कोई पिटारीसे, कोई पल्लेमें, कोई अंजलिमें। हे शक्र! अब यदि कोई उन लोगोंसे पूछे कि यह धन कहाँसे ला रहे हो, तो वे लोग उन प्रश्न पूछनेवालोंको ठीक-ठीक क्या उत्तर देंगे?"

"भन्ते! वे लोग यही उत्तर देंगे कि अमुक धनके ढेरमेंसे लिये आ रहे हैं।"

"इसी प्रकार देवेन्द्र! जितना भी सुभाषित है वह सभी उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका है। हम तथा अन्य सभी उसीमें से लेकर धर्मोपदेश देते हैं।"

"भन्ते! यह आश्चर्यकर है। भन्ते! यह अद्भुत है कि यह जो आपका कहना है कि जितना भी सुभाषित है वह सभी उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका है। हम तथा अन्य सभी उसीमेंसे लेकर धर्मोपदेश देते हैं।"

भन्ते उत्तर! एक बार भगवान्, राजगृहके गृध्रकूट पर्वतपर देवदत्तके चले जानेके कुछ ही समय बाद विहार कर रहे थे। तब भगवान्ने उस समय भिक्षुओंको देवदत्तके बारेमें कहा—

भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समयपर अपनी सदोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, भिक्षुका समय-समयपर दूसरोंकी सदोषता........अपनी निर्दोषता.......दूसरोंकी निर्दोषताके बारेमें विचार करना हितकर है। भिक्षुओ, देवदत्त आठ बातोंसे अभिभूत रहनेपर, उनके वशीभूत हुआ रहनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। किन आठ बातोंसे? भिक्षुओ, देवदत्त लाभसे अभिभूत होनेपर, उसके वशीभूत होनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, अलाभ (हानि-) से......यशसे.....अपयशसे.... ....सत्कारसे......असत्कारसे........पापेच्छासे........पापमित्रतासे (=कुसंगति) से अभिभूत होनेपर, उसके वशीभूत होनेपर अपाय गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक (नरकमें) रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ। भिक्षुओ, इन बातोंसे अभिभूत होनेपर, उनके वशीभूत होनेपर, अपाय-गामी हुआ, नारकी हुआ, कल्प भर तक नरकमें रहनेवाला हुआ, ला-इलाज हुआ।

भिक्षुओ, भिक्षुके लिये यह अच्छा है कि वह उत्पन्न लाभसे अपनेको अभिभूत न होने दे, उत्पन्न अलाभसे.......उत्पन्न यशसे.....उत्पन्न अपयशसे...... उत्पन्न सत्कारसे......उत्पन्न असत्कारसे.....उत्पन्न पापेच्छासे.....उत्पन्न पाप-मित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दे।

"भिक्षुओ, किस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होने दे.......उत्पन्न अलाभसे......उत्पन्न यशसे......उत्पन्न अपयशसे........उत्पन्न सत्कारसे.......उत्पन्न असत्कारसे......उत्पन्न पापेच्छासे......उत्पन्न पाप-मित्रतासे अपने आपको अभिभूत न होने दे?

भिक्षुओ, उत्पन्न लाभसे अभिभूत हो जानेपर जो धातक जलानेवाले

आस्रव पैदा हो जाते हैं, उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होनेपर वे घातक जलानेवाले आस्रव पैदा नहीं होते। भिक्षुओ उत्पन्न अलाभसे...... उत्पन्न यशसे.... उत्पन्न अपयशसे..... उत्पन्न सत्कारसे..... उत्पन्न असत्कारसे..... उत्पन्न पपेच्छा-से...... उत्पन्न पापमित्रतासे अभिभूत हो जानेपर जो घातक जलानेवाले आस्रव पैदा हो जाते हैं, उत्पन्न पाप-मित्रतासे अभिभूत न होनेपर वे घातक जलानेवाले आस्रव पैदा नहीं होते। भिक्षुओ, इस फायदेके लिये भिक्षु अपने आपको उत्पन्न लाभसे अभिभूत न होने दे...... उत्पन्न अलाभसे..... उपन्न्न यशसे.... उत्पन्न अपयशसे..... उत्पन्न सत्कारसे..... उत्पन्न असत्कारसे..... उत्पन्न पापेच्छासे ..... उत्पन्न पापमित्रता (= कुसंगति) से अभिभूत न होने दे।

इसलिये भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि हम उत्पन्न लाभसे अनभिभूत होकर विचरेंगे..... उत्पन्न अलाभसे.... उत्पन्न यशसे.... उत्पन्न अपयशसे ..... उत्पन्न सत्कारसे..... उत्पन्न असत्कारसे.... उत्पन्न पापेच्छासे...... उत्पन्न पापमित्रतासे अनभिभूत होकर विचरेंगे।"

भन्ते उत्तर! मनुष्योंमें यही चार प्रकारकी परिषद है—भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक तथा उपासिकायें। यह धर्म-पर्य्याय किसीको उपस्थित नहीं है। भन्ते आयुष्मान् उत्तर! आप इस धर्म-पर्य्यायको ग्रहण करें। भन्ते आयुष्यमान् उत्तर! आप इस धर्म-पर्य्यायका पाठ करें। भन्ते आयुष्मान् उत्तर! यह धर्म पर्य्याय-हितकर है, आरम्भिक जीवनके लिये उपयोगी है।

भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ रूपसे कुल-पुत्र कहा जा सकता है। भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ रूपसे 'बलवान्' कहा जा सकता है। भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ-रूपसे 'सुन्दर' कहा जा सकता है। भिक्षुओ, 'नन्द' को यथार्थ रूपसे तीव्र-रागी (= भावुक) कहा जा सकता है। भिक्षुओ, यह सब होनेपर भी नन्दकी इन्द्रियाँ संयत हैं, वह भोजनके विषयमें मात्रज्ञ है, वह जाग्रत रहता है, वह स्मृति-सम्प्रजन्यसे युक्त है, जिससे नन्द परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य्यका आचरण कर सकता है।

भिक्षुओ, नन्दके इन्द्रिय-संयमकी यह स्थिति है कि यदि उसको पूर्व-दिशाकी ओर देखना होता है, तो वह चित्तकी सारी एकाग्रताको लेकर पूर्वकी दिशाकी ओर देखता है। उसे इसका विश्वास (= ज्ञान) रहता है कि इस प्रकार पूर्वकी दिशाकी ओर देखते समय मेरे मनमें अभिध्या (= लोभ) तथा दौर्मनस्य (= द्वेष) रूपी पापी अकुशल-कर्मोंका उदय नहीं होगा।

भिक्षुओ, यदि नन्दको पश्चिम-दिशाकी ओर देखना होता है..... उत्तर

दिशाकी ओर देखना होता है.... दक्षिण-दिशाकी ओर देखना होता है.... ऊपरकी ओर देखना होता है...... नीचेकी ओर देखना होता है..... अनुदिशाओंकी ओर देखना होता है, तो वह चित्तकी सारी एकाग्रताको लेकर अनुदिशाओंकी ओर देखता है। उसे उसका विश्वास (= ज्ञान) रहता है कि इस प्रकार अनुदिशाओंकी ओर देखते समय मेरे मनमें अभिध्या (= लोभ) तथा दौर्मनस्य (= द्वेष) रूपी पापी अकुशल-धर्मोंका उदय नहीं होगा भिक्षुओ, नन्दके इन्द्रिय-संयमकी यह स्थिति है।

भिक्षुओ, नन्दकी भोजनके विषयमें मात्रज्ञ होनेकी यह स्थिति है। भिक्षुओ, नन्द विचारपूर्वक आहार ग्रहण करता है, जो न हँसी-मजाकके लिये होता है, न मदके लिये होता है, न शरीरको मण्डित करनेके लिये होता है, न शरीरको विभूषित करनेके लिये होता है; किन्तु जब तक इस शरीरकी स्थिति है तब तक शरीर-यापनके लिये, विहिंसासे उपरतिके लिये तथा ब्रह्मचर्य्य (= श्रेष्ठ जीवन) पर अनुग्रह करनेके लिये। (उसका संकल्प होता है कि) मैं पुरानी वेदनाको (भोजन -ग्रहण द्वारा) नष्ट कर रहा हूँ तथा नई वेदनाको उत्पन्न होने नहीं दे रहा हूँ। (उस का विश्वास होता है कि) मेरी जीवन-यात्रा निर्दोष होगी और मैं सुख-पूर्वक विचार सकूंगा। भिक्षुओ, नन्दकी भोजनके विषयमें मात्रज्ञ होनेकी यह स्थिति है।

भिक्षुओ, नन्दकी जाग्रत रहनेके विषयमें यह स्थिति है। भिक्षुओ, नन्द दिनमें या तो बैठा रहकर या चन्क्रमण करता रहकर अपने चित्तके आवरणको दूर करनेका प्रयास करता है, रात्रिके पहले याम (= पहर) में या तो बैठा रहकर या चन्क्रमण करता रहकर अपने चित्तके आवरणको दूर करनेका प्रयास करता है, रात्रिके मध्य याममें दाहिनी करवट लेट सिंह-शय्यासे एक पाँवपर दूसरा पाँव रखकर, उठनेका संकल्प मनमें करके सोता है; रात्रिके पिछले याममें या तो बैठा रहकर या चन्क्रमण करता रहकर अपने चित्तके आवरण (= मैल) को दूर करनेका अभ्यास करता है। भिक्षुओ, नन्दकी जाग्रत रहनेके विषयमें यह स्थिति है।

भिक्षुओ, नन्दकी स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त होनेकी यह स्थिति है कि उसकी जानकारीमें वेदनाओंकी उत्पत्ति होती है, उसकी जानकारीमें वेदनाओंकी स्थिति होती है, उसकी जानकारीमें वेदनाओंका विनाश होता है; उसकी जानकारी में संज्ञाओंकी ...... वितर्कोंका ...... विनाश होता है। भिक्षुओ, नन्दकी स्मृति-सम्प्रजन्य-युक्त होनेकी यह स्थिति है।

भिक्षुओ, और क्या, नन्दकी इन्द्रियाँ संयत हैं, वह भोजनके विषयमें मात्रज्ञ

है, वह जाग्रत रहता है, वह स्मृति सम्प्रजन्यसे युक्त है, जिससे नन्द परिपूर्ण परिशुद्ध ब्रह्मचर्य्यका आचरण कर सकता है।

एक समय भगवान् चम्पा (नगरी) में गग्गर पुष्करिणीके किनारे विचर रहे थे। उस समय कुछ भिक्षु एक दूसरे भिक्षुपर दोषारोपण कर रहे थे। भिक्षुओं द्वारा दोषारोपण किये जानेपर कुछका कुछ कहता, दूसरी दूसरी बातें बीचमें ले आता, अपना क्रोध, द्वेष तथा अप्रसन्न-भाव प्रकट करता।

तब भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ, इसे भगाओ; भिक्षुओ, इसे भगाओ, भिक्षुओ, इसे निकाल बाहर करो ; भिक्षुओ, इसे निकाल बाहर करो। भिक्षुओ, इस पर-पुत्रको शुद्ध करनेका प्रयास करनेसे क्या लाभ ! भिक्षुओ, किसी-किसीका आना-जाना, देखना-भालना, सिकुड़ना-फैलना तथा पात्र चीवर धारण करना वैसा ही होता है जैसा दूसरे अच्छे भिक्षुओंका—जब तक भिक्षु उसके दोषको नहीं देखते हैं। लेकिन जब भिक्षु उसके दोषको देख लेते हैं तो वह जान जाते हैं कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-प्रलाप है, यह श्रमण-कूड़ा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल बाहर करते हैं। ऐसा किस लिए ? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओंको खराब न करे।

भिक्षुओ, जैसे किसी जौके खेतमें दुष्ट—जौ, प्रलाप-जौ, कूड़ा-जौ उग आये। लेकिन उसकी दूसरे अच्छे जवों-जैसी ही जड़ हो, उसकी दूसरे अच्छे जवों-जैसी ही डण्ठल हो, उसके वैसे ही पत्ते हों जैसे दूसरे अच्छे जवोंके—जब तक उसकी बालि न निकले। लेकिन जब उसकी बालि निकले तो लोग जान जायें कि यह दुष्ट—जो है, बेकार -जौ है, कूड़ा-जौ है। जान लेनेपर वे उसे जड़से उखाड़कर जौके खेतके बाहर फेंक देंगे। किस लिये ? ताकि यह दूसरे अच्छे जौको खराब न करे।

इसी प्रकार भिक्षुओ, किसी किसीका आना-जाना, देखना-भालना, सिकुड़ना-फैलना तथा पात्र-चीवर धारण करना वैसा ही होता है जैसा दूसरे अच्छे भिक्षुओंका—जबतक भिक्षु उसके दोष को नहीं देखते हैं। लेकिन जब भिक्षु उसके दोषको देख लेते हैं तो वह जान जाते हैं कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-बेकार है, यह श्रमण-कूड़ा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल बाहर करते हैं। ऐसा किसलिये ? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओंको खराब न करे।

भिक्षुओ, जैसे धानकी बड़ी ढेरीको उड़ाते समय जो दृढ़, सारवान् धान होते हैं, उनकी एक ओर ढेरी लग जाती है, लेकिन जो दुर्बल, बेकार, धान होते हैं, उन्हें हवा उड़ाकर एक ओर कर देती है। मालिक लोग झाड़ कर, बुहार कर, प्रसन्नता-

पूर्वक उसे और भी दूर हटा देते हैं। यह किसलिये ? ताकि दूसरे अच्छे धानोंको खराव न करे।

इसी प्रकार भिक्षुओ, किसी किसीका आना-जाना, देखना, भालना, सिकुड़ना-फैलना तथा पात्र-चीवर धारण करना वैसा ही होता है जैसा दूसरे अच्छे भिक्षुओंका—जबतक भिक्षु उसके दोषको नहीं देखते हैं। लेकिन जब भिक्षु उसके दोषको देख लेते हैं तो वे जान लेते हैं कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-बेकार है, यह श्रमण-कूड़ा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल बाहर करते हैं। ऐसा किसलिये ? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओंको खराव न करे।

भिक्षुओ, जैसे कोई आदमी जिसे पानीके प्याऊके लिये नलिकी आवश्यकता हो; वह तेज कटारी लेकर वनमें प्रवेश करे। वह जिस जिस वृक्षको कटारीके पार्श्वसे ठोके-बजाये, उनमेंसे जो वृक्ष मजबूत हों, सारवान् हों वे कुटारी-पार्श्वसे ठोके बजाये जानेपर कठोर आवाज़ दें; लेकिन जो वृक्ष अन्दरसे सड़े हों, निस्सार हों, गले हों, वह कुठारी-पार्श्वसे ठोके-बजाये जानेपर 'ठप' आवाज दें। वह आदमी उसे जड़से काटे, जड़को काटकर अगले हिस्सेको काटे, अगले हिस्सेको काटकर अन्दरसे शुद्ध करे, अन्दरसे अच्छी तरह विशुद्ध कर पानी पिलानेकी नलकी बनाये।

इसी प्रकार भिक्षुओ, किसी-किसीका आना-जाना, देखना-भालना, सिकुड़ना-फैलना तथा पात्र चीवर धारण करना वैसा ही होता जैसे दूसरे अच्छे भिक्षुओंका—जबतक भिक्षु उसके दोषको नहीं देखते हैं। लेकिन जब भिक्षु उसके दोषको देख लेते हैं तो वे यह जान लेते हैं कि यह श्रमण-दुष्ट है, यह श्रमण-बेकार है, यह श्रमण-कूड़ा है। वे ऐसा जान लेनेपर उसे निकाल बाहर करते हैं। ऐसा किसलिये ? ताकि वह दूसरे अच्छे भिक्षुओंको खराब न करे।

संवासायं विजानाथ, पापिच्छो कोधनो इति
मक्खी, थम्भी, पलासी च, इस्सुकी मच्छरी सठो॥
सन्तवाचो जनवति, समणो विय भासति।
रहो करोति करणं, पापदिट्ठि अनादरो॥
संसप्पी च मुसावादी, तं विदित्वा यथातथं।
सब्बे समग्गा हुत्वान, अभिनिब्बज्जयाथनं॥
कारण्डवं निद्धमथ, कसम्बुं अपकस्सथ।
ततो पलापे वाहेथ, अस्समणे समणमानिने॥
निद्धमित्वान पापिच्छे, पापआचार गोचरे।

सुद्धासुद्धेहि संवास, कप्पयव्हो पतिस्सता ॥
ततो समग्गा निपका, दुक्खस्सन्तं करिस्सथ ॥

[साथ रहनेसे यह जान लो कि यह पापी है, क्रोधी है, निर्दयी है, जिद्दी है, दुष्ट है, ईर्ष्यालु है, मात्सर्य-युक्त है, झूठ है। वह लोगोंके बीचमें बड़ी शान्तवाणी बोलता है, श्रमणके समान बातचीत करता है। वह छिपकर (पाप -) कर्म करता है, पाप-दृष्टि आदरकी भावना से शून्य। वह झूठ बोलता हुआ सरकता है—यह ऐसा है, इसे जानकर ,सब मिलकर उसे निकाल बाहर करो। उस कूड़ेको दूर हटाओ, उस गंदगीको परे करो। उस 'श्रमण' बने हुए 'अश्रमण' को बाहर करो। दुराचारी, पापाचारीको दूर कर, स्वयं शुद्ध बने रहकर अन्य शुद्धोंके साथ स्मृतिमान हो सहवास करो। इस प्रकार सभी प्रज्ञावान् इकट्ठे मिलकर दुःखका अन्त करो।]

२. महावग्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् वेरञ्जामें नळेरुपुचिमन्द (वृक्ष)की छायामें विहार कर रहे थे। तब वेरञ्ज ब्राह्मण जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचा; पास जाकर भगवान के साथ कुशल-क्षेमकी बातचीत की। कुशल-क्षेमकी बातचीत समाप्त हो चुकनेपर वह एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए वेरञ्ज ब्राह्मणने भगवान्से निवेदन किया—

"हे गौतम! मैंने यह सुना है कि श्रमण गौतम ऐसे ब्राह्मणोंको जो जरा-प्राप्त हैं, जो वृद्ध हैं, जो बूढ़े हैं, जो आप-प्राप्त हैं न अभिवादन करता है, न उनका सत्कार करता है, न उन्हें बैठनेके लिये आसन देता है।' हे गौतम! क्या यह ऐसा ही है कि श्रमण गौतम ऐसे ब्राह्मणोंको जो जरा-प्राप्त हैं, जो वृद्ध हैं, जो बूढ़े हैं, जो आयु-प्राप्त हैं न अभिवादन करता है, न उनका सत्कार करता है, न उन्हें बैठनेके लिये आसन देता है। हे गौतम! ऐसा करना तो अच्छा नहीं है।'

"ब्राह्मण सदेव, समार, सब्रह्मलोकमें, श्रमण-ब्राह्मण सहित जनतामें, देवताओं तथा मनुष्योंमें मैं कोई ऐसा व्यक्ति नहीं देखता, जिसका मैं अभिवादन करूँ, जिसका मैं सत्कार करूँ, जिसे मैं बैठनेके लिये आसन दूँ। ब्राह्मण! यदि किसीका तथागत अभिवादन करें, सत्कार करें या उसे बैठनेके लिये आसन दें तो उसका सिर भी नीचे गिर जा सकता है।"

"आप गौतम बड़े नी-रस हैं।"

"ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम नी-रस (= अरस रूप) है। हे ब्राह्मण जो रूप-रस है, जो शब्द-रस है, जो गन्ध-

रस है, जो स्पृष्टव्य -रस है वह तथागताका प्रहीण हो गया है, जड़से जाता रहा है, कटे ताड़ वृक्षके समान हो गया है, अभाव-प्राप्त हो गया है, पुनरुत्पत्तिकी कोई सम्भावना नहीं रही है। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम नी-रस (अरस-रूप) है।

"आप गौतम भोग-रहित हैं।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम भोग-रहित है। ब्राह्मण जो रूप-भोग हैं, जो शब्द-भोग हैं, जो गन्ध-भोग हैं, जो रस-भोग हैं, जो स्पृष्टव्य-भोग हैं, वे तथागतके प्रहीण हो गये हैं, जड़से जाते रहे हैं, कटे ताड़-वृक्षके समान हो गये हैं, अभाव-प्राप्त हो गये हैं, पुनरुत्पत्तिकी कोई संभावना नहीं रही है। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम भोग-रहित है।

"आप गौतम अ-क्रिया-वादी है।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम अक्रिया-वादी है। ब्राह्मण ! मैं शारीरिक दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मानसिक दुश्चरित्रता न करनेकी बात करता हूँ तथा नाना प्रकारके पाप-कर्मोंके न करनेकी बात करता हूँ। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सके कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम उच्छेदवादी है। हे ब्राह्मण ! मैं राग, द्वेष, मोहका, मूलोच्छेद करनेकी बात करता हूँ तथा अनेक प्रकारके पापों अकुशल-धर्मोंका उच्छेद करनेकी बात करता हूँ। हे ब्राह्मण ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सके कि श्रमण गौतम उच्छेदवादी है।"

"आप गौतम घृणा करनेवाले हैं।"

"ब्राह्मण ! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम घृणा करनेवाला है। हे ब्राह्मण ! मैं शरीरकी दुश्चरित्रतासे, वाणीकी दुश्चरित्रतासे, तथा मनकी दुश्चरित्रतासे घृणा करता हूँ और तथा घृणा करता हूँ अनेक प्रकारके

पापों अकुशल-धर्मोंके आचरणसे। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम घृणा करनेवाला है।"

"आप गौतम विनयी (=दमन करनेवाले) हैं।"

ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम विनयी (=दमन करनेवाला) है। हे ब्राह्मण! मैं राग, द्वेष तथा मोहका दमन करनेकी धर्म-देशना करता हूँ और धर्म-देशना करता हूँ अनेक प्रकारके पापों अकुशल-धर्मोंका दमन करने की। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम विनयी (=दमन करनेवाला) है।"

"आप गौतम तपस्वी हैं।"

"ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम 'तपस्वी' है। ब्राह्मण! मैं शारीरिक दुष्कर्मों, वाणीके दुष्कर्मों तथा मनके दुष्कर्मों (तथा दूसरे) पाप-कर्मों अकुशल-धर्मोंको तपानेवाले धर्म कहता हूँ। हे ब्राह्मण! जिस किसीके ये तपानेवाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये हों, उनका मूलोच्छेद हो गया हो, वे कटे ताड़के समान हो गये हों, अभाव-प्राप्त हो गये हों, पुनरुत्पत्तिकी संभावना न रही हो; उसे मैं "तपस्वी" कहता हूँ। हे ब्राह्मण! तथागतके तपानेवाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये हैं, उनका मूलोच्छेद हो गया है, वे कटे ताड़के समान हो गये हैं, अभाव-प्राप्त हो गये हैं, पुनरुत्पत्तिकी सम्भावना नहीं रही है। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम "तपस्वी" है।

"आप गौतम अप्रगल्भ (=अपगब्भ) हैं।"

"ब्राह्मण! जिस दृष्टिसे तू कहता है उस दृष्टिसे तो नहीं, किन्तु एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (=अपगब्भ) है। ब्राह्मण! जिस किसी की भावी गर्भ-शय्या पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड़-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नहीं रही है, उसे मैं अप्रगल्भ (=अपगब्भ) कहता हूँ। ब्राह्मण! तथागतकी भावी गर्भ-शय्या, पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड़-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्ति की संभावना नहीं रही है। हे ब्राह्मण! यह वह दृष्टि

है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहनेवाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (=अपगल्भ) है।

"ब्राह्मण ! जैसे किसी मुर्गीके आठ, दस या बारह अण्डे हों। उन्हें उस मुर्गीने अच्छी तरह से सेया हो, अच्छी तरहसे प्रभावित किया हो, अच्छी तरहसे गर्मी पहुँचाई हो। मुर्गीका जो चोजा उन अण्डोंमें से किसी एक अण्डेको अपने पैरोंके नाखूनोंसे अथवा चोंचसे फोड़कर सकुशल बाहर निकल आये, उसे क्या कहा जायेगा—ज्येष्ठ वा कनिष्ठ ?

"हे गौतम ! उसे ज्येष्ठ कहा जायेगा। वह ही उन सबमें ज्येष्ठ होता है।"

"हे ब्राह्मण ! इसी प्रकार अविद्यासे घिरी हुई अण्डेके समान जनतामेंसे, अविद्या रूपी अण्डेको फोड़कर अकेले मैंने ही अनुपम सम्यक् सम्बोधिको प्राप्त किया है। हे ब्राह्मण ! इस विश्वमें मैं ही ज्येष्ठ हूँ, मैं ही श्रेष्ठ हूँ। हे ब्राह्मण ! मेरा प्रयत्न प्रमाद-रहित रहा है, मेरी मूढ़ता-रहित स्मृति उपस्थित रही है, मेरी उत्तेजन-रहित देह शान्त रही है, मेरा चंचलता-रहित चित्त शान्त रहा है। हे ब्राह्मण ! मैं काम-वितर्कसे रहित हो, बुरे विचारोंसे रहित हो, प्रथम-ध्यानको प्राप्त कर विचारता हूँ, जिसमें वितर्क और विचार रहता है, जो एकान्त-वाससे उत्पन्न है, जिसमें प्रीति और सुख रहते हैं। मैं वितर्क और विचारोंके उपशमनसे उत्पन्न, अन्दरकी प्रसन्नता और एकाग्रता रूपी द्वितीय-ध्यानको प्राप्त हो विचरता हूँ, जिसमें न वितर्क होते हैं, न विचार, जो समाधिसे उत्पन्न होता है और जिसमें प्रीति तथा सुख रहते हैं। मैं प्रीतिसे भी विरक्त हो, उपेक्षावान् बन विचरता हूँ। मैं स्मृतिवान्, ज्ञानवान् रहता हूँ काम (=चित्त) से सुखका अनुभव करता हुआ तृतीय ध्यानको प्राप्त हो विहार करता हूँ, जिसे पण्डित जन उपेक्षावान्, स्मृतिवान सुखपूर्वक विहार करनेवाला कहते हैं। मैं सुख और दुःख—दोनोंके प्रहाणसे, सौमनस्य और दौर्मनस्यके पहले ही अस्त हुए रहनेसे (उत्पन्न) चतुर्थ-ध्यानको प्राप्त हो विहार करता हूँ, जिसमें न दुःख होता है, न सुख और होती है (केवल) उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि।

"तब इस प्रकार एकाग्र परिशुद्ध, स्वच्छ, अंगण (=चित्त मल) रहित, चित्त-क्लेश रहित, मृदु, कमनीय, स्थिर चित्तको मैंने पूर्व जन्मोंके अनुस्मरण की ओर लगाया। मैं अपने अनेक पूर्व जन्मोंका स्मरण करता हूँ—एक जन्म भी, दो जन्म भी, तीन जन्म भी, चार जन्म भी, पाँच जन्म भी, दस जन्म भी, बीस, जन्म भी, तीस जन्म भी, चालीस जन्म भी, पचास जन्म भी, सौ जन्म भी, हजार जन्म भी, लाख जन्म भी, अनेक संवर्त कल्प भी, अनेक विवर्त-कल्प भी, अनेक संवर्त-विवर्त कल्प भी कि

मैं अमुक जगह था, अमुक नाम था, अमुक गोत्र था, अमुक वर्ण था, अमुक प्रकारका भोजन करता था, अमुक सुख-दुःख भोगे, अमुक आयु पर्यन्त। वहाँसे च्युत होकर यहाँ उत्पन्न हुआ। इस प्रकार मैं आकार-सहित, उद्देश्य-सहित नाना पूर्व जन्मोंका अनुस्मरण करता हूँ। हे ब्राह्मण! रात्रिके प्रथम याममें यह मुझे प्रथम विद्या प्राप्त हुई, अविद्याका नाश हुआ, विद्या हस्तगत हुई, अन्धकार का नाश हुआ, प्रकाशकी उत्पत्ति हुई—अप्रमाद-युक्त, आलस्य-रहित प्रयत्नपूर्वक विहार करते हुए। हे ब्राह्मण! यह अण्डेसे 'चूजे' के बाहर निकलनेकी तरह मेरी प्रथम 'अभिनिब्भिदा' (=ज्ञान-प्राप्ति) थी।

तब इस प्रकार एकाग्र परिशुद्ध, स्वच्छ, अंगण (=चित्तमल)-रहित चित्त-क्लेश रहित, मृदु, कमनीय, स्थिर चित्तको मैंने दूसरे प्राणियोंकी च्युति और उत्पत्तिके ज्ञानकी ओर लगाया। मैं दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे देखता हूँ कि प्राणी उत्पन्न होते हैं, मरते हैं—हीन, प्रणीत, सुवर्ण, दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त; कर्मानुसार जिस-तिस गतिको प्राप्त प्राणी। मैं जानता हूँ कि ये प्राणी शारीरिक दुष्कर्मसे युक्त हैं, वाणीके दुष्कर्मसे युक्त हैं, मनके दुष्कर्मसे युक्त हैं, श्रेष्ठ जनोंके निन्दक हैं, मिथ्या-दृष्टि हैं, मिथ्या-दृष्टि-गृहीत हैं। ये शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर, अपायमें उत्पन्न हुए हैं, दुर्गति को प्राप्त हुए हैं, नरकमें जन्म ग्रहण किया है। अथवा ये प्राणी शारीरिक सुकर्मसे, वाणीके सुकर्मसे, मनके सुकर्मसे युक्त हैं, श्रेष्ठ जनोंके निन्दक नहीं हैं, सम्यक्-दृष्टि हैं, सम्यक्-दृष्टि गृहीत हैं। ये शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त हुए हैं, स्वर्ग लोकमें उत्पन्न हुए हैं। इस प्रकार मैं दिव्य, विशुद्ध, मनुष्योत्तर चक्षुसे देखता हूँ कि प्राणी उत्पन्न होते हैं, मरते हैं—हीन, प्रणीत, सुवर्ण, दुर्वर्ण, सुगति-प्राप्त, दुर्गति-प्राप्त; कर्मानुसार जिस-तिस गतिको प्राप्त प्राणी। हे ब्राह्मण! रात्रिके मध्यम याममें यह मुझे दूसरी विद्या प्राप्त हुई, अविद्याका नाश हुआ, विद्या हस्तगत हुई, अन्धकारका नाश हुआ, प्रकाशकी उत्पत्ति हुई—अप्रमाद-युक्त, आलस्य-रहित, प्रयत्नपूर्वक विहार करते हुए। हे ब्राह्मण! यह अण्डे से 'चूजे' के बाहर निकलनेकी तरह मेरी द्वितीय अभिनिब्भिदा (=ज्ञान-प्राप्ति) हुई।

तब इस प्रकार एकाग्र, परिशुद्ध, स्वच्छ, अंगण (=चित्त-मल)-रहित, चित्त-क्लेश रहित, मृदु, कमनीय, स्थिर चित्त को आस्रवोंके क्षय-ज्ञानकी ओर लगाया। मैंने 'यह दुःख है' इसे यथार्थ-रूपसे जान लिया, 'यह दुःख-समुदय हैं इसे यथार्थ-रूपसे जान लिया, 'यह दुःख-निरोध है' इसे यथार्थ रूप से जान लिया, 'यह दुःख निरोधकी ओर ले जाने वाला मार्ग हैं इसे यथार्थ रूपसे जान लिया। मैंने 'यह आस्रव है' इसे

यथार्थ रूपसे जान लिया, 'यह आस्रव-समुदय है' इसे यथार्थ रूपसे जान लिया, 'यह आस्रव-निरोध है' इसे यथार्थ रूपसे जान लिया, 'यह आस्रव निरोध की ओर ले जाने वाला मार्ग है' इसे यथार्थ रूपसे जान लिया। इस प्रकार इनकी जानकारी प्राप्त कर लेने पर मेरा चित्त कामास्रव से भी विमुक्त हो गया, भवास्रवसे भी विमुक्त हो गया, अविद्यास्रव से भी विमुक्त हो गया। विमुक्त होनेपर, 'विमुक्त हूँ' यह ज्ञान प्राप्त हुआ। यह स्पष्ट हुआ कि जन्म-मरणका बन्धन क्षीण हो गया, श्रेष्ठ जीवनका उद्देश्य पूरा हो गया, जो करणीय था वह कर लिया गया, इससे आगे कुछ करनेको नहीं है। हे ब्राह्मण! रात्रिके तीसरे याममें यह मुझे तीसरी विद्या प्राप्त हुई, अविद्याका नाश हुआ, विद्या हस्तगत हुई, अन्धकारका नाश हुआ, प्रकाशकी उत्पत्ति हुई—अप्रमाद युक्त, आलस्य-रहित प्रयत्नपूर्वक विहार करते हुए। हे ब्राह्मण! यह 'चूजे' के अण्डेसे बाहर निकलनेकी तरह मेरी तीसरी अभिनिभिदा (=ज्ञान-प्राप्ति) हुई।

ऐसा कहने पर वेरञ्ज ब्राह्मणने भगवान्‌से कहा—आप गौतम ज्येष्ठ हैं। आप गौतम श्रेष्ठ हैं। हे गौतम! यह सुन्दर है। हे गौतम! यह सुन्दर है। हे गौतम! जैसे कोई उल्टेको सीधा कर दे, ढके हुएको उघाड़ दे, मार्ग-भ्रष्ट को रास्ता दिखा दे अथवा अन्धेरेमें प्रदीप लेकर खड़ा रहे कि आँख वाले रास्ता देख लेंगे, इसी प्रकार आप गौतमने अनेक प्रकारसे धर्मका प्रकाशन कर दिया। मैं भगवान् गौतम, धर्म तथा भिक्षु-संघकी शरण ग्रहण करता हूँ। आजसे प्राण रहने तक आप मुझे अपना शरणागत उपासक समझें।

एक समय भगवान् वैशालीके महावनमें कूटागार शालामें विहार कर रहे थे। उस समय बहुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर शाला (=सन्थागार) में बैठे हुए नाना रूपसे बुद्ध-धर्म, तथा संघका गुणानुवाद कर रहे थे।

उस समय उस परिषद्‌में निर्ग्रन्थ-नाथपुत्र का श्रावक सिंह सेनापति भी उपस्थित था। तब सिंह सेनापति के मनमें यह हुआ—'वह भगवान् असंदिग्ध रूपसे सम्यक् सम्बुद्ध होंगे, तभी तो ये बहुत से प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामें बैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध, धर्म तथा संघका गुणानुवाद कर रहे हैं। मैं उन भगवान् अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका दर्शन करनेके लिये चलूँ।'

तब सिंह सेनापति निर्ग्रन्थ-नाथ पुत्रके पास गया और जाकर निर्ग्रन्थ-नाथ पुत्रसे बोला—"भन्ते! मैं श्रमण गौतमका दर्शन करने जानेकी इच्छा करता हूँ।"

"हे सिंह! तू क्रिया-वादी है, तू क्या उस अक्रिया-वादी श्रमण गौतमके दर्शनार्थ जायगा! हे सिंह! श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है। वह अक्रियाका धर्मोपदेश देता है और उसीका अपने शिष्योंको अभ्यास कराता है।"

भगवानका दर्शन करने जानेकी जो सिंह सेनापतिकी इच्छा थी, वह वहीं शान्त हो गई।

दूसरी बार भी बहुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामें बैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध-धर्म तथा संघका गुणानुवाद कर रहे थे। दूसरी बार भी सिंह सेनापतिके मनमें यह हुआ—'वह भगवान असदिग्ध रूपसे सम्यक् सम्बुद्ध होंगे, तभी तो ये बहुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामें बैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध, धर्म तथा संघका गुणानुवाद कर रहे हैं। मैं उन भगवान अर्हत सम्यक् सम्बुद्धका दर्शन करनेके लिये चलूँ।"

तब सिंह सेनापति निर्ग्रन्थनाथ-पुत्रके पास गया और जाकर निर्ग्रन्थनाथ पुत्रसे बोला—"भन्ते! मैं श्रमण गौतमका दर्शन करनेकी इच्छा करता हूँ।"

"हे सिंह! तू क्रिया-वादी है, तू क्या उस अक्रिया-वादी श्रमण गौतमके दर्शनार्थ जायगा। हे सिंह! श्रमण-गौतम अक्रिया-वादी है। वह अक्रियाका धर्मोपदेश देता है और उसीका अपने शिष्योंको अभ्यास कराता है।"

भगवान्का दर्शन करने जानेकी जो सिंह सेनापति की इच्छा थी, वह दूसरी बार भी शान्त हो गई।

तीसरी बार भी बहुतसे प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामें बैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध, धर्म तथा संघका गुणानुवाद कर रहे थे। तीसरी बार भी सिंह सेनापतिके मनमें यह हुआ;—'वह भगवान् असंदिग्ध रूपसे सम्यक् सम्बुद्ध होंगे, तभी तो ये बहुत से प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लिच्छवी नगर-शालामें बैठे हुए नाना प्रकारसे बुद्ध, धर्म तथा संघका गुणानुवाद कर रहे हैं। यह निगण्ठ (=निर्ग्रन्थ) मेरा क्या करेंगे, चाहे मैं पूछकर (=देखकर) जाऊँ या बिना पूछे। मैं क्यों न बिना पूछे ही उन भगवान् अर्हत् सम्यक सम्बुद्ध के दर्शनार्थ जाऊँ?"

तब सिंह सेनापति अपराह्नमें ही पाँच सौ रथोंको जुतवा भगवानके दर्शनार्थ निकला। जहाँ तक रथ पर जाया जा सकता था, वहाँ तक रथसे जाकर बादमें नीचे उतर, पैदल ही आगे बढ़ा। सिंह सेनापति जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा, पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए सिंह सेनापतिने भगवानसे कहा—

"भन्ते ! मैंने सुना है कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वाद की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको भी अक्रिया-वादका ही अभ्यास कराता है। भन्ते ! जो लोग ऐसा कहते हैं कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वादकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको भी अक्रिया वादका ही अभ्यास कराता है, क्या वे लोग भगवानके मतका यथार्थ प्रतिपादन करते हैं, भगवान् पर मिथ्या आरोप तो नहीं लगाते ? क्या वे भगवानके धर्मकी योग्य व्याख्या करते हैं ? क्या उनका प्रतिपादन विज्ञों द्वारा गर्हित तो नहीं है ? भन्ते ! हम भगवान्का यथार्थ मत जानना चाहते हैं।"

"सिंह ! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वादकी ही देशना करता है और अपने श्रावकोंको अक्रिया-वादका ही अभ्यास कराता है।

"सिंह ! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम क्रिया-वादी है, क्रिया-वादकी ही देशना करता है, तथा अपने श्रावकोंको भी क्रिया-वाद का ही अभ्यास कराता है।

"सिंह ! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम उच्छेद-वादी है, उच्छेद-वादकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको भी उच्छेद-वादका ही अभ्यास कराता है।

"सिंह ! एक दृष्टि जिस से मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम घृणा करने वाला है, वह घृणा करनेकी ही देशना करता है तथा उसीका अपने श्रावकोंको भी अभ्यास कराता है।

"सिंह ! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम विनयी (= दमन करने वाला) है, विनय (= दमन) की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको विनय (= दमन) का ही अभ्यास कराता है।

"सिंह ! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम 'तपस्वी है, वह तपस्या की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको तपस्याका ही अभ्यास कराता है।

सिंह ! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (= अपगब्भ) है, वह अप्रगल्भताःकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको अप्रगल्भताका ही अभ्यास कराता है।

सिंह ! एक दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम आश्वस्त रहने वाला है, आश्वस्त रहनेकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको आश्वस्त रहनेका ही अभ्यास कराता है।

सिंह ! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रिया-वादकी देशना करता है तथा अक्रिया-वादका ही अपने श्रावकोंको अभ्यास कराता है ! सिंह ! मैं शारीरिक दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मनकी दुश्चरित्रता न करनेकी बात करता हूँ तथा नाना प्रकारके पाप-कर्मोंके न करनेकी बात करता हूँ। सिंह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम अक्रिया-वादी है, अक्रियावादकी देशना करता है, तथा अक्रियावादका ही अपने श्रावकोंको अभ्यास कराता है।

सिंह ! वह कौनसी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम क्रिया-वादी है, क्रिया-वादकी देशना करता है तथा क्रिया -वादका ही अपने श्रावकोंको अभ्यास कराता है। सिंह ! मैं शारीरिक सुचरित्रता वाणीकी सुचरित्रता, तथा मनकी सुचरित्रताकी बात करता हूँ तथा अनेक प्रकारके कुशल-कर्म करनेको कहता हूँ। सिंह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण-गौतम क्रिया-वादी है, क्रिया-वादकी देशना करता है तथा क्रिया-वाद का ही अपने श्रावकोंको अभ्यास कराता है।

सिंह ! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम उच्छेद-वादी है, उच्छेद-वादकी देशना करता है, तथा उच्छेदवादका ही अपने श्रावकोंको अभ्यास कराता है। हे सिंह ! मैं राग, द्वेष, मोहका मूलोच्छेद करनेकी बात करता हूँ, तथा बात करता हूँ अनेक प्रकारके पापों अकुशल-धर्मोंके उच्छेद करनेकी। सिंह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण-गौतम उच्छेद-वादी है, उच्छेदवाद की देशना करता है तथा उच्छेदवाद का ही अपने श्रावकोंको अभ्यास कराता है।

सिंह ! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम घृणा करने वाला है, तथा घृणा करनेकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको भी घृणा करनेका अभ्यास कराता है। हे सिंह ! मैं शरीरकी दुश्चरित्रता, वाणीकी दुश्चरित्रता तथा मनकी दुश्चरित्रतासे घृणा करता हूँ और घृणा करता हूँ अनेक प्रकारके पापों अकुशल-धर्मोंके आचरणसे। सिंह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम घृणा

करने वाला है, घृणा करनेकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको भी घृणा करने का अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम विनयी (=दमन करने वाला) है, विनय (=दमन) की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको विनय (=दमन) का ही अभ्यास कराता है। सिंह! मैं, राग, द्वेष, मोहके दमन करनेकी बात करता हूँ तथा बात करता हूँ अनेकों पापों अकुशल-धर्मों को दमन करनेकी। सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम विनयी (=दमन करने वाला) है, विनय (=दमन) की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको विनय (=दमन) का ही अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम 'तपस्वी' है, वह तपस्याकी ही देशना करता है, तथा अपने श्रावकोंको तपस्याका ही अभ्यास करता है। सिंह! मैं शारीरिक दुष्कर्मों, वाणीके दुष्कर्मों तथा मनके दुष्कर्मों (तथा दूसरे) पाप-कर्मों, दुष्कर्मोंको तपाने वाले धर्म कहता हूँ। हे सिंह! जिस किसीके ये तपाने वाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये हों, उनका मूलोच्छेद हो गया हो, वे कटे ताड़के समान हो गये हों, अभाव-प्राप्त हो गये हों, पुनरुत्पत्ति की संभावना न रही हो; उसे मैं 'तपस्वी' कहता हूँ। हे सिंह! तथागतके तपाने वाले पाप अकुशल-कर्म प्रहीण हो गये हैं, उनका मूलोच्छेद हो गया है, वे ताड़के समान हो गये हैं, अभाव-प्राप्त हो गये हैं, पुनरुत्पत्ति की संभावना नहीं रही है। हे सिंह! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सकता है कि श्रमण गौतम तपस्वी है, वह तपस्याकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको तपस्याका ही अभ्यास कराता है।

सिंह! वह कौन सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम अप्रगलभ (=अपगब्भ) है, वह अप्रगलभता की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको अप्रगलभताका ही अभ्यास कराता है। सिंह! जिस किसीकी भावी गर्भशय्या पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड़ वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नहीं रही है, उसे मैं अप्रगलभ (=अपगब्भ) कहता हूँ। सिंह! तथागतकी भावी गर्भ-शय्या-पुनरुत्पत्ति प्रहीण हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे ताड़-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, उसका मूलोच्छेद हो गया है, वह कटे

ताड़-वृक्षके समान हो गई है, अभाव-प्राप्त हो गई है, पुनरुत्पत्तिकी संभावना नहीं रही है। हे सिंह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक-ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम अप्रगल्भ (= अपगब्भ) है, वह अप्रगल्भता की ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको अप्रगल्भताका ही अभ्यास ही कराता है।

सिंह ! वह कौन-सी दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम आश्वस्त करने वाला है, आश्वस्त रहनेकी ही देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको आश्वस्त रहनेका ही अभ्यास कराता है। हे सिंह ! मैं सर्वाधिक आश्वस्त हूँ, आश्वस्त रहनेकी देशना करता हूँ, उसीका श्रावकोंको अभ्यास कराता हूँ। सिंह ! यह वह दृष्टि है जिससे मेरे बारेमें ठीक ठीक कहने वाला यह कह सके कि श्रमण गौतम आश्वस्त करने वाला है, आश्वस्त रहनेकी देशना करता है तथा अपने श्रावकोंको आश्वस्त रहनेका ही अभ्यास कराता है।

ऐसा कहने पर सिंह सेनापति ने भगवानसे यह कहा—भन्ते ! बहुत सुन्दर है ! भन्ते ! बहुत सुन्दर है। भन्ते ! . . . आजसे प्राण रहने तक मुझे अपना शरणागत उपासक समझें।"

"सिंह ! विचारसे काम लो। तुम्हारे जैसे विख्यात मनुष्योंका विचारपूर्वक कार्य करना ही ठीक होता है।

"भन्ते ! इस एक अतिरिक्त कारणसे भी मैं भगवान्‌के प्रति और भी श्रद्धावान् हो गया हूँ, क्योंकि आप मुझे कहते हैं 'सिंह ! विचारसे काम लो। तुम्हारे जैसे विख्यात मनुष्योंका विचार पूर्वक कार्य करना ही ठीक होता है।' भन्ते ! यदि मैं अन्य तैर्थिकों (= मतावलम्बियों) का श्रावक हो जाता तो वह समस्त वैशालीमें झण्डा उड़ाते फिरते कि सिंह सेनापति हमारा श्रावक हो गया है। लेकिन भगवान मुझे कहते हैं, सिंह ! विचारसे काम लो। तुम्हारे जैसे विख्यात मनुष्योंका विचारपूर्वक कार्य करना ही ठीक होता है।' इसलिये भन्ते ! मैं दूसरी बार भी भगवान की, धर्म तथा संघकी शरण ग्रहण करता हूँ। भगवान् आजसे प्राण रहने तक मुझे अपना उपासक ग्रहण करें।"

"हे सिंह ! तेरा कुल (= घर) चिर काल से निर्ग्रन्थके श्रावकोंके लिये उनकी (भूख–) प्यास बुझाने वाला स्थान रहा है। उन्हें भिक्षार्थ आने पर भिक्षा मिलती रहनी चाहिये।"

"भन्ते ! इस एक अतिरिक्त कारणसे भी मैं भगवान् के प्रति और भी श्रद्धावान् हो गया हूँ, क्योंकि आप मुझे कहते हैं, 'सिंह ! तेरा कुल (= घर)

चिरकाल तक से निर्ग्रन्थ—श्रावकोंके प्रति उनकी (भूख–) प्यास बुझाने वाला स्थान रहा है। उन्हें भिक्षार्थ आनेपर भिक्षा मिलती रहनी चाहिये।' भन्ते! मैंने तो सुना है कि श्रमण गौतमका कहना है कि मुझे ही दान देना चाहिये, मेरे ही श्रावकोंको दान देना चाहिये, मुझे ही देनेका महान् फल होता है, दूसरोंको देनेका महान् फल नहीं होता; मेरे ही श्रावकोंको देनेका महान् फल होता है, दूसरे श्रावकोंको देनेका महान् फल नहीं होता; लेकिन भगवान् तो मुझे निर्ग्रन्थोंको भी दान देनेके लिये कहते हैं। भन्ते! इस विषयमें जो कुछ समायानुसार करना होगा, वह उद्यम करेंगे। भन्ते! यह मैं तीसरी बार भी भगवानकी, धर्म की तथा भिक्षु संघकी शरण ग्रहण करता हूँ। भन्ते! भगवान मुझे प्राण रहने तक अपना शरणागत उपासक ग्रहण करें।

तब भगवानने सिंह सेनापतिको क्रमश: धर्मोपदेश दिया जैसे दान-कथा, शील-कथा, स्वर्ग-कथा, काम भोगोंके दुष्परिणाम, बुराई, संक्लिष्ट होना; तथा निष्काम भावके शुभ परिणाम। जब भगवान्ने समझ लिया कि अब सिंह सेनापतिका चित्त ठीक हालतमें है, कोमल-अवस्थाको प्राप्त है, नीवरण-रहित है, उत्साह-युक्त है, प्रसन्न है; तब बुद्धोंकी जो उद्धार करनेवाली धर्म-देशना है उसका प्रकाशन किया—दु:ख सत्य, समुदय-सत्य, निरोध-सत्य,तथा मार्ग-सत्य। जैसे शुद्ध निर्मल वस्त्र शीघ्र ही रंगको ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार उसी आसन पर बैठे-बैठे सिंह सेनापतिको वि-रज निर्मल ज्ञान-चक्षुकी प्राप्ति हो गई—जो कुछ समुदय होने वाला है, वह सभी निरोधको प्राप्त होने वाला है।

जब सिंह सेनापतिको धर्मका दर्शन हो गया, धर्मकी प्राप्ति हो गई, धर्मका ज्ञान हो गया, धर्मकी गहराईमें उतर गया, सन्देह रहित हो गया, शक और शुबहकी गुंजाइश नहीं रही, विशारद हो गया तथा शास्ताके शासनके प्रति दृढ़ श्रद्धावान् हो गया तो उसने भगवान्को कहा—"भन्ते! भिक्षु संघ सहित आप कलका निमंत्रण स्वीकार करें।" भगवान्ने चुप रह कर स्वीकार कर लिया।

भगवान् की स्वीकृति जान सिंह सेनापति आसनसे उठा और भगवानको नमस्कार कर बिदा हुआ। तब सिंह सेनापतिने एक आदमीसे कहा—"अरे! जा प्रवर्त मांस[1] देख।" तब सिंह सेनापतिने उस रातके बीतने पर अपने घर प्रणीत बढ़िया भोजन तैयार कराया और भगवान् को समय की सूचना भिजवाई—"भन्ते! भोजन ग्रहण करनेका समय हो गया है। भोजन तैयार है।"

---

१. ऐसा मांस जो त्रिकोटि-परिशुद्ध हो अर्थात् जिसे किसी भिक्षुने न देखा हो कि उसके लिये मारा गया है, न सुना हो और जिसके बारेमें सन्देह तक की गुंजाइश न हो।

तब भगवान् पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन कर, पात्र-चीवर ले, जहाँ सिंह सेनापति का घर था, वहाँ पहुँचे। पहुँचकर भिक्षु संघ सहित बिछे आसनपर बैठे। उस समय बहुतसे निर्ग्रन्थ गलियोंमें चौरस्तों पर हाथ उठा-उठा कर, चिल्ला रहे थे— "आज सिंह सेनापतिने स्थूल (= बड़े) पशुको मारकर, श्रमण गौतमको भोजन कराया है। श्रमण गौतमने जान बूझकर उसके उद्देश्य से मारे गये पशुका मांस ग्रहण किया है। यह (मांसके लिये) किया गया प्रतीत्य (अकुशल) कर्म है।

तब एक आदमी जहाँ सिंह सेनापति था, वहाँ आया। आकर उसने सेनापतिके कानमें कहा—'भन्ते! मालूम है। ये बहुतसे निर्ग्रन्थ वैशाली भरमें गली-गली चौरस्ते-चौरस्ते हाथ उठा उठाकर चिल्लाते फिरते हैं कि आज सिंह सेनापतिने बड़ा पशु मरवाकर श्रमण गौतमको भोजन कराया है। श्रमण गौतमने जान बूझकर उसके उद्देश्य से मारे गये पशुका मांस ग्रहण किया है। यह (मांसके लिये) किया गया प्रतीत्य (अकुशल धर्म) कर्म है।'

"आर्य! रहने दे। ये लोग चिरकालसे बुद्ध, धर्म तथा संघकी निन्दा करने वाले हैं। इन आयुष्मानोंको भगवान् पर असत्य-मिथ्या आरोप लगाते हुए लज्जा नहीं आती। हम अपनी जान बचानेके लिये भी किसी प्राणीकी जान-बूझकर हत्या नहीं करेंगे।"

तब सिंह सेनापति बुद्ध प्रमुख भिक्षु संघको अपने हाथसे भोजन परोस कर खिलाया। तब भगवान्के भोजन कर चुकने पर, हाथ खींच लेने पर सिंह सेनापति एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए सिंह सेनापतिको भगवानने धार्मिक-कथा द्वारा ज्ञान दे, प्रेरित कर, उत्साहित कर, प्रमुदित किया। तब भगवान आसनसे उठकर चले गये।

भिक्षुओ, जिस अच्छे घोड़ेमें ये आठ बातें होती हैं, वह श्रेष्ठ होता है, राजाके योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अंग ही गिना जाता है, कौनसी आठ बातें? भिक्षुओ, जो राजाका अच्छा श्रेष्ठ घोड़ा होता है वह 'सुजात' होता है—घोड़े तथा घोड़ी दोनोंसे। जिधर दूसरे अच्छे घोड़े पैदा होते हैं, उधर ही उत्पन्न होता है। उसे जो गीला या सूखा भोजन देते हैं, उसे सम्हाल-सम्हालकर खाता है, इधर-उधर बिखेरता नहीं। पेशाब, पाखाना करनेमें, बैठने या उठनेमें विचारसे काम लेने वाला होता है। संयत होता है, शिष्ट-विधिसे रहने वाला, दूसरे घोड़ोंको उद्विग्न (= उत्तेजित) नहीं करता। उसमें जो शठता होती है, कूट नीतिपन होता है, टेढ़ापन होता है, वक्रता होती है वह सब यथार्थ रूपसे सारथीको

प्रकट कर देता है। सारथी उसे सुधारनेकी कोशिश करता है। वह ‘वहन’ करने वाला होता है। उसकी नीयत रहती है कि दूसरे घोड़े वहन करें या न करें, वह ‘वहन’ करेगा। जाता है तो सीधे रास्तेसे ही जाता है। वह शक्तिशाली होता है और जीवन भर, मरण पर्यन्त शक्तिका प्रदर्शन करने वाला होता है। भिक्षुओ, जिस अच्छे घोड़ेमें ये आठ बातें होती हैं, वह श्रेष्ठ होता है, राजा के योग्य होता है, राजाका भोग्य होता है, राजाका अंग ही गिना जाता है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं वह आदर करने योग्य होता है........लोगोंके लिये अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौन-सी आठ बातें? भिक्षुओ, भिक्षु सदाचारी होता है, प्रातिमोक्षके नियमोंके अनुसार चलने-वाला, योग्य-स्थानोंपर ही आने-जानेवाला, छोटे-से-छोटे दोषोंके करनेमें भी भय माननेवाला तथा शिक्षाओंको अच्छी तरह ग्रहण करनेवाला, उसे जो भी रूखा या बढ़िया भोजन मिलता है, उसे बिना चंचलताके अच्छी तरह ग्रहण करता है। शरीर, वाणी तथा मनके दुष्कर्मों तथा दूसरे पाप कर्मों से घृणा करने वाला होता है। विनम्र होता है, अच्छी तरह रहनेवाला, दूसरे भिक्षुओंको उद्विग्न नहीं करता। उसमें जो शठता होती है, कुटिलता होती है, टेढ़ापन होता है तथा वक्रता होती है उसे शास्ताके प्रति अथवा अपने विज्ञ सब्रह्मचारियोंके प्रति यथार्थ रूपसे प्रकटकर देनेवाला होता है। शास्ता अथवा विज्ञ सब्रह्मचारी उसे सुधारनेका प्रयत्न करते हैं। वह शिक्षाकामी होता है, उसकी दृष्टि होती है कि चाहे दूसरे भिक्षु सीखें या न सीखें, वह सीखेगा। जाते हुए वह सीधा मार्ग ही ग्रहण करता है। सीधा मार्ग है--सम्यक् दृष्टि.......सम्यक् समाधि। वह प्रयत्नशील होता है। उसका दृढ़ संकल्प होता है--चाहे शरीरका सारा मांस और लहू सूख जाये और चाहे बाकी रह जायें केवल त्वचा, नसें तथा हड्डियाँ; जो कुछ भी पुरुषकी शक्तिसे, पुरुषके पराक्रमसे, पुरुषके वीर्यसे प्राप्त हो सकता है, उसे बिना प्राप्त किये प्रयत्न ढीला नहीं होगा। भिक्षुओ, ये आठ बातें जिस भिक्षुमें होती हैं, वह आदर करने योग्य होता है......लोगोंका पुण्य-क्षेत्र।

“भिक्षुओ, मैं आठ प्रकारके घटिया घोड़ोंकी देशना करता हूँ, आठ अश्व-दोषोंकी। इसी प्रकार आठ प्रकारके घटिया-आदमियोंकी बात करता हूँ, आठ प्रकारके मनुष्य-दोषोंकी। इन्हें सुनो, अच्छी तरह मनमें जगह दो। कहता हूँ।” ‘भन्ते! अच्छा’ कह उन भिक्षुओंने भगवानको प्रतिवचन दिया। भगवानने यह कहा--

"भिक्षुओ, आठ प्रकारके घटिया घोड़े कौनसे होते हैं, आठ अश्व-दोष? भिक्षुओ, एक घटिया घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जाने पर, सारथि द्वारा प्रेरित किये जानेपर पीछे की ओर चलता है, रथको पीछे धकेलता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई-कोई घटिया घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह पहला अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, पिछले दोनों पाँवोंको उछालता है, रथके कब्बर (=बाँस) को तोड़ डालता है और त्रिदण्डके टुकड़े टुकड़े कर देता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह दूसरा अश्व-दोष है।

भिक्षुओ, एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, रथके बाँस (= ईसा) को जाँघका प्रहार दे, उसे नीचे गिराकर मर्दित कर देता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई घटिया-घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह तीसरा अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, कुरस्तेपर चल देता है, अथवा रथको काँटोंमें घसीट ले जाता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई घटिया-घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह चौथा अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, शरीरके अगले हिस्सेको लेकर कूदता है, आगेकी टाँगोंको उछालता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई घटिया-घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह पाँचवाँ अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, सारथीकी परवाह न कर, उसके चाबुककी परवाह न कर, दाँतोंसे मुँहकी लगामको चबा, जिधर मन करता है, उधर चल देता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह छठा अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, न आगे बढ़ता है, न पीछे हटता है; वहीं खूँटेकी तरह गड़ जाता है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह सातवाँ अश्व-दोष है।

फिर भिक्षुओ, एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, आगे और पीछेके पाँव सिकोड़कर चारों पाँवोंसे बैठ जाता

है। भिक्षुओ, ऐसा भी कोई कोई घटिया-घोड़ा होता है। भिक्षुओ, यह आठवाँ अश्व-दोष है।

भिक्षुओ, आठ प्रकारके घटिया-मनुष्य कौनसे होते हैं? आठ प्रकारके मनुष्य-दोष कौनसे हैं? भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर 'मुझे स्मरण नहीं है' कहकर बातको टाल देता है। भिक्षुओ, जैसे वह घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर पीछेकी ओर चल देता है, रथको पीछे धकेलता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह पहला मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर उलटा उन्हींको डाँटता है—"तेरे मूर्ख नादानके कहनेका महत्त्व ही क्या है? तू भी अपने आपको कुछ कहने योग्य समझता है।" भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, पिछले दोनों पाँव उछालता है, रथके कुब्बर (=बाँस) को तोड़ डालता है और त्रिदण्डके टुकड़े-टुकड़े कर देता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी इसी प्रकारके घटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह दूसरा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर उल्टा उन्हींपर आरोप लगाता है—"तूने अमुक दोष किया है। पहले तू ही अपने दोषका प्रायश्चित कर।" भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, रथके बाँसको जाँघका प्रहार दे, उसे नीचे गिराकर मर्दित कर देता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह तीसरा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर दूसरा-दूसरा व्यवहार करता है, बाहरी बातें घसीट लाता है, कोप, द्वेष तथा नाराजगी प्रकट करता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, शरीरके अगले हिस्सेको लेकर कूदता है, आगेकी टाँगोंको उछालता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह चौथा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर संघके बीचमें ही बाँहें उछालने लगता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, शरीरके अगले हिस्सेको लेकर कूदता है, आगेकी टाँगोंको उछालता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घाटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह पाँचवाँ मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा आरोप लगाये जानेपर संघकी परवाह न कर, दोषारोपण करनेवालेकी परवाह न कर, 'सदोष' ही जिधर इच्छा होती है, उधर चल देता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर, सारथीकी परवाह न कर, उसके चाबुककी परवाह न कर, दाँतोंसे मुँहकी लगाम को चबा, जिधर मन करता है, उधर चल देता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह छठा मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा दोष लगाये जानेपर 'मैं सदोष नहीं हूँ, मैं सदोष नहीं हूँ' कह चुप रहकर, संघको हैरान करता है। भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर न आगे बढ़ता है, न पीछे हटता है; वहीं खूंटेकी तरह गड़ जाता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह सातवाँ मनुष्य-दोष है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु एक भिक्षुपर दोषारोपण करते हैं। वह भिक्षु भिक्षुओं द्वारा दोष लगाये जानेपर कहता है 'आयुष्मानोंको मुझमें बहुत ज्यादा दिलचस्पी है। लो, मैं भिक्षु जीवनका त्याग कर गृहस्थ (=हीनमार्गी) हो जाता हूँ।' वह भिक्षु जीवनका त्याग कर हीन-मार्गका अनुगामी हो कहता है—"आयुष्मानों! अब तुम प्रसन्न होओ।' भिक्षुओ, जैसे एक घटिया-घोड़ा 'चल' कहनेपर, बींधे जानेपर, सारथी द्वारा प्रेरित किये जानेपर आगे और पीछेके पाँव सिकोड़कर चारों पाँवसे बैठ जाता है। भिक्षुओ, मैं इस आदमीको भी उसी प्रकारके घटिया-घोड़ेके समान कहता हूँ। भिक्षुओ, यह आठवाँ मनुष्य-दोष है। भिक्षुओ, ये आठ प्रकारके घटिया-मनुष्य होते हैं और ये आठ प्रकारके मनुष्य-दोष होते हैं।

भिक्षुओ, ये आठ मैल हैं। कौनसे आठ? भिक्षुओ, पाठ न करना (वेद–) मन्त्रोंका मैल है, भिक्षुओ आलस्य (=अनुट्ठान) गृहस्थ-जीवनका मैल है। भिक्षुओ,

तन्द्रा शरीरके वर्णका मैल है; भिक्षुओ, प्रमाद (किसी भी वस्तुके) रक्षकका मैल है; भिक्षुओ, दुश्चरित्रता स्त्रीका मैल है; भिक्षुओ, लोभ दाताका मैल है; भिक्षुओ, इस लोक तथा परलोकमें जितने पाप-धर्म है, वे सब मैल हैं; भिक्षुओ, इन सब मैलोंसे बढ़कर, सबसे बड़ी मैल अविद्या है। भिक्षुओ, ये आठ मैल हैं—

असज्झाय मला मन्ता, अनुट्ठानमला घरा।
मलं वण्णस्स कोसज्जं, पमादो रक्खतो मलं।
मलित्थिया दुच्चरितं, मच्छेरं ददतो मलं।
मला वे पापका धम्मा, अस्मिं लोक परम्हिच
ततो मला मलतरं, अविज्जा परमं मलंति॥

[भावार्थ ऊपर आ गया है]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें हों, वह 'दूत' बनाकर भेजे जानेके योग्य होता है। कौन-सी आठ बातें? भिक्षुओ, वह भिक्षु सुननेवाला होता है, सुनानेवाला होता है, सम्यक्-प्रकार सीखनेवाला होता है, धारण करनेवाला होता है, जाननेवाला होता है, जनानेवाला होता है, संहिता तथा असंहिता (=त्रिपिटक तथा अत्रिपिटक) में कुशल होता है और कलह करनेवाला नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें हों, वह दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य होता है।

भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये आठ गुण हैं, इसलिये सारिपुत्र दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य है। कौन-सी आठ बातें? भिक्षुओ, सारिपुत्र सुननेवाला है, सुनाने वाला है, सम्यक् प्रकार सीखनेवाला है, धारण करने वाला है, जाननेवाला है, जनाने वाला है, संहिता-असंहितामें कुशल है और कलह करने वाला नहीं है। भिक्षुओ, सारिपुत्रमें ये आठ गुण हैं, इसलिए वह दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य है।

यो न ब्यथति पत्वा, परिसं उग्गवादिनिं।
न च हापेति वचनं, न च छादेति सासनं॥
असन्दिद्धं च भणति, पुच्छितो न च कुप्पति।
स वे तादिसको भिक्खु, दूतेय्यं गन्तुमरहति॥

[जो उग्रवादियोंकी परिषदमें पहुँचकर भी घबराता नहीं है, जो 'वचन' को छोड़ता नहीं है और जो संदेश (=शासन) को ढकता नहीं है, जो असंदिग्ध रूपसे बोलता है तथा जो कोई बात पूछे जाने पर क्रोधित नहीं होता—वैसा भिक्षु ही दूत बनाकर भेजे जानेके योग्य होता है।]

भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको आठ उपायोंसे बंधनमें बाँध लेती है। किन आठ उपायोंसे? भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको रोकर बंधनमें बाँध लेती है; भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको हँसकर बंधनमें बाँध लेती है। भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको बोलकर बंधनमें बाँध लेती है; भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको अपने (वस्त्र-अलंकारादि) पहननेके ढंगसे बंधनमें बाँध लेती है; भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको वनसे तोड़कर लाई हुई चीजें देकर बन्धनमें बाँध लेती है;[1] भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको गन्धसे बाँध लेती है; भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको रससे बाँध लेती है; भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको स्पर्शसे बाँध लेती है, भिक्षुओ, स्त्री पुरुषको इन आठ उपायोंसे बंधनमें बाँध लेती है। भिक्षुओ, जो प्राणी स्पर्शसे बँधे होते हैं, वे भली प्रकार जकड़े होते हैं।

भिक्षुओ, पु रुष स्त्री को आठ उपायोंसे बंधनसे में बाँध लेता है। किन आठ उपायोंसे? भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको रोकर बंधनमें बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको हँसकर बंधनमें बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको बोलकर बंधनमें बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको अपने (वस्त्रादि) पहननेके ढंगसे बंधनमें बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको वनसे तोड़कर लाई हुई चीजें देकर बन्धनमें बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको गन्धसे बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको रससे बाँध लेता है; भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको स्पर्शसे बाँध लेता है। भिक्षुओ, पुरुष स्त्रीको इन आठ उपायोंसे बन्धनमें बाँध लेता है। भिक्षुओ, जो प्राणी स्पर्शसे बँधे होते हैं, वे भली प्रकार जकड़े होते हैं।

एक समय भगवान् वेरञ्जामें नळेरुपचिन्दकी छायामें विहार करते थे। तब पहाराद नामका असुरेन्द्र जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए पहाराद नामके असुरेन्द्रसे भगवानने पूछा—

"पहाराद! क्या असुर लोग महासमुद्रमें रमण करते हैं?"

"भन्ते! असुर लोग महासमुद्रमें अभिरमण करते हैं।"

"पहाराद! महासमुद्रमें ऐसी कितनी आश्चर्यकर अद्भुत बातें हैं, जिन्हें देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं?"

"भन्ते! महासमुद्रमें ऐसी आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातें हैं, जिनको देख-देखकर असुर लोग महासमुद्रमें रमण करते हैं। कौन-सी आठ? भन्ते! महा-

---

१. वन-भंग शब्द कहीं 'भ्रू-भंगिमा' का तो परिवर्तित रूप नहीं?—अनुवादक

समुद्र क्रमशः निम्न होता जाता है, क्रमशः गहरा होता जाता है, क्रमशः नीचेकी ओर ढलता जाता है; उसमें सीधा प्रपात नहीं होता। भन्ते! यह जो महासमुद्र क्रमशः निम्न होता जाता है, क्रमशः गहरा होता जाता है, क्रमशः नीचेकी ओर ढलता जाता है, उसमें सीधा प्रपात नहीं होता—भन्ते! महासमुद्रमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! महासमुद्र अपने धर्म (=मर्यादा) पर स्थिर रहता है, अपने किनारेकी मर्यादाके भीतर रहता है। भन्ते! महासमुद्रमें यह दूसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! महासमुद्र मुर्दा लाशको सहन नहीं करता। महासमुद्रमें जो मुर्दा लाश होती है, उसे शीघ्र ही किनारेकी ओर बहाकर ले आता है, स्थलपर ला पटकता है। भन्ते! यह जो महासमुद्र मुर्दा लाशको सहन नहीं करता, महासमुद्रमें जो मुर्दा लाश होती है, उसे शीघ्र ही किनारेकी ओर बहाकर ले आता है, स्थलपर ला पटकता है—भन्ते! महासमुद्रमें यह तीसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! जितनी भी महानदियाँ हैं, जैसे गंगा, यमुना, अचिरवती, सरभू, (सरयू) तथा मही—ये सब महासमुद्रमें पड़कर अपने पूर्वके नाम-गोत्रको छोड़ देती हैं, ये सब 'महासमुद्र' ही कहलाती हैं। भन्ते! यह जो जितनी भी महानदियाँ हैं, जैसे गंगा, यमुना, अचिरवती, सरयू तथा मही—ये सब 'महासमुद्र' में पड़कर अपने नाम-गोत्रको छोड़ देती हैं, 'महासमुद्र' ही कहलाती हैं; भन्ते! महासमुद्रमें यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! इस लोकमें जो नदियाँ महासमुद्रमें जाकर गिरती हैं और जो आकाशसे (जल-) धारा गिरती है, उनसे महासमुद्रमें कुछ कमी-बेशी नहीं दिखाई देती। भन्ते! यह जो इस लोकमें जो नदियाँ महासमुद्रमें जाकर गिरती हैं और जो आकाशसे (जल-) धारा गिरती है, उनसे महासमुद्रमें कुछ कमी-बेशी नहीं दिखाई देती है—भन्ते! महासमुद्रमें यह पाँचवीं आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते! महासमुद्रका एक ही रस है, लवण-रस। भन्ते! यह जो महासमुद्रका एक ही रस है, लवण-रस—भन्ते! महासमुद्रमें यह छठी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते ! महासमुद्रमें बहुत रत्न होते हैं, अनेक प्रकारके रत्न होते हैं। वहाँ ऐसे रत्न होते हैं, जैसे मोती, मणि, बिलौर, शंख, शिला, मूंगा, चाँदी, सोना, लोहितांक तथा मसाल-गल्ल (पन्ना ?)। भन्ते ! यह जो महासमुद्रमें बहुत रतन होते हैं, अनेक प्रकारके रतन होते हैं, वहाँ ऐसे रतन होते हैं, जैसे मोती, मणि, बिलौर, शंख, शिला, मूंगा, चाँदी, सोना, लोहितांक तथा मसाल गल्ल (पन्ना ?) —भन्ते ! महासमुद्रमें यह सातवीं आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"फिर भन्ते ! महासमुद्र बड़े बड़े प्राणियोंका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिगंल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महा-समुद्रमें सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं, दो सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं, तीन सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं, चार सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं तथा पाँच सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं। भन्ते ! यह जो महासमुद्र बड़े बड़े प्राणियोंका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महा-समुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी हैं .... दो सौ योजन लम्बे ...... तीन सौ योजन लम्बे प्राणी भी हैं—भन्ते ! महासमुद्रमें यह आठवीं आश्चर्यकर बात है, जिसकी ओर देख-देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"भन्ते ! क्या भिक्षु इस धर्म-विनय (= बुद्ध शासन) में आनन्दपूर्वक रहते हैं ?"

"पहाराद ! भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।"

"भन्ते ! इस धर्म-विनयमें ऐसी कितनी आश्चर्यकर अद्भुत बातें हैं, जिनकी ओर देख देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।"

"पहाराद ! इस धर्म-विनयमें ऐसी आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातें हैं, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्द-पूर्वक रहते हैं। कौन-सी आठ ? पहाराद ! जैसे महासमुद्र क्रमशः निम्न होता जाता है, क्रमशः गहरा होता जाता है, क्रमशः नीचे की ओर ढलता जाता है, उसमें सीधा प्रपात नहीं होता। इसी प्रकार पहाराद ! इस धर्म-विनयमें भी क्रमिक-शिक्षा है, क्रमिक क्रिया है, क्रमिक चर्या है, एक बार ही अञ्ञा (= ज्ञान) की प्राप्ति नहीं है। पहाराद ! यह जो इस धर्म-विनयमें क्रमिकशिक्षा है, क्रमिक क्रिया है, क्रमिक चर्य्या है, एक बार ही अञ्ञा (= ज्ञान) की प्राप्ति नहीं होती है—पहाराद ! इस धर्म-विनयमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

पहाराद ! जैसे महासमुद्र अपने धर्म (= मर्यादा) पर स्थित रहता है, अपने किनारेकी मर्यादाके भीतर रहता है; इसी प्रकार पहाराद ! मैंने अपने श्रावकोंके लिये जो नियम (= शिक्षा पद) बनाये हैं, वे मेरे श्रावक अपने प्राणोंके लोभसे भी नहीं तोड़ते हैं। पहाराद ! यह जो मैंने अपने श्रावकोंके लिये नियम (= शिक्षा पद) बनाये हैं, इन्हें जो मेरे श्रावक अपने प्राणोंके लोभसे भी नहीं तोड़ते हैं; पहाराद ! इस धर्म-विनयमें यह दूसरी आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-नियममें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद ! जैसे महासमुद्र मुर्दा लाशको सहन नहीं करता। महासमुद्रमें जो मुर्दा लाश होती है, उसे शीघ्र ही किनारेकी ओर बहाकर ले आता है, स्थलपर ला पटकता है। पहाराद ! उसी प्रकार जो आदमी दुश्शील होता है, पापी होता है, अपवित्र-सन्दिग्ध आचरण वाला होता है, छिपाकर पाप कर्म करनेवाला होता है, श्रमण रूपमें अश्रमण होता है, ब्रह्मचारी रूपमें अब्रह्मचारी होता है, अन्दरसे सड़ा होता है, अशुद्ध होता है; संघ उसके साथ नहीं रहता; एकत्र हो शीघ्र ही उसे अपनेमेंसे निकाल बाहर करता है। चाहे वह कितना भी संघके बीचमें बैठा हो—वह संघसे दूर हो जाता है और संघ उससे दूर हो जाता है। पहाराद ! यह जो आदमी दुश्शील होता है, पापी होता है, अपवित्र सन्दिग्ध आचरण वाला होता है, छिपाकर पाप कर्म करनेवाला होता है, श्रमण रूपमें अश्रमण होता है, ब्रह्मचारी रूपमें अब्रह्मचारी होता है, अन्दरसे सड़ा होता है, अशुद्ध होता है, संघ उसके साथ नहीं रहता, एकत्र हो शीघ्र ही उसे अपनेमेंसे निकाल बाहर करता है। चाहे वह कितना ही संघके बीचमें बैठा हो—वह संघसे दूर हो जाता है और संघ उससे दूर हो जाता है;—पहाराद ! इस धर्म-विनयमें यह तीसरी आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

'पहाराद ! जैसे जितनी भी महानदियाँ हैं, जैसे गंगा, यमुना, अचिरवती, सरभू (सरयू) तथा मही—ये सब महासमुद्रमें पड़कर अपने पूर्वके नाम-गोत्रको छोड़ देती हैं, ये सब 'महासमुद्र' ही कहलाती हैं। इसी प्रकार पहाराद। ये चारों वर्ण हैं–क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य तथा शूद्र। ये तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनयमें घरसे बेघर हो प्रव्रजित होनेपर अपने पूर्वके नाम, गोत्र का त्याग कर देते हैं। वे 'श्रमण शाक्य-पुत्र' ही कहलाते हैं। पहाराद ! ये जो चारों वर्ण हैं—क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य, तथा शूद्र। ये तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनयमें घरसे बेघर हो, प्रव्रजित होनेपर अपने पूर्वके नाम-गोत्रका त्याग कर देते हैं। वे 'श्रमण शाक्य-पुत्र' ही कहलाते हैं। पहाराद !

इस धर्म-विनयमें यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे इस लोकमें जो नदियाँ महासमुद्रमें, जाकर गिरती हैं और जो आकाशसे (जल–) धारा गिरती है, उससे महासमुद्रमें कुछ कभी-बेशी नहीं दिखाई देती। इसी प्रकार पहाराद! चाहे बहुतसे भिक्षु उपाधि-रहित निर्वाण धातु के अनुसार परिनिर्वाण को प्राप्त होते हैं, इससे निर्वाण धातुमें कमी-बेशी नहीं दिखाई देती। पहाराद! यह जो बहुत से भिक्षु उपाधि-रहित निर्वाण धातु के अनुसार परि-निर्वाणको प्रप्त होते हैं, इससे निर्वाण-धातुमें कमी-बेशी नहीं दिखाई देती। पहाराद! इस धर्म-विनयमें यह पाँचवीं आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे महासमुद्रका एक ही रस है लवण-रस, इसी प्रकार पहाराद! इस धर्म-विनयका भी एक ही रस है और वह विमुक्ति-रस; यह इस धर्म-विनयमें छठी आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे महासमुद्रमें बहुत रत्न होते हैं, अनेक प्रकारके रत्न होते हैं। वहाँ ऐसे रत्न होते हैं, जैसे मोती, मणि, बिल्लौर, शंख, शिला, मूंगा, चाँदी, सोना, लोहितांक (=लाल) तथा मसाल-गल्ल (पन्ना?); इसी प्रकार पहाराद! इस धर्म-विनयमें भी बहुत रत्न हैं, अनेक प्रकारके रत्न! ये रत्न हैं, जैसे चारों स्मृति उपस्थान; चारों सम्यक् प्रधान, चारों ऋद्धिपाद, पाँच इन्द्रियाँ, पाँच बल, सात बोधि-अंग तथा आर्य अष्टांगिक मार्ग। पहाराद! जैसे इस धर्म विनयमें बहुत रत्न हैं, अनेक प्रकारके रत्न। ये रत्न हैं, जैसे चारों स्मृति-उपस्थान, चारों सम्यक् प्रधान; चारों ऋद्धि-पाद, पाँच इन्द्रियाँ, पाँच बल, सात बोधि-अंग तथा आर्य अष्टांगिक मार्ग। पहाराद! इस धर्म-विनयमें यह सातवीं आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

"पहाराद! जैसे महासमुद्र बड़े-बड़े प्राणियोंका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिंगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं, दो सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं, तीन सौ योजन भी लम्बे प्राणी हैं, चार सौ योजन लम्बे भी प्राणी हैं, पाँच सौ योजन भी लम्बे प्राणी हैं। इसी प्रकार पहाराद! यह धर्म-विनय भी बड़े-बड़े प्राणियोंका निवास-स्थान है। इस

धर्म-विनयमें ये प्राणी निवास करते हैं—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, सकृदागामी, सकृदागामी फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, अनागामी, अनागामी फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, अर्हत, अर्हत-फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। पहाराद! यह जो यह धर्म-विनय इन बड़े-बड़े प्राणियोंका निवास-स्थान है, इस धर्म-विनयमें ये प्राणी निवास-स्थान करते हैं—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, सकृदागामी, सकृदागामी-फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, अनागामी, अनागामी फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत, अर्हत, अर्हत-फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। पहाराद! इस धर्म-विनयमें यह आठवीं आश्चर्यकर अद्भुत बात है, जिसकी ओर—देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं। पहाराद! इस धर्म-विनयमें ऐसी आठ आश्चर्यकर बातें हैं, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं।

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें मिगार माताके पूर्वाराम प्रासादमें विहार करते थे। उस समय भिक्षु संघसे घिरे हुए भगवान वहाँ उपोसथ करनेके लिये विराजमान थे। तब उस प्रकाशमान रात्रिमें पहला याम गुजर जानेपर आयुष्मान आनन्द आसनसे उठे और उन्होंने अपने उत्तरासंग (चीवर) को एक कंधेपर किया तथा जहाँ भगवान थे, वहाँ हाथ जोड़कर, प्रणाम कर, भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! रात्रि प्रकाशमान है। पहला याम गुजर गया है। भिक्षु संघ दीर्घ कालसे बैठा है। भन्ते! भिक्षुओंके सामने प्रातिमोक्ष (=भिक्षु-नियमों)का उपदेश (=पाठ) करें।"

ऐसा कहनेपर भगवान् चुप रहे। दूसरी बार भी प्रकाशमान रात्रिमें पहला याम गुजर जानेपर, आयुष्मान् आनन्द आसनसे उठे और उन्होंने अपने उत्तरासंग (चीवर) को एक कन्धेपर किया तथा जहाँ भगवान थे, वहाँ हाथ जोड़कर, प्रणाम कर, भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! रात्रि प्रकाशमान है। पहला याम गुजर गया है। भिक्षु संघ दीर्घ कालसे बैठा है! भन्ते! भिक्षुओंके सामने प्रातिमोक्ष (=भिक्षु-नियमों) का उपदेश (=पाठ) करें।"

दूसरी बार भी भगवान चुप रहे। तीसरी बार भी प्रकाशमान रात्रिमें, पहला याम गुजर जानेपर, आयुष्मान आनन्द आसनसे उठे और उन्होंने अपने उत्तरासंग (चीवर) को एक कन्धेपर किया तथा जहाँ भगवान थे, वहाँ हाथ जोड़कर, प्रणाम कर, भगवानसे निवेदन किया—"भन्ते! रात्रि प्रकाशमान है। पहला याम गुजर गया है। भिक्षु-संघ दीर्घकालसे बैठा है। भन्ते! भिक्षुओंके सामने प्रातिमोक्ष (=भिक्षु-नियमों) का उपदेश (=पाठ) करें।"

"आनन्द ! यह परिषद् शुद्ध नहीं है।"

तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने विचार किया—भगवान् ने किस आदमी को दृष्टिमें रखकर यह बात कही कि 'आनन्द ! यह परिषद् शुद्ध नहीं है'।

तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने सारेके सारे भिक्षुसंघके चित्तको अपने चित्तसे जाननेकी कोशिश की। आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने उस आदमीको (भिक्षु संघमें) बैठा देख लिया, जो दुराचारी था, पापी था, जिसका आचरण अपवित्र तथा संदिग्ध था, जो छिपकर पाप-कर्म करनेवाला था, जो श्रमणरूपमें अश्रमण था, जो ब्रह्मचारी रूपमें अब्रह्मचारी था, जो अन्दरसे सड़ा हुआ था, अशुद्ध था। उसे देख, आसनसे उठ, जहाँ वह आयुष्मान् था, वहाँ पहुँचे। पास जाकर उस आयुष्मान् से कहा—"आयुष्मान् ! उठ। भगवान्ने तुझे देख लिया है। भिक्षुओंके साथ तेरा रहना नहीं हो सकता।

ऐसा कहने पर वह आदमी चुप रहा। दूसरी बार भी आयुष्मान् महामौ-द्गल्यायनने उस आदमीको कहा—"आयुष्मान् उठ। भगवान् ने तुझे देख लिया है। भिक्षुओंके साथ तेरा रहना नहीं हो सकता।"

दूसरी बार भी वह आदमी चुप रहा। तीसरी बार भी आयुष्मान् महा मौद्गल्यायनने उस आदमीको कहा—"आयुष्मान् उठ ! भगवान्ने तुझे देख लिया है। भिक्षुओंके साथ तेरा रहना नहीं हो सकता।

तीसरी बार भी वह आदमी चुप रहा। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायनने उस आदमीको बाँहसे पकड़ा और दरवाजेके बाहर करके कुण्डी लगा दी। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे और बोले—"भन्ते ! मैंने उस आदमीको निकाल बाहर किया। अब परिषद् परिशुद्ध है। भन्ते ! भगवान् अब भिक्षुओंको प्रातिमोक्षका उपदेश (= पाठ) करें।"

"मौद्गल्यायन ! आश्चर्य है। मौद्गल्यायन ! अद्भुत है। बाँह पकड़ कर निकालनेकी स्थिति आने तक भी वह मूर्ख आता है !"

तब भगवानने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ अब तुम ही 'उपोसथ' कर लिया करो, प्रातिमोक्षका उपदेश (= पाठ) कर लिया करो। भिक्षुओ, आजके बाद मैं 'उपोसथ' नहीं करूँगा, प्रातिमोक्षका उपदेश (= पाठ) नहीं करूँगा। भिक्षुओ, इस बातके लिये कोई स्थान नहीं है, इस बातकी कोई गुंजायश नहीं है कि जो परिषद् अपरिशुद्ध हो, उसमें तथागत प्रातिमोक्ष (= भिक्षु नियमों) का उपदेश (= पाठ) करें।"

"भिक्षुओ, महासमुद्रमें ये आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें हैं, जिन्हें देख देख कर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं। कौनसी आठ? भिक्षुओ, महासमुद्र क्रमश निम्न होता जाता है, क्रमशः गहरा होता जाता है, क्रमशः नीचेकी ओर ढलता जाता है; उसमें सीधा प्रपात नहीं होता। भिक्षुओ, यह जो महासमुद्र क्रमशः निम्न होता जाता है, क्रमशः गहरा होता जाता है, क्रमशः नीचेकी ओर ढलता जाता है, उसमें सीधा प्रपात नहीं होता—भिक्षुओ! महासमुद्रमें यह पहली आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है, जिसकी ओर देख देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं। (पूर्ववत् विस्तार)।

"फिर भिक्षुओ, महासमुद्र बड़े-बड़े प्राणियोंका निवास स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिंगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी हैं. . . . पाँच सौ योजन लम्बे प्राणी भी हैं। भिक्षुओ, यह जो महासमुद्र बड़े बड़े प्राणियोंका निवास स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिंगिल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी है. . . पाँच सौ योजन लम्बे प्राणी भी हैं—भिक्षुओ, महासमुद्रमें यह आठवीं आश्चर्यकर बात है जिसकी ओर देख देखकर असुर महासमुद्रमें रमण करते हैं।

"इसी प्रकार भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमें भी आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें हैं, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं। कौनसी आठ? भिक्षुओ, जैसे महासमुद्र क्रमशः निम्न होता जाता है, क्रमशः गहरा होता जाता है, क्रमशः नीचे की ओर ढलता जाता है; उसमें सीधा प्रपात नहीं होता। इसी प्रकार भिक्षुओ! इस धर्म-विनयमें भी क्रमिक-शिक्षा है, क्रमिक-क्रिया है, क्रमिक चर्या है, एक बार ही अञ्ञा (=ज्ञान) की प्राप्ति नहीं है। भिक्षुओ, यह जो इस धर्म-विनयमें क्रमिक-शिक्षा है, क्रमिक-क्रिया है, क्रमिक चर्य्या है, एक बार ही अञ्ञा (=ज्ञान) की प्राप्ति नहीं होती है—भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमें यह पहली आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्द पूर्वक रहते हैं।. . . . भिक्षुओ जैसे महासमुद्रमें बड़े बड़े प्राणियोंका निवास-स्थान है। वहाँ ये प्राणी होते हैं—तिमि, तिमिंगल, तिमिरपिंगल, असुर, नाग, गन्धर्व। महासमुद्रमें सौ योजन लम्बे प्राणी भी होते हैं. . . पाँच सौ योजन लम्बे प्राणी भी होते हैं। इसी प्रकार भिक्षुओ, यह धर्म-विनय भी बड़े बड़े प्राणियोंका निवास स्थान है। इस धर्म विनयमें ये प्राणी निवास करते हैं—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात् करनेके प्रयासमें रत. . . अर्हत, अर्हत फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। भिक्षुओ,

यह जो यह धर्म-विनय इन बड़े-बड़े प्राणियोंका निवास-स्थान है। इस धर्म-विनयमें ये प्राणी निवास करते हैं—स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत. . . . अर्हत, अर्हत फलको साक्षात करनेके प्रयासमें रत। भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमें यह आठवीं आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है, जिसकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्दपूर्वक रहते हैं। भिक्षुओ, इस धर्म-विनयमें ये ऐसी आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें हैं, जिनकी ओर देख-देखकर भिक्षु इस धर्म-विनयमें आनन्द-पूर्वक रहते हैं।

३. गृहपति वर्ग

एक समय भगवान् वैशालीके महावनकी कूटागार-शालामें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया. . . . भगवानने यह कहा—

"भिक्षुओ, यह जान लो कि वैशालीके उग्र गृहपतिमें आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें हैं।" भगवानने यह कहा। यह कहकर सुगत आसनसे उठ विहारमें चले गये।

तब एक भिक्षु पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले जहाँ वैशालीके उग्र गृहपतिका घर था, वहाँ पहुँचा। पहुँचकर बिछे आसनपर बैठा। तब वैशालीका उग्र गृहपति, जहाँ वह भिक्षु (बैठा) था, वहाँ आया। पास आकर उस भिक्षुको प्रणाम कर एक ओर बैठा। उस एक ओर बैठे हुए वैशालीके उग्र गृहपतिसे उस भिक्षुने पूछा—

"हे गृहपति! तुम्हारे बारेमें भगवान्ने कहा है कि तुम आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त हो। हे गृहपति! वे आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें क़ौनसी हैं, जिनके बारेमें भगवानने कहा है कि तुम उनसे युक्त हो?"

"भन्ते! मैं नहीं जानता हूँ कि भगवानने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त बताया है; लेकिन जिन आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे मैं युक्त हूँ, उन्हें कहता हूँ। उन्हें सुनें। अच्छी तरहसे मनमें धारण करें। मैं कहता हूँ।"

"गृहपति! अच्छा" कह उस भिक्षुने वैशालीके उग्र गृहपतिको प्रतिवचन दिया। वैशालीके उग्र गृहपतिने तब यह कहा—

"भन्ते! मैंने जब भगवानको दूरसे ही देखा, देखते ही भगवानके लिये मेरे मनमें श्रद्धा उत्पन्न हो गई। भन्ते! यह मुझमें पहली आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है।

"भन्ते! मैं श्रद्धावान हो भगवानकी सेवा में रहा। तब भगवानने मुझे क्रमशः धर्मोपदेश दिया जैसे दान-कथा; शील-कथा; स्वर्ग-कथा; काम-भोगोंके दुष्परिणाम, बुराई, संक्लिष्ट होना तथा निष्काम भावके सुपरिणाम। जब भगवानने समझ लिया कि अब मेरा चित्त ठीक हालतमें है, कोमल-अवस्थाको प्राप्त है, नीवरण-रहित है, उत्साह-युक्त है, प्रसन्न है; तब बुद्धोंकी जो उद्धार करने वाली जो धर्म-देशना है उसका प्रकाशन किया—दुःख सत्य, समुदय-सत्य, निरोध-सत्य तथा मार्ग-सत्य। जैसे शुद्ध निर्मल वस्त्र शीघ्र ही रंगको ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार आसनपर बैठे-बैठे मुझे विरज, निर्मल ज्ञान-चक्षु की प्राप्ति हो गई—जो कुछ समुदय होने वाला है, वह सभी निरोधको प्राप्त होने वाला है। भन्ते! तब मुझे धर्मका दर्शन हो जाने पर, धर्म की प्राप्ति हो जाने पर, धर्मका ज्ञान हो जाने पर, धर्मकी गहराईमें उतर जाने पर, सन्देहरहित हो जाने पर शक और शुबहकी गुंजाइश नहीं रहने पर, विशारद हो जाने पर तथा शास्ताके शासनके प्रति दृढ़ श्रद्धावान् हो जाने पर मैं बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण गया और ब्रह्मचर्य—पंचम शिक्षाओं (=पंचशीलों[1]) को ग्रहण किया। भन्ते! मुझमें यह दूसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! उस समय चार कुमारियाँ मेरी पत्नियाँ थीं। तब भन्ते! जहाँ वे पत्नियाँ थीं, मैं वहाँ पहुँचा। पास जाकर उन पत्नियोंसे कहा—"बहनो! मैंने ब्रह्मचर्य पंचम शील ग्रहण किये हैं। जिसकी इच्छा हो वह यहीं रहे खाये-पीये और पुण्य करती रहे; जिसकी इच्छा हो अपने माता-पिताके घर चली जाय। जिसे किसी पुरुष की कामना हो, वह मुझे बता दे कि मैं उसे किसे सौंप दूँ।' भन्ते! मेरे ऐसा कहने पर मेरी जो ज्येष्ठ पत्नी थी, उसने मुझे कहा—'हे आर्यपुत्र! आप मुझे अमुक आदमीको सौंप दे।' भन्ते! तब मैंने उस आदमीको बुलवाया और बायें हाथसे अपनी पत्नीको पकड़ और दायें हाथमें गंगा-सागर (=भिंगार) ले उसे उस पुरुषको सौंप दिया। भन्ते! उस कुमारी भार्याका परित्याग करते हुए मेरा चित्त तनिक भी विचलित नहीं हुआ। भन्ते! मुझमें यह तीसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मेरे घरमें धन-सम्पत्ति (=भोग) है। जो शीलवान हैं, सत्पुरुष हैं उनके लिये वह सब धन अविभक्त है अर्थात् उस पर उनका भी वैसा ही अधिकार है, जैसा मेरा। भन्ते! मुझमें यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

---

१. काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहनेके स्थानपर सम्पूर्ण ब्रह्मचर्यके पालनके नियमसे युक्त पञ्चशील।

"भन्ते ! मैं जिस किसी भी भिक्षुकी संगति करता हूँ वा उसकी सेवामें रहता हूँ, तो आदर-भावनासे ही रहता हूँ, अनादर-भावनासे नहीं। भन्ते ! यह मुझमें पाँचवीं आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है।

"भन्ते ! जो आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश देते हैं, मैं उसे ध्यानसे ही सुनता हूँ, लापरवाहीसे नहीं। यदि वह आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश नहीं देते, तो मैं उन्हें धर्मका उपदेश देता हूँ। भन्ते ! यह मुझमें छठी आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है।

"भन्ते ! यह भी आश्चर्य की बात है कि देवता-गण मुझे आकर कहते हैं कि भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है। भन्ते ! उन देवताओंके ऐसा कहने पर मैं उन्हें कहता हूँ—'देवताओ। तुम चाहे ऐसा कहो और चाहे न कहो, भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है।' भन्ते ! यह सोचकर कि देवता मेरे पास आते हैं, या मैं देवताओंके साथ बातचीत करता हूँ, मेरे मनमें कहीं भी कुछ अहंकारका भाव (= उन्नति) पैदा नहीं होता। भन्ते ! यह मुझमें सातवीं आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है।

भन्ते ! भगवान् ने जो नीचेकी ओर ले जाने वाले पाँच संयोजन (= पाँच चित्तके बंधन) कहे हैं, वे पाँचों मुझे अपनेमें प्रहीण दिखाई देते हैं। भन्ते ! यह मुझमें आठवीं आश्चर्यकर अद्‌भुत बात है। भन्ते ! मुझमें ये आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातें हैं। किन्तु मैं यह नहीं जानता कि भगवान्‌ने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त बताया है।

तब उस भिक्षुने वैशालीके उग्र गृहपतिके घरमें भिक्षा ग्रहण की और वह आसनसे उठकर चला गया। तब वह भिक्षु भिक्षाटनके अनन्तर, भोजन ग्रहण कर चुकनेपर, जहाँ भगवान् थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवान्‌को प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने वैशालीके उग्र गृहपतिसे जितनी बातचीत हुई थी, वह सब भगवानको कह सुनाई।

"भिक्षु ! बहुत अच्छा ! भिक्षु, बहुत अच्छा !! जैसे उस वैशालीके गृहपतिने सम्यक् रूपसे व्याख्या की है, ठीक इन्हीं आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त मैंने वैशालीके उग्र गृहपतिको बताया है। भिक्षु ! यह मान ले कि वैशाली का उग्र गृहपति इन्हीं आठ आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त है।

एक समय भगवान् वज्जी (जनपद) के हस्ती-ग्राममें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—

"भिक्षुओ, यह जान लो कि हस्ती-ग्रामका उग्र गृहपति आठ आश्चर्यकर

अद्भुत बातोंसे युक्त है। भगवानने यह कहा यह कहकर सुगत आसनसे उठ विहार में चले गये।

तब एक भिक्षु पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र चीवर ले, जहाँ हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिका घर था, वहाँ पहुँचा। पहुँचकर बिछे आसनपर बैठा। तब हस्ती-ग्रामका उग्र गृहपति, जहाँ वह भिक्षु (बैठा) था, वहाँ गया। पास आकर उस भिक्षुको प्रणाम कर, एक ओर बैठा। उस एक ओर बैठे हुए हस्ती-ग्रामके उस उग्र गृहपतिसे उस भिक्षुने पूछा——

"हे गृहपति! तुम्हारे बारेमें भगवानने कहा है कि तुम आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त हो। हे गृहपति! वे आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातें कौनसी हैं, जिनके बारेमें भगवानने कहा है कि तुम उनसे युक्त हो?"

"भन्ते! मैं नहीं जानता हूँ कि भगवान्‌ने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त कहा है। लेकिन जिन आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे मैं युक्त हूँ, उन्हें कहता हूँ। उन्हें सुनें। अच्छी तरहसे मनमें धारण करें। मैं कहता हूँ।"

"गृहपति! अच्छा" कह उस भिक्षुने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिको प्रति वचन दिया। हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिने तब कहा——

"भन्ते! मैंने जब भगवानमें विचरते समय, पहली बार भगवानको दूरसे ही देखा। भन्ते! मेरे मनमें भगवानका दर्शन करनेके समय ही उनके प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गई। भन्ते! मेरा सुराका नशा उतर गया। भन्ते! मुझमें यह पहली आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मैं श्रद्धावान हो भगवानकी सेवामें रहा। तब भगवानने मुझे क्रमशः धर्मोपदेश दिया जैसे दान-कथा; शीलकथा; स्वर्ग-कथा; कामभोगोंके दुष्परिणाम, बुराई, संक्लिष्ट होना तथा निष्काम भावके सुपरिणाम। जब भगवान् ने समझ लिया कि अब मेरा चित्त ठीक हालतमें है, कोमल अवस्थाको प्राप्त है, नीवरण रहित है, उत्साह-युक्त है, प्रसन्न है; तब बुद्धोंकी जो उद्धार करने वाली देशना है उसका प्रकाशन किया——दुःख-सत्य,-समुदय सत्य, निरोध-सत्य, तथा मार्ग-सत्य। जैसे शुद्ध निर्मल वस्त्र शीघ्र ही रंग को ग्रहण कर लेता है, उसी प्रकार उसी आसनपर बैठे बैठे मुझे विरज, निर्मल ज्ञान-चक्षुकी प्राप्ति हो गई——जो कुछ समुदय होने वाला है, वह निरोध को प्राप्त होने वाला है। भन्ते! तब मुझे धर्मका दर्शन हो जाने पर, धर्मकी प्राप्ति हो जाने पर, धर्मका ज्ञान हो जाने पर, धर्मकी गहराईमें उतर जाने पर, सन्देह-रहित हो जाने पर, शक और शुबहकी गुंजाइश नहीं रहने पर, विशारद हो

जाने पर तथा शास्ताके शासनके प्रति दृढ़ श्रद्धावान हो जाने पर मैं बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण गया और ब्रह्मचर्य-पंचम शिक्षाओं (पंचशीलों[१]) को ग्रहण कर किया। भन्ते! मुझमें यह दूसरी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! उस समय चार कुमारियाँ मेरी पत्नियाँ कीं। तब भन्ते! जहाँ वे पत्नियाँ थी, मैं वहाँ पहुँचा। पास जाकर उन पत्नियोंसे कहा—बहनों! मैंने ब्रह्मचर्य-पंचम शील ग्रहण किये हैं। जिसकी इच्छा हो, वह यहीं रहे खाये पिये और पुण्य करती रहे; जिसकी इच्छा हो अपने माता-पिता के घर चली जाय। जिसे किसी पुरुष की कामना हो, वह मुझे बता दे कि मैं उसे किसे सौंप दूँ। भन्ते! मेरे ऐसा कहने पर मेरी जो ज्येष्ठ पत्नी थी, उसने मुझसे कहा—'हे आयुष्मान् आर्यपुत्र! आप मुझे अमुक आदमीको सौंप दे।' भन्ते! तब मैंने उस आदमीको बुलवाया और बायें हाथसे अपनी पत्नीको पकड़ और दायें हाथमें गंगा-सागर (भिंगार) ले, उसे उस पुरुषको सौंप दिया। भन्ते! उस कुमारी भार्याका परित्याग करते हुए मेरा चित्त तनिक भी विचलित नहीं हुआ। भन्ते! मुझमें यह तीसरी आश्चर्य कर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मेरे घरमें धन-सम्पत्ति (भोग) हैं। जो शीलवान हैं, जो सत्पुरुष हैं, उनके लिये वह सब धन अविभक्त है, अर्थात् उस पर उनके भी वैसा ही अधिकार है, जैसा मेरा। भन्ते! मुझमें यह चौथी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! मैं जिस किसी भी भिक्षुकी संगति करता हूँ वा उसकी सेवामें रहता हूँ, तो आदर-भावनासे ही रहता हूँ, अनादर-भावनासे नहीं। भन्ते! जो आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश देते हैं, मैं उसे ध्यानसे ही सुनता हूँ, लापरवाही से नहीं। यदि वह आयुष्मान् मुझे धर्मका उपदेश नहीं देते, तो मैं उन्हें धर्मका उपदेश देता हूँ। भन्ते! यह मुझमें पाँचवीं आश्चर्यकर अदभुत बात है।

"भन्ते! इसमें आश्चर्य करनेकी कोई बात नहीं है कि जब मैं भिक्षु-संघको भोजन करने का निमंत्रण देता हूँ तो देवता मुझे आकर कहते हैं—अमुक भिक्षु दोनों प्रकारसे विमुक्त है; अमुक प्रज्ञा-विमुक्त है; अमुक काय-साक्षी (=कायानुपश्यी) है; अमुक (सम्यक्) दृष्टि प्राप्त है; अमुक श्रद्धा-विमुक्त है; अमुक धर्मानुसार आचरण करने वाला है; अमुक श्रद्धावान है; अमुक शीलवान् है,

---

१. काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचार से विरत रहनेके स्थान पर सम्पूर्ण ब्रह्मचर्यका पालन करनेके नियमसे युक्त पंचशील।

शुभ-कर्म करने वाला है; अमुक दुश्शील है, दुराचारी है। भन्ते! संघको परोसते समय, मैं नहीं जानता कि मेरे मनमें कभी यह विचार आया हो कि उस भिक्षुको थोड़ा दूँ, इसे अधिक दूँ। भन्ते! मैं समान-भावसे ही देता हूँ। भन्ते! यह मुझमें छठी आश्चर्यकर अद्भुत बात है।

"भन्ते! यह भी आश्चर्यकी बात है कि देवता-गण मुझे आकर कहते हैं कि भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है। भन्ते! उन देवताओंके ऐसा कहने पर मैं उन्हें कहता हूँ—'देवताओ' तुम चाहे ऐसा कहो और चाहे न कहो, भगवान् द्वारा धर्म सु-आख्यात है।' भन्ते! यह सोचकर कि देवता मेरे पास आते हैं, या मैं देवताओंके साथ बातचीत करता हूँ, मेरे मनमें कहीं भी कुछ अहंकार का भाव पैदा नहीं होता। भन्ते! यह मुझमें सातवीं आश्चर्यकर बात है।

"भन्ते! यदि मैं आपसे पहले मरूँगा तो आप असंदिग्ध रूपसे मेरे बारेमें यह कहेंगे कि 'हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिमें कोई ऐसा संयोजन (= बंधन) नहीं था, जिसके कारण वह फिर इस लोकमें जन्म ग्रहण करे।' भन्ते! यह मुझमें आठवीं आश्चर्यकर बात है। भन्ते! मुझमें ये आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातें हैं। किन्तु मैं नहीं जानता कि भगवानने मुझे किन आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त बतलाया है।

तब उस भिक्षुने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिके घरमें भिक्षा ग्रहण की। तब वह आसनसे उठकर चला गया। तब वह भिक्षु भिक्षाटनके अनन्तर, भोजन ग्रहण कर चुकने पर, जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको प्रणाम कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिसे जितनी बातचीत हुई थी, वह सब भगवानको कह सुनाई।

"भिक्षु! बहुत अच्छा। भिक्षु! बहुत अच्छा। जैसे उस हस्तीग्रामके गृहपतिने सम्यक् रूपसे व्याख्या की है, ठीक इन्हीं आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातों से युक्त मैंने हस्ती-ग्रामके उग्र गृहपतिको बताया है। भिक्षु! यह मान लो कि हस्ती-ग्रामका उग्र गृहपति इन्हीं आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातों से युक्त है।

एक समय भगवान आळवीमें अग्गाळव चैत्यमें विहार करते थे। वहाँ भगवानने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक सात आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त है। कौनसी सात बातोंसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान् है; भिक्षुओ! आळवीका हत्थक शीलवान् है, भिक्षुओ, आळवीका हत्थक लज्जा-शील है, भिक्षुओ! आळवीका हत्थक (पाप-) भीरु है; भिक्षुओ, आळवीका हत्थक बहुश्रुत है; भिक्षुओ, आळवीका हत्थक त्यागी है;

भिक्षुओ, आळवीका हत्थक प्रज्ञावान है--भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक इन सात आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त है।

भगवानने यह कहा। यह कहकर सुगत आसनसे उठ विहारमें प्रविष्ट हुए।

तब एक भिक्षु पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले, जहाँ आळवीके हत्थकका घर था वहाँ पहुँचा। पहुँच कर बिछे आसन पर बैठा। तब हत्थक आळवक जहाँ वह भिक्षु था, वहाँ पहुँचा। पहुँचकर उस भिक्षुको अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए हत्थक आळवक को उस भिक्षुने यह कहा--

"हे आयुष्मान्! तुम्हारे बारेमें भगवानने कहा है कि तुम सात आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त हो। कौन सी सात बातोंसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान् है,. . . .शीलवान् है--लज्जा-शील है. . . .(पाप-) भीरु है. . . . बहुश्रुत है. . . त्यागी है. . . .प्रज्ञावान् है। हे आयुष्मान्! तुम्हारे बारेमें भगवानने कहा है कि तुम इन सात आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त हो।"

"भन्ते! यहाँ पर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा तो (सुनता) नहीं रहा?"

"आयुष्मान्! नहीं, यहाँ पर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नहीं रहा।

"भन्ते! अच्छा है कि यहाँ पर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नहीं रहा।

तब उस भिक्षुने आळवीके हत्थकके घरमें भिक्षा ग्रहण की और वहाँसे उठ कर चला गया। तब वह भिक्षु भिक्षाटनके अनन्तर, भोजन ग्रहण कर चुकने पर, जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको प्रणामकर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने भगवानसे यह कहा--

"भन्ते! मैं पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले, जहाँ आळवी के हत्थक का घर था, वहाँ पहुँचा। पहुँचकर बिछे आसनपर बैठा। भन्ते! तब आळवीका हत्थक जहाँ मैं था, वहाँ आया। पास आकर मुझे प्रणाम कर एक ओर बैठा। भन्ते! एक ओर बैठे हुए आळवीके हत्थकको मैंने यह कहा--'हे आयुष्मान! तुम्हारे बारेमें भगवानने कहा है कि तुम सात आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त हो। कौनसी सात बातोंसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान है,. . . .शीलवान् है. . . लज्जाशील है, ...(पाप-) भीरु है. . .बहुश्रुत है, त्यागी है. . . .प्रज्ञावान है। हे आयुष्मान्! तुम्हारे बारेमें भगवान्‌ने कहा है कि तुम इन सात आश्चर्यकर अद्‌भुत बातोंसे युक्त हो।"

भन्ते ! ऐसा कहनेपर हत्थकने मुझसे यह पूछा 'भन्ते ! यहाँपर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा (सुनता) तो नहीं रहा ?" मैंने उत्तर दिया—'आयुष्मान ! नहीं, यहाँपर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नहीं रहा।' वह बोला—'भन्ते ! अच्छा है, यहाँपर कोई श्वेत वस्त्रधारी गृहस्थ बैठा नहीं रहा।"

भिक्षु ! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। भिक्षु ! वह कुलपुत्र अल्पेच्छ है। अपने गुणों (=कुशलधर्मों) को दूसरोंपर प्रकट नहीं होने देना चाहता। तो भिक्षु ! तू यह जान कि आळवीका हत्थक इस आठवीं आश्चर्यकर अद्‌भुत बातसे भी युक्त है—इस अल्पेच्छतासे।

एक समय भगवान आळवीके अग्गाळव चैत्यमें विहार करते थे। तब पाँच सौ उपासकोंसे घिरा हुआ आळवीका हत्थक जहाँ भगवान थे वहाँ पहुँचा। पास जाकर भगवानको अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे आळवीके हत्थकको भगवानने यह कहा—

"हत्थक। यह तेरी परिषद् बड़ी है। तू इतनी बड़ी परिषद्को संग्रहीत कैसे रखता है ?"

"भन्ते ! भगवानने जो चार संग्रह-वस्तु बताई हैं, उन्हीं चारों संग्रह-वस्तुओंसे मैं इसी बड़ी परिषद्को संग्रहीत करता हूँ। भन्ते ! जिसके बारेमें मैं जानता हूँ कि इसको कुछ देकर (=दानसे) इस का संग्रह करना चाहिये, उसे कुछ देकर उसका संग्रह करता हूँ। जिसके बारेमें मैं जानता हूँ कि इसका प्रिय वचनों (=मधुर-वाणी) से संग्रह करना चाहिये, उसका मधुर-वाणीसे संग्रह करता हूँ। जिसके बारेमें मैं जानता हूँ कि इसका उपकार (=अर्थ-चर्या) करके उसका संग्रह करना चाहिये, उसका उपकार करके संग्रह करता हूँ। जिसके बारेमें जानता हूँ कि इसका बराबरीके व्यवहार (=समानत्व) से संग्रह करना चाहिये, उसका बराबरीका व्यवहार करके संग्रह करता हूँ। भन्ते ! मेरे पास ऐश्वर्य है। ये लोग दरिद्रकी बातको उतना ध्यान देने योग्य नहीं मानते।"

"हत्थक ! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। हत्थक ! बड़ी परिषद्को इकट्ठे रखनेका यही उपाय है। हत्थक ! जिन्होंने भूतकालमें बड़ी परिषदका संग्रह किया, उन्होंने इन्हीं चार उपाय (संग्रह-वस्तुओं) से बड़ी परिषद्का संग्रह किया। हत्थक ! जो भविष्यमें बड़ी परिषदका संग्रह करेंगे, वे भी इन्हीं चार उपायों (संग्रह-वस्तुओं) से बड़ी परिषदका संग्रह करेंगे। हत्थक ! जो अब वर्तमान में बड़ी परिषद्का संग्रह करते हैं, वे सब भी इन्हीं चार उपायों (=संग्रह-वस्तुओं) से बड़ी परिषद्का संग्रह करते हैं।

तब भगवानके धार्मिक उपदेशसे लाभान्वित हो, शिक्षित हो, उत्साहयुक्त हो, हर्षित हो आळवीका हत्थक आसनसे उठ, भगवानको प्रणाम कर, प्रदक्षिणाकर चला गया। भगवानने आळवीके हत्थकके चले जानेके थोड़ी देर बाद भिक्षुओंको सम्बोधित किया—भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त है। कौन-सी आठ बातोंसे? भिक्षुओ, आळवीका हत्थक श्रद्धावान है......शीलवान है.....लज्जा-शील है.....(पाप–) भीरु है..... बहुश्रुत है......त्यागी है......प्रज्ञावान् है तथा आळवीका हत्थक अल्पेच्छ है। भिक्षुओ, यह जान लो कि आळवीका हत्थक इन आठ आश्चर्यकर अद्भुत बातोंसे युक्त है।"

एक समय भगवान् शाक्य (जनपद) में कपिलवस्तुके व्यग्रोधाराममें विहार करते थे। तब महानाम शाक्य जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए महानाम शाक्यने भगवानसे यह कहा—

"भन्ते! क्या होनेसे 'उपासक' होता है?"

"महानाम, जब आदमी बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण ग्रहण करता है, तो हे महानाम वह आदमी 'उपासक' कहलाता है।"

"भन्ते! क्या होनेसे उपासक 'शीलवान्' होता है?"

"महानाम! जब उपासक प्राणि-हत्यासे विरत होता है, चोरी करनेसे विरत होता है, कामभोगों सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत होता है, झूठ बोलनेसे विरत होता है तथा सुरा, मेरय आदि नशीली वस्तुओं का सेवन करनेसे विरत होता है, तो हे महानाम! ये बातें होनेसे उपासक 'शीलवान' होता है।

"भन्ते! क्या होनेसे आदमी आत्म-हितमें रत होता है, पर हितमें नहीं?"

"महानाम! जब आदमी स्वयं श्रद्धा सम्पन्न होता है, किन्तु दूसरेको श्रद्धासम्पन्न होनेकी प्रेरणा नहीं देता; स्वयं शीलवान् होता है किन्तु दूसरेको शील-वान् होनेकी प्रेरणा नहीं देता; स्वयं त्यागी होता है, किन्तु दूसरेको त्यागी बननेकी प्रेरणा नहीं देता, स्वयं भिक्षुओंके दर्शन करनेकी इच्छावाला होता है, किन्तु दूसरोंको भिक्षुओंके दर्शन करनेके लिये प्रेरणा नहीं देता, स्वयं सद्धर्म सुननेकी इच्छावाला होता है किन्तु दूसरोंको सद्धर्म सुननेकी प्रेरणा नहीं देता; स्वयं सुने हुए धर्मोंको (मनमें) धारण करनेवाला होता है किन्तु दूसरोंको सुने हुए धर्मोंको (मनमें) धारण करनेकी प्रेरणा नहीं देता; स्वयं सुने हुए धर्मोंके अर्थोंपर विचार करनेवाला होता है किन्तु

दूसरोंको सुने हुए धर्मोंके अर्थोंपर विचार करनेकी प्रेरणा नहीं देता, स्वयं अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्त कर धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है, किन्तु दूसरोंको धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा नहीं देता। महानाम! इस प्रकार आदमी आत्म-हितमें रत होता है, पर-हितमें नहीं।

"भन्ते! क्या होनेसे आदमी आत्म-हित तथा परहितमें रत होता है?"

"महानाम! जब आदमी स्वयं श्रद्धासम्पन्न होता है और दूसरोंको भी श्रद्धासम्पन्न होनेकी प्रेरणा देता है; स्वयं शीलवान् होता है और दूसरोंको भी शीलवान् होनेकी प्रेरणा देता है; स्वयं त्यागी होता है, दूसरोंको त्यागी बननेकी प्रेरणा देता है, स्वयं भिक्षुओंके दर्शन करनेकी इच्छावाला होता है और दूसरोंको भिक्षुओंके दर्शन करनेकी प्रेरणा देता है; स्वयं सद्धर्म सुननेकी इच्छा वाला होता है और दूसरोंको सद्धर्म सुननेकी प्रेरणा देता है; स्वयं सुने हुए धर्मोंको (मनमें) धारण करनेवाला होता है और दूसरोंको धारण करनेकी प्रेरणा देता है; स्वयं सुने हुए धर्मोंके अर्थोंपर विचार करनेवाला होता है और दूसरोंको सुने हुए धर्मोंके अर्थोंपर विचार करनेकी प्रेरणा देता है, स्वयं अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्त कर धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है और दूसरोंको भी धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा देता है। महानाम! इतना होनेसे उपासक आत्म-हित तथा पर-हित दोनोंमें रत रहता है।

एक समय भगवान राजगृहमें जीवकके आम्रवनमें विहार करते थे। तब कौमारभृत्य जीवक जहाँ भगवान थे, वहाँ गया। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए कौमार भृत्य जीवकने भगवानसे कहा—

"भन्ते! क्या होनेसे उपासक होता है?"

"जीवक! जब आदमीने बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण ग्रहण किए होता है, तो हे जीवक! वह आदमी 'उपासक' कहलाता है।"

"भन्ते! क्या होनेसे उपासक 'शीलवान' होता है?"

"जीवक! जब उपासक प्राणि-हत्यासे विरत होता है.....सुरा-मेरय आदि नशीली चीजोंसे विरत होता है, तो हे जीवक! वह उपासक 'शीलवान' कहलाता है।

"भन्ते! क्या होनेसे आदमी 'आत्म-हित' में रत होता है, 'पर-हित' में नहीं?"

"जीवक! जब आदमी स्वयं श्रद्धासम्पन्न होता है किन्तु दूसरोंको श्रद्धा-सम्पन्न होनेकी प्रेरणा नहीं देता........स्वयं अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्तकर

धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है, किन्तु दूसरोंको धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा नहीं देता ?।"

"भन्ते ! क्या होनेसे आदमी आत्म-हित तथा पर-हित दोनोंमें रत होता है ?"

"जीवक ! जब आदमी स्वयं श्रद्धा-सम्पन्न होता है, और दूसरोंको भी श्रद्धा-सम्पन्न बननेकी प्रेरणा देता है; स्वयं शीलवान होता है और दूसरोंको भी शीलवान बननेकी प्रेरणा देता है; स्वयं त्यागी होता है और दूसरोंको भी त्यागी बननेकी प्रेरणा देता है; स्वयं भिक्षुओंके दर्शनकी इच्छा वाला होता है और दूसरोंको भी भिक्षुओंके दर्शन करनेकी प्रेरणा देता है, स्वयं सद्धर्म सुननेकी इच्छावाला होता है और दूसरोंको सद्धर्म सुननेकी प्रेरणा देता है; स्वयं सुने हुए धर्मोंको (मनमें) धारण करनेवाला होता है और दूसरोंको धारण करनेकी प्रेरणा देता है; स्वयं सुने हुए धर्मोंके अर्थोंपर विचार करनेवाला होता है और दूसरोंको सुने हुए धर्मोंके अर्थोंपर विचार करनेकी प्रेरणा देता है ; स्वयं अर्थ तथा धर्मका ज्ञान प्राप्त कर धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेवाला होता है और दूसरोंको भी धर्मानुसार जीवन व्यतीत करनेकी प्रेरणा देता है। जीवक ! इतना होनेसे आदमी आत्म-हित तथा पर-हित दोनोंमें रत रहता है।

भिक्षुओ, ये आठ बल हैं। कौनसे आठ ? भिक्षुओं बच्चोंका बल है रोना; स्त्रियोंका बल क्रोध है, चोरोंका बल आयुध (=हथियार) है, राजाओंका बल ऐश्वर्य है, मूर्खोंका बल असंतोष है, पण्डितोंका बल संतोष है, बहुश्रुतोंका बल विचार (=ज्ञान) है तथा श्रमण-ब्राह्मणोंका बल क्षमा है। भिक्षुओ, ये आठ बल हैं।

तब आयुष्मान् सारिपुत्र जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान सारिपुत्रको भगवानने यह कहा—"सारिपुत्र ! जिन बलोंसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होता जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ— क्षीणास्रव भिक्षुके वे बल कौन कौनसे हैं ?"

"भन्ते ! जिन बलोंसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रब हूँ— क्षीणास्रव भिक्षुके वे बल आठ हैं। कौनसे आठ ? भन्ते ! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसके द्वारा यथार्थ रूपसे सभी संस्कार अनित्य करके देख लिये गये होते हैं। भन्ते ! यह जो क्षीणास्रव भिक्षु द्वारा यथार्थ रूपसे सभी संस्कारोंको अनित्य करके देख लिया जाता है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल होता है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है— मैं क्षीणास्रव हूँ।

"फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसके द्वारा यथार्थ रूपसे सभी काम-भोग अंगारोंके गढ़ेके समान देखे गये होते हैं। भन्ते! यह जो क्षीणास्रव भिक्षु द्वारा यथार्थ रूपसे सभी काम भोगोंको अंगारोंके गढ़ेके समान देख लिया जाता है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसका चित्त विवेककी ओर झुका होता है, विवेककी ओर लुढ़कनेवाला होता है, विवेक-स्थित होता है, निष्कामरत होता है, सभी आस्रवोंसे दूर रहनेवाला होता है। भन्ते! यह जो क्षीणास्रव भिक्षुका चित्त विवेककी ओर झुका होता है, विवेककी ओर लुढ़कनेवाला होता है, विवेक-स्थित होता है, निष्काम-रत होता है, सभी आस्रवोंसे दूर रहनेवाला होता है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है उसके द्वारा चारों स्मृति-उपस्थान अभ्यस्त होते हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त। भन्ते! यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

फिर भन्ते! जो क्षीणास्रव भिक्षु होता है, उसके द्वारा चारों ऋद्धिपाद अभ्यस्त होते हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होते हैं...... पाँच इन्द्रियाँ अभ्यस्त होती हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होती हैं....... सात बोधि-अंग अभ्यस्त होते हैं, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होते हैं..... आर्य अष्टांगिक मार्ग अभ्यस्त होता है, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होता है। भन्ते! यह क्षीणास्रव भिक्षुके द्वारा आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यस्त होना है, सम्यक् प्रकारसे अभ्यस्त होना है, यह भी क्षीणास्रव भिक्षुका एक बल है, जिस बलके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

"भन्ते! ये क्षीणास्रव भिक्षुके आठ बल हैं, जिन बलोंके होनेसे क्षीणास्रव भिक्षु अपना क्षीणास्रव होना जताता है—मैं क्षीणास्रव हूँ।

भिक्षुओ, अज्ञानी पृथक-जन कहते हैं कि 'लोक (=विश्व) क्षणिक-कृत्य है, लोक क्षणिक-कृत्य है।' लेकिन वे नहीं जानते (योग्य-) क्षण कौन-सा होता है, अ (-योग्य) क्षण कौन-सा होता है? भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये ये आठ अ (-योग्य) क्षण हैं, असमय हैं। कौनसे आठ? भिक्षुओ, लोकमें

अर्हत, सम्यक् सम्बुद्ध, विद्याचरण-युक्त, सुगत, लोकोंके जानकार, अनुपम, (दुष्ट–) पुरुषोंका दमन करनेवाले सारथी, देवताओं तथा मनुष्योंके शास्ता बुद्ध, भगवान तथागत पैदा होते हैं और उपशमन-कारक, परिनिर्वाण की ओर ले जानेवाले, सम्बोधि प्राप्त करानेवाले, सुगत-उपदिष्ट धर्मकी देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी निरय (= नरक) में उत्पन्न हुआ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह पहला अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमें अर्हत्........भगवान तथागत पैदा होते हैं। और उपशमन-कारक.......धर्मकी देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी पशु (= तिरस्कृत)–योनिमें उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह दूसरा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमें अर्हत......पैदा होते हैं। और....देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी प्रेत-योनिमें पैदा होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह तीसरा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमें अर्हत....पैदा होते हैं। और... देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी दीर्घजीवी देव-योनिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह चौथा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमें...पैदा होते हैं। और...देशना भी होती है। लेकिन यह आदमी ऐसे प्रत्यन्त-जनपदमें पैदा होता है, ऐसे अज्ञानियोंके म्लेच्छ देशमें (= मिलक्खेसु) जहाँ भिक्षु, भिक्षुओं, उपासकों, उपासिकाओं–किसीकी गति नहीं। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह पाँचवाँ अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमें...पैदा होते हैं। और....देशना भी होती है। और यह आदमी मध्यमण्डलमें भी जन्म ग्रहण करता है। किन्तु वह आदमी मिथ्या-दृष्टि होता है, उल्टी-मति वाला—देना निरर्थक है, यज्ञ करना निरर्थक है, होम करना निरर्थक है, अच्छे-बुरे कर्मोंका (अच्छा-बुरा) फल नहीं होता, न यह लोक है, न परलोक है, न माँ है, न पिता है, न बिना माता-पिताके उत्पन्न होने वाले प्राणी (= ओपपातिक) होते हैं, लोकमें ऐसे श्रमण-ब्राह्मण नहीं हैं जो सम्यक प्रकारका जीवन व्यतीत करते हैं और इस लोक तथा परलोकको स्वयं जानकर, स्वयं साक्षात्कर देशना करते हैं। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह छठा अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमें. . . पैदा होते हैं। और. . . . देशना होती है। और यह आदमी मध्यमण्डलमें भी पैदा होता है। लेकिन वह दुष्प्रज्ञ, जड़, वज्रमूर्ख, सुभाषित-दुर्भाषितका अर्थ समझनेमें भी असमर्थ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह सातवाँ अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

फिर भिक्षुओ, लोकमें अर्हत सम्यक् सम्बुद्ध. . . . भगवान् तथागत पैदा होते हैं। किन्तु उपशमन-कारक परिनिर्वाणकी ओर ले जाने वाले, . . . सुगत उपदिष्ट धर्मकी देशना नहीं होती है। वह आदमी मध्य-मण्डलमें जन्म ग्रहण करता है। वह प्रज्ञावान होता है, मूर्ख नहीं होता, वज्रमूर्ख नहीं होता, सुभाषित-दुर्भाषितका अर्थ जाननेके लिये समर्थ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये यह आठवाँ अ (–योग्य) क्षण है, असमय है।

भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये ये आठ अ (–योग्य) क्षण हैं, असमय हैं।

भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करनेके लिये केवल एक ही (योग्य) क्षण है, समय है। वह एक क्षण, समय कौन-सा है? भिक्षुओ, लोकमें अर्हत् सम्यक सम्बुद्ध, विद्या-चरण युक्त, सुगत लोकोंके जानकार, अनुपम, (दुष्ट) पुरुषोंका दमन करने वाले सारथी, देवताओं तथा मनुष्योंके शास्ता बुद्ध, भगवान् तथागत पैदा होते हैं। और उपशमन-कारक, परिनिर्वाणकी ओर ले जाने वाले, सम्बोधि प्राप्त कराने वाले, सुगत-उपदिष्ट धर्मकी देशना भी होती है। यह आदमी मध्य-मण्डलमें जन्म ग्रहण करता है। वह प्रज्ञावान् होता है, मूर्ख नहीं होता, वज्रमूर्ख नहीं होता, सुभाषित-दुर्भाषितका अर्थ जाननेके लिये समर्थ होता है। भिक्षुओ, श्रेष्ठ जीवन व्यतीत करने के लिये केवल यही एक (योग्य) क्षण है, समय है।

मनुस्स लाभं लद्धान, सद्धम्मे सुप्पवेदिते।
ये खणं नाधिगच्छन्ति, अतिनामेन्ति ते खणं॥

[मनुष्य जन्म प्राप्त करके, धर्मके सम्यक् प्रकार उपदिष्ट रहने पर भी जो (योग्य) क्षणको प्राप्त नहीं होते, वे (उचित) क्षण से चूक जाते हैं।]

बहू हि अक्खणा वुत्ता, मग्गस्स अन्तरायिका।
कदाचि करहचि लोके, उप्पज्जन्ति तथागता॥

[श्रेष्ठ जीवन (= मार्ग) व्यतीत करनेमें बाधक बहुतसे अ (–योग्य) क्षण बताये गये हैं। तथागत लोकमें कभी-कभी ही उत्पन्न होते हैं।]

तयिदं सम्मुखीभूतं, यं लोकस्मिं सुदुल्लभं,
मनुस्सपटिलाभो च, सद्धम्मस्स च देसना॥
अलं वायमितुं तत्थ, अत्तकामेन जन्तुना।
कथं विजञ्ञा सद्धम्मं, खणो वे मा उपच्चगा॥
खणातीता हि सोचन्ति, निरयम्हि समप्पिता।
इध चे नं विराधेति, सद्धम्मस्स नियामतं॥

[जिन्हें लोकमें बुद्धके सम्मुख उत्पन्न होनेका सुदुर्लभ अवसर मिला है और मनुष्य-जन्म ग्रहण करनेका सुअवसर मिला है तथा सद्धर्मकी देशना सुननेको मिली है, ऐसे प्राणियोंके लिये आत्म-हितकी दृष्टिसे प्रयत्न करना ही उपयोगी है, कि हम सद्धर्मको कैसे जान लें। यह क्षण (= सुअवसर) हाथसे न चला जाय। अवसर चूक जानेसे, नरकको प्राप्त होते हैं—यदि वह यहाँ सद्धर्मके आश्वासनसे च्युत हो जाता है।]

वाणिजो व अतीतत्थो चिरत्तं अनुतपिस्सति।
अविज्जानिवुतो पोसो, सद्धम्मं अपराधिको॥
जातिमरणसंसारं, चिरं पच्चनुभोस्सति।

[जिस बनियेका अर्थ नष्ट हो गया है, उस बनियेकी तरह वह आदमी चिर काल तक अनुतापको प्राप्त होगा, जो अविद्यासे ग्रस्त है तथा जिसने सद्धर्मका पालन नहीं किया है। वह चिरकाल तक इस संसारमें जन्म लेता रहेगा, मरता रहेगा।]

ये च लद्धा मनुस्सत्तं, सद्धम्मे सुप्पवेदिते॥
अकंसु सत्थुवचनं, करिस्सन्ति करोन्ति वा।
खणं पच्चविदुं लोके, ब्रह्मचरियं अनुत्तरं॥

[जिन्होंने मनुष्य होकर जन्म ग्रहण किया ऐसे समय पर जब सद्धर्म उपदिष्ट रहा है और जो या तो शास्ताके वचनके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करते हैं अथवा करेंगे, वे इस लोकमें अनुपम श्रेष्ठ जीवन व्यतीत कर सकने वाले क्षणको भोगने वाले होंगे।]

ये मग्गं पटिपज्जिंसु, तथागतप्पवेदितं।
ये संवरा चक्खुमता, देसितादिच्चबन्धुना॥
तेसु गुत्तो सदा सतो, विहरे अनवस्सुतो।
सब्बे अनुसये छेत्वा, मारधेय्यपरानुगे।
ते वे पारंगता लोके, ये पत्ता आसवक्खयं॥

[जिन्होंने तथागतके द्वारा दिखाये गये मार्गका अनुसरण किया, जिन्होंने आदित्य-बन्धु चक्षुमान् (बुद्ध) द्वारा दिखाये संयत-जीवनको ग्रहण किया, तो उन-उन विषयोंमें संयत, स्मृति होकर युक्त निर्मल भावसे रहे हैं, जो सभी अनुशयोंको छोड़कर मार-बंधनोंसे मुक्त हुए हैं, उन्हीं आस्रव-क्षय करने वालोंके बारेमें कहा जा सकता है कि वे लोक (= संसार-सागर) के पार हो गये।]

एक समय भगवान भग्गके सुंसुमार गिरिके भेसकळावन नामके मृगदाय (= मृगोंके जंगल) में विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् अनुरुद्ध चेदी जनपदमें प्राचीन (= पूर्वकी ओरके) वंसदाय (= अरण्य) में विहार करते थे।

उस समय एकान्त-वास करते हुए विचारमग्न आयुष्मान् अनुरुद्धके मनमें यह वितर्क पैदा हुआ—'यह धर्म अल्पेच्छके लिये है, महेच्छके लिये नहीं; यह धर्म सन्तुष्टके लिये है, असन्तुष्टके लिये नहीं; यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड़-भड़क्केमें रहनेकी इच्छा रखनेवाले के लिये नहीं; यह धर्म अप्रमादीके लिये है, आलसीके लिये नहीं; यह धर्म उपस्थित स्मृतिके लिये है, मूढ़-स्मृतिके लिये नहीं; यह धर्म एकाग्र चित्तके लिये है, विक्षिप्त (= एकाग्रता रहित) चित्तके लिये नहीं; यह धर्म प्रज्ञावान्‌के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नहीं।

तब भगवान् आयुष्मान अनुरुद्धके चित्तकी बात अपने चित्तसे जान, जैसे कोई बलवान् आदमी सिकुड़ी हुई बाँहों को फैलाये वा फैली हुई बाँहोंको सिकोड़े, उसी प्रकार (शीघ्रतासे) भग्गके सुंसुमार-गिरिके भेसकळावन नामके मृगदायसे अन्तर्धान हो चेदी (जनपद) में प्राचीन (= पूर्वके) वंसदायमें विहार करने वाले आयुष्मान् अनुरुद्धके समान प्रकट हुए। भगवान् बिछे आसन पर बैठे। आयुष्मान् अनुरुद्ध भी भगवान्‌को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् अनुरुद्धको भगवानने यह कहा—

"अनुरुद्ध ! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। अनुरुद्ध यह बहुत अच्छा है कि यह जो तेरे चित्तमें महापुरुषोंके मनमें पैदा होने वाले विचार उत्पन्न हुए हैं;—यह धर्म अल्पेच्छके लिये है, महेच्छके लिये नहीं; यह धर्म संतुष्टके लिये है, असन्तुष्टके लिये नहीं; यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड़-भड़क्केमें रहनेकी इच्छावालेके लिये नहीं; यह धर्म अप्रमादी के लिये है, आलसीके लिये नहीं; यह धर्म उपस्थित स्मृतिके लिये है, मूढ़ स्मृतिके लिये नहीं; यह धर्म एकाग्र चित्तके लिये है, विक्षिप्त (= एकाग्रता रहित) चित्तके लिये नहीं; यह धर्म प्रज्ञावान्‌के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नहीं।' अनुरुद्ध ! तू इस आठवें महापुरुष-वितर्क को भी अपने मनमें जगह दे—

यह धर्म प्रपंच-रहितके लिये है, प्रपंच न चाहने वालेके लिये है; प्रपंच-युक्तके लिये प्रपंच चाहने वालेके लिये नहीं।

अनुरुद्ध, क्योंकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोंको मनमें जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक प्रथम ध्यानावस्थामें विहर सकेगा—जो काम-वितर्कसे रहित होगा, जो बुरे विचारोंसे रहित होगा, किन्तु जिसमें वितर्क और विचार होंगे, जो एकान्त-वाससे उत्पन्न होगा, जिसमें प्रीति और सुख होंगे।

अनुरुद्ध, क्योंकि तू इन आठ महापुरुष-वितर्कोंको मनमें जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक द्वितीय ध्यानावस्थामें विहर सकेगा—जिसमें वितर्क और विचारोंका उपशमन हो जायगा, जिसमें भीतरी प्रसन्नता और एकाग्रता रहेगी, जो वितर्क-विचार रहित, समाधिसे उत्पन्न, प्रीति-सुखसे युक्त होगा।

अनुरुद्ध, क्योंकि तू इन आठ महापुरुष-वितर्कोंको मनमें जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक तृतीय ध्यानावस्थामें विहर सकेगा—जिस अवस्थामें प्रीति से भी विरक्त हो, उपेक्षावान् हो विचरेगा, स्मृतिवान्, ज्ञानवान, कायसे सुखका अनुभव करने वाला; जिसे पण्डित जन उपेक्षावान्, स्मृतिवान्, सुख पूर्वक विहार करनेवाला कहते हैं।

अनुरुद्ध! क्योंकि तू इन आठ महापुरुष-वितर्कोंको मनमें जगह देगा, तो हे अनुरुद्ध! तू जब तक इच्छा करेगा तब तक चतुर्थ ध्यानावस्थामें विहर सकेगा—सुख और दुःख दोनोंका प्रहाण हो जानेके अनन्तर, सौमनस्य और दौर्मनस्यका पहले ही अस्त हुआ रहनेसे (उत्पन्न), जिसमें न दुःख होता है और न सुख, और होती है (केवल) उपेक्षा तथा स्मृतिकी परिशुद्धि।

अनुरुद्ध! क्योंकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोंको मनमें जगह देगा और क्योंकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले चारों ध्यानोंका बिना कठिनाईसे, बिना असुविधाके सहज ही प्राप्त करने वाला होगा, इससे अनुरुद्ध! तुझे धूलमें फेंके गये चीथड़ोंसे बना हुआ चीवर ऐसा लगेगा जैसा किसी गृहपति वा गृहपति पुत्रका नाना रक्तवर्ण दुशालोंसे भरा हुआ दुशालोंका सन्दूक। क्योंकि तू रति (=आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, संतुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध! क्योंकि तू इन आठ महापुरुष-वितर्कोंको मनमें जगह देगा और क्योंकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले चारों ध्यानोंका बिना कठिनाईसे, बिना असुविधाके सहज ही प्राप्त करने वाला होगा; इससे अनुरुद्ध! तुझे भिक्षाटन

से मिला हुआ भोजन ऐसा प्रतीत होगा जैसा किसी गृहपति वा गृहपति पुत्रके यहाँ बना हुआ नानासूपों तथा नाना व्यंजनों के साथ, काले धानोंसे सर्वथा रहित पका हुआ भात। क्योंकि तू रति (= आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणका प्राप्त करनेके लिये, सन्तुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध ! क्योंकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोंको मनमें जगह देगा और क्योंकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देनेवाले चारों ध्यानोंका बिना कठिनाईसे, बिना असुविधा, सहज ही प्राप्त करनेवाला होगा, इससे अनुरुद्ध ! तुझे वृक्षकी छाया रूपी शयनासन ऐसा लगेगा जैसा किसी गृहपति वा गृहपति पुत्रका लिपा-पुता, सुरक्षित, अर्गला-युक्त, बंद झरोखों वाला महल। क्योंकि तू रति (= आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, संतुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध ! क्योंकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोंको मनमें जगह देगा और क्योंकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले, चारों ध्यानोंका बिना कठिनाईसे, बिना असुविधासे, सहज ही प्राप्त करने वाला होगा, इससे अनुरुद्ध ! तुझे घास-फूस का बिछौना ऐसा लगेगा जैसे किसी गृहपति वा गृहपति-पुत्रका पलंग हो, जिस पर गोनक आस्तरण, पटिक आस्तरण, पटलिक आस्तरण (बिछे हों), जिस पर कदली मृग की चमड़ी का बना श्रेष्ठ प्रति-आस्तरण हो, ओढ़ना हो तथा दोनों ओर लालवर्ण की तकिया हो। क्योंकि तू रति (= आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, संतुष्ट चित्त हो विहार करेगा।

अनुरुद्ध ! क्योंकि तू इन आठ महापुरुष वितर्कोंको मनमें जगह देगा और क्योंकि तू इन चैतसिक, इसी शरीरमें सुख देने वाले, चारों ध्यानोंका बिना कठिनाईसे, बिना असुविधासे, सहज ही प्राप्त करनेवाला होगा, इससे हे अनुरुद्ध ! तुझे दुर्गन्ध-युक्त मूत्र रूपी औषधि भी ऐसी लगेगी, जैसे गृहपति वा गृहपति पुत्रकी घी, मक्खन, तेल, मधु, खाण्ड आदि नाना प्रकारकी दवाइयाँ। क्योंकि तू रति (= आसक्ति) को दूर करनेके लिये, सुखपूर्वक विहार करनेके लिये, निर्वाणको प्राप्त करनेके लिये, संतुष्ट-चित्त हो विहार करेगा। तो अनुरुद्ध ! तू अपना अगला वर्षावास भी यहीं चेदी (जनपद) के प्राचीन (= पूर्वकी ओर के) वंसदायमें करना।"

"भन्ते ! अच्छा" कह आयुष्मान् अनुरुद्धने भगवान् को प्रतिवचन दिया।

तब भगवान्, आयुष्मान् अनुरुद्धको यह उपदेश दे चुकनेके अनन्तर, जैसे कोई बलवान् आदमी सिकुड़ी हुई बाँहको फैलाये वा फैली हुई बाँहको सिकोड़े, उसी

प्रकार चेदी (जनपद) के प्राचीन वंसदायसे अन्तर्धान हो भग्गके सुंसुमार गिरिके भेसकळावनमें प्रकट हुए। भगवान् बिछे आसन पर बैठे। बैठकर भगवान्ने भिक्षुओं को सम्बोधित किया—"भिक्षुओ, आठ महापुरुष वितर्कोंकी देशना करता हूँ। इन्हें सुनें. . . . भिक्षुओ, आठ महापुरुष वितर्क कौन से हैं? भिक्षुओ, यह धर्म अल्पेच्छ के लिये है, महेच्छके लिये नहीं; यह धर्म संतुष्टके लिये है, असंतुष्ट के लिये नहीं; यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड़-भड़क्केमें रहनेकी इच्छा वालेके लिये नहीं; यह धर्म अप्रमादीके लिये है, आलसीके लिये नहीं; यह धर्म उपस्थित स्मृतिके लिये है, मूढ़ स्मृतिके लिये नहीं; यह धर्म एकाग्र-चित्तके लिये है, विक्षिप्त (= एकाग्रता रहित) चित्तके लिये नहीं; यह धर्म प्रज्ञावान् के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नहीं; यह धर्म प्रपंच-रहित के लिये है, प्रपंच न चाहने वालेके लिये है, प्रपंच युक्तके लिये, प्रपंच चाहने वालेके लिये नहीं।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म अल्पेच्छ' के लिये है, 'महेच्छके लिये नहीं', यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु 'अल्पेच्छ' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे भी उसे जानें कि वह 'अल्पेच्छ' है; 'सन्तुष्ट' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे भी उसे जानें कि वह 'सन्तुष्ट' है; 'एकान्त-सेवी' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे भी उसे जानें कि वह 'एकान्त-सेवी' है; 'प्रयत्न-शील' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे उसे जानें कि वह 'प्रयत्नशील' है; 'उपस्थित-स्मृति' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे उसे जानें कि वह 'उपस्थित-स्मृति' है; 'एकाग्र-चित्त' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे उसे जानें कि वह 'एकाग्र-चित्त' है; 'प्रज्ञावान्' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे उसे जानें कि वह 'प्रज्ञावान्' है; 'प्रपंच रहित' होता हुआ यह नहीं चाहता कि दूसरे उसे जानें कि वह 'प्रपंच-रहित' है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म' 'अल्पेच्छके लिये है, 'महेच्छ' के लिये नहीं—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म सन्तुष्ट के लिये है, असन्तुष्टके लिये नहीं;' यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु जैसे-तैसे चीवर, पिण्ड पात (= भिक्षा), शयनासन, ग्लान-प्रत्यय भैषज्य आदि आवश्यक वस्तुओंसे संतुष्ट होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म सन्तुष्ट के लिये है, असन्तुष्टके लिये नहीं'—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म एकान्त-प्रिय के लिये है, भीड़-भड़क्केमें रहनेकी इच्छा वालेके लिये नहीं;' यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ,

एक 'एकान्त-सेवी' भिक्षुके पास भिक्षु आते हैं, भिक्षुणियाँ आती हैं, उपासक आते हैं उपासिकायें आती हैं, राजा आते हैं, राजाओंके अमात्य आते हैं, तैर्थिक आते हैं, तैर्थिक श्रावक आते हैं। उस समय वह भिक्षु विवेक की ओर झुके हुए, विवेक की ओर लुढ़के हुए, विवेककी ओर अग्रसर हुए, विवेक-स्थित, निष्काम चित्तसे निश्चितरूपसे प्रेरणा देनेवाली बातचीत ही करता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया है कि 'यह धर्म एकान्त-प्रियके लिये है, भीड़ भड़क्केमें रहनेकी इच्छा वालेके नहीं—यह इसी अर्थमें कहा गया है।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'अप्रमादी' के लिये है, आलसीके लिये नहीं,' तो यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु बुराइयों (=अकुशल धर्मों) को छोड़नेके लिये, अच्छाइयों (=कुशल धर्मों) को ग्रहण करनेके लिये प्रयत्नशील होता है। अच्छी बातों (=कुशल धर्मों) के प्रति शक्तिशाली, दृढ़-पराक्रमी तथा जुआ कंधेपर रखे होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'अप्रमादी' के लिये है, आलसीके लिये नहीं—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'उपस्थित-स्मृति' के लिये है, 'मूढ़-स्मृति' के लिये नहीं;' तो यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, एक भिक्षु स्मृतिमान होता है, श्रेष्ठ स्मृतिसे युक्त उसे चिरकालपूर्व किया गया कर्म, चिरकाल पूर्व कही गई बात भी याद रहती है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'उपस्थित -स्मृति' के लिये है, मूढ़-स्मृतिके लिये नहीं—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'एकाग्र-चित्त के लिये है, एकाग्रता रहित चित्तके लिये नहीं;' यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, भिक्षु काम-भोगोंसे पृथक. . . . .चतुर्थ-ध्यान प्राप्त कर विहार करता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'एकाग्र-चित्त' के लिये है, एकाग्र-रहित चित्तके लिये नहीं—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'प्रज्ञावान्' के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नहीं,' यह किस अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, भिक्षु उदयास्तगामिनी, आर्य, बींधनेवाली, सम्यक् प्रकार दुःखक्षय की ओर ले जाने वाली प्रज्ञासे युक्त होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म 'प्रज्ञावान्' के लिये है, दुष्प्रज्ञके लिये नहीं—यह इसी अर्थमें कहा गया।

भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि 'यह धर्म 'प्रपंच-रहित' के लिये है, प्रपंच न चाहने वालेके लिये है, प्रपंच-युक्तके लिये, प्रपंच चाहने वालेके लिये नहीं,' यह किस

अर्थमें कहा गया? भिक्षुओ, भिक्षुका चित्त प्रपंचके निरोधकी ओर अग्रसर होता है, प्रसन्न होता है, स्थिर होता है तथा विमुक्त होता है। भिक्षुओ, यह जो कहा गया कि यह धर्म प्रपंच-रहितके लिये है, प्रपंच न चाहने वालेके लिये है, प्रपंच-युक्तके लिये, प्रपंच चाहने वालेके लिये नहीं; यह इसी अर्थमें कहा गया।

तब आयुष्मान् अनुरुद्धने अपना अगला वर्षावास भी वहीं चेदी (जनपद) के प्राचीन अरण्यमें व्यतीत किया। तब आयुष्मान् अनुरुद्ध अकेले, एकान्त-सेवी हो, अप्रमादी रह, प्रयत्न कर, कोशिशमें लगे रहकर, जिस (उद्देश्य) के लिये कुल पुत्र घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होते हैं, उस अनुपम श्रेष्ठ जीवन-युक्त (उद्देश्य) को इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करने लगे। उन्हें लगा कि जन्म (–मरणका बंधन) क्षीण हो गया, श्रेष्ठ-जीवन व्यतीत कर लिया गया, जो करणीय था कर लिया गया, अब शेष कुछ करणीय नहीं रहा।' आयुष्मान अनुरुद्ध एक अर्हत हुए।

तब उस समय अर्हत्-पद प्राप्त आयुष्मान् अनुरुद्धको ये गाथायें सूझीं :—

मम संकप्पमञ्ञाय, सत्था लोके अनुत्तरो।
मनोमयेन कायेन, इद्धिया, उपसंकमि॥
यथा मे अहु संकप्पो, ततो उत्तरि देसयि।
निप्पपञ्चरतो बुद्धो, निप्पपञ्चं अदेसयि॥
तस्साहं धम्ममञ्ञाय, विहासिं सासने रतो।
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं॥

[जो लोक (= विश्व) में अनुपम शास्ता हैं, वे (बुद्ध) मेरे संकल्प को जान मनोमय-शरीरसे, ऋद्धि-बलसे मेरे पास आये। मेरे संकल्पके अनुसार मुझे श्रेष्ठ-धर्मका उपदेश दिया। प्रपंच-रहित बुद्धने प्रपंच-रहित पदका उपदेश दिया। उन बुद्धके धर्मका जानकार हो मैं (बुद्ध–) शासन में अनुरक्त हो रहने लगा। मैंने विद्यायें प्राप्त कीं, बुद्धकी अनुशासना के अनुसार जीवन व्यतीत किया।]

४. दान वर्ग

भिक्षुओ, ये आठ दान हैं। कौनसे आठ? (प्रतिग्राहकके) आनेपर दान देता है; डरसे दान देता है; 'मुझे दिया था' यह सोच दान देता है; 'मुझे देगा' यह सोच दान देता है; 'दान देना अच्छा है' सोच दान देता है; 'मैं (भोजन) पकाता हूँ: ये भोजन नहीं पकाते हैं, यह उचित नहीं है कि पकाने वाला, न पकानेवालेको दान न दे', सोच दान देता है; 'यह दान देनेसे मेरा यश फैलेगा।' सोच दान

देता है; तथा चित्तको अलंकृत करनेके लिये, या चित्त को परिष्कृत (परिशुद्ध) करनेके लिये दान देता है। भिक्षुओ, ये आठ दान हैं।

सद्धा हिरियं कुसलं च दानं,
धम्मा एते सप्पुरिसानुयाता।
एतं हि मग्गं दिवियं वदन्ति,
एतेन हि गच्छति देवलोकं

[श्रद्धा, लज्जा तथा निर्दोष (=कुशल) दान ये सत्पुरुषोंके गुण हैं। ये ही दिव्य-पथ कहलाते हैं। इन ही से (लोग) देव-लोक जाते हैं।]

भिक्षुओ, ये आठ दान-प्रकरण (=वस्तु) हैं। कौनसे आठ? प्रेम-पूर्वक दान देता है; क्रोधसे दान देता है; मूढ़तासे दान देता है; भयसे दान देता है; 'पूर्व समयसे पिता-पिता यह दान देते चले आये हैं, पुरानी वंश-परम्पराका त्याग करना उचित नहीं' सोच दान देता है; 'इस दान देनेसे मैं शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर सुगतिको प्राप्त होऊँगा, स्वर्ग लोकमें जन्म ग्रहण करूँगा' सोच दान देता है; 'यह दान देनेसे मेरा मन प्रसन्न होता है, संतुष्ट होता है, प्रमुदित होता है' सोच दान देता है; चित्तको अलंकृत करनेके लिये, चित्तको परिशुद्ध करनेके लिये दान देता है।

भिक्षुओ, जिस खेतमें ये आठ बातें होती हैं, उसमें जो बीज बोया जाता है, उसका न महान् फल होता है, न अधिक स्वादिष्ट (=फल) होता है, न अधिक अच्छी फसल होती है। कौनसी आठ बातें? भिक्षुओ, खेत ऊँचा-नीचा होता है, कंकड़-पत्थर वाला होता है, ऊसर होता है, गहरा हल नहीं चलाया जा सकता, (पानीके) आनेका रास्ता नहीं होता, (पानीके) निकलनेका रास्ता नहीं होता, (पानीकी) मातृकाओं (=नालियों) से युक्त नहीं होता, (खेत की) मर्यादा (=बाड़) से युक्त नहीं होता। भिक्षुओ, जिस खेतमें ये आठ बातें होती हैं, उसमें जो बीज बोया जाता है, उसका न महान् फल होता है, न अधिक स्वादिष्ट (=फल) होता है और न अधिक अच्छी फसल होती है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणोंमें ये आठ बातें होती हैं उन्हें दिया गया दान न महान् फल-दायक होता है, न यश फैलाने वाला (=द्युतिकारक) और न अधिक विस्तार वाला होता है। कौनसी आठ बातें? भिक्षुओ, श्रमण-ब्राह्मण मिथ्या-दृष्टि वाले होते हैं, मिथ्या संकल्प वाले होते हैं, मिथ्या-वाणी वाले होते हैं, मिथ्या कर्मान्त वाले होते हैं, मिथ्या आजीविका वाले होते हैं, मिथ्या-व्यायाम (=प्रयत्न) वाले

होते हैं, मिथ्या–स्मृतिवाले होते हैं तथा मिथ्या-समाधि वाले होते हैं। इस प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणोंमें ये आठ बातें होती हैं, उन्हें दिया गया दान न महान फलदायक होता हैं, न यश फैलाने वाला (=द्युतिकारक) और न अधिक विस्तार वाला होता है।

भिक्षुओ, जिस खेतमें ये आठ बातें होती हैं, उसमें जो बीज बोया जाता है, उसका महान् फल होता है, स्वादिष्ट फल होता है, अच्छी फसल होती है। कौन-सी आठ बातें ? भिक्षुओ, खेत ऊँचा–नीचा नहीं होता है, कंकड़-पत्थर वाला नहीं होता है, ऊसर नहीं होता है, गहरा हल चलाया जा सकता है, (पानीके) आनेका रास्ता होता है, (पानीके) जानेका रास्ता होता है, पानी की मातृकायें (=नालियाँ) होती हैं, (खेतकी) मर्यादा (=बाड़) होती है। भिक्षुओ, जिस खेतमें ये आठ बातें होती हैं, उसमें जो बीज बोया जाता है, उसका महान् फल होता है, स्वादिष्ट फल होता है, अच्छी फसल होती है।

इसी प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण-ब्राह्मणोंमें ये आठ बातें होती हैं, उन्हें दिया गया दान महान फलदायक होता है, यश (ज्योति) फैलाने वाला और विस्तार वाला होता है। कौनसी आठ बातें ? भिक्षुओ, श्रमण-ब्राह्मण सम्यक्-दृष्टि वाले होते हैं, सम्यक् संकल्प वाले होते हैं, सम्यक् वाणी वाले होते हैं, सम्यक् कर्मान्त वाले होते हैं, सम्यक् आजीविका वाले होते हैं, सम्यक् व्यायाम (=प्रयत्न) वाले होते हैं। सम्यक् स्मृति वाले होते हैं तथा सम्यक् समाधि वाले होते हैं। इस प्रकार भिक्षुओ, जिन श्रमण ब्राह्मणोंमें ये आठ बातें होती हैं, उन्हें दिया गया दान महान् फलदायक होता है, यश (ज्योति) फैलाने वाला होता है और विस्तार वाला होता है।

यथापि खेत्ते सम्पन्ने, पवुत्ता बीजसम्पदा
देवे सम्पादयन्तम्हि, होति धञ्ञस्स सम्पदा।
अनीतिसम्पदा होति, विरूळ्ही भवति सम्पदा।
वेपुल्लसम्पदा होति, फलं वे होति सम्पदा॥

[जिस प्रकार सम्पन्न खेतमें बीजरूपी सम्पत्ति बोने पर और देव(=वर्षा) रूपी सम्पत्ति बरसने पर धान रूपी सम्पदा होती है, कीड़े-मकोड़ोंसे होने वाली हानिका अभावरूपी सम्पत्ति होती है, विपुलता रूपी सम्पदा होती है, (अधिक–) फल रूपी सम्पदा होती है।]

एवं सम्पन्नसीलेसु, दिन्ना भोजन सम्पदा।
सम्पदानं उपनेति, सम्पन्नं हिस्स तं कतं॥

तस्मा सम्पदमाकंखी, सम्पन्नत्थूधपुग्गलो।
सम्पन्नपञ्ञे सेवेथ, एवं इज्झन्ति सम्पदा॥
बिज्जाचरणसम्पन्ने, लद्धा चित्तस्स सम्पदं।
करोति कम्मसम्पदं, लभति चत्थसम्पदं॥

[इसी प्रकार शीलवानोंको भोजन रूपी सम्पत्तिका दान दिये जाने पर (त्रिविध कुशल) सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, क्योंकि उसका वह कर्म सम्पूर्ण (सम्पन्न) होता है। इसलिये जो व्यक्ति सम्पन्न है और सम्पदा की आकांक्षा करता है, उसे चाहिये कि वह शील-सम्पन्नोंकी सेवा करे। यही सम्पत्ति प्राप्त करनेकी विधि है। (वह) विद्या तथा आचरण युक्तोंकी सेवाके फलस्वरूप चित्त-सम्पत्ति प्राप्त कर सम्पूर्ण कर्म करता है तथा अर्थ रूपी सम्पदा प्राप्त करता है।]

लोकं ञत्वा यथाभूतं, पप्पुय्य दिट्ठिसम्पदं।
मग्गसम्पदमागम्म, याति सम्पन्नमानसो॥
ओधुनित्वा मलं सब्बं, पत्वा निब्बानसम्पदं।
मुच्चति सब्बदुक्खेहि, सा होति सब्बसम्पदा॥

[वह लोक (= विश्व) की यथार्थ जानकारी प्राप्त कर, (सम्यक्–) दृष्टि रूपी सम्पदाको हस्तगत कर, (आर्य–) मार्ग रूपी सम्पदाका अनुसरण कर, सम्पूर्ण चित्तसे (अर्हत्त्वको) प्राप्त होता है। वह सभी (चित्त–) मलोंका नाश कर, निर्वाण-सम्पत्तिको प्राप्त कर, सभी दुःखों से मुक्त होता है। यही उसकी सर्व-सम्पत्ति होती है।]

भिक्षुओ, ये आठ दानके फल स्वरूप ग्रहण किये जाने वाले जन्म (= उपपत्तियाँ) हैं। कौनसे आठ? भिक्षुओ, एक आदमी श्रमण या ब्राह्मणको अन्न, पान, वस्त्र, यान (= सवारी), माला-गन्ध-विलेप, शयनासन तथा प्रदीप जलानेकी सामग्री दान देता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके लिये मिलनेकी प्रत्याशा करता है। वह देखता है कि महान् ऐश्वर्य वाले क्षत्रिय, ब्राह्मण तथा गृहपति पाँचों इन्द्रियोंके भोगोंसे युक्त हैं, समन्वित हैं, सेव्य हैं। उसके मनमें होता है—क्या अच्छा हो यदि मैं शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर महान् ऐश्वर्य वाले क्षत्रिय, ब्राह्मण तथा गृहपतियोंकी संगतिमें जन्म ग्रहण करूँ! वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है, वैसा दृढ़ संकल्प करता है, वैसी भावना करता है। क्योंकि वह उस चित्तसे निचले दर्जेकी ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नहीं करता, उसकी वहीं उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर ऐश्वर्य-शाली क्षत्रियों, ब्राह्मणों वा गृहपतियोंकी संगतिमें उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, यह मैं शीलवान की

उत्पत्तिकी ही बात करता हूँ, दुश्शील की नहीं। भिक्षुओ, विशुद्ध भाव होनेसे शील-वान्‌के चित्त-संकल्प पूरे होते हैं।

भिक्षुओ, एक आदमी श्रमणका या ब्राह्मणको अन्न, पान, वस्त्र, यान (=सवारी), माला-गन्ध-विलेप; शयनासन तथा प्रदीप-जलानेकी सामग्री का दान करता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके मिलनेकी प्रत्याशा करता है। उसने सुना होता है कि 'चातुर्महाराजिक देवता दीर्घजीवी होते हैं, सुवर्ण होते हैं तथा सुख-बहुल होते हैं।' उसके मनमें होता है—क्या अच्छा हो यदि मैं शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओंकी संगतिमें जन्मग्रहण करूँ। वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है, वैसा दृढ़ संकल्प करता है, वैसी भावना करता है। क्योंकि वह उस चित्तसे निचले दर्जेकी ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नहीं करता, उसकी वहीं उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओंकी संगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, मैं शीलवान्‌की ही उत्पत्ति की बात करता हूँ, दुश्शीलकी नहीं। भिक्षुओ, विशुद्ध भाव होनेसे शीलवान् के चित्त संकल्प पूरे होते हैं।

भिक्षुओ, एक आदमी श्रमण वा ब्राह्मणको अन्न, पान, वस्त्र, यान (=सवारी) माला–गन्ध–विलेप, शय्यासन, प्रदीप जलानेकी सामग्रीका दान करता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके मिलनेकी प्रत्याशा करता है। उसने सुना होता है——त्रयोत्रिंश देवता. . . .याम देवता. . . .तुषित देवता . . . . निर्माणरति देवता . . . . परनिर्मित वशवर्ती देवता दीर्घायु होते हैं, सुवर्ण होते हैं तथा सुख-बहुल होते हैं। उसके मनमें होता है—क्या अच्छा हो यदि मैं शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओंकी संगतिमें जन्म ग्रहण करूँ! वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है, वैसा ही दृढ़ संकल्प करता है, वैसी ही भावना करता है। क्योंकि वह इस चित्तसे निचले दर्जेकी ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नहीं करता, उसकी वहीं उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओंकी संगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, मैं शीलवान् की ही उत्पत्ति की बात कहता हूँ, दुश्शील की नहीं। भिक्षुओ, विशुद्ध-भाव होनेसे शीलवान् के चित्त संकल्प पूरे होते हैं।

भिक्षुओ, एक आदमी श्रमण वा ब्राह्मण को अन्न, पान, वस्त्र, यान (=सवारी), माला–गन्ध–विलेप, शय्यासन, प्रदीप जलानेकी सामग्रीका दान करता है। वह जो कुछ दान देता है, उसके मिलनेकी प्रत्याशा करता है। उसने सुना होता

है कि ब्रह्मकायिक देवता दीर्घायु होते हैं, सुवर्ण होते हैं, तथा सुख-बहुल होते हैं, उसके मनमें होता है क्या अच्छा हो, यदि मैं शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर ब्रह्मकायिक देवताओंकी संगति में जन्म ग्रहण करूँ! वह इस प्रकारके चित्तको धारण करता है। वैसा ही दृढ़ संकल्प करता है, वैसी ही भावना करता है। क्योंकि वह इस चित्तसे निचले दर्जेकी की ही भावना करता है, ऊँचे दर्जेकी भावना नहीं करता, उसकी वहीं उत्पत्ति हो जाती है। वह शरीरके छूटने पर, मरनेके अनन्तर ब्रह्मकायिक देवताओं की संगतिमें जन्म ग्रहण करता है। मैं शीलवान्‌की ही उत्पत्ति की बात कहता हूँ, दुश्शील की नहीं; राग-मुक्त व्यक्तिकी उत्पत्ति की ही बात करता हूँ, राग-युक्त की नहीं। भिक्षुओ, ये आठ दानके फलस्वरूप ग्रहण किये जानेवाले जन्म (= उपपत्तियाँ) हैं।

भिक्षुओ, ये तीन पुण्य-क्रियायें हैं। कौनसी तीन? दानमय पुण्य-क्रिया, शीलमय पुण्य-क्रिया, भावनामय (= योगाभ्यास) पुण्य-क्रिया।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया थोड़ी-सी होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया थोड़ीसी होती है और भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नहीं होती है वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर मानवीय दुर्भाग्य (= नीच योनि) को प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया न थोड़ी न बहुत (= मात्रामें) होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया न थोड़ी न बहुत (= मात्रामें) होती है, और भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नहीं होती है। शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर मानवीय सौभाग्य (= सम्पत्ति सहित योनि) को प्राप्त होता है।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावना पुण्य-क्रिया सिद्ध नहीं होती है। वह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओंकी संगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, चारों महाराजा विशेष मात्रामें दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके चातुर्महाराजिक देवताओंमें दस विषयोंमें विशेषता प्राप्त करते हैं—दिव्य आयुके विषयमें, दिव्य वर्णके विषयमें, दिव्य सुखके विषयमें, दिव्य यश (= ऐश्वर्य) के विषयमें, दिव्य आधिपत्यके विषयमें, दिव्य रूपोंके विषयमें, दिव्य शब्दोंके विषयमें, दिव्य गन्धोंके विषयमें, दिव्य रसोंके विषयमें तथा दिव्य स्पर्शोंके विषयमें।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नहीं होती है। वह शरीर छूटने पर मरनेके अनन्तर त्रयोत्रिंश देवताओंकी संगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, देवेन्द्र शक्र विशेष मात्रामें दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके त्रयोत्रिंश देवताओंमें दस विषयोंमें ज्येष्ठता प्राप्त करता है--दिव्य आयुके विषयमें. . . . . . .दिव्य स्पर्शोंके विषयमें।

भिक्षुओ, एक आदमी की दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावनामय पुण्य क्रिया सिद्ध नहीं होती है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर याम देवताओंकी संगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, सुयाम देवपुत्र विशेष मात्रामें दानमय पुण्य-क्रिया करके विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके, याम देवताओंमें दस विषयोंमें ज्येष्ठता प्राप्त करता है--दिव्य आयुके विषयमें. . .दिव्य स्पर्शोंके विषयमें।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावनामय-क्रिया सिद्ध नहीं होती है। वह शरीरके छूटनेपर, मरनेके अनन्तर तुषित देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, संतुषित देवपुत्र विशेष मात्रामें दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके तुषित देवताओंके दस विषयोंमें ज्येष्ठता प्राप्त करता है—दिव्य आयुके विषयमें. . . . .दिव्य स्पर्शोंके विषयमें।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावनामय पुण्य-क्रिया सिद्ध नहीं होती है। वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर निर्माणरति देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न होता है। भिक्षुओ, सुनिर्मित देवपुत्र विशेष मात्रामें दानमय-पुण्य-क्रिया करके विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके निर्माणरति देवताओंमें दस विषयोंमें ज्येष्ठता प्राप्त करता है--दिव्य आयुके विषयमें. . . .दिव्य स्पर्शोंके विषयमें।

भिक्षुओ, एक आदमीकी दानमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, शीलमय पुण्य-क्रिया अधिक मात्रामें होती है, उसकी भावनामय पुण्यक्रिया सिद्ध नहीं होती है। वह शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओं की संगतिमें जन्म ग्रहण करता है। भिक्षुओ, वशवर्ती देवपुत्रने विशेष मात्रामें दानमय पुण्य-क्रिया करके, विशेष मात्रामें शीलमय पुण्य-क्रिया करके परनिर्मित वशवर्ती

देवताओंमें दस विषयोंमें ज्येष्ठता प्राप्त की है—दिव्य आयुके विषयमें, दिव्य वर्णके विषयमें, दिव्य सुखके विषयमें, दिव्य यश (= ऐश्वर्य) के विषयमें, दिव्य आधिपत्यके विषयमें, दिव्य रूपोंके विषयमें, दिव्य शब्दोंके विषयमें, दिव्य गन्धोंके विषयमें, दिव्य रसोंके विषयमें तथा दिव्य स्पर्शोंके विषयमें। भिक्षुओ, ये तीन पुण्य-क्रियायें हैं।

भिक्षुओ, ये आठ सत्पुरुष-दान हैं। कौनसे आठ? पवित्र (वस्तु) का दान करता है, बढ़िया (= प्रणीत) चीज का दान करता है, समय पर देता है; देने योग्य वस्तुका दान करता है, विचारपूर्वक दान देता है, सतत दान देता है, दान देते समय प्रमुदित होता है तथा दान दे चुकने पर प्रसन्न होता है।

सुचिं पणीतं कालेन, कप्पियं पानभोजनं।
अभिण्हं ददाति दानं, सुखेत्तेसु ब्रह्मचारिसु॥
नेव विप्पटिसारिस्स, चजित्वा आमिसं बहुं।
एवं दिन्नानि दानानि, वण्णयन्ति विपस्सिनो॥
एवं यजित्वा मेधावी, सद्धो मुत्तेन चेतसा।
अब्यापज्झं सुखं लोकं, पण्डितो उपपज्जति॥

[जो दान (खाद्य-पेय) पवित्र होते हैं, प्रणीत होते हैं, समयोचित होते हैं, योग्य होते हैं, सतत दिये जाते हैं, अधिकारी ब्रह्मचारियोंको दिये जाते हैं, जिनका बहुत मात्रामें त्याग करने पर भी दाता के मनमें पश्चात्ताप नहीं होता—ऐसे दिये गये दानोंकी पण्डित जन प्रशंसा करते हैं।]

जो मेधावी पुरुष मुक्त चित्तसे, श्रद्धापूर्वक इस प्रकार दान देता है, वह पण्डित व्यापाद-रहित सुख-लोकमें जन्म ग्रहण करता है।

भिक्षुओ, यदि किसी कुलमें सत्पुरुष जन्म ग्रहण करता है, तो वह बहुत जनोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है—माता-पिताके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, स्त्री-बच्चे के अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, दास कमकर लोगोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, मित्र-अमात्योंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, पूर्व-प्रेतों (= मृत व्यक्तियों) के अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, राजाके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, देवताओंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है तथा श्रमण-ब्राह्मणोंके अर्थ, हित तथा सुख के लिये होता है।

भिक्षुओ, जैसे महामेघ सभी खेतियोंकी उत्पत्तिका कारण होनेसे बहुत लोगोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है; भिक्षुओ, इसी

प्रकार किसी कुल में जो सत्पुरुष जन्म ग्रहण करता है, वह बहुत लोगोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है—माता-पिताके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, स्त्री-बच्चेके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, दास-कमकर लोगोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, मित्र-अमात्योंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, पूर्व-प्रेतों (= मृत व्यक्तियों) के अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, देव राजाके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है, व देवताओंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है तथा श्रमण-ब्राह्मणोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है।

बहूनं वत अत्थाय, सप्पञ्ञो घरमावसं।
मातरं पितरं पुब्बे, रत्तिन्दिवमतन्दितो॥
पूजेति सहधम्मेन, पुब्बेकतमनुस्सरं।
अनागारे पब्बजिते, अपचे ब्रह्मचारयो॥
निविट्ठसद्धो पूजेति, ञत्वा धम्मे च पेसलो।
रञ्ञो हितो देवहितो, ञातीनं सखिनं हितो॥
सब्बेसं सो हितो होति, सद्धम्मे सुप्पतिट्ठितो।
विनेय्य मच्छेरमलं, स लोकं भजते सिवं॥

[जो प्रज्ञावान् होता है, वह घरमें रहता हुआ बहुतोंके अर्थ, हित तथा सुखके लिये होता है; वह माता (पिता) तथा पूर्व पितरोंके प्रति आलस्य रहित हो दिन-रात अपने कर्तव्यका पालन करता है। वह उनके पूर्व उपकारोंका स्मरण कर उनको धर्मानुसार पूजता है। वह अनागारिक प्रव्रजितों ब्रह्मचारियोंका भी आदर करता है। वह धर्मके विषयमें प्रज्ञावान् जान कर श्रद्धायुक्त मनसे पूजा करता है। वह राजाओंका, देवताओंका, ज्ञाति-बन्धुओंका हित करने वाला होता है। वह सबका हित करने वाला होता है और सद्धर्ममें सुप्रतिष्ठित होता है। वह मात्सर्य-मलको त्यागकर शिव-लोक (= कल्याण पद) को प्राप्त होता है।]

भिक्षुओ, ये आठ पुण्योंके मूल हैं, कुशल (= शुभ) कर्मों के मूल हैं, सुखप्रद हैं, स्वर्ग ले जाने वाले हैं, सुखी बनाने वाले हैं, सुगति देने वाले हैं। अच्छाईके लिये, अनुकूलताके लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये हैं। कौनसे आठ? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक बुद्धकी शरण ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह पहला पुण्योंका मूल है, कुशल (= शुभ) कर्मोंका मूल है, सुखप्रद है, स्वर्ग ले जाने वाला है, सुखी

बनाने वाला है, सुगति देने वाला है, अच्छाई के लिये, अनुकूलता के लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये है।

भिक्षुओ, फिर आर्य-श्रावक धर्मकी शरण ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह दूसरे पुण्योंका मूल है, कुशल (= शुभ) कर्मोंका मूल है...सुखके लिये है।

भिक्षुओ, फिर आर्य-श्रावक संघकी शरण ग्रहण करता है। भिक्षुओ, यह तीसरे पुण्योंका मूल है.....सुखके लिये है।

भिक्षुओ, ये पाँच दान हैं, महादान हैं, अग्र हैं, चिरकालसे ज्ञात हैं, श्रेष्ठ वंशोत्पन्न हैं, पुराने हैं, असंकीर्ण हैं, असंकीर्ण-पूर्व है, न संकीर्ण होते हैं, न संकीर्ण होंगे तथा विज्ञ श्रमण ब्राह्मणों द्वारा अनिन्दित हैं। कौनसे पाँच? भिक्षुओ, आर्य श्रावक प्राणी हिंसाको छोड़, प्राणी-हिंसासे विरत हो विचरता है। भिक्षुओ, जो आर्य-श्रावक प्राणी हिंसासे विरत होता है, वह अगणित प्राणियोंको अभय-दान देता है, अवैर-दान देता है, तथा अक्रोध-दान देता है। अगणित प्राणियोंको अभय, अवैर तथा अक्रोधका दान कर वह अनन्त अभय, अवैर तथा अक्रोधका भागी होता है। भिक्षुओ, यह चौथा महादान है, जो अग्र है, चिरकालसे ज्ञात है, श्रेष्ठ वंशोत्पन्न है, पुराना है, असंकीर्ण है, असंकीर्ण-पूर्व है, न संकीर्ण होता है, न संकीर्ण होगा, तथा विज्ञ-श्रमण-ब्राह्मणों द्वारा अनिन्दित है। भिक्षुओ, चौथा यह पुण्योंका मूल है, कुशल (-कर्मों) का मूल है, सुखप्रद है, स्वर्ग ले जाने वाला है, सुखी बनाने वाला है, सुगति देने वाला है, अच्छाईके लिये, अनुकूलताके लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये है।

फिर भिक्षुओ, आर्य-श्रावक चोरी करना छोड़ चोरी करनेसे विरत रहता है....काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचारको छोड़ कामभोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहता है....झूठ बोलना छोड़ झूठ बोलनेसे विरत रहता है, सुरा मेरय आदि नशीली चीजें छोड़ सुरा-मेरय आदिसे विरत हो विचरता है। भिक्षुओ, जो आर्य-श्रावक सुरा मेरय आदि नशीली चीजोंसे विरत रहता है, वह अगणित प्राणियोंको अभय दान देता है, अवैर-दान देता है, तथा अक्रोध-दान देता है। अगणित प्राणियोंको अभय, अवैर तथा अक्रोधका दान कर वह अनन्त अभय, अवैर तथा अक्रोधका भागी होता है। भिक्षुओ, यह पाँचवाँ महादान है, जो अग्र है, जो चिरकालसे ज्ञात है, श्रेष्ठ वंशोत्पन्न है, पुराना है, असंकीर्ण है, असंकीर्ण-पूर्व है, न संकीर्ण होता है, न संकीर्ण होगा तथा विज्ञ श्रमण-ब्राह्मणों द्वारा अनिन्दित है। भिक्षुओं, यह आठवाँ पुण्योंका मूल है, कुशल (कर्मों) का मूल है, सुखप्रद है, स्वर्ग ले जाने वाला है, सुखी बनाने

वाला है, सुगति देने वाला है, अच्छाई के लिये, अनुकूलताके लिये, भलाईके लिये, हितके लिये तथा सुखके लिये है।

भिक्षुओ, जो प्राणी-हिंसा करता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। प्राणी-हिंसाका जो कमसे कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें अल्पायु होना।

भिक्षुओ, जो चोरी करता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म-ग्रहण करता है, अथवा प्रेत बनता है। चोरी करनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें भोग्य-पदार्थों की हानि।

भिक्षुओ, जो काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचार करता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। काम भोग सम्बन्धी मिथ्याचार करनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनि विरोधियोंका वैर।

भिक्षुओ, जो झूठ बोलता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्मग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। झूठ बोलनेका जो कम से कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें झूठा दोषारोपण।

भिक्षुओ, जो चुगली खाता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। चुगली खानेका जो कम से कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें झूठा दोषारोपण।

भिक्षुओ, जो कठोर है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। कठोर बोलनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें अप्रिय वाणी सुननेको मिलना।

भिक्षुओ, जो बेकार बोलता है, उसका अभ्यस्त होता है, उसको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु-योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। बेकार बोलनेका जो कम से कम दुष्परिणाम है, वह है मनुष्य-योनिमें अनादर-युक्त वाणी सुननेको मिलना।

भिक्षुओ, जो सुरा मेरय आदि नशीले पदार्थोंका सेवन करता है, उनका अभ्यस्त होता है, उनको अधिक बढ़ाता है, वह या तो नरकमें पैदा होता है, या पशु योनिमें जन्म ग्रहण करता है अथवा प्रेत बनता है। सुरा मेरय आदि पीनेका जो कम-से-कम दुष्परिणाम है वह है मनुष्य-योनिमें पागलपन।

५. उपोसथ वर्ग

ऐसा मैंने सुना। एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनारामसें विहार करते थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया।

—"भिक्षुओ!"

उन भिक्षुओंने भगवान् को प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवानने कहा—

"भिक्षुओ! आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार करनेवाला होता है। भिक्षुओ, आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना कैसे महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है, तथा महान् विस्तार वाला होता है? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत-गण जीवन भर प्राणी हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाले होकर विचरते हैं। मैं भी आजके रात-दिन प्राणी-हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरण करूँ। इस तरह से मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतों का अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अंगसे युक्त होता है।

'अर्हत-गण जीवन भर चोरी करना छोड़, चोरी करनेसे विरत रह, दियेको ही लेने वाले, दिये की ही आकांक्षा करने वाले होकर पवित्र जीवन व्यतीत करते हैं। मैं भी आजके रात दिन चोरी करना छोड़, चोरी करनेसे विरत रह, दियेको ही लेने वाला हो., दियेकी ही आकांक्षा करने वाला होकर पवित्र जीवन व्यतीत करूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रन पालन होगा। इस प्रकार वह दूसरे अंग से युक्त होता है।

'अर्हत-गण जीवनपर अब्रह्मचर्य छोड़, ग्राम्य मैथुन-धर्मसे विरत हो, ब्रह्मचारी रहते हैं। मैं भी आजके रात दिन अब्रह्मचर्य छोड़, ग्राम्य मैथुन धर्मसे विरत हो, ब्रह्मचारी बन कर रहूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन

करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रतका पालन होगा। इस प्रकार वह तीसरे अंगसे युक्त होता है।

'अर्हत-गण जीवनभर मृषावाद छोड़, मृषावाद (=झूठ बोलने) से विरत रह, सत्यवादी हो, सत्य कथन करने वाले हो, यथार्थवादी हो, विश्वसनीय हो तथा लोकमें अपना वचन पूरा करने वाले होकर रहते हैं। मैं भी आजके रात-दिन मृषा-वाद छोड़, मृषावाद (=झूठ बोलने) से विरत रह, सत्यवादी हो, सत्य कथन करने वाला हो, यथार्थवादी हो, विश्वसनीय हो तथा लोकमें अपना वचन पूरा करने वाला होकर रहूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह चौथे अंगसे युक्त होता है।

'अर्हत गण जीवनभर सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओंका व्यवहार छोड़ सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत रहते हैं। मैं भी आजके रात दिन सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओंका व्यवहार छोड़, सुरा मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत रहूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पाँचवें अंगसे युक्त होता है।

'अर्हत गण जीवन भर एक बार भोजन करने वाले, रात्रि-भोजन न ग्रहण करने वाले, रात्रि-भोजन से विरत रहते हैं। मैं भी आजके रात दिन एक बार भोजन करने वाला, रात्रि-भोजन न ग्रहण करने वाला, रात्रि-भोजनसे विरत होकर रहूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह छठे अंगसे युक्त होता है।

'अर्हत गण जीवन भर नृत्य-गाना-बजाना-तमाशा देखना, माला गन्ध-विलेपन धारण करना तथा बनाव-सिंगारको छोड़, नृत्य-गाने–बजाने–तमाशा देखने माला गन्ध–विलेपन धारण करने तथा बनाव-सिंगारसे विरत हो रहते हैं। मैं भी आजके रात-दिन नृत्य–गाना–बजाना, तमाशा देखना, माला गन्ध–विलेपन धारण करना तथा बनाव–सिंगारको छोड़, नृत्य, गाने–बजाने, तमाशा देखने, माला–गन्ध –विलेपन धारण करनेसे तथा बनाव सिंगार करनेसे विरत रहूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह सातवें अंगसे युक्त होता है।

अर्हत गण जीवन भर ऊँचे महान् शयनासनको छोड़, ऊँचे महान शयनासन से विरत हो नीचे शयनासनका सेवन करते हैं—चारपाईका या फूसके बिछौनेका। मैं भी आजके रात दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड़, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत

हो नीचे शयनासनका सेवन करूँ—चारपाईका या फूसके बिछौनेका। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवें अंगसे युक्त होता है। भिक्षुओ, आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना इस प्रकार महान् फल-दायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है।

भिक्षुओ, आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है। भिक्षुओ, आठ अंगों वाले उपोसथ–व्रतका पालन करना कैसे महान् फल-दायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है? भिक्षुओ, आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत्‌गण जीवन भर प्राणी हिंसाका त्यागकर प्राणी हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करनेवाले होकर विचरते हैं। मैं भी आजके रात दिन प्राणी-हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरण करूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ–व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अंगसे युक्त होता है। . . . . अर्हत गण जीवन भर ऊँचे महान् शयनासनको छोड़, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासन का सेवन करते हैं—चारपाई या फूस के बिछौनेका। मैं भी आजकी रात-दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड़, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासन का सेवन करूँ—चारपाई या फूसके बिछौनेका इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ-व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवें अंगसे युक्त होता है। भिक्षुओ, आठ अंगोंवाले उपोसथ–व्रतका पालन करना इस प्रकार महान फलदायी होता है, महान् शुभ-परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है।

यह कितना महान् फलदायी होता है, कितना महान् द्युतिकारक होता है तथा कितना महान् विस्तार वाला होता है?

भिक्षुओ, जैसे कोई प्रभूत सात रत्नों वाले सोलह जनपदोंका—अंग, मगध, काशी, कोशल, वज्जी, मल्ल, चेदि, वंग, कुरु, पंचाल, मत्स्य, शूरसेन, अस्सक, अवन्ती, गन्धार तथा कम्बोजका—आधिपत्य, राज्य करे तो यह आठ

अंग वाले उपोसथ-व्रत-पालनके (फलके) सोलहवें हिस्सेके बराबर भी नहीं होता। यह किस लिये?

भिक्षुओ, दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।

भिक्षुओ, मनुष्य-जीवनके पचास वर्षोंके बराबर चातुर्महाराजिक देवताओं-का एक रात-दिन होता है। उन तीस रातोंका महीना होता है। उन महीनोंसे बारह महीनोंका संवत्सर। उन वर्षोंसे पाँच सौ वर्ष चातुर्महाराजिक देवताओंकी आयु-गुणना। भिक्षुओ, इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगों-वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसी लिये यह कहा गया कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है'।

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके सौ वर्ष, त्रयोत्रिंश देवताओंका एक रात-दिन। उन तीस रातोंका एक महीना। उन बारह महीनोंका संवत्सर (वर्ष)। उन वर्षोंसे एक हजार वर्ष त्रयोत्रिंश देवताओंकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर त्रयोत्रिंश देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसी लिये यह कहा गया कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके दो सौ वर्ष, याम देवताओंका एक रात-दिन। उन तीस रातोंका एक महीना। उन बारह महीनोंका वर्ष। उन वर्षोंसे दो हजार वर्ष याम देवताओंकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटनेपर मरनेके अनन्तर याम देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसीलिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोक के सुख की तुलनामें मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके चार सौ वर्ष, तुषित देवताओंका एक रात-दिन। उन तीस रातोंका एक महीना। उन बारह महीनोंका वर्ष। उन वर्षोंसे चार हजार वर्ष तुषित देवताओंकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर मरनेके अनन्तर तुषित देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसीलिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोक के सुखकी तुलनामें मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य जीवनके आठ सौ वर्ष, निर्माण-रति देवताओंका एक रात-दिन। उन तीस रातोंका एक महीना, उन बारह महीनोंका एक वर्ष। उन वर्षोंसे

आठ हजार वर्ष निर्माण-रति देवताओंकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर निर्माण-रति देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसीलिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।'

भिक्षुओ, मनुष्य-जीवनके सोलह सौ वर्ष, परनिर्मित-वशवर्ती देवताओंका एक रात दिन, उन तीस रातोंका एक महीना। उन बारह महीनोंका एक वर्ष। उन वर्षोंसे सोलह हजार वर्ष परनिर्मित-वशवर्ती देवताओंकी आयु-गणना। भिक्षुओ, इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरु आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। भिक्षुओ, इसी लिये यह कहा गया कि 'दिव्य लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है'।

पाणं न हञ्ञे न चदिन्नमादिये।
मुसा न भासे न च मज्जपो सिया।
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना,
रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं॥

मालं न धारे न च गन्धमाचरे,
मञ्चे छमायं व सयेथ सन्थते।
एतं हि अट्ठंगिकमाहुपोसथं,
बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासितं॥

चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना
ओभासयं अनुपरियन्ति यावता।
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा,
नभे पभासन्ति दिसाविरोचना॥

एतस्मिं यं विज्जति अन्तरे धनं,
मुत्ता मणि वेळुरियं च भद्दकं।
सिंगी सुवण्णं अथ वा पि कञ्चनं,
यं जातरूपं हटकं ति वुच्चति॥

अट्ठंगुपेतस्स उपोसथस्स
कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे।।

तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा,
अट्ठंगुपेतं उपवस्सुपोसथं।
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि,
अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं' ति।।

[प्राणी-हिंसा न करे, चोरी न करे, झूठ न बोले, शराब न पिये, अब्रह्मचर्य अथवा मैथुन-कर्मसे विरत हो, रातको विकाल भोजन न करे, माला-धारण न करे, सुगन्धियोंका लेप न करे, (नीची) चारपाईका (फूसकें) आस्तरण पर सोये—इस आठ अंग वाले उपोसथके दुःखका अन्त करने वाले बुद्धने देशना की है।

चन्द्रमा तथा सूर्य दोनों सुदर्शन हैं। अन्धकारको नष्ट करने वाले, अन्तरिक्षमें भ्रमण करने वाले, प्रकाशपुंज, आकाश-स्थित ये जितने प्रदेशको प्रकाशित करते हैं, उस प्रदेशमें जितना भी धन है, जितने भी मोती, माणिक्य तथा श्रेष्ठ बिल्लौर हैं; जितना भी शृंगी-स्वर्ण है, जितना भी कांचन है, जितना भी जात-रूप है, जितना भी हाटक (= सोना) है—ये सब तथा चन्द्रप्रभा और सभी तारागण आठ अंग वाले उपोसथ-व्रतके पालनके सोलहवें हिस्सेके भी बराबर नहीं हैं।

इसलिये शीलवान् स्त्रियाँ तथा पुरुष आठ अंगवाले उपोसथ व्रतका पालन कर, सुखके कारण पुण्य-कर्म कर, अतिदिव्य हो स्वर्गको प्राप्त होते हैं।]

एक समय भगवान श्रावस्तीके मिगार माताके प्रासाद पूर्वाराममें विहार करते थे। तब विशाखा मिगारमाता भगवानके पास गई। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठी। एक ओर बैठी हुई विशाखा मिगार माताको भगवानने यह कहा—

"विशाखे! आठ अंगोंवाले उपोसथ व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तारवाला होता है। विशाखे! आठ अंगोंवाले उपोसथ-व्रतका पालन करना कैसे महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है! विशाखे! आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत्गण जीवन भर प्राणी-हिंसाका त्याग कर,

प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र त्यागी, लज्जायुक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरते हैं। मैं भी आज के रात-दिन प्राणी-हिंसाका त्यागकर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरूँ। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अंगसे युक्त होता है।. . . .अर्हत् जन जीवन भर ऊँचे महान् शयनास को छोड़ ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासनका सेवन करते हैं—चारपाईका या फूसके बिछौनेका। मैं भी आजके रात-दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड़ ऊँचे महान् शयनासन से विरत हो नीचे शयनासन का सेवन करूँ—चारपाईका या फूस के बिछौनेका। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवें अंगसे युक्त होता है। विशाखे! आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना, इस प्रकार महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है।

यह कितना महान् फलदायी होता है, कितना महान् शुभ परिणाम वाला होता है, कितना महान् द्युतिकारक होता है तथा कितना महान् विस्तार वाला होता है।

विशाखे! जैसे कोई प्रभूत सात रत्नों वाले सोलह जन पदोंका—अंग, मगध, काशी, कोशल, वज्जी, मल्ल, चेती, वंग, कुरु, पञ्चाल, मत्स्य, शरसेन, अस्सक, अवन्ती, गन्धार तथा कम्बोजका—आधिपत्य करे, राज्य करे; तो यह आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रत पालनेके (फलके) सोलहवें हिस्सेके बराबर भी नहीं होता। यह किस लिए? विशाखे! दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।

विशाखे! मनुष्य जीवनके पचास वर्षोंके बराबर चातुर्महाराजिक देवताओंका एक रात-दिन होता है। उन तीस रातोंका महीना होता है। उन महीनोंसे बारह महीनोंका संवत्सर। उन वर्षोंसे पाँच सौ वर्ष चातुर्महाराजिक देवताओंकी आयु-गणना। विशाखे! इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन कर; शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। विशाखे! इसी लिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी-राज्य तुच्छ है'।

विशाखे! मनुष्य जीवनके सौ वर्ष, त्रयोत्रिंश देवताओंका एक रात-दिन। उन तीस रातोंका एक महीना। उन बारह महीनोंका एक वर्ष। उन वर्षोंसे एक

हजार वर्ष त्रयोत्रिंश देवताओंकी आयु-गणना। विशाखे! इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगोंवाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर त्रयोत्रिंश देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। विशाखे! इसी लिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।'

विशाखे! मनुष्य जीवनके दो सौ वर्ष.....चार सौ वर्ष......आठ सौ वर्ष.....सोलह सौ वर्ष परनिर्मित वशवर्ती देवताओंका एक रात-दिन। उन तीस रातोंका एक महीना। उन बारह महीनोंका एक वर्ष। उन वर्षोंसे सोलह हजार वर्ष परनिर्मित वशवर्ती देवताओंकी आयु-गणना। विशाखे! इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगोंवाले उपोसथ-व्रतका पालन कर, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। विशाखे! इसी लिए यह कहा गया है कि 'दिव्यलोकके सुखकी तुलनामें मानुषी-राज्य तुच्छ है।'

पाणं न हञ्ञे, न चदिन्नमादिये।
मुसा न भासे न च मज्जपो सिया।
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना,
रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं॥

"मालं न धारे न च गन्धमाचरे,
मञ्चे छमायं व सयेथ सन्थते।
एतं हि अठ्ठंगिकमाहुपोसथं,
बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासितं॥

" चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना,
ओभासयं अनुपरियन्ति यावता।
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा,
नभे पभासन्ति दिसाविरोचना॥

एतस्मिं यं विज्जति अन्तरे धनं,
मुत्ता मणि वेळुरियं च भद्दकं।
सिंगी सुवण्णं अथ वा पि कंचनं,
यं जातरूपं हटकं ति वुच्चति॥

अठ्ठंगुपेतस्स उपोसथस्स
कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे।।

तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा,
अट्ठंगुपेतं उपवस्सुपोसथं।
पुञ्ञानि करवान सुखुद्रयानि,
अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं।।

[अर्थ ऊपर आ ही गया है—अनु.]

एक समय भगवान् वैशालीके महावनके कूटागारमें विहार करते थे। तब वासेट्ठ उपासक जहाँ भगवान थे वहाँ आया। पास आकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे वासेट्ठ उपासकको भगवानने यह कहा—"वासेट्ठ! आठ अंगोंवाले उपोसथ व्रत का पालन करना. . . .अनिन्दित हो स्वर्ग को प्राप्त होते हैं।"

ऐसा कहे जाने पर वासेट्ठ उपासक ने भगवानसे यह कहा—भन्ते! मेरे प्रिय सगे-सम्बन्धी यदि इस आठ अंगोंवाले उपोसथ-व्रतका पालन करें तो यह दीर्घ काल तक मेरे सम्बन्धियोंके हित, सुखके लिये हो। भन्ते! यदि सभी क्षत्रिय इस आठ अंगों वाले उपोसथ व्रतका पालन करें तो यह दीर्घकाल तक उनके हित, सुखके लिये हो। भन्ते! यदि सभी ब्राह्मण. . . . यदि सभी वैश्य. . . . . शूद्र आठ अंगों वाले उपोसक व्रतका पालन करें तो यह दीर्घ काल तक उनके हित सुखके लिये हो।"

"वासेट्ठ! यह ऐसा ही है। वासेट्ठ! यह ऐसा ही है। वासेट्ठ! यदि क्षत्रिय इस आठ अंगों वाले उपोसथ व्रतका पालन करें तो यह दीर्घकाल तक उनके हित, सुखके लिये हो। वासेट्ठ! यदि सभी ब्राह्मण. . . .यदि सभी वैश्य. . . .शूद्र आठ अंगों वाले उपोसथ व्रतका पालन करें तो यह दीर्व काल तक उनके हित, सुखके लिए हो। वासेट्ठ! यदि सदेव, समार, सब्रह्मलोक तथा श्रमण-ब्राह्मणों और देव मनुष्योंसे युक्त यह जनता भी इस आठ अंगों वाले उपोसथ व्रतका पालन करे तो यह दीर्घकाल तक सदेव, समार, सब्रह्मलोक तथा श्रमण-ब्राह्मणों और देव-मनुष्योंसे युक्त इस जनताके हित सुखके लिए हो। वासेट्ठ! यदि ये महान् ऐश्वर्य शाली भी आठ अंगोंवाले उपोसथ व्रतका पालन करें तो यह दीर्घ कालतक इन महान् ऐश्वर्यशालियोंके हित-सुखके लिये हो। यदि इनकी ऐसी स्थिति है तो (सामान्य) मनुष्योंका क्या कहना!

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें अनाथपिण्डिकके जेतवनाराममें विहार करते थे। तब बोज्झा उपासिका जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँची। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठी। एक ओर बैठी बोज्झा उपासिकाको भगवान्ने यह कहा—

"बोज्झे! आठ अंगोवाले उपोसथ व्रतका पालन करना महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तार वाला होता है। बोज्झे! आठ अंगोंवाले उपोसथ-व्रतका पालन करना कैसे महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तारवाला होता है? बोज्झे! आर्य-श्रावक सोचता है—अर्हत-गण जीवन भर प्राणी-हिंसाका त्याग कर, प्राणी हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाले होकर विचरते हैं। मैं भी आजके रात-दिन प्राणी-हिंसाका त्याग कर, प्राणी-हिंसासे विरत हो, दण्ड-त्यागी, शस्त्र-त्यागी, लज्जा-युक्त, दयालु, सभी प्राणियोंके प्रति अनुकम्पा करने वाला होकर विचरूँ। इस तरहसे मैं इतना मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह पहले अंगसे युक्त होता है।. . . .

. . . . . अर्हत्-गण जीवन भर ऊँचे महान् शयनासनको छोड़, ऊँचे महान् शयनासन से विरत हो, नीचे शयनासनका सेवन करते हैं—चारपाईका या फूसके बिछौनेका। मैं भी आजके रात-दिन ऊँचे महान् शयनासनको छोड़, ऊँचे महान् शयनासनसे विरत हो, नीचे शयनासनका सेवन करूँ—चारपाई या फूसके बिछौनेका। इस तरहसे मैं इतनी मात्रामें ही अर्हतोंका अनुगमन करूँगा और मेरा उपोसथ व्रत पालन होगा। इस प्रकार वह आठवें अंगसे युक्त होता है। बोज्झे! आठ अंगों वाले उपोसथ-व्रतका पालन करना, इस प्रकार महान् फलदायी होता है, महान् शुभ परिणाम वाला होता है, महान् द्युतिकारक होता है तथा महान् विस्तारवाला होता है।

यह कितना महान् फलदायी होता है, कितना महान् शुभ परिणाम वाला होता है, कितना महान् द्युतिकारक होता है तथा कितना महान् विस्तार वाला होता है?

बोज्झे! जैसे कोई प्रभूत सात रत्नोंवाले सोलह जनपदोंका—अंग, मगध, काशी, कोशल, वज्जी, मल्ल, चेती, वंग, कुरु, पञ्चाल, मत्स्य, शूरसेन, अस्सक, अवन्ती, गन्धार तथा कम्बोजका—आधिपत्य करे, राज्य करे; तो यह आठ अंगोंवाले उपोसथ व्रत पालनेके (फलके) सोलहवें हिस्सेके बराबर भी नहीं होता। यह किस लिए? बोज्झे! दिव्य-लोकके सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।

बोज्झे ! मनुष्य जीवनके पचास वर्षोंके बराबर चातुर्महाराजिक देवताओं का एक रात-दिन होता है। उन तीस रातोंका एक महीना होता है। उन महीनोंसे बारह महीनोंका संवत्सर। उन वर्षोंसे पाँच सौ वर्ष चातुर्महाराजिक देवताओंकी आयु-गणना। बोज्झे ! इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठों अंगोंवाले उपोसथ-व्रतका पालन करे; शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर चातुर्महाराजिक देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। बोज्झे ! इसीलिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोक के सुखकी तुलनामें मानुषी-राज्य तुच्छ हैं।'

बोज्झे ! मनुष्य जीवनके सौ वर्ष....दो सौ वर्ष....चार सौ वर्ष.... आठ सौ वर्ष.....सोलह सौ वर्ष परनिर्मित वशवर्ती देवताओंका एक रात-दिन। उन तीस रातोंका एक महीना। उन बारह महीनोंका एक वर्ष। उन वर्षोंसे सोलह हजार वर्ष परनिर्मित वशवर्ती देवताओंकी आयु-गणना। बोज्झे ! इसकी गुंजायश है कि यहाँ कोई स्त्री या पुरुष आठ अंगोंवाले उपोसथ-व्रतका पालन कर; शरीर छूटने पर, मरनेके अनन्तर परनिर्मित वशवर्ती देवताओंकी संगतिमें उत्पन्न हो। बोज्झे ! इसीलिए यह कहा गया है कि 'दिव्य-लोकके के सुखकी तुलनामें मानुषी राज्य तुच्छ है।'

पाणं न हञ्ञे न चदिन्नमादिये।
मुसा न भासे, न च मज्जपो सिया
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना,
रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं।।

मालं न धारे न च गन्धमाचरे,
मञ्चे छमायं व सयेथ सन्थते।
एतं हि अट्ठंगिकमाहुपोसथं,
बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासितं।।

चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना,
ओभासयं अनुपरियन्ति यावता।
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा,
नभे पभासन्ति दिसाविरोचना।।

एतस्मि यं विज्जति अन्तरे धनं,
मुत्ता मणि वेळुरियं च भद्दकं।
सिंगी सुवण्णं अथ वा पि कञ्चनं,
यं जातरूपं हटकं ति वुच्चति॥

अट्ठंगुपेतस्स उपोसथस्स
कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे॥

तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा,
अट्ठंगुपेतं उपवस्सुपोसथं।
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि,
अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं॥

[अर्थ ऊपर आ ही गया है:— अनु०]

एक समय भगवान् कोसम्बीके घोसितारामर्में विहार करते थे। उस समय आयुष्मान् अनुरुद्ध दिनमें विहारके भीतर ध्यानारूढ़ अवस्थामें विराजमान थे। तब बहुतसी मनापकायिका देवियाँ जहाँ आयुष्मान अनुरुद्ध थे, वहाँ उपस्थित हुईं। पास जाकर आयुष्मान् अनुरुद्धको अभिवादन कर एक ओर खड़ी हुई। एक ओर खड़ी होकर उन देवियोंने आयुष्मान् अनुरुद्धको यह कहा—'भन्ते! हम मनापकायिका देवियाँ हैं। हम तीन विषयोंमें सामर्थ्यवान हैं। भन्ते अनुरुद्ध! हम जब जैसा चाहें तुरन्त वैसा स्वरूप (= वर्ण) बना सकती हैं; जब जैसा चाहें तुरन्त वैसा स्वर निकाल सकती हैं; जब जैसा चाहें तुरन्त वैसा सुख प्राप्त कर सकती हैं। भन्ते! अनुरुद्ध हम मनापकायिका देवियाँ इन तीन विषयोंमें सामर्थ्यवान हैं।"

तब आयुष्मान् अनुरुद्धके मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—'ये सभी देवियाँ नीले वर्णकी, नीले वस्त्रों वाली तथा नीले अलंकारों वाली हो जाएँ।" वे देवियाँ आयुष्माद् अनुरुद्धका विचार जान, सभी नील वर्णकी, नीले वस्त्रों वाली तथा नीले अलंकारों वाली हो गईं।

तब आयुष्मान अनुरुद्धके मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—"अरे! ये सब देवियाँ पीत-वर्ण हो जाएँ.....सभी रक्त-वर्ण हो जायें....सभी श्वेत-वर्ण

श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत अलंकारों वाली हो जाएँ।" वे देवियाँ आयुष्मान् अनुरुद्धका विचार जान, सभी श्वेत-वर्ण, श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत अलंकारों वाली हो गईं।

तब उन देवियोंमेंसे एक ने गाया, एकने नाचा तथा एकने अप्सराओंकी तरह बजाया। जैसे पंचंग तुझ्रि-वादनका—जो सुविनीत हो, जो सुप्रतिपालित हो, और जो कुशल वादकों द्वारा बजाया गया हो—शब्द सुंदर होता है, मनोरम होता है, मनोरञ्जन करनेवाला होता है, वांछनीय होता है, प्रेम उत्पन्न करनेवाला होता है तथा उन्मत्त करने वाला होता है, वैसा ही उन देवियोंके अलंकारोंका शब्द था—सुन्दर, मनोरमं, मनोरञ्जन करनेवाला, वांछनीय, प्रेम उत्पन्न करनेवाला तथा उन्मत्त कर देनेवाला। उस समय आयुष्मान् अनरुद्धने अपनी इन्द्रियों (= आँखों) को झुका लिया।

तब यह देख कि 'यह मजा नहीं ले रहा है,' वे देवियाँ वहींसे अन्तर्धान हो. गईं।

तब आयुष्मान् अरुद्ध शामके समय योगाभ्याससे उठ जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को नमस्कार कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे हुए आयुष्मान् अनुरुद्धने भगवान्को यह कहा—

"भन्ते ! मैं दिनके समय विहारके भीतर योगाभ्यासमें तल्लीन था। भन्ते ! तब बहुतसी मनापकायिका देवियाँ जहाँ मैं था, वहाँ आयीं। पास आकर, मुझे प्रणाम कर एक ओर बैठ गईं। एक ओर खड़ी रह कर भन्ते ! उन देवियोंने मुझे यह कहा 'भन्ते ! अनरुद्ध हम मनापकायिका देवियाँ हैं। हम तीन विषयोंमें सामर्थ्यवान हैं। भन्ते अनुरुद्ध, हम जब जैसा चाहें, तुरन्त वैसा स्वरूप बना सकती हैं, जब जैसा चाहें तुरन्त वैसा स्वर निकाल सकती हैं, जब जैसा चाहें, तुरन्त वैसा सुख प्राप्त कर सकती हैं। भन्ते अनुरुद्ध ! हम मनापकायिका देवियाँ इन तीन विषयोंमें सामर्थ्यवान् हैं।"

तब भन्ते ! मेरे मनमें यह हुआ—अरे ! ये सब देवियाँ नीलवर्ण, नीलवस्त्र तथा नीलालंकार वाली हो जायें। भन्ते ! तब मेरे चित्तकी बात जानकर वे सभी देवियाँ नीलवर्ण, नीलवस्त्र तथा नीले अलंकारों वाली हो गईं।

भन्ते। तब मेरे मनमें यह हुआ—अरे ! यह सब देवियाँ पीत-वर्ण, पीत-वस्त्र तथा पीले अलंकारोंकी हो जाएँ.....सभी लाल-वर्णकी हो जाएँ....सभी श्वेत-वर्ण, श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत-अलंकारोंकी हो जाएँ। भन्ते।तब मेरे चित्तकी बात जानकर वे सभी देवियाँ श्वेत-वर्ण, श्वेत-वस्त्र तथा श्वेत अलंकारों वाली हो गईं।

भन्ते! उन देवियोंमें से एकने गाया, एक नाची तथा एकने अप्सराओंकी तरह बजाया। जैसे पंचंग तुरिय-वादनका—जो सुविनीत हो, जो सुप्रतिपालित हो और जो कुशल वादकों द्वारा बजाया गया हो—शब्द सुन्दर होता है, मनोरम होता है, मनोरंजन करनेवाला होता है, वांछनीय होता है, प्रेम उत्पन्न करनेवाला होता है तथा उन्मत्त कर देनेवाला होता है, वैसा ही उन देवियोंके अलंकारोंका शब्द था—सुन्दर, मनोरम, मनोरंजन करनेवाला, वांछनीय, प्रेम उत्पन्न करनेवाला तथा उन्मत्त कर देनेवाला। उस समय भन्ते! मैंने अपनी इन्द्रियों (= आँखों) को झुका लिया।

तब भन्ते यह देख कि 'आर्य अनुरुद्ध कुछ मजा नहीं ले रहे हैं,' वे देवियाँ वहीं अन्तर्धान हो गईं।

"भन्ते! किसी स्त्रीमें कौन-कौनसे गुण होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती है।"

"अनुरुद्ध! स्त्रीमें आठ बातें होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती है। कौन-सी आठ बातें?

"अनुरुद्ध! अपना कल्याण चाहनेवाले, अपना हित चाहनेवाले, अपनेपर दया करनेवाले माता-पिता दया करके जिस किसी स्वामीको भी सौंप दें, वह उससे पहले (सोकर) उठनेवाली होती हैं, उसके बाद सोने जानेवाली होती हैं, आज्ञा-कारिणी होती हैं, अनुकूल बरतनेवाली होती हैं तथा प्रियभाषिणी होती हैं।

"जो पतिके गौरव-भाजन होते हैं—माता, पिता या श्रमण-ब्राह्मण—वह उनका आदर करती है, सत्कार करती है, गौरव करती है, मानती है, पूजती है और अतिथियोंका आसन तथा जलसे सत्कार करती है।

"जो स्वामीके भीतरके काम—चाहे ऊनका काम हो, चाहे कपासका काम हो—होते हैं, उनमें वह दक्ष होती है, आलस्य-रहित होती है, उनके विषयमें उपाय-कुशल होती हैं, उन्हें करने-करानेमें समर्थ।

"जो स्वामीके घरके आदमी होते हैं—दास, नौकर, चाकर—उनके कृत-अकृत को जाननेवाली होती है, रोगियोंका बलाबल जाननेवाली होती है तथा उन्हें जो कुछ खाना-पीना देना होता है वह यथायोग्य बाँट कर देती है।

"जो कुछ धन, धान्य या सोना स्वामी कमाकर लाता है उसे सुरक्षित रखती है, उसको लेकर धूर्त नहीं होती, चोरी करनेवाली नहीं होती, शराब पीनेवाली नहीं होती, उसे नष्ट करनेवाली नहीं होती।

"उसने बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण ग्रहण की होती है, वह उपासिका होती है।

"वह प्राणी-हिंसासे विरत रहनेवाली, चोरीसे विरत रहनेवाली, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहनेवाली, मृषावादसे विरत रहनेवाली तथा सुरा, मेरय आदि नशीली चीजोंसे विरत रहनेवाली—सदाचारिणी होती है।

"वह त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृह-वास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान-देनेवाली।

"अनुरुद्ध ! इन आठ बातोंके होनेसे स्त्री, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती है।

यो नं भरति सब्बदा, निच्चं आतापि उस्सुको।
तं सब्बकामदं पोसं, भत्तारं नातिमञ्ञति॥
न चा पि सोत्थि भत्तारं, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेति पण्डिता॥
उट्ठाहिका अनलसा, संगहितपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
या एवं वत्तति नारी, भत्तु छन्द वसानुगा।
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जति॥

[जो स्वामी प्रयत्नपूर्वक, उत्सुकतापूर्वक उसका हर समय भरण-पोषण करता है, उस सभी कामनाओंकी पूर्ति करनेवाले अपनी पतिकी वह अवहेलना नहीं करती। अपने कल्याणकी इच्छुक वह ईर्ष्या करके अपने पतिको क्रुद्ध नहीं करती है। वह पण्डिता, जितने लोग भी स्वामीके गौरव-भाजन होते हैं, उनकी पूजा करती है। वह (पहले सोकर) उठनेवाली होती है, वह आलस्य-रहित होती है, वह परिजनोंका संग्रह करनेवाली होती है, वह स्वामीके मनोनुकूल आचरण करती है, वह कमाये हुए धनकी रक्षा करती है। जो नारी इस प्रकार पतिकी इच्छाके अनुसार बरतनेवाली होती है, वह 'मनापकायिका देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती है।]

एक समय भगवान् श्रावस्तीके मिगारमाताके प्रासाद पूर्वाराममें विहार करते थे। तब विशाखा मिगारमाता........एक ओर बैठी विशाखा मिगारमाताको भगवानने यह कहा—

"विशाखे ! स्त्रीमें आठ बातें होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती है। कौन-सी आठ बातें ?

"विशाखे! अपना कल्याण चाहनेवाले, अपना हित चाहनेवाले, अपनेपर दया करनेवाले माता-पिता दया करके जिस किसी स्वामीको भी सौंप दें, वह उससे पहले (सोकर) उठनेवाली होती है, उसके बाद सोनेवाली होती है, आज्ञाकारिणी होती है, अनुकूल बरतनेवाली होती हैं तथा प्रिय भाषिणी होती है।......

"विशाखे! वह त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृह-वास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान देनेवाली।

"विशाखे! इन आठ बातोंके होनेसे स्त्री शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती हैं।

यो नं भरति सब्बदा, निच्चं आतापि उस्सुको,
तं सब्बकामदं पोसं, भत्तारं नातिमञ्ञति ॥
न चा पि सोत्थि भत्तारं, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेतिपण्डिता ॥
उट्ठाहिका अनलसा, संगहित परिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति ॥
या एवं वत्तति नारी, भत्तु छन्दवसानुगा
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जति।

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

एक समय भगवान भग्गमें सुंसुमार गिरिके भेसकळावन नामके मृगदायमें विहार करते थे। तब नकुल माता गृहपत्नी जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँची, पहुँचकर ....एक ओर बैठी नकुलमाता गृहपत्नीको भगवानने यह कहा—

"नकुलमाते! स्त्रीमें आठ बातें होनेसे वह शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती है। कौन-सी आठ बातें होनेसे?

"नकुलमाते! अपना कल्याण चाहनेवाले, अपना हित चाहनेवाले, अपने पर दया करनेवाले माता पिता दया करके, जिस किसी स्वामीको भी सौंप दें, वह उससे पहले सोकर उठनेवाली, उसके बाद सोने जानेवाली होती है, आज्ञाकारिणी होती है, अनुकूल बरतनेवाली होती है तथा प्रियभाषिणी होती है।

"जो पतिके गौरव-भाजन होते हैं—माता-पिता वा श्रमण-ब्राह्मण—वह उनका आदर करती है, सत्कार करती है, गौरव करती है, मानती है, पूजती है और अतिथियोंका आसन तथा जलसे सत्कार करती है।

"जो स्वामीके भीतरके काम—चाहे ऊनका काम हो, चाहे कपासका काम हो—होते हैं, उनमें वह दक्ष होती है, आलस्य-रहित होती है, उनके विषयमें उपाय-कुशल होती है, उन्हें करने-करानेमें समर्थ।

"जो स्वामीके घरके आदमी होते हैं—दास, नौकर-चाकर—उनके कृत-अकृतको जाननेवाली होती है, रोगियोंका बलाबल जाननेवाली होती है तथा उन्हें जो कुछ खाना-पीना देना होता है वह यथायोग्य बाँट कर देती है।

"जो कुछ धन, धान्य या सोना स्वामी कमाकर लाता है, उसे सुरक्षित रखती है, उसको लेकर धूर्त नहीं होती, चोरी करनेवाली नहीं होती, शराब पीनेवाली नहीं होती, उसे नष्ट करनेवाली नहीं होती।

"उसने बुद्ध, धर्म तथा संघकी शरण ग्रहण की होती है, वह उपासिका होती है।

"वह प्राणी-हिंसासे विरत रहनेवाली, चोरीसे विरत रहनेवाली, काम-भोग सम्बन्धी मिथ्याचारसे विरत रहनेवाली, मृषावादसे विरत रहनेवाली तथा सुरा-मेरय आदि नशीली चीजोंसे विरत रहनेवाली—सदाचारिणी होती है।

"वह त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृहवास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान देनेवाली।

नकुलमाते! इन आठ बातोंके होनेसे स्त्री, शरीर छूटनेपर, मरनेके अनन्तर 'मनापकायी देवियों' की संगतिमें उत्पन्न होती है।"

यो नं भरति सब्बदा, निच्चं आतापि उस्सुको।
तं सब्बकामदं पोसं, भत्तारं नातिमञ्ञति॥
न चा पि सोत्थि भत्तारं, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेति पण्डिता॥
उट्ठाहिका अनलसा, संगहितपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
या एवं वत्तति नारी, भत्तु छन्दवसानुगा।
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जति॥

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

एक समय भगवान् श्रावस्तीमें मिगारमाताके प्रासाद पूर्वाराममें विहार करते थे। तब विशाखा मिगारमाता जहाँ भगवान थे, वहाँ गई।.......एक ओर बैठी हुई विशाखा मिगारमाताको भगवानने यह कहा—

"विशाखे ! जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती हैं, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ़ होती है और वह इस लोकको प्रसन्न किया होता है। कौन-सी चार बातें ? विशाखे, स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है, अपने परिजनोंका संग्रह करनेवाली होती है, स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है तथा कमाए हुए की रक्षा करनेवाली होती है।

विशाखे ! स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक कैसे होती है ? जो स्वामीके भीतरके काम—चाहे ऊनका काम हो, चाहे कपासका काम हो—होते हैं, उनमें वह दक्ष होती है, आलस्य-रहित होती है, उनके विषयमें उपाय-कुशल होती है, उन्हें करने-करानेमें समर्थ। विशाखे ! इस प्रकार स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है।

विशाखे ! स्त्री अपने परिजनोंका संग्रह करनेवाली कैसे होती है ? विशाखे ! जो स्वामीके घरके आदमी होते हैं—दास, नौकर-चाकर —वह उनके कृत-अकृतको जाननेवाली होती है तथा उन्हें जो कुछ खाना-पीना देना होता है, वह यथायोग्य बाँट कर देती है। विशाखे ! स्त्री इस प्रकार अपने परिजनोंका संग्रह करनेवाली होती है।

विशाखे ! स्त्री कैसे स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है ? विशाखे ! जो कुछ पतिकी इच्छाके प्रतिकूल होता है उसे स्त्री अपनी जान बचाने तकके लिए भी नहीं करती है। विशाखे ! स्त्री इस प्रकार स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है।

विशाखे ! स्त्री कैसे कमाये हुए की रक्षा करनेवाली होती है ? विशाखे ! जो कुछ धन, धान्य या सोना स्वामी कमाकर लाता है, उसे सुरक्षित रखती है, उसको लेकर धूर्त नहीं होती, चोरी करनेवाली नहीं होती, शराब पीनेवाली नहीं होती, उसे नष्ट करनेवाली नहीं होती। विशाखे ! स्त्री इस प्रकार कमाए हुएकी रक्षा करनेवाली होती है। विशाखे ! जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती हैं, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ़ होती है औंर उसने इस लोकको प्रसन्न किए होता है।

विशाखे ! जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती है, वह परलोक-विजयके मार्गपर आरूढ़ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है। कौन-सी चार बातें ?

विशाखे ! स्त्री श्रद्धा-सम्पन्न होती है, शील-सम्पन्न होती है, त्याग-सम्पन्न होती है तथा प्रज्ञा-सम्पन्न होती है।

विशाखे ! स्त्री श्रद्धा-सम्पन्न कैसे होती है ? विशाखे ! श्रद्धावान होती है, तथागत की बोधिके प्रति श्रद्धायुक्त होती है—वे भगवान अर्हत हैं, सम्यक् संबुद्ध

हैं, विद्या तथा आचरणसे युक्त हैं, सुगत हैं, लोक-विदु हैं, अनुपम हैं, (दुष्ट) पुरुषोंका दमन करनेवाले सारथी हैं, देवताओं तथा मनुष्योंके शास्ता हैं, बुद्ध भगवान हैं। विशाखे! स्त्री इस प्रकार श्रद्धा-सम्पन्न होती है।

विशाखे! स्त्री शील-सम्पन्न कैसे होती है? विशाखे! स्त्री प्राणी-हिंसासे विरत होती है.......सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत होती है। विशाखे! स्त्री इस प्रकार शील-सम्पन्न होती है।

विशाखे! स्त्री त्याग-सम्पन्न कैसे होती है? विशाखे! स्त्री त्याग-शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृहवास करती है, मुक्त-हस्त, खुले-हाथ, त्याग करनेवाली, परित्याग करनेवाली तथा दान देनेवाली। विशाखे! इस प्रकार स्त्री त्याग-सम्पन्न होती है।

विशाखे! स्त्री प्रज्ञा सम्पन्न कैसे होती है?

विशाखे! स्त्री प्रज्ञा सम्पन्न होती है.......विशाखे! स्त्री इस प्रकार प्रज्ञा सम्पन्न होती है।

विशाखे! जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती हैं, वह परलोक-विजयके मार्ग-पर आरूढ़ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है।

सुसंविहितकम्मन्ता, संगहितपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्मतं अनुरक्खति॥
सद्धा सीलेन सम्पन्ना, वदञ्ञू वीतमच्छरा।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
इच्चेते अट्ठधम्मा च यस्सा विज्जन्ति नारिया।
तंपि सीलवतिं आहु, धम्मट्ठं सच्चवादिनिं॥
सोळसाकार सम्पन्ना, अट्ठंगसुसमागता।
तादिसी सीलवती उपासिका,
उपपज्जति देवलोकं मनापं॥

[जो अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है, जो परिजनोंका संग्रह करनेवाली होती है, जो पतिकी इच्छाके अनुकूल चलती है, जो कमाए हुए की रक्षा करती है, जो श्रद्धायुक्त होती है, जो सदाचारिणी होती है, जो प्रज्ञावान् होती है तथा जो त्यागशील होती है, वह इस प्रकार नित्य परलोक-पथको शुद्ध करती है।

इस प्रकार जिस स्त्रीमें ये आठ बातें हों, वह धर्म-स्थित सत्यवादी नारी शीलवती कहलाती है।

जिस शीलवती उपासिकामें ये सोलह प्रकारके आठ अंगोंवाले गुण होते हैं, वह मनापकायिक देव-लोकमें जन्म ग्रहण करती है।]

"भिक्षुओ, जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती हैं, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ़ होती है और उसने इस लोकको प्रसन्न किए होता है। कौन-सी चार बातें? भिक्षुओं, स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है, अपने परिजनोंका संग्रह-करनेवाली होती है, स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है तथा कमाए हुएकी रक्षा करनेवाली होती है।

भिक्षुओ, स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक कैसे होती है? जो स्वामीके भीतरके काम......समर्थ। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री अपने कर्मान्तकी सम्यक् व्यवस्थापक होती है।

भिक्षुओ, स्त्री अपने परिजनोंका संग्रह करनेवाली कैसे होती है? भिक्षुओ, जो स्वामीके घरके आदमी........देती है। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री अपने परिजनोंका संग्रह करनेवाली होती है।

भिक्षुओ, स्त्री कैसे स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है? भिक्षुओ, जो कुछ पतिकी इच्छाके प्रतिकूल होता है उसे स्त्री अपनी जान बचाने तकके लिए भी नहीं करती है। भिक्षुओ, स्त्री इस प्रकार स्वामीकी इच्छाके अनुकूल आचरण करनेवाली होती है।

भिक्षुओ, स्त्री कैसे कमाये हुए की रक्षा करनेवाली होती है? भिक्षुओ, जो कुछ धन, धान्य.......उसे नष्ट करनेवाली नहीं होती। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री कमाये हुए की रक्षा करनेवाली होती है। भिक्षुओ, जिस स्त्रीमें ये चार बातें रहती हैं, वह इस लोकके मार्गपर आरूढ़ होती है तथा उसने इस लोकको प्रसन्न किए होता है।

भिक्षुओ, जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती हैं, वह परलोक-विजयके मार्गपर आरूढ़ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है। कौन-सी चार बातें? भिक्षुओ, स्त्री श्रद्धा-सम्पन्न होती है, शील-सम्पन्न होती है, त्याग-सम्पन्न होती है तथा प्रज्ञा-सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, स्त्री श्रद्धा सम्पन्न कैसे होती है? भिक्षुओ, स्त्री श्रद्धावान् होती है.....बुद्ध भगवान् हैं। भिक्षुओ, स्त्री इस प्रकार श्रद्धा-सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, स्त्री शील-सम्पन्न कैसे होती है? भिक्षुओ, स्त्री प्राणी-हिंसासे विरत होती है.....सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत होती है।

भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री शील-सम्पन्न होती है। भिक्षुओ, स्त्री त्याग-सम्पन्न कैसे होती है? भिक्षुओ, स्त्री त्याग शील होती है, मल-मात्सर्यसे रहित हो गृहत्याग करती है... दान देनेवाली। भिक्षुओ, इस प्रकार स्त्री त्याग-सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, स्त्री प्रज्ञा-सम्पन्न कैसे होती है?

भिक्षुओ! स्त्री प्रज्ञा-सम्पन्न होती है..... भिक्षुओ! स्त्री इस प्रकार प्रज्ञा सम्पन्न होती है।

भिक्षुओ, जिस स्त्रीमें ये चार बातें होती हैं, वह परलोक-विजयके मार्गपर आरूढ़ होती है, उसने परलोक प्रसन्न किए होता है।

सुसंविहितकम्न्मता, संगहितपरिज्जता।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
सद्धासीलेन सम्पन्ना, वदञ्ञू वीतमच्छरा।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
इच्चेते अट्ठधम्मा च, यस्सा विज्जन्ति नारिया।
तं पि सीलवतिं आहु, धम्मट्ठं, सच्चवादिनिं॥
सोळसाकार सम्पन्ना, अट्ठंगसुसमागता।
तादिसी सीलवती उपासिका।
उपपज्जति देवलोकं मनापं॥

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

६. गौतमी वर्ग

एक समय भगवान् शाक्य (जनपद) में कपिलवस्तुके न्यग्रोधाराममें विहार करते थे। तब महाप्रजापती गौतमी जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँची। जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठी। एक ओर खड़ी महाप्रजापती गौतमीने भगवान्से निवेदन किया—

"भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोंको भी भगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना मिले।"

"गौतमी! बस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोंका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

दूसरी बार भी महाप्रजापती गौतमीने भगवान्से निवेदन किया—

"भन्ते। अच्छा हो, यदि स्त्रियोंको भी भगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना मिले।"

"गौतमी! बस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोंका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

तीसरी बार भी महाप्रजापती गौतमीने भगवान्से निवेदन किया—

"भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोंको भी भगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना मिले।"

"गौतमी! बस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोंका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

तब महाप्रजापती गौतमी यह सोच कि भगवान् स्त्रियोंको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नहीं देते, दुखी हो, चित्त-क्लेशको प्राप्त हुई और अश्रुमुख रोती हुई, भगवान्को प्रणाम कर चली गई।

भगवान् कपिलवस्तुमें इच्छाके अनुसार विहार कर वैशाली की ओर चारिका करनेके लिए निकले। क्रमशः चारिका करते-करते वैशाली पहुँचे। उस समय भगवान् वैशालीके महावनमें कूटागराशालामें विहार करते थे।

तब महाप्रजापती गौतमी बाल कटवाकर, काषाय वस्त्र धारण कर, बहुत-सी शाक्य स्त्रियोंको साथ ले वैशाली की ओर चल दी। क्रमशः वैशालीके महावनमें जहाँ कूटागारशाला थी, वहाँ पहुँची। तब वहाँ महाप्रजापती गौतमी सूजे हुए पाँवोंसे, धूल-धूसरित देहसे, दुखी मनसे, अश्रुमुख रोती हुई बरामदेमें बाहर जा खड़ी हुई।

आयुष्मान् आनन्दने देखा कि महाप्रजापती गौतमी सूजे हुए पाँवोंसे, धूल-धूसरित देहसे, दुखी मनसे, अश्रुमुख रोती हुई बरामदेमें बाहर खड़ी है। देखकर महाप्रजापती गौतमीसे पूछा—गौतमी! क्या कारण है कि तू सूजे हुए पाँवोंसे, धूल-धूसरित देहसे, दुखी मनसे, अश्रु-मुख रोती हुई बरामदेमें खड़ी है?"

"भन्ते! भगवान् स्त्रियोंको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नहीं देते।"

गौतमी! तो तू थोड़ी देर यहीं प्रतीक्षा कर। तब तक मैं भगवान्से स्त्रियोंकी ओरसे तथागतके द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी याचना करूँ।"

तब आयुष्मान आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान्को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह निवेदन किया—

"भन्ते! यह महाप्रजापती गौतमी सूजे हुए पाँवोंसे, धूल-धूसरित देहसे,

दुखी मनसे, अश्रुमुख रोती हुई, बरामदेमें खड़ी है। उसका कहना है कि, भगवान् स्त्रियोंको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नहीं देते। भन्ते! अच्छा हो यदि स्त्रियोंको भी तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिले।'

"आनन्द! बस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोंको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

दूसरी बार भी......तीसरी बार भी आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह निवेदन किया—'भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोंको भी तथागत द्वारा उपनिदष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिले।"

"आनन्द! बस। यही अच्छा है कि तुझे स्त्रियोंका तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होना अच्छा न लगे।"

तब आयुष्मान् आनन्दके मनमें आया—भगवान् स्त्रियोंको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा नहीं देते। क्यों न मैं एक दूसरे ढंगसे भी भगवानसे स्त्रियोंकी ओरसे तथागतके द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी याचना करूँ।

तब आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह निवेदन किया—भन्ते! क्या तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार स्त्रियाँ भी, घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित हो स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल अथवा अर्हत्-फल साक्षात् कर सकती हैं?"

"आनन्द! तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार स्त्रियाँ भी, घरसे-बे-घर हो, प्रव्रजित हो, स्रोतापत्ति-फल, सकृदागामि-फल, अनागामि-फल अथवा अर्हत्-फल साक्षात् कर सकती हैं।"

"भन्ते! यदि तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार स्त्रियाँ भी, घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित हो, स्रोतापत्ति-फल......अर्हत्-फल भी साक्षात् कर सकती हैं, तो भन्ते! महाप्रजापती गौतमी बहुत उपकार करनेवाली है, भगवान्की मौसी है, अभिभाविका है, पोषण करनेवाली है, दूध देनेवाली है, भगवान्की जननीके शरीर-त्याग करनेपर उसने भगवान्को स्तन-पान कराया है। भन्ते! अच्छा हो, यदि स्त्रियोंको भी तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित होनेकी, अनुज्ञा मिले।"

"आनन्द! यदि महाप्रजापती गौतमी आठ गम्भीर शर्तें स्वीकार करे, तो यही उसकी उपसम्पदा (=भिक्षु बनानेका संस्कार) हो—

१. चाहे भिक्षुणी सौ वर्षकी भी उपसम्पन्न हो और चाहे भिक्षु उसी दिन उपसम्पन्न हुआ हो, तो भी भिक्षुणीको ही उसका अभिवादन, प्रत्युपस्थान, हाथ-जोड़ना आदि योग्य-कर्म करना होगा। यह (पहली) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

२. ऐसे आवास (=निवास स्थल) में नहीं रहना होगा, जहाँ रहते हुए किसी भिक्षुके पास जाकर धर्म सुन सकनेकी गुंजायश न हो। यह (दूसरी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

३. प्रति आधे-महीनेपर उसे भिक्षु संघसे दो धर्मों (=बातों) की आशा रखनी होगी—उपोसथ-प्रश्नोंकी तथा उपदेश सुननेकी। यह (तीसरी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

४. वर्षा-वास कर चुकनेपर भिक्षुणीको भिक्षु-संघ तथा भिक्षुणी-संघ—दोनों संघोंमें और देखे, सुने तथा संदिग्ध—तीनों प्रकारके दोषोंको लेकर प्रवारणा करनी होगी। यह (चौथी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

५. संघादिसेस नामक गम्भीर अपराध हो जानेपर भिक्षुणीको दोनों संघोंमें पक्ष-भरका मानत्व (=प्रायश्चित्त) करना होगा। यह (पाँचवीं) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

६. दो वर्षा-वास तक विकाल भोजनसे विरत रहनेके सम्बन्धमें छठे शील सहित पाँच-शीलों की सतत अभ्यासिनी भिक्षुणीको दोनों संघोंमें उपसम्पदा ग्रहण करनी होगी। यह (छठी) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

(७) भिक्षुणीको किसी भी स्थितिमें भिक्षुको गाली आदि नहीं देनी होगी। यह (सातवीं) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

८. आजके बादसे भिक्षुणियोंका भिक्षुओंको कुछ कहनेका द्वार बन्द हुआ; किन्तु भिक्षुओंका भिक्षुणियोंको कुछ कहनेका द्वार खुला है। यह (आठवीं) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा।

"आनन्द ! यदि महाप्रजापती गौतमी इन आठ गम्भीर शर्तों (=धर्मों) को स्वीकार करती है, तो यह उस की उपसम्पदा हुई।"

तब भगवानसे इन आठ गम्भीर धर्मोंको जान लेनेके अनन्तर आयुष्मान् आनन्द जहाँ महाप्रजापती गौतमी थी, वहाँ पहुँचे। पास जाकर महाप्रजापती गौतमी से बोले—

"गौतमी ! यदि तू इन आठ गम्भीर धर्मोंको स्वीकार करे तो यह ही तेरी उपसम्पदा होगी चाहे भिक्षुणी सौ वर्षकी भी उपसम्पन्न हो, और चाहे भिक्षु उसी दिन उपसम्पन्न हुआ हो तो भी भिक्षुणीको ही उसका अभिवादन, प्रत्युपस्थान, हाथ जोड़ना आदि योग्य कर्म करना होगा। यह पहली गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा..आज के बादसे भिक्षुणियोंका भिक्षुओंको कुछ कहनेका द्वार बन्द हुआ, किन्तु भिक्षुओंका भिक्षुणियोंको कुछ कहनेका द्वार खुला है। यह (आठवीं) गम्भीर शर्त है जिसे स्वीकार करना होगा, मानना होगा, पूजना होगा और जीवन भर पालन करना होगा। गौतमी ! यदि तू इन आठ गम्भीर-धर्मोंको स्वीकार करे तो यह ही तेरी उपसम्पदा होगी।

"भन्ते आनन्द ! जैसे कोई शौकीन स्त्री या अल्पवयस्क वा तरुण पुरुष सिरसे स्नान करनेके अनन्तर उत्पल-माला, या जूही-माला अथवा मोतियोंकी मालाको दोनों हाथोंसे अंगीकार कर उसे सिर पर धारण करे; उसी प्रकार आनन्द ! मैं इन आठ गम्भीर धर्मोंको स्वीकार करती हूँ—जीवन भर पालन करनेके लिए।

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को अभिवादनकर, एक ओर बैठे। एक ओर बैठै आयुष्मान् आनन्दने भगवान्से यह कहा—"भन्ते ! महाप्रजापती गौतमीने आठों गम्भीर धर्मोंको जीवन भर पालन करनेके लिए अंगीकार कर लिया है।"

"आनन्द ! यदि स्त्रियोंको तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मके अनुसार घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुमति न मिली होती, तो हे आनन्द ! यह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी होता, एक हजार वर्ष तक यह सद्धर्म स्थिर रहता। लेकिन क्योंकि आनन्द ! अब स्त्रियाँ तथागतके द्वारा उपदिष्ट धर्म-विनय (=बुद्ध)-शासन में घरसे बे-घर हो प्रव्रजित हो गईं, तो इसलिए अब यह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी नहीं होगा। अब यह सद्धर्म केवल पाँच सौ वर्ष ही स्थिर रहेगा।

"आनन्द ! जैसे ऐसे कुलोंको—जिनमें पुरुष कम हों और स्त्रियाँ अधिक हों—नष्ट कर डालना चोरोंके लिए, घड़ेमें दीपक जलाकर चोरी करनेवाले कुम्भ चोरों

के लिए सहज होता है, उसी प्रकार जिस प्रकार धर्म-विनय (= धार्मिक)-संगठनमें स्त्रियोंको घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिल जाती है, वह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी नहीं रहता।

"आनन्द ! जैसे किसी लहलहाते धानके खेतको सफैदा नामका रोग लग जाता है, तो वह धानका खेत चिरस्थायी नहीं होता, उसी प्रकार आनन्द ! जिस धर्म-विनयमें स्त्रियोंको घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिल जाती है, वह श्रेष्ठ -जीवन चिरस्थायी नहीं होता।

"आनन्द ! जैसे किसी लहलहाते ईखके खेतको लाल-रोग नामका रोग लग जाता है, तो वह ईखका खेत चिर-स्थायी नहीं होता, उसी प्रकार आनन्द ! जिस धर्म-विनयमें स्त्रियोंको घरसे बे-घर हो, प्रव्रजित होनेकी अनुज्ञा मिल जाती है, वह श्रेष्ठ जीवन चिरस्थायी नहीं होता।

"आनन्द ! जैसे कोई आदमी पानीकी रोकथामके लिए पहलेसे ही किसी बड़े तालाबके गिर्द बाँध बाँध दे, इसी प्रकार आनन्द ! मैंने पहलेसे ही भिक्षुणियोंके द्वारा जीवन भर पालन किए जानेके लिए आठ गम्भीर धर्म (= नियम) बना दिए।

एक समय भगवान वैशालीके महावनकी कूटागार शालामें विहार करते थे। तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवानको प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्को यह कहा— "भन्ते ! कितने गुण होनेपर किसी भिक्षुको भिक्षुणियोंको उपदेश देनेकी जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए।"

"आनन्द ! किसी भिक्षुमें आठ गुण होनेपर भिक्षुणियोंको उपदेश देनेकी जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए। कौनसे आठ? आनन्द, भिक्षु शीलवान होता है. . . . शिक्षापदोंको सम्यक् प्रकासे सीखनेवाला; बहुश्रुत होता है. . . . (सम्यक्) दृष्टिसे युक्त; उसे भिक्षु प्रातिमोक्ष तथा भिक्षुणी प्रातिमोक्ष दोनों सम्यक् रीतिसे ज्ञात होते हैं, सूत्र तथा व्यञ्जन की दृष्टिसे भली प्रकार विभक्त भली प्रकार सुप्रवर्तित, भली प्रकार सुविनिश्चित कल्याणी-वाणी बोलनेवाला होता है, हितकर वाणी बोलने वाला; विश्वस्त, स्पष्ट, अर्थ-बोधक मधुर वाणीसे युक्त; भिक्षुणी संघको धार्मिक चर्चा द्वारा विषय स्पष्ट करनेकी, धर्माचरणमें प्रेरित करनेकी, उत्साहित करनेकी, प्रमुदित करनेकी सामर्थ्य रखता है, बहुत करके भिक्षुणियोंका प्रिय होता है, उन्हे अच्छा लगनेवाला; जिसने भगवान्के उपदेशके अनुसार प्रव्रज्या ग्रहण की हो, ऐसी किसी काषाय वस्त्रधारिणीके शरीर-स्पर्शसे मुक्त रहा हो, उसे उपसम्पन्न हुए बीस वर्ष वा

बीस वर्षसे अधिक हो गए हों। आनन्द ! जिस किसी भिक्षुमें ये आठ गुण हों उस पर भिक्षुणियोंको उपदेश देनेकी जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए।

एक समय भगवान् वैशालीके महावनकी कूटागार शालामें विहार करते थे। तब महाप्रजापती गौतमी जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँची। पास जाकर भगवान् को अभिवादन कर एक ओर खड़ी हुई। एक ओर खड़ी हुई महाप्रजापती गौतमीने भगवान्से निवेदन किया—

"भन्ते भगवान् ! अच्छा हो आप संक्षेपमें मुझे ऐसे धर्मका उपदेश करें, जिसे सुनकर मैं एकान्तसेवी हो, अप्रमादी रह, प्रयत्न करती हुई विहार करूँ।"

"गौतमी ! जिन धर्मों (= बातों) को तू जाने कि ये रागको बढ़ानेवाली हैं, वैराग्यको नहीं; ये संसारसे संयोग बढ़ानेवाले हैं, वि-संयोग बढ़ानेवाले नहीं! ; महेच्छता के लिए हैं, अल्पेच्छताके लिए नहीं; असन्तोष बढ़ानेवाली हैं, सन्तोष बढ़ानेवाली नहीं, भीड़ बढ़ानेवाली हैं, एकान्त जीवन नहीं; आलस्य बढ़ानेवाली हैं, अप्रमाद नहीं; जीवन-यापन दूभर बनानीवाली हैं, सुभर नहीं—तो हे गौतमी ! तू यह निश्चत रूपसे समझ ले कि ये बातें धर्म नहीं हैं, विनय नहीं हैं, शास्ता (= बुद्ध) का अनुशासन नहीं हैं।

"गौतमी ! जिन धर्मों (= बातों) को जाने कि ये वैराग्य को बढ़ाने वाली हैं, रागको नहीं; ये (संसारसे) विसंयोग बढ़ाने वाली हैं, संयोग नहीं; ये (संसारका) संग्रह घटानेवाली हैं, बढ़ाने वाली नहीं ; अल्पेच्छताके लिये हैं, महेच्छताके लिये नहीं ; सन्तोष बढ़ाने वाली हैं, असन्तोष बढ़ानेवाली नहीं ; एकान्त-जीवन बढ़ाने वाली हैं, भीड़ बढ़ाने वाली नहीं ; अप्रमाद बढ़ाने वाली हैं, आलस्य बढ़ाने वाली नहीं, जीवन-यापन सुभर बनानेवाली हैं, दूभर नहीं; तो हे गौतमी ! तू यह निश्चित रूप से समझ ले कि ये बातें धर्म हैं, विनय हैं, शास्ता (= बुद्ध) का अनुशासन हैं।

एक समय भगवान कोळिय (प्रदेश) में कक्करपत्त नामक कोळिय-निगममें विहार करते थे। तब कोळिय-पुत्र दीर्घजाणु जहाँ भगवान् थे, वहाँ गया। पास जाकर, अभिवादन कर, एक ओर बैठा। एक ओर बैठे हुए कोळिय-पुत्र दीर्घजाणुने भगवान् से निवेदन किया—"भन्ते ! हम गृहस्थ हैं, काम-भोगी हैं, पुत्र (–स्त्री) की बाधाओं सहित (घरमें) रहते हैं, काशीके चन्दनका लेप करते हैं, माला गन्ध-लेपका धारण करते हैं, चाँदी-सोनेको उपयोग में लाते हैं। भन्ते भगवान् ! हमको ऐसे धर्मका उपदेश करें जो हमारे लिए इस लोकमें हितकर हो, सुखकर हो, परलोकमें हितकर हो, सुखकर हो।"

"हे व्याघ्रपाद ! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्रके इहलौकिक हित तथा

इहलौकिक सुखका कारण होते हैं। कौनसे चार? उत्थान-सम्पदा, आरक्षा-सम्पदा, कल्याण-मित्रता तथा सम-जीविता।

व्याघ्रपाद! उत्थान-सम्पदा किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! कोई कुल-पुत्र किसी भी जीविकाके साधनका उपयोग करने वाला हो—चाहे कृषि हो, चाहे वाणिज्य हो, चाहे गो-पालन हो, चाहे धनुर्विद्या हो, चाहे राजकीय चाकरी हो, अथवा कोई शिल्प हो— उसमें वह दक्ष होता है, आलस्य रहित होता है, उसकी मीमांसा करनेमें, उसका उपाय करनेमें संलग्न रहता है, उसे करनेमें, उसका संविधान करनेमें समर्थ होता है। व्याघ्रपाद! यही उत्थान-सम्पदा है।

व्याघ्रपाद! आरक्षा–सम्पदा किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! एक कुल-पुत्रने उत्थान-वीर्यसे, बाहुबलका उपयोग करके, पसीना बहाकर, धर्मानुसार ऐश्वर्यकी प्राप्ति की होती है। वह इसकी सावधानी बरतता है कि उसके ऐश्वर्य को न राजागण छीन कर ले जायें, न चोर चुरा कर ले जायें, न आग जलाये, न पानी बहाए तथा इस पर अप्रिय उत्तराधिकारी भी अधिकार न जमा लें। व्याघ्रपाद! यह आरक्षा सम्पदा है।

व्याघ्रपाद! कल्याण-मित्रता किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! किसी भी गाँव या निगममें कोई कुल-पुत्र रहता है, और उसमें जो गृहपति वा गृहपति-पुत्र ऐसे होते हैं जो चाहे अल्प-वयस्क हों और चाहे अधिक आयुके हों, किन्तु शील-वृद्ध होते हैं—श्रद्धावान्, सदाचारी, त्यागी, प्रज्ञावान्। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बातचीत करता है, चर्चा करता है। जैसे वे श्रद्धावान् होते हैं, उनसे श्रद्धाका पाठ सीखता है. . . . . जैसे वे शीलवान् होते हैं, उनसे शीलका पाठ सीखता है . . . जैसे वे त्यागी होते हैं, उनसे त्यागका पाठ सीखता है. . . . जैसे वे प्रज्ञावान् होते हैं, उनसे प्रज्ञाका पाठ सीखता है। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बातचीत करता है, चर्चा करता है। व्याघ्रपाद! उसे कल्याण-मित्रता कहते हैं।

व्याघ्रपाद! सम-जीविता किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! एक कुल-पुत्र अपनी भोग-सम्पत्तिकी आय और व्ययकी जानकारीके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा-स्तर; ऐसे मेरी आय व्यय से अधिक रहेगी, मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। व्याघ्रपाद! जैसे कोई तुलाधार (=तराजू वाला) या तुलाधारका शिष्य तुला हाथमें पकड़ता है तो जानता है कि इतनी कमी है, या इतनी अधिकता है। इसी प्रकार व्याघ्रपाद! एक कुल-पुत्र अपनी (भोग-सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा-स्तर; ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे

अधिक न होगा। व्याघ्रपाद! यदि यह कुल-पुत्र अल्पायु होता हुआ भी जीवनका स्तर ऊँचा रखता है, तो लोग उस के बारेमें कहते हैं कि यह कुल-पुत्र गूलर खानेके समान ऐश्वर्यका भोग करता है अर्थात् खानेसे भी अधिक बिखेरता है। व्याघ्र-पाद! यदि यह कुल-पुत्र अधिक आय वाला होता हुआ भी जीवनका स्तर बहुत नीचा रखता है, तो लोग उसके बारेमें कहते हैं कि यह अनाथ-मरण मरनेवाला है। लेकिन व्याघ्रपाद! जब एक कुल-पुत्र अपनी भोग (—सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा-स्तर, न बहुत नीचा-स्तर। ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। व्याघ्रपाद! इसे सम-जीविता कहते हैं।

व्याघ्रपाद! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके जाने (=नाश) के चार रास्ते हैं—रण्डीबाज होना, शराबी होना, जुआरी होना, कुसंगतिमें रहना। जैसे किसी बड़े तालाबमें पानी आनेके चार रास्ते हों और चार पानी जानेके रास्ते हों। कोई आदमी पानी आनेके रास्तोंको बन्द कर दे, किन्तु पानी जानेके रास्तोंको खोल दे और वर्षा भली प्रकार न हो; तो हे व्याघ्रपाद! उस बड़े तालाबकी हानि की ही उम्मीद रखनी चाहिए, वृद्धिकी नहीं। इसी तरह व्याघ्रपाद! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके जाने (=नाश) के चार रास्ते हैं—रण्डीबाज होना, शराबी होना, जुआरी होना, कुसंगतिमें रहना।

व्याघ्रपाद! इसी प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके आगमनके चार रास्ते हैं—रण्डीबाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी संगतिमें रहना। व्याघ्र-पाद! जैसे किसी बड़े तालाबमें चार पानी आनेके रास्ते हों और चार पानी जानेके रास्ते हों। कोई आदमी पानी जानेके रास्तेको बन्द कर दे, पानी आनेके रास्तेको खोल दे, और वर्षा भली प्रकार हो तो हे व्याघ्रपाद! उसे बड़े तालाबकी वृद्धि की ही उम्मीद रखनी चाहिए, हानि की नहीं। इसी तरह व्याघ्रपाद! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके आगमनके चार रास्ते हैं—रण्डीबाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी संगतिमें रहना। हे व्याघ्रपाद! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्रके इहलौकिक हित तथा इहलौकिक सुखके लिए होते हैं।

व्याघ्रपाद! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्रके चार पारलौकिक हित तथा पारलौकिक सुखके लिए होते हैं। कौनसे चार? श्रद्धा-सम्पदा, शील-सम्पदा., त्याग-सम्पदा तथा प्रज्ञा-सम्पदा। व्याघ्रपाद! श्रद्धा-सम्पदा किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! कुल-पुत्र श्रद्धावान् होता है, वह तथागत की बोधि (=ज्ञान प्राप्ति) के प्रति श्रद्धावान् होता

है–'वे भगवान् अर्हत् हैं.....देव-मनुष्योंके सारथी बुद्ध भगवान् हैं। व्याघ्रपाद! इसे श्रद्धा-सम्पदा कहते हैं।

"व्याघ्रपाद! शील-सम्पदा किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! कुल-पुत्र प्राणी-हिंसासे विरत होता है.....सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत होता है। व्याघ्रपाद! इसे शील-सम्पदा कहते हैं।

"व्याघ्रपाद! त्याग-सम्पदा किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! कुल-पुत्र मल-मात्सर्य रहित चित्तसे गृह-वास करता है, त्यागी, खुले हाथ वाला, दानशील, याचकको देनेवाला, बाँटनेवाला। व्याघ्रपाद। इसे त्याग-सम्पदा कहते हैं।

"व्याघ्रपाद! प्रज्ञा-सम्पदा किसे कहते हैं? व्याघ्रपाद! कुल-पुत्र प्रज्ञावान् होता है, उदयास्त सम्बन्धी, आर्य, बींधनेवाली, सम्यक् रूपसे दुःखका क्षय करानेवाली प्रज्ञा से युक्त होता है। व्याघ्रपाद! यह प्रज्ञा-सम्पदा है। व्याघ्रपाद! ये चारों धर्म कुल-पुत्रके पारलौकिक हित तथा पारलौकिक सुखका कारण होते हैं।

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।
समं कप्पेति जीविकं, सम्भतं अनुरक्खति॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्परायसुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढति॥

[काम करनेमें उत्साहयुक्त, अप्रमादी व्यवस्थापक, सम-जीवन व्यतीत करनेवाला तथा अर्जित सम्पत्ति का अनुरक्षण करनेवाला। श्रद्धावान्, सदाचारी, प्रज्ञावान् तथा त्यागी होकर वह नित्य पारलौकिक मार्गको विशुद्ध करता है। इस प्रकार तथागत द्वारा, घरमें रहनेवाले श्रद्धावान् व्यक्तिके इहलौकिक तथा पारलौकिक सुखके लिए आठ धर्म बताये गये हैं। इस प्रकार गृहस्थोंका त्याग उनकी पुण्य-बुद्धि का कारण होता है।]

तब उज्जय ब्राह्मण भगवान्के पास पहुँचा। पास जाकर भगवान्का कुशल-क्षेम पूछा, कुशल क्षेमका वार्तालाप समाप्त हो जाने पर एक ओर बैठा। एक ओर बैठे उज्जय ब्राह्मणने भगवान्को यह कहा—भन्ते! हम प्रवास पर निकलना

चाहते हैं। आप भगवान् गौतम हमें ऐसे धर्मोंका उपदेश दें जो हमारे इहलौकिक हित-सुख तथा पारलौकिक हित-सुखके लिये हों।"

"हे ब्राह्मण! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्र के इहलौकिक हित-सुखके लिये होते हैं। कौनसे चार? उत्थान-सम्पदा, आरक्षा-सम्पदा, कल्याण-मित्रता तथा सम-जीविता। ब्राह्मण! उत्थान-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! कोई कुल-पुत्र किसी भी जीविकाके साधनका उपयोग करनेवाला हो—चाहे कृषि हो, चाहे वाणिज्य हो, चाहे गोपालन हो, चाहे धनुर्विद्या हो, चाहे राजकीय चाकरी हो, अथवा कोई शिल्प हो—उसमें वह दक्ष होता है, आलस्य रहित होता है, ; उसकी मीमांसा करनेमें, उसका उपाय करनेमें संलग्न होता है, उसे करनेमें, उसका संविधान करनेमें समर्थ होता है। ब्राह्मण! यही उत्थान-सम्पदा है।

ब्राह्मण! आरक्षा-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! एक कुल-पुत्रने उत्थान-वीर्यसे बाहुबलका उपयोग करके, पसीना बहाकर, धर्मानुसार ऐश्वर्यकी प्राप्ति की होती है। वह इसकी सावधानी बरतता है कि उसके ऐश्वर्यको न राजागण छीनकर ले जायें, न चोर चुराकर ले जायें, न आग जलाये, न पानी बहाये तथा उस पर अप्रिय उत्तराधिकारी भी अधिकार न जमा लें। ब्राह्मण! यह आरक्षा-सम्पदा है।

ब्राह्मण! कल्याण-मित्रता किसे कहते हैं? ब्राह्मण! किसी भी गाँव या निगममें कोई कुल-पुत्र रहता है, और उसमें जो गृहपति या गृहपति-पुत्र ऐसे होते हैं जो चाहे अल्प वयस्क हों और चाहे अधिक आयुके हों, किन्तु शील-वृद्ध होते हैं——श्रद्धावान् सदाचारी, त्यागी, प्रज्ञावान्। वह उनके साथ उठता-बैठता है। बात-चीत करता है, चर्चा करता है। जैसे वे श्रद्धावान् होते हैं उनसे श्रद्धाका पाठ सीखता है. . . . . जैसे वे शीलवान् होते हैं, उनसे शीलका पाठ सीखता है. . . . . जैसे वे त्यागी होते हैं, उनसे त्यागका पाठ सीखता है. . . . . जैसे वे प्रज्ञावान् होते हैं, उनसे प्रज्ञाका पाठ सीखता है। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बातचीत करता है, चर्चा करता है। ब्राह्मण इसे कल्याण-मित्रता कहते हैं।

ब्राह्मण! सम-जीविता किसे कहते हैं? ब्राह्मण! एक कुल-पुत्र अपनी भोग (सम्पत्ति–) की आय और व्ययकी जानकारीके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है–न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा-स्तर; ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। ब्राह्मण! जैसे कोई तुलाधार (=तराजू वाला) या तुलाधारका शिष्य तुला हाथमें पकड़ता है, तो जानता है कि इतनी कमी है या

इतनी अधिकता है। इसी प्रकार ब्राह्मण! एक कुल-पुत्र अपनी भोग (सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा-स्तर, न बहुत नीचा स्तर; ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक न होगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। ब्राह्मण! यदि यह कुल-पुत्र अल्पायु होता हुआ भी जीवनका स्तर ऊँचा रखता है तो लोग उसके बारेमें कहते हैं कि यह कुलपुत्र गूलर खानेके समान ऐश्वर्य का भोग करता है अर्थात् खानेसे भी अधिक बिखेरता है। ब्राह्मण! यदि यह कुल-पुत्र अधिक आय वाला होता हुआ भी जीवनका स्तर बहुत नीचा रखता है तो लोग उसके बारेमें कहते हैं कि यह, अनाथ-मरण मरने वाला है। लेकिन ब्राह्मण! जब एक कुल-पुत्र अपनी भोग (=सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा स्तर—ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक न रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। ब्राह्मण! इसे सम-जीविता कहते हैं।

ब्राह्मण! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके जाने (=नाश) के चार रास्ते हैं—रण्डीबाज होना, शराबी होना, जुआरी होना, कुसंगतिमें रहना। ब्राह्मण! जैसे किसी बड़े तालाबमें पानी आनेके चार रास्ते हों और चार पानी जानेके रास्ते हों। कोई आदमी पानी आनेके रास्तों को बंद कर दे, किन्तु पानी जानेके रास्तोंको खोल दे और वर्षा भली प्रकार न हो; तो हे ब्राह्मण! उसे बड़े तालाब की हानि की ही उम्मीद रखनी चाहिये, वृद्धिकी नहीं। इसी तरह ब्राह्मण! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके जाने (=नाश) के चार रास्ते हैं—रण्डीबाज होना, शराबी होना, जुआरी होना, कुसंगतिमें रहना

ब्राह्मण! इसी प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके आगमनके चार रास्ते हैं—रण्डीबाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी संगतिमें रहना। ब्राह्मण जैसे किसी बड़े तालाबमें पानी आनेके चार रास्ते हों और पानी जानेके चार रास्ते हों। कोई आदमी पानी जानेके रास्तोंको बंद कर दे, पानी आनेके रास्तोंको खोल दे, और वर्षा भली प्रकार हो; तो हे ब्राह्मण! उसे बड़े तालाब की वृद्धि की ही उम्मीद रखनी चाहिये, हानि की नहीं। इसी तरह ब्राह्मण! इस प्रकार उत्पन्न भोगके साधनोंके आगमनके चार रास्ते हैं—रण्डीबाज न होना, शराबी न होना, जुआरी न होना, अच्छी संगतिमें रहना। हे ब्राह्मण! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्र के इहलौकिक हित तथा इहलौकिक सुखके लिये होते हैं।

ब्राह्मण! ये चार धर्म ऐसे हैं जो कुल-पुत्रके पारलौकिक हित तथा पार-

लौकिक सुखके लिये होते हैं। कौनसे चार? श्रद्धा-सम्पदा, शील-सम्पदा, त्याग-सम्पदा तथा प्रज्ञा-सम्पदा। ब्राह्मण! श्रद्धा-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! कुलपुत्र श्रद्धावान् होता है, वह तथागतकी बोधि (ज्ञान-प्राप्ति) के प्रति श्रद्धावान् होता है—वे भगवान् अर्हत हैं..... देव मनुष्योंके सारथी बुद्ध भगवान् हैं। ब्राह्मण! इसे श्रद्धा-सम्पदा कहते हैं।

ब्राह्मण! शील-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! कुल-पुत्र प्राणी-हिंसा से विरत होता है.....सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत होता है। ब्राह्मण! इसे शील-सम्पदा कहते हैं।

ब्राह्मण! त्याग-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! कुल-पुत्र मल-मात्सर्य रहित चित्त से गृहवास करता है, त्यागी, खुले हाथवाला, दान-शील, याचकोंको देनेवाला, बाँटनेवाला। ब्राह्मण! इसे त्याग-सम्पदा कहते हैं।

ब्राह्मण! प्रज्ञा-सम्पदा किसे कहते हैं? ब्राह्मण! कुल-पुत्र प्रज्ञावान् होता है, उदयास्त सम्बन्धी, आर्य, बींधने वाली, सम्यक् रूपसे दुःखका क्षय कराने वाली प्रज्ञासे युक्त होता है। ब्राह्मण! यह प्रज्ञा-सम्पदा है ब्राह्मण! ये चारों धर्म कुल-पुत्रके पारलौकिक हित तथा पारलौकिक सुखका कारण होते हैं।

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा
समं कप्पेति जीविकं, सम्भतं अनुरक्खति॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो॥
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा।
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्पराय सुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पञ्ञं पवड्ढति॥

[अर्थ ऊपर आ गया है—अनु०]

भिक्षुओ "भय" शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ 'दुःख' शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ, 'रोग' शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ, 'फोड़ा' (=गण्डो) शब्द काम-भागोंका पर्याय है। भिक्षुओ, 'शल्य' शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ 'आसक्ति' (=संग) शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ, 'पंक' शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ, 'गर्भ' शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ, 'भय' शब्द काम-भोगोंका पर्याय क्यों है? क्योंकि

जो कोई काम-रागमें अनुरक्त होता है, छन्द रागसे अनुबन्ध है, वह न इहलोकमें 'भय' से मुक्त होता है और न परलोकमें भयसे मुक्त होता है, इसलिए 'भय' शब्द काम-भोगोंका पर्याय है। भिक्षुओ, 'दुःख' शब्द.....भिक्षुओ, 'रोग' शब्द.......; भिक्षुओ, 'फोड़ा' (=गण्डो) शब्द.......; भिक्षुओ 'शल्य' शब्द........; भिक्षुओ, आसक्ति (=संग) शब्द.........; भिक्षुओ, 'पंक' शब्द.......; भिक्षुओ, 'गर्भ' शब्द काम-भागोंका पर्याय क्यों है? क्योंकि जो कोई काम-रागमें अनुरक्त होता है, छन्द-रागसे अनुबन्ध है, वह न इहलोकमें 'गर्भ' से मुक्त होता है और न पर-लोकमें भयसे मुक्त होता है।

भयं दुक्खं च रोगो च, गण्डो सल्लं च संगो च।
पंको गब्भो च उभयं, एते कामा पवुच्चन्ति ॥
यत्थ सत्तो पुथुज्जनो, ओतिण्णो सातरूपेन।
पुन गब्भाय गच्छति ॥
यतो च भिक्खु आतापी, सम्पजञ्ञं न रिच्चति।
सो इमं पलिपथं दुग्गं, अतिक्कम्म तथाविधो।
पजं जातिजरूपेतं, फन्दमानं अवेक्खति ॥

[भय, दुख, रोग, गण्ड, शल्य, संग, पंक तथा गर्भ—ये शब्द 'काम-भोग' शब्दके ही पर्याय हैं। इनमें आसक्त हुआ पृथक जन, इनके 'स्वाद' में उतरा हुआ पृथक जन, फिर-फिर 'गर्भ' को प्राप्त होता है। लेकिन जो भिक्षु प्रयत्नवान होता है, जो अपनी जागरूकताको नहीं छोड़ता, वह इस दुर्गमनीय-बाधाको लाँघ जन्म-मरणके चक्करमें पड़ी, तड़पती जनता (=प्रजा) को देखता है।]

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते हैं, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, दक्षिणार्ह होता है, हाथ जोड़कर अभिवादन करने योग्य होता है, लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे आठ गुण? भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है........शिक्षा पदोंका सम्यक् अभ्यास करता है; बहुश्रुत होता है.....बींधनेवाली (सम्यक्–) दृष्टिसे युक्त; सत्संगतिमें उठने-बैठने वाला होता है, कल्याण-मित्रों वाला; सम्यक्-दृष्टि वाला होता है, सम्यक्-दर्शनसे समन्वित; चारों, इसी शरीरमें सुखद, चैतसिक ध्यानोंको अनायास ही, सहज ही, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला होता है, नाना प्रकारके पूर्व-जन्मोंका अनुस्मरण करता है, जैसे एक जन्म, दो जन्म......इस प्रकार आकार और उद्देश्य सहित अनेक पूर्व-जन्मोंका अनुस्मरण करता है; लोकोत्तर दिव्य विशुद्ध चक्षुसे कर्मानुसार नाना योनियोंको

प्राप्त प्राणियोंको जानता है; आस्रवोंका क्षय कर......साक्षात् कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते हैं, वह आदर करने योग्य होता है.... लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते हैं, वह आदर करने योग्य होता है, सत्कार करने योग्य होता है, दक्षिणार्ह होता है, हाथ जोड़कर अभिवादन करने योग्य होता है, लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है। कौनसे आठ गुण? भिक्षुओ, भिक्षु शीलवान् होता है......शिक्षापदोंका सम्यक् अभ्यास करता है; बहुश्रुत होता है........बींधने वाली (सम्यक्—) दृष्टिसे युक्त; वीर्य करने वाला होता है, शक्तिशाली, दृढ़ पराक्रमी, कुशल-धर्मोंका वहन करनेवाला; एकान्त जंगलमें रहनेवाला होता है; राग-द्वेष (=आसक्ति-विरक्ति) दोनोंको सहन करनेवाला होता है, उत्पन्न विरक्तिसे पराभूत नहीं होता; भय-भैरवको सहन करनेवाला होता है, उत्पन्न भय-भैरवको पराभूत कर विचरता है; चारों, इसी शरीरमें सुखद, चैतसिक ध्यानोंको अनायास ही, सहज ही प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला होता है, आस्रवोंका क्षय कर.........साक्षात् कर विहार करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ गुण होते हैं, वह आदर करने योग्य होता है........लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होता है।

भिक्षुओ, ये आठ आदमी आदर करने योग्य होते हैं, सत्कार करने योग्य होते हैं, दक्षिणार्ह होते हैं, हाथ जोड़कर अभिवादन करने योग्य होते हैं, लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होते हैं। कौनसे आठ? स्रोतापन्न, सोतापन्न-फलको साक्षात् करनेमें लगा हुआ, सकृदागामि, सकृदागामि फलको साक्षात् करनेमें लगा हुआ, अनागामि, अनागामि-फलको साक्षात् करनेमें लगा हुआ, अर्हत, अर्हत्वको साक्षात् करनेमें लगा हुआ। भिक्षुओ, ये आठ आदमी आदर करने योग्य होते हैं,......लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र होते हैं।

चत्तारो च पटिपन्ना, चत्तारो च फले ठिता।
एस संघो उजुभूतो, पञ्ञासील समाहितो॥
यजमानानं मनुस्सानं, पुञ्ञपेक्खान पाणिनं।
करोतं ओपधिकं पुञ्ञं, संघे दिन्नं महप्फलं॥

[स्रोतापत्ति-मार्ग आदि पर चलनेवाले चार प्रकारके व्यक्ति तथा स्रोतापत्ति-फल-प्राप्त आदि चार प्रकारके व्यक्ति—ये प्रज्ञा तथा शीलसे युक्त, ऋजुमार्गी संघ है। जो पुण्य की अपेक्षा करनेवाले प्राणी हैं, जो पुण्य-क्षेत्रमें यज्ञ करने

(=बीज बोने) के इच्छुक हैं, वे जन्मदायक (=ओपधिक) पुण्य कर्मको करते हैं। संघको दान देनेका महान फल होता है।]

भिक्षुओ, ये आठ आदमी आदर करने योग्य हैं..........लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं। कौनसे आठ? स्रोतापन्न, स्रोतापन्न फलको साक्षात् करनेमें लगा हुआ........अर्हत्, अर्हत्वको साक्षात् करनेमें लगा हुआ। भिक्षुओ ये आठ आदमी आदर करने योग्य हैं......लोगोंके लिए अनुपम पुण्य-क्षेत्र हैं।

चत्तारो च पटिपन्ना, चत्तारो च फले ठिता।
एस संघो समुकट्ठो, सत्तानं अट्ठ पुग्गला॥
यजमानानं मनुस्सानं, पुञ्ञपेक्खान पाणिनं।
करोतं ओपधिकं पुञ्ञं, एत्थ दिन्नं महप्फलं॥

[स्रोतापत्ति-मार्ग आदि पर चलनेवाले तथा स्रोतापत्ति फल प्राप्त आदि आठ प्रकारके व्यक्तियोंका समुत्कृष्ट संघ है। जो पुण्यकी अपेक्षा करनेवाले प्राणी हैं..........पुण्य कर्मको करते हैं। संघको दान देनेका महान फल होता है।]

(७) भूमिचाल वर्ग

भिक्षुओ, संसारमें आठ तरहके लोग विद्यमान हैं। कौनसे आठ? भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी वस्तुको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेके बावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। उस अप्राप्तिके कारण, वह चिन्तित होता है, दुःखी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, बेहोश तक हो जाता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नहीं मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है, उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस लाभके कारण मदको, प्रमादको प्राप्त होता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न

करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्न-शील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है, उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। उस अप्राप्तिके कारण वह चिन्तित होता है, दुखी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, बेहोश तक हो जाता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिए न उठता है, न प्रयत्न करता है और न कोशिश करता है। उसे वह लाभ' नहीं मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके बावजूद (वह वस्तु) मिल जाती है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। किन्तु वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को, प्राप्त होता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें किसी चीजको प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेके बावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। उस अप्राप्तिके कारण, न चिन्तित होता है, न दुःखी होता है न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है और न बेहोश होता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है, उसे वह 'लाभ' नहीं मिलता है। वह न चिन्तित होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नहीं हुआ।

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें किसी चीजको प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है।

वह उटता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है, उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करनेसे, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस 'लाभ' के कारण 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' हो जाता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता। वह सद्धर्मसे च्युत नहीं हुआ।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। वह उस अप्राप्तिके कारण न चिन्तित होता है, न दुखी होता है, न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है, न बेहोश होता है। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिए न उठता है, न प्रयत्न करता है न कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नहीं होता। वह न चिन्तित होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नहीं हुआ।'

भिक्षुओ, एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके बावजूद (वह वस्तु) मिल जाती है। उस 'लाभ' से वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता। भिक्षुओ, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु 'लाभ' की इच्छा करता है। किन्तु, वह न उठता है, न प्रयत्न करता है और न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता है। वह सद्धर्मसे च्युत नहीं हुआ।' भिक्षुओ, संसारमें ये आठ तरहके लोग विद्यमान हैं।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, और दूसरोंका भी हित करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी छह?

भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोको क्षिप्र समझनेवाला होता है; समझे हुए धर्मोको धारणा करने वाला होता है; धारण किए हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करने-वाला होता है; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला होता है; हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसंगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने-

वाला होता है; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है,। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये पाँच बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, तथा दूसरोंका भी हित करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी पाँच बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझने वाला नहीं होता, समझे हुए धर्मोंको धारणा करने-वाला होता है, धारण किए हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करने वाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला होता है; हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसंगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला होता है; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये पाँच बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, किन्तु दूसरे का हित करनेमें समर्थ नहीं होता। कौन-सी चार बातें ? भिक्षुओ भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोंको धारण करने वाला होता है, धारण किए हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है; किन्तु हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसंगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला नहीं होता; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला प्रसन्न करनेवाला नहीं होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, किन्तु दूसरोंका हित करनेमें समर्थ नहीं होता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नहीं। कौन-सी चार बातें ? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला होता है, किन्तु धारण किए हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करनेवाला नहीं होता; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला नहीं होता; हितकर प्रिय ...... अर्थ-बोधक बाणी बोलनेवाला होता है; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला .... प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नहीं।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका नहीं। कौनसी तीन बातें? भिक्षुओं, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला नहीं होता ; समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करने वाला होता है ; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है ; हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसंगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला नहीं होता ; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखाने वाला, प्रेरित करने वाला, उत्साहित करने वाला तथा प्रसन्न करने वाला नहीं होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका नहीं।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें समर्थ नहीं होता। कौन सी तीन बातें?

भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझने वाला नहीं होता, समझे हुए धर्मोंको धारण करने वाला होता है; धारण किये हुए धर्मोंके अर्थ पर विचार करने-वाला नहीं होता है; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला नहीं होता ; हितकर, प्रिय . . . . अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है ; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला . . . . . प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नहीं।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ नहीं होता। कौनसी दो? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला नहीं होता ; समझे हुए धर्मोंको धारण करने वाला नहीं होता, धारण किये हुए धर्मोंके अर्थ पर विचार करनेवाला होता है ; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, हितकर, प्रिय . . . . . . अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला नहीं होता ; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला. . . . . प्रसन्न करनेवाला नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ नहीं होता।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नहीं। कौनसी दो बातें? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मों को क्षिप्र समझनेवाला नहीं होता ; समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला नहीं होता ;

धारण किए हुए धर्मोंके अर्थ पर विचार करने वाला नहीं होता; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला नहीं होता; हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धिसंगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है; अपने साथियों को (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नहीं।

एक भिक्षु जहाँ भगवान थे, वहाँ गया. . . .एक ओर बैठे हुए उस भिक्षुने भगवान्से निवेदन किया —"भन्ते! अच्छा हो यदि भगवान मुझे संक्षिप्त रूपमें ऐसा धर्मोपदेश करें कि मैं एकान्त-सेवी हो, अप्रमादी हो, प्रयत्न करता हुआ विहार करूँ।"

"इसी प्रकार (=तेरी ही तरह) कुछ मूर्ख मेरा पीछा नहीं छोड़ते। धर्मोपदेश किये जाने पर भी मेरे ही पीछे लगे रहते हैं।"

"भगवान्! संक्षेपमें धर्मोपदेश दें। सुगत! संक्षेपमें धर्मोपदेश दें। सम्भव है मैं भगवान् के कथनके अर्थको समझ लूँ। सम्भव है मैं भगवानके धर्मका उत्तराधिकारी बन सकूँ।"

"तो भिक्षु! यह सीखना चाहिये कि मेरा चित्त स्थिर रहेगा, सुस्थिर रहेगा। अकुशल पाप-धर्म मेरे चित्तको विचलित न करेंगे।' भिक्षु! यही शिक्षा तुझे ग्रहण करनी चाहिये।"

"भिक्षु! जब तेरा चित्त स्थिर हो जाय, सम्यक् रूपसे स्थिर हो जाय, जब अकुशल पाप-धर्म तेरे चित्तको विचलित न करें, तो हे भिक्षु तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि मैं मैत्री-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका अभ्यास करूँगा, बढ़ाऊँगा, अधिकाधिक चालू करूँगा, वास्तविक स्वरूप दूँगा, अनुष्ठान करूँगा, भली प्रकार परिचित होऊँगा तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ करूँगा। भिक्षुओ, इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।'

"भिक्षु! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु! तू इस समाधिको स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (=भावना) कर सकेगा, अ-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, अवितर्क अविचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-रहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, सात (=रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा-सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि 'मैं' करुणा-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका. . . . .मुदिता-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका. . . . . उपेक्षा-भावना रूपी चित्तकी विमुक्तिका अभ्यास करूँगा, बढ़ाऊँगा, अधिकाधिक चालू करूँगा। वास्तविकत रूप दूँगा, अनुष्ठान करूँगा, भली प्रकार परिचित होऊँगा तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ करूँगा। भिक्षु ! इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तू इस समाधिका स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (= भावना) कर सकेगा, अवितर्क-सविचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, अ-वितर्क अ-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-रहित भी अभ्यस्त कर सकेगा सात (= रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि-प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि मैं काय (= शरीर) के प्रति कायानुपश्यी होकर, प्रयत्नशील होकर, सम्प्रजन्य से युक्त होकर, स्मृतिमान होकर विचरूँगा और लोकके प्रति मेरे मनमें जो राग-द्वेष है उसका मर्दन करूँगा। भिक्षु ! इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि-प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तू इस समाधिको स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (= भावना) कर सकेगा, अ-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, अ-वितर्क अ-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-रहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, सात (= रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा-सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु ! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तुझे यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि मैं वेदनाओं के प्रति . . . . . चित्तके प्रति . . . . . धर्मों (= संस्कृत-असंस्कृत धर्मों) के प्रति धर्मानुपश्यी होकर, प्रयत्नशील होकर, सम्प्रजन्यसे युक्त होकर, स्मृतिमान् होकर विचरूँगा और लोकके प्रति मेरे मनमें जो राग-द्वेष है, उसका मर्दन करूँगा।' भिक्षु ! इसी प्रकार तुझे सीखना चाहिए।

भिक्षु, जब तेरी यह समाधि, इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि-प्राप्त रहेगी, तब हे भिक्षु ! तू इस समाधिको स-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्त (= भावना)

कर सकेगा, अ-वितर्क स-विचार भी अभ्यस्तका कर सकेगा, अ-वितर्क-अ-विचार भी अभ्यस्त कर सकेगा, प्रीति-युक्त भी अभ्यस्त कर सकेगा, सात (= रुचि) सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा, उपेक्षा-सहित भी अभ्यस्त कर सकेगा।

"भिक्षु! जब तेरी यह समाधि इस प्रकार अभ्यस्त हुई रहेगी, वृद्धि प्राप्त हुई रहेगी, तब हे भिक्षु! तू जहाँ जहाँ भी जायेगा सुख-पूर्वक ही जायगा, जहाँ-जहाँ ठहरेगा, सुख-पूर्वक ही ठहरेगा, जहाँ-जहाँ बैठेगा सुख-पूर्वक ही बैठेगा, जहाँ-जहाँ लेटेगा, सुख-पूर्वक ही लेटेगा।"

इस प्रकार भगवान् द्वारा उपदिष्ट होने पर वह भिक्षु आसनसे उठ, भगवान्को अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर चला गया। तब उस भिक्षुने अकेले रह, एकान्त-सेवन करते हुए, अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न कर जिस उद्देश्यकी प्राप्ति के लिये कुल-पुत्र घरसे बे-घर हो प्रव्रजित होते हैं, उस लोकोत्तर श्रेष्ठ जीवनको इसी जन्ममें स्वयं जान लिया, साक्षात् कर लिया, प्राप्त कर लिया। उसे ज्ञान हो गया कि 'जाति (= जन्म बंधन) क्षीण हो गया, ब्रह्मचरिय (= श्रेष्ठ जीवनका) उद्देश्य पूरा हो गया। जो कृत्य था, कर लिया गया। अब यहाँ शेष करणीय नहीं रहा।' वह भिक्षु भी एक अर्हत् हुआ।

एक समय भगवान् गयामें गयाशीर्ष (पर्वत) पर विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया. . . .कहा—"भिक्षुओ! बोधि प्राप्त करनेसे पूर्व, अ-बुद्ध रहनेकी अवस्थामें, 'बोधिसत्व' रहनेके समय मुझे (देवताओंका) प्रभा-मण्डल दिखाई देता था, उनके रूप नहीं दिखाई देते थे।

"भिक्षुओ! तब मेरे मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—"यदि मैं देवताओंके प्रभा-मण्डलको भी देखूँ और उनके 'रूप' भी देखूँ, तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

"भिक्षुओ, आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओं का) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया और उनके 'रूप' भी दिखाई देने लग गये; लेकिन उन देवताओंके साथ मेरा उठना-बैठना, बात चीत, चर्चा करना नहीं था।

"भिक्षुओ, तब मेरे मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—'यदि मैं (देवताओंके) प्रभा-मण्डलको भी देखूँ, उनके 'रूप' भी देखँ तथा उनके साथ मेरा उठना-बैठना, बात-चीत, चर्चा करना हो, तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

भिक्षुओ आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओंका) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया, उनके 'रूप' भी दिखाई देने लग गये, उन

देवताओंके साथ मेरा उठना-बैठना, बातचीत, चर्चा करना भी हो गया; किन्तु मैं यह नहीं जान सका कि ये देवता किस-किस देव-निकाय (देव-समूह) के हैं?

"भिक्षुओ, तब मेरे मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—"यदि मैं (देवताओंके) प्रभा-मण्डलको भी देखूँ, उनके 'रूप' भी देखूँ, उनके साथ मेरा उठना-बैठना, बातचीत, चर्चा करना हो तथा मैं यह जान सकूँ कि ये देवता किस किस देव-निकायके हैं तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

भिक्षुओ, आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओं का) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया, उनका 'रूप' भी दिखाई देने लग गया, उन देवताओंके साथ मेरा उठना-बैठना, बातचीत, चर्चा करना हो गया, मैं यह भी जान सका कि ये देवता किस-किस देव-निकायके हैं; लेकिन यह नहीं जान सका कि ये देवता अमुक कार्यके फलस्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देव-लोकमें) उत्पन्न हुए। .....यह जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देवलोक) में उत्पन्न हुए, लेकिन यह नहीं जान सका कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार खाते पीते हैं और इस प्रकार सुख-दुख भोगते हैं.....यह जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार सुख-दुःख भोगते हैं, लेकिन यह न जान सका कि इन देवताओंकी इतनी लम्बी आयु होती है, इतनी लम्बी स्थिति होती है....यह जान गया कि इन देवताओंकी इतनी लम्बी आयु होती है, इतनी लम्बी स्थिति होती है, लेकिन यह न जान सका कि इन देवताओंके साथ इससे पूर्व सहवास रहा है या नहीं रहा है?

भिक्षुओ, तब मेरे मनमें यह विचार उत्पन्न हुआ—यदि देवताओंके प्रभा-मण्डल को भी देख लूँ, (देवताओंके) रूपों को भी देख लूँ, उनके साथ मेरा उठना-बैठना, बात-चीत, चर्चा करना हो, यह भी जान लूँ कि ये देवता किस किस देव-निकाय के हैं, यह भी जान लूँ कि ये देवता अमुक कर्मके फल स्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देव-लोक) में उत्पन्न हुए हैं, यह भी जान लूँ कि ये देवता अमुक वर्ग कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार खाते-पीते हैं और इस प्रकार सुख-दुख भोगते हैं, यह भी जान लूँ कि इन देवताओंकी इतनी लम्बी आयु होती है, इतनी लम्बी स्थिति होती है तथा यह भी जान लूँ कि इन देवताओंके साथ इससे पूर्व सहवास रहा है या नहीं रहा है? तो मेरा यह ज्ञान-दर्शन स्पष्टतर हो।

भिक्षुओ, आगे चलकर अप्रमाद पूर्वक प्रयत्न करते रहनेसे मुझे (देवताओंका) प्रभा-मण्डल भी दिखाई देने लग गया; उनका 'रूप' भी दिखाई देने लग गया; उन देवताओंके साथ मेरा उठना-बैठना; बातचीत करना, चर्चा करना हो गया;

मैं यह भी जान सका कि ये देवता किस-किस देव-निकाय के हैं; यह भी जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप अमुक जगहसे च्युत होकर वहाँ (देवलोकमें) उत्पन्न हुए ; यह भी जान गया कि ये देवता अमुक कर्मके फलस्वरूप इस प्रकार खाते पीते हैं और इस प्रकार सुख-दुःख भोगते हैं ; यह भी जान गया कि इन देवताओंकी इतनी लम्बी आयु होती है, इतनी लम्बी स्थिति होती है ; तथा यह भी जान गया कि इन देवताओंके साथ इससे पूर्व सहवास रहा है या नहीं।

भिक्षुओ, जब तक मुझे इस तरह आठ प्रकारसे देवताओं सम्बन्धी ज्ञान-दर्शन स्पष्ट नहीं हो गया, तब तक मैंने यह दावा नहीं किया कि मैंने देव और मार-सहित लोकमें, तथा श्रमण-ब्राह्मण और देव-मनुष्योंसे युक्त प्रजामें सबसे बढ़कर सम्यक् ज्ञान-को पा लिया; लेकिन जब मुझे इस तरह आठ प्रकारसे देवताओं सम्बन्धी ज्ञान-दर्शन स्पष्ट हो गया, तो मैंने दावा किया कि मैंने देव और मार-सहित लोकमें तथा श्रमण-ब्राह्मण और देव-मनुष्योंसे युक्त प्रजामें सबसे बढ़कर सम्यक् ज्ञानको पा लिया। मुझे ज्ञान हो गया। मुझे दर्शन उत्पन्न हो गया। मेरी चित्त-विमुक्ति अचल हो गई। यह अन्तिम जन्म है, इससे आगे पुनर्भव नहीं।

भिक्षुओ, ये आठ अभिभूत आयतन हैं। कौनसे आठ? एक योगी अपनेमें रूप-संज्ञा (रूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको 'निमित्त' (= ध्यानका विषय) कर के देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह पहला अभिभूत-आयतन है।

एक योगी अपनेमें रूप-संज्ञा (= रूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको निमित्त (= ध्यानका विषय) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह दूसरा अभिभूत-आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-संज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको 'निमित्त' (= ध्यानका विषय) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह तीसरा अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-संज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको निमित्त (= ध्यानका विषय) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह चौथा अभिभूत-आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-संज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर नीले, नील वर्णके, नीले रंगके, नीली शक्लके रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती

है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह पाँचवाँ अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-संज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है, वह बाहर पीले, पीत-वर्ण, पीले रंगके पीली शक्लके रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह छठा अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप संज्ञावाला होता है; वह बाहर लाल, लाल वर्णके, लाल शक्लके रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह सातवाँ अभिभूत आयतन है।

एक योगी अपनेमें अरूप-संज्ञा (= अरूप परिकर्म) वाला होता है; वह बाहर सफेद, सफेद वर्ण, सफेद रंगके सफेद शक्लके रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। यह आठवाँ अभिभूत आयतन है।

भिक्षुओ, आठ विमोक्ष हैं। कौनसे आठ? रूपवान् (= रूपी) रूपोंको देखता है। यह पहला विमोक्ष है।

एक योगी अपनेमें अरूप-संज्ञा वाला (= अरूप परिकर्म) होता है, वह बाहर रूप देखता है। यह दूसरा विमोक्ष है।

एक योगी मैत्री-भावना आदि शुभ-भावनाओंकी भावना करके विमोक्ष लाभ करता है। यह तीसरा विमोक्ष है।

एक योगी सब रूप-संज्ञाओंको पार कर, प्रतिघ-संज्ञाओंको अस्तकर, नानत्त्व संज्ञाको मनसे निकाल 'आकाश अनंत है' करके 'आकाशानन्त्यायतन' को प्राप्त हो विचरता है। यह चौथा विमोक्ष है।

एक योगी सब आकाश-संज्ञाओंको पार कर, 'विज्ञान अनंत है' करके 'विज्ञानात्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। यह पाँचवाँ विमोक्ष है।

एक योगी सब विज्ञानानन्त्यायतनको पार कर 'कुछ नहीं है' करके 'आकिञ्चन्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। यह छठा विमोक्ष है।

एक योगी सब 'आकिञ्चन्यायतन' को पार कर "नेवसंज्ञा न असंज्ञा-आयतन" को प्राप्त हो विचरता है। यह सातवाँ विमोक्ष है।

एक योगी सब 'नेवसंज्ञा-न असंज्ञा-आयतन' को पारकर संज्ञा-वेदना के निरोधको प्राप्त हो विचरता है। यह आठवाँ विमोक्ष है। भिक्षुओ, ये आठ विमोक्ष हैं।

भिक्षुओ, ये आठ अनार्य-व्यवहार हैं। कौनसे आठ? जो नहीं देखा है, उसे देखा कहना; जो नहीं सुना है, उसे सुना कहना; जो नहीं सूँघा-चखा—स्पर्श

किया गया है, उसे सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया (= मुत) कहना; जो नहीं जाना गया है, उसे ज्ञात कहना ; जो देखा है, उसे नहीं देखा कहना; जो सुना है, उसे नहीं सुना कहना; जो सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया है, उसे नहीं सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया कहना ; जो ज्ञात है, उसे नहीं जाना गया कहना। भिक्षुओ, ये आठ अनार्य व्यवहार हैं।

भिक्षुओ, ये आठ आर्य व्यवहार हैं। कौनसे आठ? जो नहीं देखा है, उसे नहीं देखा कहना; जो नहीं सुना है, उसे नहीं सुना कहना, जो नहीं सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया है, उसे नहीं सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया (= मुत) कहना; जो नहीं जाना गया है, उसे अज्ञात कहना; जो देखा है, उसे देखा कहना; जो सुना है, उसे सुना कहना; जो सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया है, उसे सूँघा-चखा-स्पर्श किया गया कहना ; जो ज्ञात है, उसे ज्ञात कहना। भिक्षुओ, ये आठ आर्य-व्यवहार हैं।

भिक्षुओ, परिषद आठ प्रकारकी होती है। कौन-सी आठ प्रकारकी? क्षत्रिय-परिषद, ब्राह्मण-परिषद, गृहपति-परिषद, श्रमण-परिषद, चातुर्महाराजिक परिषद, त्रयोत्रिंश परिषद, मार-परिषद, तथा ब्रह्म-परिषद।

भिक्षुओ, मैं सैकड़ों क्षत्रिय-परिषदोंमें गया हूँ। वहाँ मैं बैठा हूँ, बातचीतकी है, चर्चा की है। वहाँ जैसा उनका वर्ण होता था, वैसा मेरा वर्ण होता था ; जैसा उनका स्वर होता था, वैसा मेरा स्वर होता था। मैं उन्हें धार्मिक प्रवचनसे (रास्ता) दिखाता था, प्रेरित करता था, उत्साहित करता था, प्रमुदित करता था। जब मैं बोलता था, तब वे नहीं जानते थे कि यह कोई मनुष्य बोल रहा है या देवता। मैं उन्हें धार्मिक-प्रवचन से (रास्ता) दिखा, प्रेरित कर, उत्साहित कर, प्रमुदित कर अन्तर्धान हो जाता था। मेरे अन्तर्धान होने पर वे नहीं जानते थे कि कौन अन्तर्धाम हुआ—देवता या मनुष्य?

भिक्षुओ, मैं सैकड़ों ब्राह्मण-परिषदोंमें गया हूँ. . . . .गृहपति-परिषदोंमें गया हूँ. . . . . .श्रमण-परिषदोंमें गया हूँ. . . . . .चातुर्महाराजिक-परिषदों में गया. . . . .त्रयोत्रिंश-परिषदोंमें गया हूँ. . . . .मार-परिषदोंमें गया हूँ. . . . .तथा ब्रह्म-परिषदोंमें गया हूँ। वहाँ मैं बैठा हूँ, बातचीत की है, चर्चा की है। वहाँ जैसा उनका वर्ण होता था, वैसा मेरा वर्ण होता था; जैसा उनका स्वर होता था, वैसा मेरा स्वर होता था। मैं उन्हें धार्मिक-प्रवचनसे (रास्ता) दिखाता था, प्रेरित करता था, उत्साहित करता था, प्रमुदित करता था। जब मैं बोलता था, तब वे नहीं जानते थे कि यह कोई मनुष्य बोल रहा है, या देवता। मैं उन्हें धार्मिक-प्रवचनसे (रास्ता)

दिखा, प्रेरित कर, उत्साहित कर, प्रमुदित कर अन्तर्धान हो जाता था। मेरे अन्तर्धान होनेपर वे नहीं जानते थे कि कौन अन्तर्धान हुआ है—देवता या मनुष्य? भिक्षुओ, परिषद आठ प्रकार की होती है।

एक समय भगवान वैशालीके महावनकी कूटागार शालामें निवास करते थे। तब भगवान पूर्वाह्न समय (चीवर) पहन, पात्र-चीवर ले, वैशालीमें भिक्षाटनके लिये प्रविष्ट हुए। वैशालीमें भिक्षाटन कर भिक्षाटनसे लौट, भोजन (= पिण्डपात) ग्रहण कर चुकनेके अनन्तर भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दको कहा—"आनन्द! आसन ले। दिनमें बिहार करनेके लिए, जहाँ चापाल चेतिय है, वहाँ चलेंगे।" "भन्ते! बहुत अच्छा", कह आयुष्मान् आनन्दने आसन उठाया और भगवान्के पीछे-पीछे हो लिये।

तब भगवान जहाँ चापाल चेतिय है वहाँ पहुँचे। जाकर बिछे आसन पर बैठे। बैठकर भगवान्ने आयुष्मान् आनन्दसे कहा—"आनन्द! वैशाली रमणीय है, उदेन चेतिय रमणीय है, गोतमक चेतिय रमणीय है, बहुपुत्तक चेतिय रमणीय है, सत्तम्ब चेतिय रमणीय है, सारन्दद चेतिय रमणीय है तथा चापाल चेतिय रमणीय है। आनन्द! जिस किसीके ने चारों ऋद्धिपादोंका अभ्यास किया हो, वृद्धिकी हो, अधिकाधिक चालू किया हो, वास्तविक स्वरूप दिया हो, अनुष्ठान किया हो, भली प्रकार परिचित हुआ हो तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ किया हो, यदि वह इच्छा करे तो वह कल्प भर तक या उससे भी अधिक जीवित रह सकता है। आनन्द! तथागतने चारों ऋद्धिपादोंका अभ्यास किया, वृद्धि की है, अधिकाधिक चालू किया है, वास्तविक स्वरूप दिया है, अनुष्ठान किया है, भली प्रकार परिचित किया है तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ किया है। आनन्द! यदि तथागत इच्छा करें तो कल्प तक अथवा उससे भी अधिक समय जीवित रह सकते हैं।

भगवानके इस प्रकार स्पष्ट संकेत करने पर, स्पष्ट इशारा करने पर भी आनन्द कुछ न समझ सका। उसने भगवानसे याचना की नहीं—"भन्ते! भगवान कल्प भर तक जीवन धारण करें। सुगत! बहुत जनोंके हितके लिए, सुखके लिए, लोगोंपर अनुकम्पा करनेके लिए, देव-मनुष्योंके अर्थ, हित, सुख के लिए कल्प भर तक जीवन धारण करें। ऐसा लगता है जैसे उस पर 'मार' का आवेश हो।

दूसरी बार भी और तीसरी बार भी भगवानने आनन्दसे कहा—आनन्द! वैशाली रमणीय है, उदेन चेतिय रमणीय है, गोतमक चेतिय रमणीय है, बहुपुत्तक चेतिय रमणीय है, सत्तम्ब चेतिय रमणीय है, सारन्दद चेतिय रमणीय है तथा चापाल

चेतिय रमणीय है। आनन्द! जिस किसीने चारों ऋद्धिपादोंका अभ्यास किया हो, वृद्धि की हो, अधिकाधिक चालू किया हो, वास्तविक स्वरूप दिया हो, अनुष्ठान किया हो, भली प्रकार परिचित हुआ हो तथा सम्यक् प्रकार आरम्भ किया हो, यदि वह इच्छा करे तो वह कल्प भर तक, या उससे भी अधिक जीवित रह सकता है। आनन्द! तथागतने चारों ऋद्धिपादोंका. . . . . .आरम्भ किया है। आनन्द! यदि तथागत . . . . . .सकते हैं।"

भगवान्के इस प्रकार स्पष्ट संकेत पर, स्पष्ट इशारा करने पर भी आनन्द कुछ न समझ सका। उसने भगवानसे याचना नहीं की—"भन्ते! भगवान कल्प भर तक जीवन धारण करें। सुगत! बहुत जनोंके हितके लिए, सुखके लिये, लोगों पर अनुकम्पा करनेके लिए, देव-मनुष्योंके अर्थ, हित, सुखके लिए कल्प भर तक जीवन धारण करें।' ऐसा लगता है जैसे उस पर 'मार' का आवेश हो।

तब भगवानने आयुष्मान आनन्दको सम्बोधित किया—"आनन्द! तू जा, (वह काम कर) जिसका तू अब समय समझे।" "बहुत अच्छा भन्ते!" कह आयुष्मान् आनन्दने भगवानको प्रतिवचन दिया है, और आसनसे उठ, भगवानको अभिवादन कर, प्रदक्षिणा कर, भगवानसे नातिदूर एक वृक्षके नीचे जा बैठे। आयुष्मान् आनन्दके चले जानेके थोड़ी ही देर बाद पापी 'मार' ने भगवान से कहा—

"भन्ते! भगवान अब परिनिर्वाण को प्राप्त हों। सुगत! अब परिनिर्वाण को प्राप्त हों। भन्ते! भगवान् के लिए अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है। भन्ते भगवान्ने यह कहा था—'पापी मार! मैं तब तक परिनिर्वाणको प्राप्त नहीं होऊँगा जबतक मेरे भिक्षु शिष्य पण्डित, विनीत, विशारद, योग-क्षेम (= निर्वाण) प्राप्त, बहुश्रुत, धर्मधर, धर्मके अनुसार आचरण करने वाले, सम्यक् प्रकार विचरने वाले, धर्मका अनुकरण वाले न होंगे। और जब तक अपने आचार्यसे सीख कर (उसे) कहने वाले, देशना करने वाले, प्रस्थापित करने वाले, व्याख्या करने वाले, विभक्त करने वाले, उल्टेको सीधा कर देने वाले, दूसरेके मतका धर्मानुसार खण्डन करने वाले तथा प्रातिहार्य सहित धर्म की देशना करने वाले नहीं होंगे।

'भन्ते! अब आप भगवान्के भिक्षु शिष्य पण्डित हैं, विनीत हैं, विशारद हैं, योग-क्षेम-प्राप्त हैं, बहुश्रुत हैं, धर्मधर हैं, धर्मके अनुसार आचरण करनेवाले हैं, सम्यक् प्रकार विचरनेवाले हैं, धर्मका अनुकरण करनेवाले हैं और अपने आचार्यसे सीखकर (उसे) कहने वाले, देशना करनेवाले, प्रज्ञाप्ति करनेवाले, प्रस्थापित करनेवाले, व्याख्या करनेवाले, विभक्त करनेवाले, उलटेको सीधा कर देनेवाले,

दूसरेके मतका धर्मानुसार खण्डन करनेवाले तथा प्रातिहार्य सहित धर्मकी देशना करनेवाले हैं। भन्ते! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों। सुगत! अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों। भन्ते! भगवान्के लिए अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है।

"भन्ते! भगवान्ने यह कहा था—'पापी मार! मैं तब तक परिनिर्वाणको प्राप्त नहीं होऊँगा जब तक मेरी भिक्षुणी शिष्यायें.......जब तक मेरे उपासक शिष्य.........जब तक मेरी उपासिका शिष्यायें पण्डिता, विनीता, विशारदा, योग-क्षेम (= निर्वाण) प्राप्त, बहुश्रुता, धर्मधरा, धर्मके अनुसार आचरण करनेवाली, सम्यक् प्रकार विचरनेवाली, धर्मका अनुकरण करने वाली न होंगी। भन्ते, अब आप भगवान् की भिक्षुणी शिष्यायें....सीखकर (उसे) कहनेवाली, देशना करनेवाली, प्रज्ञाप्ति करनेवाली, प्रस्थापित करनेवाली, व्याख्या करनेवाली, विभक्त करनेवाली, उलटेको सीधा कर देनेवाली, दूसरेके मतका धर्मानुसार खण्डन करनेवाली तथा प्रातिहार्य सहित धर्मकी देशना करनेवाली हैं। भन्ते! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों। सुगत! अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों। भन्ते! भगवान्के लिये अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है।

"भन्ते! भगवान्ने यह कहा था—'पापी मार! मैं तब तक परिनिर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा, जब तक मेरा यह ब्रह्मचर्य्य (= बुद्ध-शासन) समृद्ध तथा पुष्पित, ऐश्वर्यशाली नहीं हो जाएगा, विस्तृत नहीं हो जायेगा, बहुत जनों तक फैल नहीं जायगा—देव-मनुष्यों तक सुप्रकाशित नहीं हो जायगा। भन्ते! इस समय भगवान्का ब्रह्मचर्य (= बुद्धशासन) समृद्ध तथा पुष्पित है, विस्तृत है, बहुत जनों तक फैला है—देव मनुष्यों तक सुप्रकाशित है।

"भन्ते! भगवान् अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों। सुगत! अब परिनिर्वाणको प्राप्त हों। भन्ते! भवगवान्के लिये अब यह परिनिर्वाण प्राप्त करनेका समय है।"

"हे पापी मार! तू अधिक व्यग्र न हो। अचिर कालमें ही तथागतका परिनिर्वाण होगा। अबसे तीन महीनेके अनन्तर तथागत परिनिर्वाणको प्राप्त होंगे।

तब भगवानने चापाल चेतियमें ही विहार करते समय आयु-संस्कार (= जीवित रहनेके संकल्प) को ढीला कर दिया भगवान्के आयु-संस्कारको शिथिल करते ही भयानक, लोमहर्षक, महान् भूकम्प हुआ, देवताओंकी दुंदुभियाँ टूट गईं। भगवान्को यह बात ज्ञात हुई, तो उन्होंने उस समय यह 'उदान' कहा—

तुलमतुलं च सम्भवं
भवसंखारमवस्सजि मुनि।
अज्झत्तरतो समाहितो,
अभिन्दि कवचमिवत्तसम्भवं ॥

[मुनि (=बुद्ध) ने तुलं (=समान) तथा असमान पुनरुत्पत्ति-कर्म स्वरूप भव-संस्कारको त्याग दिया। आत्मरत एकाग्र चित्त (बुद्ध) ने जन्म रूपी कवचको तोड़ दिया।]

तब आयुष्मान् आनन्दके मनमें यह हुआ—यह महान् भूकम्प हुआ, यह बड़ा भारी भूकम्प हुआ—भयानक, लोमहर्षक; देव दुंदुभियाँ टूट गईं। इस महान् भूकम्पके होनेका क्या हेतु है, और क्या कारण है ?

तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान थे, वहाँ गये। पास जाकर भगवान्को अभिवादन कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्दने भगवान्को यह कहा—यह महान् भूकम्प हुआ, यह बड़ा भारी भूकम्प हुआ—भयानक, लोमहर्षक, देव-दुंदुभियाँ टूट गईं। इस महान् भूकम्पके होनेका क्या हेतु है और क्या कारण है ?

"आनन्द ! भारी भूकम्पके होनेके आठ हेतु हैं, आठ कारण हैं। आनन्द ! यह पृथ्वी पानी पर स्थित है; पानी हवा पर स्थित है, हवा आकाश पर स्थित है। आनन्द ! ऐसा समय आता है जब भारी हवा चलती है, भारी हवाके चलनेसे पानीमें हलचल होती है; पानीमें हलचल होनेसे भूचाल आता है। आनन्द ! भूकम्पका यह पहला हेतु है, पहला कारण है।

"फिर आनन्द ! कोई ऋद्धि-प्राप्त चित्त-विजयी श्रमण या ब्राह्मण-अथवा कोई महान् ऋद्धिवाला, महान प्रतापी देवता होता है। उसने सीमित पृथ्वी संज्ञाकी भावना की होती है, असीम जल-संज्ञा की। वह इस पृथ्वीको कँपाता है, हिलाता है, अच्छी तरह कँपाता है। आनन्द ! भूकम्पका यह दूसरा हेतु है, दूसरा कारण है।

फिर आनन्द ! जब बोधिसत्व तुषितलोकसे च्युत होकर स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त हो माता की कोखमें प्रवेश करते हैं, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चंचल होती है। आनन्द ! भूकम्पका यह तीसरा हेतु है, तीसरा कारण है।

फिर आनन्द ! जब बोधिसत्व स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त हो माताकी कोखसे बाहर आते हैं, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चंचल होती है। आनन्द ! भूकम्पका यह चौथा हेतु है, चौथा कारण है।

फिर आनन्द! जब तथागत अनुपम सम्यक् सम्बोधिको प्राप्त होते हैं, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चंचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह पाँचवाँ हेतु है, पाँचवाँ कारण है।

फिर आनन्द! तथागत अनुपम धर्मचक्रका प्रवर्तन करते हैं, उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चंचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह छठा हेतु है, छठा कारण है।

फिर आनन्द! जब तथागत स्मृति-सम्प्रजन्ययुक्त होकर आयु-संस्कारको शिथिल करते हैं; उस समय यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चंचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह सातवाँ हेतु है, सातवाँ कारण है।

फिर आनन्द! जब तथागत निरुपाधिशेष परिनिर्वाण-धातुके अनुसार परिनिर्वृत्त होते हैं, तो यह पृथ्वी काँपती है, हिलती है, डोलती है, चंचल होती है। आनन्द! भूकम्पका यह आठवाँ हेतु है, आठवाँ कारण है। आनन्द! भूचालके ये आठ हेतु हैं, आठ कारण हैं।

(८) यमक वर्ग

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, किन्तु शीलवान् न हो, तो यह उसकी कमी होती है, उसे उसकी कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ, तथा शीलवान् भी होऊँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान भी होता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, शीलवान् हो, किन्तु बहुश्रुत न हो, तो उसकी यह कमी होती है, उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ, शीलवान् भी होऊँ तथा बहुश्रुत भी होऊँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् होता है, शीलवान् होता है तथा वहुश्रुत होता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

"भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् होता है, शीलवान् होता है, बहुश्रुत होता है, किन्तु धर्मकथिक नहीं होता......धर्मकथिक होता है किन्तु परिषद् (=जनता) में विचरनेवाला नहीं होता......परिषद् (=जनता) में विचरनेवाला होता है किन्तु परिषद् (=जनता) को उपदेश देनेमें पण्डित नहीं होता........उपदेश देनेमें पण्डित होता है, किन्तु इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको बिना कठिनाईके, सरलतासे, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला नहीं होता..........इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको बिना कठिनाईके,

सरलतासे, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला होता है, किन्तु आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको, इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर नहीं विहार करता है, तो उसकी यह कमी होती है। उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ, शीलवान् भी होऊँ, बहुश्रुत भी होऊँ, धर्मकथिक भी होऊँ, परिषद्में विचरनेवाला भी होऊँ, परिषद्को उपदेश देनेवाला पण्डित भी होऊँ, इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको बिना कठिनाईके, सरलतासे, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करनेवाला भी होऊँ तथा आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करूँ।

भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान् भी होता है, बहुश्रुत भी होता है, धर्मकथिक भी होता है, परिषद्में विचरनेवाला भी होता है, परिषद्को उपदेश देनेवाला पण्डित भी होता है, इसी शरीरमें सुखद चारों चैतसिक ध्यानोंको बिना कठिनाईके, सरलतासे, प्रचुर मात्रामें प्राप्त करने वाला भी होता है तथा आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह सबको अच्छा लगने वाला होता है और हर तरहसे परिपूर्ण।

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, किन्तु शीलवान न हो, तो यह उसकी कमी होती है, उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ तथा शीलवान् भी होऊँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान् भी होता है, तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, यदि भिक्षु श्रद्धावान् होता है, शीलवान् होता है किन्तु बहुश्रुत नहीं होता....... बहुश्रुत होता है, किन्तु धर्मकथिक नहीं होता....... धर्मकथिक होता है, किन्तु परिषद् (=जनता) में विचरनेवाला नहीं होता ...... परिषद् (=जनता) में विचरने वाला होता है, किन्तु परिषदको उपदेश देनेवाला पण्डित नहीं होता....... परिषद्को उपदेश देनेवाला पण्डित होता है, किन्तु जो रूपोंका अतिक्रमण कर शान्त, अरूप विमोक्ष हैं उन्हें (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार नहीं करता....... जो रूपोंका अतिक्रमण कर शान्त, अरूप विमोक्ष हैं उन्हें (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार करता है, किन्तु आस्रवोंका क्षय कर,

अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर-प्राप्त कर विहार नहीं करता—यह उसकी कमी होती है। उसे उस कमीकी पूर्ति कर लेनी चाहिये—मैं श्रद्धावान् भी होऊँ, शीलवान् भी होऊँ, बहुश्रुत भी होऊँ, धर्म, कथिक भी होऊँ, परिषदमें विचरनेवाला भी होऊँ, परिषदमें उपदेश देनेवाला पण्डित भी होऊँ, रूपोंका अतिक्रमण कर जो शान्त, अरूप विमोक्ष हैं, उन्हें (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार करनेवाला भी होऊँ तथा आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्तिको इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करूँ। भिक्षुओ, जब भिक्षु श्रद्धावान् भी होता है, शीलवान् भी होता है, बहुश्रुत भी होता है, धर्मकथिक भी होता है, परिषद् (=जनता) में विचरनेवाला भी होता है, परिषदको उपदेश देनेवाला पण्डित भी होता है, रूपोंका अतिक्रमण कर जो शान्त अरूप विमोक्ष हैं उन्हें (चित्त—) कायसे स्पर्श कर विहार करने वाला भी होता है तथा आस्रवोंका क्षय कर, अनास्रव चित्त-विमुक्ति, प्रज्ञा-विमुक्ति को इसी शरीरमें स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर विहार करता है; तो उसकी वह कमी पूरी हो जाती है।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ बातें होती हैं, वह सबको अच्छा लगने वाला होता है और हर तरहसे परिपूर्ण।

एक बार भगवान् नातिकाके गिञ्जिका आवासमें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"भिक्षुओ!" भिक्षुओंने प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवान्ने कहा—भिक्षुओ, मरणानुस्मृति की भावनाकी जाय, वृद्धि की जाय तो वह महान फलको देने वाली होती है, महान शुभ परिणामकारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा। भिक्षुओ! तुम मरणानुस्मृति की भावना करो।"

ऐसा कहने पर एक भिक्षुने भगवान्से कहा "भन्ते! मैं मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।" "भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?" "भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं रात-दिन जीता हूँ, भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है! भन्ते! मैं इस प्रकार "मरणानु-स्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवानसे कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते ! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं दिनभर जीता हूँ, भगवान्के शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है ! ! भन्ते ! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते ! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु ! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है ?"

"भन्ते ! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं आधा-दिन जीता हूँ। भगवान्के शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है ! ! ! भन्ते ! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते ! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु ! तू मरणानुस्मृति की भावना कैसे करता है।"

"भन्ते ! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमें एक बार भोजन किया जा सकता है। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है ! ! ! भन्ते ! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते ! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु ! तू मरणानुस्मृति की भावना कैसे करता है ?"

"भन्ते ! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमें आधा भोजन किया जा सकता है। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है। ! ! ! भन्ते ! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते ! मैं भी मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

"भिक्षु ! तू मरणानुस्मृति की भावना कैसे करता है ?"

"भन्ते ! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ, जितनी देरमें चार-पाँच कौर खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है। ! ! ! भन्ते ! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता है?"

"भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी ही देर जीता हूँ, जितनी देरमें एक और खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है!!! भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

एक दूसरे भिक्षुने भी भगवान्से कहा—"भन्ते! मैं भी मरणानुस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तू मरणानुस्मृतिकी भावना कैसे करता हूँ?"

"भन्ते! मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमें एक साँस भीतर लेकर बाहर निकाल सकूँ, जितनी देरमें एक साँस बाहर निकाल कर भीतर ले सकूँ। भगवान्के शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है।!!! भन्ते! मैं इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता हूँ।"

ऐसा कहनेपर भगवान्ने उन भिक्षुओंको कहा—जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं रात-दिन जीता हूँ, भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है, और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं दिन भर जीता हूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मेरे मनमें ऐसा होता है कि मैं आधे दिन जीता हूँ, भगवान्के शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ जितनी देरमें एक बार भोजन किया जा सकता है। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह कितनी बड़ी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकार भी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ, जितनी देरमें आधा भोजन किया जा सकता है। भगवान्के शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह कितनी बड़ी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकारकी मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मैं उतनी देर जीता हूँ कि जितनी देरमें चार-पाँच कौर खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह कितनी बड़ी बात है;—तो भिक्षुओ, ऐसे भिक्षुओंके बारेमें यही कहा जा सकता है कि ये प्रमादपूर्वक विहार करते हैं, ये आस्रवोंका क्षय करनेके लिये उग्र भावसे मरणानुस्मृति की भावना नहीं करते।

"किन्तु भिक्षुओ, जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृति की भावना करता है कि मैं उतनी ही देर जीता हूँ, जितनी देरमें एक कौर खा सकता हूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है। और जो भिक्षु इस प्रकार मरणानुस्मृतिकी भावना करता है कि मैं उतनी ही देर जीता हूँ जितनी देरमें एक साँस भीतर लेकर बाहर निकाल सकूँ, जितनी देरमें एक साँस बाहर निकाल कर भीतर ले सकूँ। भगवानके शासनको मनमें जगह देता हूँ, तो यह बहुत बड़ी बात है—तो भिक्षुओ, ऐसे भिक्षुओके बारेमें यही कहा जा सकता है कि ये अप्रमादपूर्वक विहार करते हैं, ये आस्रवोंके क्षय के लिये उग्र-भावसे मरणानुस्मृति की भावना करते हैं।

तो भिक्षुओ, यही सीखना चाहिये कि अप्रमादी रह कर विचरेंगे और आस्रवोंका क्षय करनेके लिये उग्र-भावसे मरणानुस्मृति की भावना करेंगे।

एक समय भगवान् नातिकाके गिञ्जकावसथमें विहार करते थे। वहाँ भगवान्ने भिक्षुओंको आमन्त्रित किया—"भिक्षुओ।" भिक्षुओंने प्रतिवचन दिया—"भदन्त!" भगवान्ने कहा—"भिक्षुओ, मरणानुस्मृति की भावना की जाय, वृद्धि की जाय तो वह महान् फल देनेवाली होती है, महान् शुभपरिणाम कारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा।"

"भिक्षुओ, किस प्रकार भावना करनेसे, वृद्धि करनेसे मरणानुस्मृति महान् फल देनेवाली होती है, महान् शुभपरिणाम कारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा। भिक्षुओ, भिक्षु दिनके अस्त होनेपर रात्रिके आगमन होनेपर इस प्रकार विचार करता है—'मेरे मरनेके नाना कारण हो सकते हैं—मुझे साँप भी डस ले सकता है, बिच्छू भी डस ले सकता है, कानखजूरा भी डस ले सकता है—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरा लिये बड़ा खतरा हो सकता है। मैं पाँव फिसल कर गिर भी सकता हूँ, मुझे भोजन भी नहीं पच सकता है, मेरा पित्त प्रकुप्त हो सकता है, मेरा कफ भी प्रकुप्त हो सकता है, अंग प्रत्यंगको काटनेवाला वायु प्रकुप्त हो सकता है, मुझ पर मनुष्य आक्रमण कर सकते हैं, मुझ पर मनुष्येतर आक्रमण कर सकते हैं—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरे लिये बड़ा खतरा हो सकता है। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिये—अभी मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण हैं। यदि रात्रिमें ही मेरा निधन हो जाये, तो ये मेरे लिये खतरनाक हो सकते हैं।

"भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर भिक्षुको ऐसा लगे कि मेरे पाप-पूर्ण अकुशल-धर्म अभी अप्रहीण हैं, जो रात्रिमें मेरा निधन हो जानेपर मेरे लिये खतरनाक

हो सकते हैं, तो उस भिक्षुको, उन पापपूर्ण अकुशल-धर्मोंके प्रहाण (=नाश) के लिये ही विशेष संकल्प, प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिये।

भिक्षुओ, जिस प्रकार किसीके कपड़ों या सिर (के बालों) में आग लग गई हो, तो वह उन कपड़ों अथवा सिर (के बालों) में लगी आगको बुझानेके लिये ही विशेष संकल्प, प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करे; इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको उन पापपूर्ण अकुशल-धर्मोंके प्रहाण (=नाश) के लिये ही विशेष संकल्प प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिये।

"भिक्षुओ, यदि विचार करनेपर भिक्षुको ऐसा लगे कि अब मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण नहीं हैं, जो रात्रिमें मेरा निधन हो जानेपर मेरे लिये खतरनाक हों, तो भिक्षुओ ! उस भिक्षुको चाहिये कि वह दिन रात कुशल-कर्मोंमें लगा रहकर उसी प्रीति-प्रमुदतासे आनन्दित रहे।

"भिक्षुओ, भिक्षु रात्रिके अस्त होनेपर दिन का उदय होनेपर इस प्रकार विचार करता है—मेरे मरनेके नाना कारण हो सकते हैं—मुझे साँप भी डस ले सकता है, बिच्छू भी डस ले सकता है, कानखजूरा भी डस ले सकता है—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरे लिये बड़ा खतरा हो सकता है। मैं पाँव फिसल कर गिर भी सकता हूँ, मुझे भोजन भी नहीं पच सकता है, मेरा पित्त प्रकुप्त हो सकता है, मेरा कफ भी प्रकुप्त हो सकता है, अंग-प्रत्यंगको काटने वाला वायु प्रकुप्त हो सकता है। मुझ पर मनुष्य आक्रमण कर सकते हैं। मनुष्येतर आक्रमण कर सकते हैं—इससे मेरा मरण भी हो सकता है। यह मेरे लिये बड़ा खतरा हो सकता है। भिक्षुओ, उस भिक्षुको इस प्रकार विचार करना चाहिए—अभी मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण हैं। यदि दिनमें मेरा निधन हो जाय तो ये मेरे लिये खतरनाक हो सकते हैं।

"भिक्षुओ, यदि विचार करने पर भिक्षुको ऐसा लगे कि मेरे पापपूर्ण अकुशल धर्म अभी अप्रहीण हैं, जो दिनमें मेरा निधन हो जाने पर, मेरे लिए खतरनाक हो सकते हैं, तो उस भिक्षुको उन पापपूर्ण अकुशल-धर्मोंके प्रहाणके लिये ही विशेष संकल्प प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिए।

भिक्षुओ, जिस प्रकार किसीके कपड़ों या सिरके (बालोंमें) आग लगी हो, तो वह उन कपड़ों अथवा सिरके (बालोंमें) लगी आगको बुझानेके लिये ही विशेष

संकल्प, प्रयत्न, उत्साह, उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करे, इसी प्रकार भिक्षुओ, उस भिक्षुको उन पापपूर्ण अकुशल धर्मोके प्रहाण (= नाश) के लिये ही विशेष संकल्प, प्रयत्न, उत्साह., उद्योग, पराक्रम, स्मृति तथा सम्प्रजन्यका उपयोग करना चाहिए।

"भिक्षुओ, यदि विचार करने पर भिक्षुको ऐसा लगे कि अब मेरे पापपूर्ण अकुशल-धर्म अप्रहीण नहीं हैं, जो दिनमें मेरा निधन हो जाने पर मेरे लिये खतरनाक हों, तो भिक्षुओ, उस भिक्षुको चाहिये कि वह दिन-रात कुशल-कर्मोमें लगा रहकर उसी प्रीति-प्रमुदितासे आनन्दित रहे। भिक्षुओ, इस प्रकार भावना करनेसे, वृद्धि करनेसे, मरणानुस्मृति महान् फल देनेवाली होती है, महान् शुभपरिणाम कारक होती है, अमृतदायिनी होती है, अमृतस्वरूपा।"

भिक्षुओ, आठ सम्पत्तियाँ हैं। कौनसी आठ ? उत्थान-सम्पत्ति, आरक्षा-सम्पत्ति, कल्याण-मित्रता (= सत्संगति) समजीविता, (= समताका जीवन),श्रद्धा-सम्पत्ति, शील-सम्पत्ति, त्याग-सम्पत्ति तथा प्रज्ञा-सम्पत्ति। भिक्षुओ, ये आठ सम्पत्तियाँ हैं—

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।
समं कप्पेति जीविकं, सम्भतं अनुरक्खति॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं।
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्पराय सुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढति॥

(अर्थ ऊपर आ गया है—अनु.)

भिक्षुओ, आठ सम्पदायें (= सम्पत्तियाँ) हैं। कौन-सी आठ ? उत्थान-सम्पदा, आरक्षा-सम्पदा, कल्याण-मित्रता, सम-जीविता, श्रद्धा-सम्पदा, शील-सम्पदा, त्याग-सम्पदा तथा प्रज्ञा-सम्पदा। भिक्षुओ, उत्थान-सम्पदा किसे कहते हैं ? भिक्षु ! कोई कुल-पुत्र किसी भी जीविकाके साधनका उपयोग करने वाला हो—चाहे कृषि हो, चाहे वाणिज्य हो, चाहे गोपालन हो, चाहे धनुर्विद्या हो, चाहे राजकीय चाकरी हो अथवा कोई शिल्प हो—उसमें वह दक्ष होता है, आलस्य-रहित होता है, उसकी मीमांसा करनेमें, उसका उपाय करनेमें संलग्न होता है, उसे करनेमें, उसका संविधान करनेमें समर्थ होता है। भिक्षुओ, यही उत्थान-सम्पदा है।

भिक्षुओ, आरक्षा-सम्पदा किसे कहते हैं? भिक्षुओ, एक कुल-पुत्रने उत्थान वीर्यसे, बाहुबलका उपयोग करके, पसीना बहाकर, धर्मानुसार ऐश्वर्यकी प्राप्ति की होती है। वह इसकी सावधानी बरतता है कि उसके ऐश्वर्य को न राजागण छीन कर ले जाएँ, न चोर चुराकर ले जाएँ, न आग जलाए, न पानी बहाए, तथा उस पर अप्रिय उत्तराधिकारी भी अधिकार न जमा लें। भिक्षुओ, यह आरक्षा-सम्पदा है।

भिक्षुओ, कल्याण-मित्रता किसे कहते हैं? भिक्षुओ, किसी भी गाँव या निगममें कोई कुल-पुत्र रहता है, और उस (गाँव या निगम) में जो गृहपति या गृहपति-पुत्र ऐसे होते हैं, जो चाहे अल्पवयस्क हों और अधिक आयुके हों, किन्तु शीलवृद्ध होते हैं—श्रद्धावान्, सदाचारी, त्यागी, प्रज्ञावान्। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बातचीत करता है, चर्चा करता है। जैसे वे श्रद्धावान् होते हैं, उनसे श्रद्धाका पाठ सीखता है.... जैसे वे शीलवान् होते हैं, उनसे शीलका पाठ सीखता है,.... जैसे वे त्यागी होते हैं, उनसे त्यागका पाठ सीखता है..... जैसे वे प्रज्ञावान् होते हैं, उनसे प्रज्ञाका पाठ सीखता है। वह उनके साथ उठता-बैठता है, बात-चीत करता है, चर्चा करता है। भिक्षुओ, इसे कल्याण-मित्रता कहते हैं।

भिक्षुओ, सम-जीविता (=समताका जीवन) किसे कहते हैं? भिक्षु! एक कुल-पुत्र अपनी भोग-सम्पत्ति की आय और व्यय की जानकारीके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा-स्तर; ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। भिक्षुओ! जैसे कोई तुलाधार (=तराजू वाला) या तुलाधार का शिष्य तुला हाथमें पकड़ता है, तो जानता है कि इतनी कमी है वा इतनी अधिकता है। इसी प्रकार भिक्षुओ! एक कुल-पुत्र अपनी भोग (=सम्पत्तिकी) आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा स्तर; ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक न होगी, ऐसे मेरा व्यय आयसे अधिक न होगा। भिक्षुओ! यदि यह यह कुल-पुत्र अल्पायु होता हुआ भी जीवनका स्तर ऊँचा रखता है तो लोग उसके बारेमें कहते हैं कि यह कुल-पुत्र गूलर खानेके समान ऐश्वर्यका भोग करता है, अर्थात् खानेसे भी अधिक विखेरता है। भिक्षुओ, यदि यह कुल-पुत्र अधिक आय वाला होता हुआ भी जीवनका स्तर बहुत नीचा रखता है तो लोग उसके शरीरके बारेमें कहते हैं कि यह अनाथ-मरण मरने वाला है। लेकिन भिक्षुओ,! जब एक कुल-पुत्र अपनी भोग (=सम्पत्ति) की आय और व्ययके अनुसार सम-जीवन व्यतीत

करता है—न बहुत ऊँचा स्तर, न बहुत नीचा स्तर—ऐसे मेरी आय व्ययसे अधिक रहेगी, ऐसे मेरा व्यय आय से अधिक न होगा। भिक्षुओ! इसे सम-जीविता कहते हैं।

भिक्षुओ, श्रद्धा-सम्पदा किसे कहते हैं? भिक्षुओ! कुल-पुत्र श्रद्धावान् होता है, वह तथागत की बोधि (=ज्ञान-प्राप्ति) के प्रति श्रद्धावान् होता है वे भगवान् अर्हत् हैं. . . .देव-मनुष्योंके सारथी बुद्ध भगवान हैं भिक्षुओं, इसे श्रद्धा-सम्पदा कहते हैं।

भिक्षुओ, शील-सम्पदा किसे कहते हैं? भिक्षुओ, कुल-पुत्र प्राणी हिंसासे विरत होता है. . . . .सुरा-मेरय आदि नशीली वस्तुओंके सेवनसे विरत होता है। भिक्षुओ, इसे शील-सम्पदा कहते हैं।

भिक्षुओ, त्याग-सम्पदा किसे कहते हैं? भिक्षुओ, कुल-पुत्र मल-मात्सर्य रहित चित्तसे गृहवास करता है, त्यागी, खुले हाथवाला, दान-शील, याचकों को देनेवाला, बाँटनेवाला। भिक्षुओ, इसे त्याग-सम्पदा कहते हैं।

भिक्षुओ, प्रज्ञा-सम्पदा किसे कहते हैं? भिक्षुओ, कुल-पुत्र प्रज्ञावान् होता है, उदयास्त सम्बन्धी, आर्य, बींधनेवाली, सम्यक् रूपसे दुःखका क्षय करानेवाली प्रज्ञासे युक्त होता है। भिक्षुओ, इसे प्रज्ञा-सम्पदा कहते हैं। भिक्षुओं, ये आठ सम्पदायें हैं।

उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा,
समं कप्पेति जीविकं, सम्भतं अनुरक्खति॥
सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स, घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्पराय सुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढति॥

[अर्थ ऊपर आ ही गया है— अनु.।]

आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओंको सम्बोधित किया—"आयुष्मान् भिक्षुओ।" उन भिक्षुओंने "आयुष्मान्" कह आयुष्मान् सारिपुत्र को प्रतिवचन दिया। आयुष्मान् सारिपुत्रने यह कहा—

"आयुष्मानो! संसारमें आठ तरहके लोग विद्यमान हैं। कौन-से आठ? आयुष्मानो! एक भिक्षु है जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है,

उसके मनमें (किसी वस्तुको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिए। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेके बावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। उस अप्राप्तिके कारण वह चिन्तित होता है, दुःखी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, बेहोश तक हो जाता है। आयुष्मान् इसे कहते हैं—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह उसे प्राप्त करनेके लिए उठता है, प्रयत्न करना है, कोशिश करता है। उसे वह वह 'लाभ' नहीं मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

"आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करने, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस लाभके कारण मदको, प्रमादको प्राप्त होता है। इसे कहते हैं—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, वह प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' मिलता है। इससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। वह सद्धर्म से 'च्युत' हो गया।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। उस अप्राप्ति के कारण वह चिन्तित होता है, दुखी होता है, पश्चात्ताप करता है, छाती पीटता है, बेहोश तक हो जाता है। आयुष्मानो, इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिये न उठता है, न प्रयत्न करता है, और न कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नहीं मिलता है। वह चिन्तित होता है। वह रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करने की इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके बावजूद (वह

वस्तु) मिल जाती है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। आयुष्मानो! इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। किन्तु, वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसे वह 'लाभ' मिलता है। इससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त होता है। वह सद्धर्मसे च्युत हो गया।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर प्रयत्न करने, कोशिश करनेके बावजूद उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। उस अप्राप्तिके कारण, वह न चिन्तित होता है, न दुःखी होता है, न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है और न बेहोश होता है। आयुष्मानो! उसे कहते हैं—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नहीं मिलता है। वह न चिन्तित होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नहीं हुआ।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके उठकर, प्रयत्न करनेसे, कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति हो जाती है। वह उस 'लाभ' के कारण 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता। आयुष्मानो! इसे कहते हैं—'वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। वह उसे प्राप्त करनेके लिये उठता है, प्रयत्न करता है, कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' मिल जाता है। इससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता। वह सद्धर्मसे 'च्युत' नहीं हुआ।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेसे उसे (उस वस्तुकी) प्राप्ति नहीं होती। वह उस अप्राप्तिके कारण न चिन्तित होता है, न दुखी होता है, न पश्चात्ताप करता है, न छाती पीटता है, न बेहोश होता है। आयुष्मानो! इसे कहते हैं—वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है, किन्तु वह उसे प्राप्त करनेके लिये न उठता है, न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है। उसे वह 'लाभ' नहीं मिलता। वह न चिन्तित

होता है, न रोता-पीटता है। वह सद्धर्मसे च्युत नहीं हुआ।

आयुष्मानो! एक भिक्षु है, जो एकान्त-सेवी है, जो विदर्शना-भावनाके सम्बन्धमें प्रयत्नशील है, उसके मनमें (किसी चीजको) प्राप्त करनेकी इच्छा उत्पन्न होती है। वह न उठता है न प्रयत्न करता है, न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसके न उठने, न प्रयत्न करने, न कोशिश करनेके बावजूद (वह वस्तु) मिल जाती है। उस 'लाभ' से वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता। आयुष्मानो! इसे कहते हैं— वह भिक्षु लाभकी इच्छा करता है। किन्तु वह न उठता है, न प्रयत्न करता है और न कोशिश करता है उसे प्राप्त करनेके लिये। उसे वह 'लाभ' मिलता है। उससे वह 'मद' को, 'प्रमाद' को प्राप्त नहीं होता। वह सद्धर्मसे च्युत नहीं हुआ।

आयुष्मानो! संसारमें ये आठ तरहके लोग विद्यमान हैं।

आयुष्मान् सारिपुत्रने भिक्षुओंको सम्बोधित किया.......आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, और दूसरोंका भी हित करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी छह? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला होता है; समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला होता है; धारण किये हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करनेवाला होता है; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है; हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धि-संगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला तथा प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये छह बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है।

आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये पाँच बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता हैं तथा दूसरोंका भी हित करनेमें समर्थ होता है। कौन-सी पाँच बातें? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला नहीं होता, समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है; हितकर.........प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये पाँच बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें

समर्थ होता है, किन्तु दूसरेका हित करनेमें समर्थ नहीं होता। कौन-सी चार बातें? भिक्षुओ, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करनेवाला होता है, अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है, किन्तु हितकर........बोलने वाला नहीं होता; अपने साथियों.......प्रसन्न करनेवाला नहीं होता। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, किन्तु दूसरोंका हित करनेमें समर्थ नहीं होता।

आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नहीं। कौन-सी चार बातें? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला होता है, समझे हुए धर्मोंका धारण करनेवाला होता है, किन्तु धारण किये हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करनेवाला नहीं होता; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला नहीं होता; हितकर ....अर्थ-बोधक वाणी बोलनेवाला होता है; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखाने वाला........प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये चार बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नहीं।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका नहीं। कौन-सी तीन बातें? आयुष्मानो! भिक्षु कुशल धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला नहीं होता; समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला होता है, धारण किये हुए धर्मोंके अर्थपर विचार करनेवाला होता है; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला होता है; हितकर.....बोलनेवाला नहीं होता; अपने......प्रसन्न करने वाला नहीं होता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका नहीं।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें समर्थ नहीं होता। कौन सी तीन बातें? आयुष्मानो, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला नहीं होता; समझे हुए धर्मोंके अर्थ पर विचार करनेवाला नहीं होता; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करनेवाला नहीं होता; हितकर, प्रिय......अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला होता है, अपने साथियोंको........प्रसन्न करनेवाला होता है, आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये तीन बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नहीं।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ नहीं होता। कौन-सी दो? आयुष्मानो, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझनेवाला नहीं होता, समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला नहीं होता; धारण किये हुए धर्मोंके अर्थ पर विचार करने वाला होता है; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार आचरण करने वाला होता है; हितकर, प्रिय. . . .अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला नहीं होता, अपने साथियोंको (रास्ता) दिखाने वाला, . . .प्रसन्न करने वाला नहीं होता। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं, वह अपना हित करनेमें समर्थ होता है, दूसरोंका हित करनेमें समर्थ नहीं होता।

आयुष्मानो, जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना हित करनेमें नहीं। कौन-सी दो बातें? आयुष्मानो, भिक्षु कुशल-धर्मोंको क्षिप्र समझने वाला नहीं होता; समझे हुए धर्मोंको धारण करनेवाला नहीं होता; अर्थ और धर्मका सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर तदनुसर आचरण करनेवाला नहीं होता; हितकर, प्रिय, विश्वासोत्पादक, बुद्धि-संगत, अर्थ-बोधक वाणी बोलने वाला होता है; अपने साथियोंको (रास्ता) दिखानेवाला, प्रेरित करनेवाला, उत्साहित करनेवाला प्रसन्न करनेवाला होता है। आयुष्मानो! जिस भिक्षुमें ये दो बातें होती हैं, वह दूसरोंका हित करनेमें समर्थ होता है, अपना नहीं।

भिक्षुओ, आठ बातें शैक्ष भिक्षुको पतनोन्मुख बताती हैं। कौन-सी आठ? दुनियाके काम-काज में लगे रहना, बातचीतमें लगे रहना, सोते रहना, मण्डली-प्रेम, इन्द्रियोंका असंयम, भोजनमें मात्रज्ञ न होना, संसर्ग-प्रियता तथा प्रपंचमें लगे रहना। भिक्षुओ, ये आठ बातें शैक्ष भिक्षु को पतनोन्मुख बनाती हैं।

भिक्षुओ, ये आठ बातें शैक्ष भिक्षुको पतनोन्मुख नहीं बनातीं। कौन-सी आठ? दुनियाके काम-काजमें न लगे रहना, बातचीतमें न लगे रहना, सोते न रहना, मण्डली-प्रेमका न होना, इन्द्रियोंका संयम, भोजन में मात्रज्ञ होना, संसर्ग-प्रियताका न होना तथा प्रपंचमें न लगे रहना। भिक्षुओ, ये आठ बातें शैक्ष भिक्षुको पतनोन्मुख नहीं बनातीं।

भिक्षुओ, ये आठ आलस्य-वार्तायें हैं। कौन-सी आठ? भिक्षुओ, भिक्षुको कुछ काम करना होता है। वह सोचता है—'मुझे काम करना होगा। काम करनेसे शरीर क्लान्त होगा। मैं लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त की प्राप्तिके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतका साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नहीं करता। भिक्षुओ, यह पहली आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, भिक्षुने कुछ काम किया होता है। वह सोचता है–'मैंने काम किया है। काम करनेसे शरीर क्लान्त हो गया है। मैं लेट जाऊँ'। वह लेट जाता है। वह अप्राप्तकी प्राप्तिके लिये, ला-हासिल को हासिल करनेके लिए, असाक्षात्कृतका साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नहीं करता। भिक्षुओ, यह दूसरी आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, फिर भिक्षुको रास्ता चलना होता है। वह सोचता है–'मुझे रास्ता चलना होगा। रास्ता चलनेसे मेरा शरीर क्लान्त होगा। मैं लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त की प्राप्तिके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृत को साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नहीं करता। भिक्षुओ, यह तीसरी आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, भिक्षु द्वारा रास्ता चला गया होता है। वह सोचता है—'मैं रास्ता चला हूँ। रास्ता चलनेसे मेरा शरीर क्लान्त हो गया है। मैं लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त की प्राप्ति के लिये, ला-हासिल को हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतका साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न नहीं करता। भिक्षुओ, यह चौथी आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें नहीं मिला। वह सोचता है–'मुझे गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें नहीं मिला। मेरा शरीर क्लान्त हो गया है, काम करने योग्य नहीं है। मैं लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त. . . . . प्रयत्न नहीं करता। भिक्षुओ, यह पाँचवीं आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें मिला। वह सोचता है–'मुझे गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें मिला। मेरा शरीर क्लान्त हो गया है, काम करने योग्य नहीं है। मैं लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त. . . . . .प्रयत्न नहीं करता भिक्षुओ, यह छठी आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको कोई मामूली बीमारी होती है। वह सोचता है—"मुझे यह मामूली बीमारी हुई है। मेरा लेटना योग्य है। मैं लेटता हूँ।" वह लेट जाता है। वह अप्राप्त. . . . .प्रयत्न नहीं करता। भिक्षुओ, यह सातवीं आलस्य-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको रोग-शय्यासे उठे थोड़ा ही समय हुआ होता है।

वह सोचता है—'मुझे रोग-शय्यासे उठे थोड़ा ही समय हुआ है। मेरा शरीर दुर्बल है, काम करनेके योग्य नहीं है। मैं लेटता हूँ।' वह लेट जाता है। वह अप्राप्त. . . . . . .प्रयत्न नहीं करता। भिक्षुओ, यह आठवीं आलस्य-वार्ता है।

भिक्षुओ, ये आठ उत्साह-वार्तायें हैं। कौन-सी आठ? भिक्षुओ, भिक्षुको कुछ काम करना होता है। वह सोचता है—मुझे काम करना होगा। किन्तु काम-धाम करते समय मेरे लिये बुद्धोंके अनुशासनकी ओर ध्यान देना सहज न होगा। इस-लिए मैं अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये तथा असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिये तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करूँ। वह अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिये प्रयत्न आरम्भ करता है। भिक्षुओ, यह प्रथम उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, जो भिक्षु कुछ काम किए होता है। वह सोचता है— मैंने काम-धाम किया। किन्तु काम-धाम करते समय मैं बुद्धोंके अनुशासनकी ओर ध्यान न दे सका। इसलिये मैं अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिए असाक्षातकृतको साक्षात करनेके लिए प्रयत्न आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह दूसरी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको रास्ता चलना होता है। वह सोचता है—मुझे रास्ता तय करना होगा। रास्ता चलते समय बुद्धोंके शासनकी ओर ध्यान दे सकना सहज नहीं। मैं अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिए . . . . आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह तीसरी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षु रास्ता चला होता है। वह सोचता है—मैंने रास्ता तय किया है। रास्ता तय करते समय मैं बुद्धोंके शासनकी ओर ध्यान दे सकनेमें असमर्थ रहा हूँ। अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये. . .आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ,यह चौथी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें नहीं मिला। उसके मनमें होता है—मुझे गाँव या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें नहीं मिला। इसके कारण मेरा शरीर हल्का है, काम करने योग्य है। मैं अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये. . . . . आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह पाँचवी उत्साह-वार्ता है।

"फिर भिक्षुओ, भिक्षुको गाँवमें या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें मिलता है। वह सोचता है—मुझे गाँव या निगममें भिक्षाटन करते समय बढ़िया अथवा घटिया भोजन पर्याप्त मात्रामें मिला है।

इसलिए मेरा शरीर बलवान् है, कामके योग्य है। मैं अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये . . . . आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह छठी उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको कोई मामूली बीमारी होती है। वह सोचता है—मुझे यह मामूली बीमारी हुई है। इसकी सम्भावना है कि मेरा यह रोग बढ़ भी जाय। इसलिये मैं अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिये . . . . तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करता हूँ। भिक्षुओ, यह सातवीं उत्साह-वार्ता है।

फिर भिक्षुओ, भिक्षुको रोग-शय्यासे उठे थोड़ा ही समय हुआ होता है। वह सोचता है—मुझे रोग शय्यासे उठे थोड़ा ही समय हुआ है। लेकिन इसकी सम्भावना है कि मेरा यह रोग पुनः लौट आये। इसलिये मैं अप्राप्त को प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिये, असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिए तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करता हूँ। वह अप्राप्तको प्राप्त करनेके लिये, ला-हासिलको हासिल करनेके लिए, असाक्षात्कृतको साक्षात् करनेके लिए तुरन्त प्रयत्न आरम्भ करता है। भिक्षुओ, यह आठवीं उत्साह-वार्ता है।

भिक्षुओ, ये आठ उत्साह-वार्तायें हैं।

९. स्मृति-वर्ग

भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्यके न रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य विहीन व्यक्तिकी लज्जा और (पाप कर्मसे) भयकी सम्भावना जाती रहती है। लज्जा और (पाप-कर्मसे) भयके न रहने पर लज्जा और पाप-भीरुता से रहित व्यक्तिकी इन्द्रिय-संवर की संभावना भी जाती रहती है। इन्द्रिय-संवरके न रहने पर, इन्द्रिय-संवर रहित व्यक्तिकी शीलकी संभावना भी जाती रहती है। शीलके न रहने पर, शील-विरहित व्यक्तिकी सम्यक् समाधि की संभावना भी जाती रहती है। सम्यक् समाधिके न रहने पर, सम्यक् समाधि-विरहित व्यक्तिकी यथार्थ ज्ञान-दर्शन की संभावना भी जाती रहती है। यथार्थ ज्ञान-दर्शनके न रहने पर यथार्थ-ज्ञान-दर्शन विरहित व्यक्तिकी निर्वेद-वैराग्यकी संभावना भी जाती रहती है। निर्वेद-वैराग्यके न रहने पर, निर्वेद-वैराग्य विरहित व्यक्तिकी विमुक्ति ज्ञान-दर्शन की संभावना भी जाती रहती है।

भिक्षुओ, जैसे शाखा और पत्तोंसे विहीन वृक्ष की पपड़ी भी ठीक नहीं होती, त्वचा भी नहीं, फेग्गु (= फल्गु) भी नहीं तथा सार भी नहीं। इसी प्रकार भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्यके न रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य विहीन व्यक्ति की लज्जा और (पाप-कर्मसे) भयकी सम्भावना भी जाती रहती है। लज्जा और भयके न रहने पर . . विमुक्ति-ज्ञान-दर्शन की सम्भावना भी जाती रहती है।

भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्यके रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य युक्त व्यक्तिकी लज्जा और पाप-भीरुताकी सम्भावना बनी रहती है। लज्जा और पाप-भीरुताके रहने पर, लज्जा और पाप-भीरुता युक्त व्यक्तिकी इन्द्रिय-संयमकी संभावना बनी रहती है। इन्द्रिय-संयमके रहने पर, इन्द्रिय संयम-युक्त व्यक्तिके शीलकी संभावना बनी रहती रहती है। शीलके रहने पर, शील-युक्त व्यक्तिकी सम्यक् समाधिकी संभावना बनी रहती है। सम्यक् समाधिके रहने पर, सम्यक् समाधि-युक्त व्यक्तिकी यथार्थ ज्ञान-दर्शनकी संभावना बनी रहती है। यथार्थ ज्ञान-दर्शनके रहने पर, यथार्थ ज्ञान-दर्शन युक्त व्यक्तिकी निर्वेद-वैराग्यकी संभावना बनी रहती है। निर्वेद-वैराग्यके रहने पर निर्वेद-वैराग्य युक्त व्यक्तिकी विमुक्ति ज्ञान-दर्शनकी संभावना बनी रहती है।

भिक्षुओ, जैसे शाखा और पत्तोंसे सहित वृक्ष की पपड़ी भी ठीक रहती है, त्वचा भी, फेग्गु (= फलगु) भी तथा सार भी। इसी प्रकार भिक्षुओ, स्मृति-सम्प्रजन्य के रहने पर, स्मृति-सम्प्रजन्य-युक्त व्यक्तिकी लज्जा और पाप-भीरुता की संभावना बनी रहती है। लज्जा और पाप-भीरुताके रहने पर. . . . विमुक्ति ज्ञान-दर्शनकी संभावना बनी रहती है।

तब आयुष्मान् पुण्णिय जहाँ भगवान थे, वहाँ पहुँचे। पास जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठे। एक ओर बैठे आयुष्मान् पुण्णियने भगवान्से यह निवेदन किया—"भन्ते! क्या हेतु है, क्या कारण है कि कभी तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित होती है, कभी प्रवर्तित नहीं होती है?"

"हे पुण्णिय! यदि भिक्षु श्रद्धावान् हो, लेकिन (तथागतके) समीप न आये, तो तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित नहीं होती। पुण्णिय! जब भिक्षु श्रद्धावान् होता है और तथागतके समीप आता है, तब तथागतकी देशना प्रवर्तित होती है। पुण्णिय, भिक्षु श्रद्धावान् हो, समीप आनेवाला भी हो, किन्तु आश्रममें रहनेवाला न हो . . . . . आश्रममें रहने वाला हो, किन्तु जिज्ञासा न हो . . . . जिज्ञासा हो, किन्तु ध्यानसे सुनता न हो . . . . . ध्यानसे सुनता हो, किन्तु सुनकर (मनमें) धारण न करता हो . . . . सुनकर (मनमें) धारण करता हो, किन्तु धारण किये हुए धर्मोंके अर्थ पर विचार न करता हो . . . . . धारण किये हुए धर्मोंके अर्थ पर विचार करता हो, किन्तु अर्थ तथा धर्मको जानकर तदनुसार आचरण न करता हो—ऐसी हालतमें तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित नहीं होती।

पुण्णिय, जब भिक्षु श्रद्धावान् होता है, समीप आता है, सेवामें रहता है, प्रश्न करता है, ध्यानसे सुनता है, सुने हुए धर्मको धारण करता है, धारण किए हुए

धर्मोंके अर्थपर विचार करता है तथा अर्थ और धर्मको जानकर धर्मानुसार आचरण करता है, तब तथागतकी धर्म-देशना प्रवर्तित होती है। पुण्णिय! इस प्रकार तथागत की धर्म-देशना इन आठ बातोंके होनेसे निश्चय रूपसे प्रतिवर्तित (= प्रतिभाषित) होती है।

भिक्षुओ, यदि दूसरे मतोंके परिव्राजक प्रश्न करें---आयुष्मानो! सभी (संस्कृत-) धर्मोंका मूल क्या है? सभी धर्मोंकी उत्पत्ति क्या है? सभी धर्मोंका उदय कहाँसे होता है,? सभी धर्म कहाँ एकत्र होते हैं? सभी धर्मोंमें प्रमुख क्या है? सभी धर्मोंमें अधिपति क्या है? सभी धर्मोंमें श्रेष्ठतम क्या है? सभी धर्मोंका सार क्या है?--तो इस प्रकार पूछे जानेपर तुम दूसरे मतोंके परिब्राजकोंको क्या उत्तर दोगे!

"भन्ते! हमारे धर्म-ज्ञानका मूल आप भगवान् ही हैं, भगवान् ही हमारे नेता हैं, हम भगवान्‌की ही शरण हैं। भन्ते! अच्छा हो यदि भगवान् ही इस कथनकी व्याख्या कर दें। भगवान् से सुनकर भिक्षु ग्रहण करेंगे।"

"तो भिक्षुओ, देशना करता हूँ। ध्यानसे सुनो। कहता हूँ।"

"भन्ते! बहुत अच्छा" कह उन भिक्षुओंने भगवान्‌को प्रतिवचन दिया। भगवान्‌ने यह कहा ---भिक्षुओ! यदि दूसरे मतोंके परिव्राजक ऐसे प्रश्न करें कि सभी (संस्कृत-) धर्मोंका मूल क्या है? सभी धर्मोंकी उत्पत्ति क्या है? सभी धर्मोंका उदय कहाँसे होता है? सभी धर्म कहाँ एकत्र होते हैं? सभी धर्मोंमें प्रमुख क्या है? सभी धर्मोंका अभिप्राय क्या है? सभी धर्मोंमें श्रेष्ठतम क्या है? सभी धर्मोंका सार क्या है?---तो इस प्रकार पूछे जाने पर, तुम दूसरे मतोंके साधुओंको इस प्रकार उत्तर दे सकते हो---आयुष्मानो! सभी धर्मोंका मूल छन्द (= संकल्प) है। सभी धर्म मनसे उत्पन्न होते हैं। सभी धर्मोंका उदय स्पर्शसे होता है। सभी धर्म तीनों प्रकारकी वेदना में एकत्र होते हैं। सभी धर्मोंमें समाधि प्रमुख है। सभी धर्मोंमें स्मृति अधिपति (= प्रधान) है। सभी धर्मोंमें प्रज्ञा श्रेष्ठतम है। सभी धर्मोंमें सार वस्तु विमुक्ति है। भिक्षुओ, यदि तुमसे दूसरे मतोंके परिब्राजक पूछें तो तुम उन्हें इस प्रकार उत्तर दे सकते हो।

भिक्षुओ, जिस महाचोरमें ये आठ बातें होती हैं, वह शीघ्र ही समाप्त हो जाता है, चिरस्थायी नहीं होता। कौन-सी आठ? आक्रमण न करने वालेपर आक्रमण करता है, सर्वस्व छीन लेता है, स्त्रियोंकी हत्या कर डालता है, तरुणियोंको भ्रष्ट करता है, प्रव्रजित को लूटता है, राज-कोषको लूटता है, अति समीप ही (चौर-) कर्म करता है तथा चोरीके सामानको सम्हाल कर रखनेमें कुशल नहीं होता। भिक्षुओ,

जिस महाचोरमें ये आठ बातें होती हैं, वह शीघ्र ही समाप्त हो जाता है, चिरस्थायी नहीं होता।

भिक्षुओ, जिस महाचोरमें ये आठ बातें होती हैं, वह शीघ्र ही समाप्त नहीं होता, चिरस्थायी होता है। कौन-सी आठ? आक्रमण न करने वाले पर आक्रमण नहीं करता, सर्वस्व नहीं छीनता, स्त्रियोंकी हत्या नहीं करता, कुमारियोंको भ्रष्ट नहीं करता, प्रव्रजितोंको नहीं लूटता, राज-कोषको नहीं लूटता, अति समीप ही (चौर-) कर्म नहीं करता तथा चोरीके सामानको सम्हाल कर रखनेमें समर्थ होता है। भिक्षुओ, जिस महाचोरमें ये आठ बातें होती हैं, वह शीघ्र ही समाप्त नहीं होता, चिरस्थायी होता है।

भिक्षुओ 'श्रमण' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका ही पर्याय है। भिक्षुओ, 'ब्राह्मण' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'वेदगू' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'भिषक्' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'निर्मल' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'विमल' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'ज्ञानी' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है। भिक्षुओ, 'विमुक्त' शब्द तथागत अर्हत् सम्यक् सम्बुद्धका पर्याय है।

यं समणेन पत्तब्बं, ब्राह्मणेन वुसीमता।
ये वेदगुना पत्तब्बं, भिसक्केन अनुत्तरं॥
यं निम्मलेन पत्तब्बं, विमलेन सुचीमता।
यं ञाणिना च पत्तब्बं विमुत्तेन अनुत्तरं॥
सोहं विजितसंगामो, मुत्तो मोचेमि बन्धना।
नागोम्हि परमदन्तो, असेखो परिनिब्बुतो॥

[जो श्रमणका प्राप्य है, जो वशी ब्राह्मणका प्राप्य है, जो वेदगूका प्राप्य है, जो भिषक्का प्राप्य है, जो निर्मल का प्राप्य है, जो पवित्र विमलका प्राप्य है, जो ज्ञानीका प्राप्य है तथा जो अनुपम पद विमुक्त द्वारा प्राप्य है, उसे संग्राम-विजयी, मुक्त मैंने प्राप्त कर लिया है। मैं परम-दन्त नाग, अशैक्ष हूँ और परिनिर्वाण प्राप्त हूँ। मैं दूसरोंको बन्धन मुक्त करता हूँ।]

एक समय महान् भिक्षु संघके साथ भगवान् कोशल जनपदमें चारिका करते हुए जहाँ कोशल (जनपद) का इच्छानंगल नामक ब्राह्मण-ग्राम था, वहाँ पहुँचे। वहाँ भगवान इच्छानंगलके वन-खण्डमें विहार करते थे। इच्छानंगलके

ब्राह्मण-गृहपतियोंने सुना कि शाक्य-कुल प्रव्रजित शाक्य-पुत्र श्रमण गौतम इच्छानंगल पधारे हैं और इच्छानंगलके वन-खण्डमें विहार कर रहे हैं। उन भगवान् गौतमका इस प्रकारका यश, इस प्रकारकी कीर्ति सुनाई देती है कि वे भगवान अर्हत् हैं, सम्यक् सम्बुद्ध हैं.........ऐसे अर्हतोंका दर्शन करना अच्छा होता है।"

तब इच्छानंगलके ब्राह्मण-गृहपति उस रातके बीत जानेपर, बहुत-सी खाद्य-भोज्य सामग्री ले, जहाँ इच्छानंगल वन-खण्ड था, वहाँ पहुँचे। जाकर हल्ला करते हुए, शोर मचाते हुए दरवाजे वाले प्रकोष्ठके बाहर खड़े हुए। उस समय आयुष्मान् नागित भगवानके उपस्थापक (=सेवक) थे। तब भगवानने आयुष्मान् नागितको सम्बोधित किया—"नागित! ये कौन हैं जो इतना हल्ला मचा रहे हैं, इतना शोर मचा रहे हैं, मानो मछवे मछलियोंके लिये लेन-देन कर रहे हैं।

भन्ते! ये इच्छानंगलके ब्राह्मण-गृहपति हैं जो आपके तथा भिक्षु-संघके लिये बहुत-सी खाद्य-भोज्य सामग्री लेकर आये हैं और दरवाजे वाले कोठेके बाहर खड़े हैं।"

"नागित! मुझे ऐश्वर्य (=यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रखो। नागित! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख, तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मात्रामें प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, बहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवांछित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशंसा रूपी सुखका स्वागत करे।"

"भगवान्! इस समय इसे स्वीकार करें; सुगत! इस समय इसे ग्रहण करें। भन्ते! यह आपके इसे सहन करनेका समय है। भन्ते! अब आप जिस-जिस ओर भी पधारेंगे, उस-उस ओरके ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकी ओर झुक जायेंगे। जिस प्रकार मूसलाधार वर्षाके होनेपर, जिधर ढलान होता है, पानी उधर ही वह जाता है; इसी प्रकार आप जिस-जिस ओर भी पधारेंगे, उस-उस ओर ब्राह्मण-गृहपति, निगमके लोग तथा जनपदके लोग आपकी ओर झुक जायेंगे। ऐसा किसलिये? भगवान आपका शील तथा प्रज्ञा ऐसी ही है।"

"नागित! मुझे ऐश्वर्य (=यश) से दूर रहने दो और ऐश्वर्यको मुझसे दूर रहने दो। नागित! जिसे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख प्रचुर मात्रामें प्राप्त न हो, सरलतासे प्राप्त न हो, बहुलतासे प्राप्त न हो, वही इस जिगुप्सित-सुख, अवांछित-सुख, लाभ-सत्कार-प्रशंसा रूपी सुखका स्वागत करे।

"नागित ! कोई-कोई देवता भी इस निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुखसे वंचित हैं। वह उन्हें इतनी प्रचुर मात्रामें, सरलतासे, बहुलतासे प्राप्त नहीं है; जिस प्रचुर मात्रामें, जिस सरलतासे, जिस बहुलतासे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख मुझे प्राप्त है। नागित ! मण्डलीमें विचरण करनेवाले तुम्हारे मनमें भी ऐसा होता है—निश्चयसे आयुष्मानोंने इस निस्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुखको प्रचुर मात्रामें, सरलतासे, बहुलतासे प्राप्त नहीं किया है। इसीलिए यह आयुष्मान् एक जगह एकत्र हो, मण्डलीमें विहार करते हैं।

"नागित ! मैं यहाँ भिक्षुओंको देखता हूँ जो परस्पर एक दूसरेको उँगुली गड़ा-गड़ाकर, हँसी-मजाक कर खेलते हैं। नागित ! तब मेरे मनमें होता है—निश्चयसे ये आयुष्मान् इस निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुखके इस प्रचुर मात्रामें, सरलतासे, बहुलतासे लाभी नहीं हैं, जिस प्रचुर मात्रामें, सरलतासे, बहुलतासे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख मुझे प्राप्य है। इसीलिये ये आयुष्मान् परस्पर एक दूसरेको उँगली गड़ा-गड़ाकर रगड़-रगड़कर खेलते हैं।

"नागित ! मैं यहाँ भिक्षुओंको देखता हूँ कि पेट भर खाकर, भोजन कर, शय्या-सुख, लेटनेका सुख तथा आलस्यके सुखका अनुभव करते हैं। नागित ! तब मेरे मनमें होता है—निश्चयसे ये आयुष्मान् इस निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख, शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुखके इस प्रचुर मात्रामें, सरलता से, बहुलतासे लाभी नहीं हैं, जिस प्रचुर मात्रामें, सरलतासे, बहुलतासे यह निष्क्रमण-सुख, एकान्त-सुख शान्ति-सुख तथा सम्बोधि-सुख मुझे प्राप्य है। इसीलिये ये आयुष्मान् पेट भर भोजन कर, शय्या-सुख, लेटनेके सुख तथा आलस्यके सुखका अनुभव करते हैं।

"नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ जो ग्रामकी सीमापर एकाग्र-चित्त बैठा होता है। तब नागित ! मेरे मनमें होता है कि अब विहारमें रहनेवाला भिक्षु या श्रमण बननेकी प्रतीक्षा करनेवाला इस आयुष्मानके पास आयेगा और इसके चित्तकी एकाग्रताको नष्ट कर देगा। हे नागित ! उस भिक्षुके ऐसे ग्रामकी सीमा परके विहरणसे मैं सन्तुष्ट नहीं होता।

नागित ! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ जो जंगलमें बैठा ऊँघ रहा है। उस समय नागित ! मेरे मनमें यह होता है—अब यह आयुष्मान् इस निद्रा-तन्द्राको

जीत कर एकान्त आरण्य-वासका ही ध्यान करेगा। हे नागित! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरण से मैं प्रसन्न होता हूँ।

नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो जंगलमें अस्थिर चित्त बैठा है। उस समय नागित! मेरे मनमें यह होता है—अब यह आयुष्मान् (अपने) अस्थिर चित्तको स्थिर करेगा अथवा स्थिर-चित्तको स्थिर बनाये रखेगा। हे नागित! उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे मैं प्रसन्न होता हूँ।

नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो गाँवकी सीमा पर रहता है। उसे चीवर, पिण्डपात (=भोजन) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य-परिष्कार आदिकी प्राप्ति होती है। वह इस लाभ-सत्कारकी कामनासे ध्यान-मार्गका त्याग करता है, आरण्यवासके एकान्त-जीवनका त्याग करता है, ग्राम-निगम-राजधानियोंमें आकर रहने लग जाता है। नागित! मैं ऐसे भिक्षुके इस गाँवकी सीमापर रहनेसे प्रसन्न नहीं होता।

नागित! मैं एक भिक्षुको देखता हूँ कि जो आरण्यमें रहता है। उसे चीवर, पिण्डपात (=भोजन) शयनासन, ग्लान-प्रत्यय, भैषज्य-परिष्कार आदिकी प्राप्ति होती है। वह इस लाभ-सत्कारकी उपेक्षा कर ध्यान-मार्गका त्याग नहीं करता आरण्यवासके एकान्त-जीवनका त्याग नहीं करता। नागित! मैं उस भिक्षुके ऐसे आरण्य-विहरणसे प्रसन्न होता हूँ।

"नागित! जब मैं रास्ते चलता हूँ और मुझे आगे-पीछे कोई नहीं दिखाई देता, तो मुझे अच्छा लगता है, यदि और किसी दृष्टिसे नहीं तो कम-से-कम मल-मूत्र त्यागनेकी सुविधा होनेकी दृष्टिसे ही।

भिक्षुओ, जिस उपासकमें ये आठ दुर्गुण हों, यदि संघ इच्छा करे तो उसके विरुद्ध अपना (भिक्षा–) पात्र ढक दे।[1] कौनसे आठ? वह भिक्षुओंको हानि पहुँचानेका प्रयास करता है, वह भिक्षुओंका अहित करनेका प्रयास करता है, वह भिक्षुओं-को उनके निवास-स्थानोंसे हटानेका प्रयास करता है, भिक्षुओंको गाली देता है, मजाक करता है, भिक्षुओं-भिक्षुओंमें झगड़ा लगाता है, बुद्धकी निन्दा करता है, धर्मकी निन्दा करता है तथा संघकी निन्दा करता है। भिक्षुओ, जिस उपासकमें ये आठ दुर्गुण हों, यदि संघ इच्छा करे, तो उसके विरुद्ध अपना (भिक्षा–) पात्र ढक दे।

---

१. किसी गृहस्थ द्वारा दी जानेवाली भिक्षाको न स्वीकार करना उसका सांघिक बहिष्कार है।

भिक्षुओ, जिस उपासकमें ये आठ सद्‌गुण हों, यदि संघ इच्छा करे तो उसके प्रति अपना (भिक्षा–) पात्र खुला कर दे। कौनसे आठ ? वह भिक्षुओंको हानि पहुँचानेका प्रयास नहीं करता, वह भिक्षुओंका अहित करनेका प्रयास नहीं करता, वह भिक्षुओंको उनके निवास-स्थानोंसे हटानेका प्रयास नहीं करता, वह भिक्षुओंको गाली नहीं देता, मजाक नहीं करता, वह भिक्षुओं-भिक्षुओंमें झगड़ा नहीं लगाता, वह बुद्धकी, धर्मकी, संघकी निन्दा नहीं करता। भिक्षुओ, जिस उपासकमें ये आठ सद्‌गुण हों, यदि संघ इच्छा करे तो उसके प्रति अपना (भिक्षा–) पात्र खुला कर दे।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ दुर्गुण हों, यदि उपासक चाहें तो उसके विरुद्ध अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर सकते हैं। कौनसे आठ ? वह गृहस्थोंको हानि (= अलाभ) पहुँचानेका प्रयास करता है, वह गृहस्थोंका अहित करनेका प्रयास करता है, वह गृहस्थोंको उनके स्थानोंसे हटानेका प्रयास करता है, वह गृहस्थोंको गाली देता है—उपहास करता है, वह गृहस्थों-गृहस्थोंमें झगड़ा लगानेका प्रयास करता है, वह बुद्ध, धर्म तथा संघकी निन्दा करता है तथा वह अयोग्य स्थानोंमें विचरता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ दुर्गुण हों, यदि उपासक चाहें तो उसके विरुद्ध अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर सकते हैं।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ सद्‌गुण हों, यदि उपासक चाहें, तो उसके प्रति अपनी प्रसन्नता प्रकट कर सकते हैं। कौनसे आठ ? वह गृहस्थोंको हानि पहुँचानेका प्रयास नहीं करता है, वह गृहस्थोंका अहित करनेका प्रयास नहीं करता है, वह गृहस्थोंको उनके स्थानसे हटानेका प्रयास नहीं करता है, वह गृहस्थोंको न गाली देता—न हँसी उड़ाता है, वह गृहस्थों-गृहस्थोंमें झगड़ा लगानेका प्रयास नहीं करता, वह बुद्ध, धर्म तथा संघकी निन्दा नहीं करता तथा वह अयोग्य स्थानोंमें नहीं विचरता। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ सद्‌गुण हों, यदि उपासक चाहें तो उसके प्रति अपनी प्रसन्नता प्रकट कर सकते हैं।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ दुर्गुण हों, यदि संघ चाहे तो उसे प्रति-स्मरणीय-कर्म करे। कौन-से आठ ? गृहस्थोंको हानि पहुँचानेका प्रयास करता है; गृहस्थोंका अहित करनेका प्रयास करता है; गृहस्थोंको गाली देता है—उपहास करता है; गृहस्थों-गृहस्थोंमें झगड़ा लगाता है; बुद्ध, धर्म तथा संघकी निन्दा करता है; धार्मिक गृहस्थके प्रति-वचनका विश्वास नहीं करता। भिक्षुओं, जिस भिक्षुमें ये आठ दुर्गुण हों, यदि संघ चाहे तो उसे प्रति-स्मरणीय कर्म[1] करे।

---

१. भिक्षुको दिया जाने वाला एक प्रकार का दण्ड-कर्म।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ सद्गुण हों, यदि संघ चाहे तो उसके प्रति किये गये प्रति-स्मरणीय कर्मको वापस ले ले। कौन-से आठ? वह गृहस्थोंको हानि पहुँचानेका प्रयास नहीं करता है; वह गृहस्थोंका अहित करनेका प्रयास नहीं करता है; वह गृहस्थोंको उनके स्थानसे हटानेका प्रयास नहीं करता है; वह गृहस्थोंको न गाली देता है—न हँसी उड़ाता है; वह गृहस्थों-गृहस्थोंमें झगड़ा लगानेका प्रयास नहीं करता है; वह बुद्ध, धर्म तथा संघकी निन्दा नहीं करता है, वह धार्मिक गृहस्थके प्रति-वचनका विश्वास करता है। भिक्षुओ, जिस भिक्षुमें ये आठ सद्गुण हों, यदि संघ चाहे तो उसके प्रति किये गये प्रति-स्मरणीय-कर्मको वापस ले ले।

भिक्षुओ, जिस भिक्षुके विरुद्ध तस्सपापियसिक दण्ड-कर्मकी घोषणा हुई हो, उसे इन आठ विषयोंमें सम्यक् व्यवहार करना चाहिये—उसे किसी दूसरे भिक्षुको उपसम्पन्न नहीं करना चाहिये, उसे किसी दूसरे भिक्षुको आश्रय (= निश्रय) नहीं देना चाहिये, उसे किसी श्रामणेर के द्वारा की गई सेवा नहीं स्वीकार करनी चाहिये, उसे भिक्षुणियोंको उपदेश देनेका 'भार' नहीं स्वीकार करना चाहिये; 'भार' लाद भी दिया जाय तो भी उसे भिक्षुणियोंको उपदेश नहीं देना चाहिये, संघ-सम्मति (= प्रस्ताव)को अंगीकार नहीं करना चाहिये, उसे किसी प्रमुख स्थानपर नहीं बैठना चाहिये, उस की प्रधानतामें कोई कार्य नहीं होना चाहिये। भिक्षुओ, जिस भिक्षु के विरुद्ध तस्सपापियसिक दण्ड-कर्मकी घोषणा हुई हो, उसे आठ विषयोंमें सम्यक् व्यवहार करना चाहिये।

१०. श्रामण्य-वर्ग

[१–२६]

तब बोज्झा उपासिका, सिरीमा, पदुमा, सुतना, मनुजा, उत्तरा, मुत्ता, खेमा, रुची, चुन्दी, बिम्बी, सुमना, मल्लिका, तिस्सा, तिस्समाता, सोणा, सोणाय माता, काणा, काणमाता, उत्तरा नन्दमाता, विसाखा मिगारमाता, खुज्जुत्तरा उपासिका, सामावती उपासिका, सुप्पवासा कोलियधीता, सुप्पिया उपासिका, नकुलमाता गहपतानि।

[यहाँ इन सबके अष्ट शील-ग्रहण करनेका ही वर्णन है—अट्ठकथा।]

भिक्षुओ, रागको जाननेके लिए आठ धर्मोंका अभ्यास करना चाहिये। कौन-से आठ? सम्यक्-दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीविका, सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि। भिक्षुओ, रागको जाननेके के लिये इन आठ धर्मोंका अभ्यास (= भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागको जाननेके लिए आठ धर्मोंका अभ्यास (= भावना) करना चाहिये। कौनसे आठ? स्वयं रूप संज्ञा (= रूप परिकर्म) वाला होकर बाहर सीमित सुवर्ण, दुर्वर्ण रूपोंको ध्यानका विषय (= निमित्त) करके देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। स्वयं 'रूप'

संज्ञावाला होकर बाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। अपने में अरूप-संज्ञावाला होकर, वह बाहर सीमित सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। अपनेमें अरूप-संज्ञा वाला होकर बाहर असीम सुवर्ण-दुर्वर्ण रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। अपनेमें अरूप संज्ञा होकर बाहर नीले, नीले वर्णके, नीले रंगके, नीली शक्लके रूपोंको देखता है. . . . .पीले, पीले वर्णके. . . . .लाल, लालवर्णके. . . . .सफेद, सफेद वर्णके, सफेद रंगके सफेद शक्लके रूपोंको देखता है। उसकी मान्यता होती है कि मैं उन रूपोंको अभिभूत करके जानता हूँ, देखता हूँ। भिक्षुओ रागके जाननेके लिये इन आठ धर्मोंका अभ्यास (=भावना) करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागकी पहचानके लिये इन आठ धर्मोंका अभ्यास करना चाहिये। किन आठ धर्मोंका? रूपवान् रूपोंको देखता है। अपने अरूप संज्ञा वाला होकर, बाहर रूप देखता है। वह मैत्री-भाव आदि शुभ-भावनाओंकी भावना करके मोक्ष लाभ करता है। वह सब रूप-संज्ञाओंको पार कर, प्रतिघ संज्ञाओंको अस्तकर, नानात्व संज्ञाको मनसे निकाल, 'आकाश अनंत है' करके 'आकाशान्न-त्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। सब आकाश संज्ञाओंको पार कर, 'विज्ञान अनंत है' करके 'विज्ञानानन्त्यायतनको प्राप्त हो विचरता है। सब विज्ञानानन्त्यायतनको पार कर 'कुछ नहीं है' करके 'आकिंचन्यायतन'को प्राप्त हो विचरता है। सब 'आकिंचन्यायतन को पार कर नेवसंज्ञा-न-असंज्ञायतन'को प्राप्त हो विचरता है। सब 'नेवसंज्ञा-न-असंज्ञा-आयतन'को पारकर संज्ञा-वेदनाके निरोधको प्राप्त हो विचरता है। भिक्षुओ, रागकी पहचान (=अभिञ्ञा) के लिये इन आठ धर्मोंका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ, रागके परिज्ञानके लिये. . . . .परिक्षयके लिये. . . .प्रहाणके लिये. . . . .क्षयके लिये. . . . .व्ययके लिये. . . . .वैराग्यके लिये. . . . .निरोधके के लिये. . . . . .त्यागके लिये. . . . . .प्रतिनिसर्ग (परित्याग) के लिये इन आठ धर्मोंका अभ्यास करना चाहिये।

भिक्षुओ द्वेष(=दोष)के. . . .मोहके. . . .क्रोधके. . . .उपनाह(=शत्रुता)के . . . .मक्ष (=डाह) के. . . .प्लास (=निर्दयता)के. . .ईर्ष्याके. . .मात्सर्यके. . . . . .मायाके. . . .शठताके. . . .धर्म (=ऊष्णता) के. . . .सारम्भ (=कलह) के. . . . .मानके. . . . .अतिमानके. . . . . .मदके. . . . .प्रमादके अभिज्ञानके लिये . . . .परिज्ञानके लिये. . . . .परिक्षयके लिये. . . .प्रहाण के लिये. . . .क्षयके लिये . . . .व्ययके लिये. . . .वैराग्यके लिये. . . .निरोधके लिये. . . .त्यागके लिये. . . . परित्यागके लिये इन आठ धर्मोंका अभ्यास करना चाहिये।

